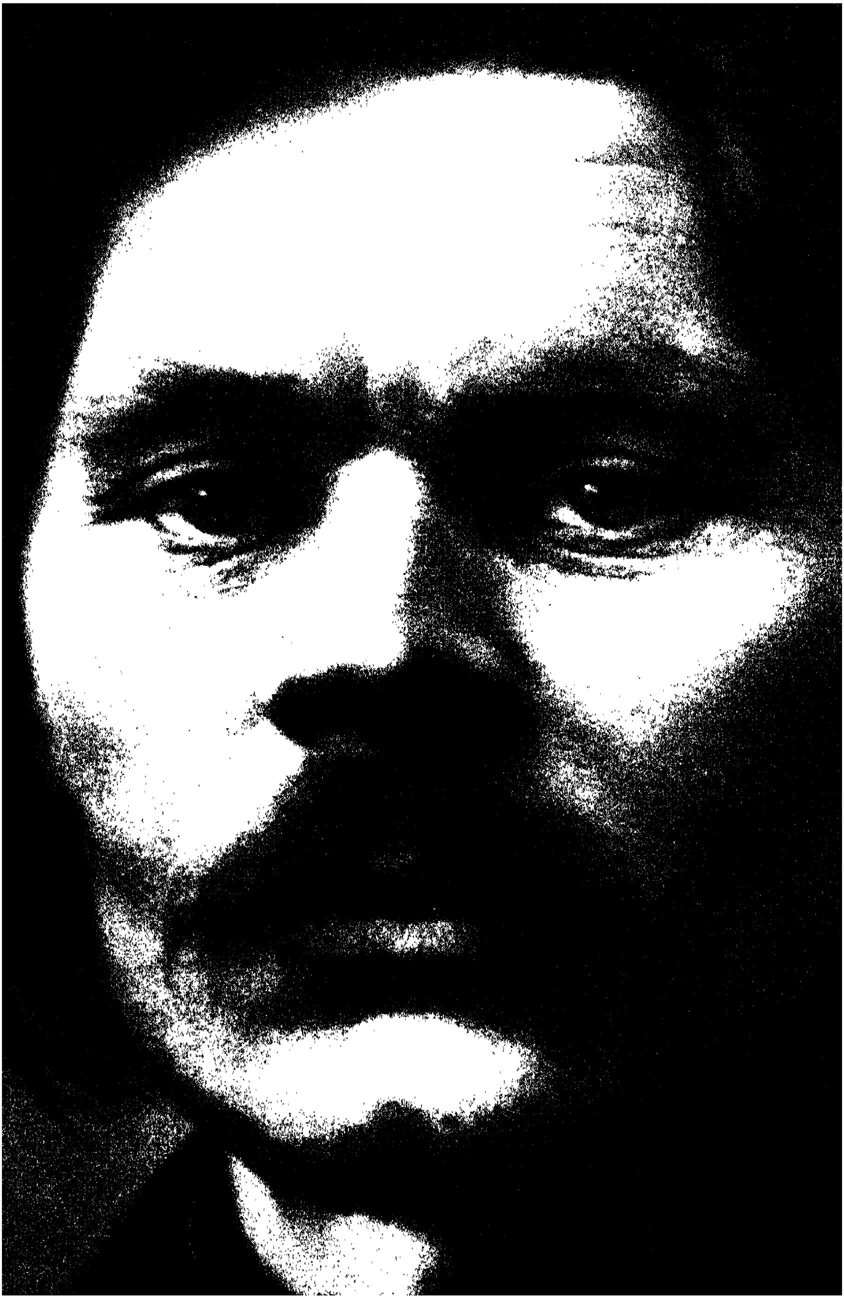
सोवियत साहित्य पुस्तक माला





МАКСИМ ГОРЬКИЙ

1892—1901

ИЗДАТЕЛЬСТВО ЛИТЕРАТУРЫ НА ИНОСТРАННЫХ ЯЗЫКАХ
МОСКВА





म. गोर्की

चुनी हुई कहानियां

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह
मास्को

अनुवादक: नरोत्तम नागर

विषय – सूची

भूमिका

गोर्की का साहित्य रूस के समसामयिक इतिहास का एक प्रभावशाली इतिवृत्त है। उनका जीवन कसाले और श्रम का जीवन था और सामाजिक न्याय के लिए उनकी निरन्तर खोज ने उन्हें उन लोगों की पांत में खड़ा कर दिया था जो जनता के हित के लिए संघर्ष कर रहे थे। उनके अपने जीवन का इतिहास रूस के समूचे मज़दूर-वर्ग का बौद्धिक विकास प्रतिबिम्बित करता है जिसे विश्व के क्रान्तिकारी आन्दोलन का अग्रिम दस्ता बनने का गौरव प्राप्त है।

गोर्की ने छोटी उम्र से ही अपनी रोज़ी के लिए पापड़ बेलना शुरू कर दिया था। १८८४ में, उस समय जब कि वह सोलह वर्ष के थे और नवसिखुवे के रूप में काम करते थे, शिक्षा पाने की आकांक्षा हृदय में संजोए वह कज़ान के लिए चल दिये। उन्हें उम्मीद थी कि वहां वह विश्वविद्यालय में भर्ती हो सकेंगे। लेकिन जीवन ने उनके लिए दूसरे 'विश्वविद्यालयों' की व्यवस्था कर रखी थी। कज़ान में रहकर उन्होंने अध्ययन किया–आवारा तलछटी लोगों, गंदी बस्ती के निवासियों और अंधे तहख़ाने में स्थित सेम्योनोव की बेकरी में काम करनेवाले मज़दूरों के जीवन का। इसके अलावा वह एक 'राजनीतिक विश्वविद्यालय' में–बुद्धिजीवियों के एक दल द्वारा आयोजित क्रान्तिकारी मण्डल में–अध्ययन करने जाते थे। इस मण्डल में

उन्होंने मार्क्सवाद के बुनियादी सिद्धान्तों की जानकारी प्राप्त की, दर्शन और राजनीतिक अर्थशास्त्र की पुस्तकें पढ़ीं। कज़ान का यह काल भावी साहित्य रचना की दृष्टि से उनके लिए प्रचुर सामग्री का स्रोत सिद्ध हुआ।

१८६१ में गोर्की अपनी मातृभूमि का चक्कर लगाने के लिए निकल पड़े। उक्रइन, बेस्साराबिया, क्रीमिया को पार करते हुए उन्होंने कौकशी समुद्र-तट को नापना शुरू किया। रास्ते में जो भी उल्टा-सीधा काम मिलता, पेट भरने के लिए उसे करते और आगे बढ़ जाते। आखिर तिफ़लिस पहुंचकर उन्होंने दम लिया और रेलवे के एक मरम्मत-घर में नौकरी कर ली। वहां मज़दूरों के एक क्रान्तिकारी मण्डल में वह जाने लगे और मार्क्सवादियों से उनका घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित हुआ। उनके बौद्धिक विकास की दिशा यहीं निर्धारित हुई। यहीं अ० म० कालूज्नी से उनका परिचय हुआ। कालूज्नी जन-हित का अग्रदूत था और उसने ही गोर्की को लिखने के लिए उत्साहित किया था। कहा था कि गोर्की ने जो कुछ देखा और अनुभव किया है, वह सब लिख डालें। गोर्की की पहली कहानी 'मकर छुद्रा' तिफ़लिस के पत्र 'कावकाज़' में सितम्बर १८६२ में छपी थी। यह एक कल्पित नाम से – मक्सीम गोर्की नाम से – छपी थी और इस नाम को ही लेखक ने हमेशा के लिए अपना लिया। उनका असली नाम अलेक्सेई पेश्कोव था।

इस प्रकार गोर्की का साहित्यिक जीवन शुरू हुआ। वहा से नीज्नी नोवगोरोद लौटने पर उन्हें रूस के प्रगतिशील लेखक कोरोलेन्को का संरक्षण प्राप्त हुआ। वह कड़ी आलोचनात्मक दृष्टि से उनकी कहानियां पढ़ते और अपनी बहुमूल्य सलाह देते। कोरोलेन्को की मदद से उनकी एक अन्य कहानी 'चेल्काश' एक जनप्रिय पत्र में छपी।

इस समय तक गोर्की की छोटी कहानियां, समसामयिक लेख, तीखे व्यंगपूर्ण शब्द-चित्र वोल्गा प्रदेश के बड़े समाचारपत्रों – 'नीज्नेगोरोद्स्की लिस्तोक' और 'समारुर्काया गज़ेता' – में छपने लगे थे।

१८९८ का वर्ष गोर्की के लिए एक स्मरणीय वर्ष था, – इस वर्ष उनकी छोटी कहानियों और लेखों का पहला संग्रह प्रकाशित हुआ। उनकी ख्याति ने लम्बे डग भरे।

अपनी प्रारम्भिक कहानियों में गोर्की ने उन्नीसवीं शती के अन्तिम दशक में रूस के जीवन के व्यापक तथा विविधतापूर्ण चित्र अंकित किए हैं। अपनी इन रचनाओं में वह केवल कहानी कहने तक ही अपने आपको सीमित नहीं रखते, बल्कि मानवीय सत्ता और मानवीय विकास के नियमों का गहराई के साथ विवेचन करते हैं। गोर्की केवल जीवन के तथ्यों को पकड़ने और उनके व्यापक रूप को प्रकट करने तक ही अपने को सीमित नहीं रखते, बल्कि स्वतंत्रता सम्बन्धी विचारों को भी व्यक्त करते हैं और उन्हें 'पददलितों तथा गरीबों' तक पहुंचाते हैं। जो स्वरूप अपनी लक्ष्य-सिद्धि के लिये उन्हें सबसे उपयुक्त मालूम होता है, उसीको वह अपनाते हैं। क्रान्तिकारी रोमाण्टिक शैली में वह अपनी छोटी कहानियों की रचना करते हैं।

गोर्की की रोमाण्टिक कहानियों की शृंखला भी उसी स्रोत से उद्भूत हुई थी जिसने कि उनकी यथार्थवादी कहानियों को जन्म दिया था। लेकिन अपनी यथार्थवादी कहानियों में जब कि उन्हें अपने आदर्शों को व्यक्त करने का अवसर नहीं मिला, वहां अपनी रोमाण्टिक कहानियों और लोक-कथाओं में उन्होंने भविष्य के अपने सपनों को खुलकर मूर्त किया है। प्रतीकवादियों के प्रतिक्रियावादी रोमाण्टिसिज़्म से भिन्न, जो यथातथ्य जगत् से पलायन कर हवाई लोक में शरण लेते थे, गोर्की का रोमाण्टिसिज़्म ऐसे सपनों से अनुप्राणित है जो आज की यथार्थता को बेधकर कल-भविष्य की यथार्थता को देखते हैं।

गोर्की का प्रारम्भिक वीरतापूर्ण रोमाण्टिसिज़्म, जो भावी विजय में दृढ़ विश्वास से अनुप्राणित था, उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दशक में क्रान्तिकारी उभार को प्रतिबिम्बित करता है। "गाते हैं हम उस पागलपन

का गीत, जो साहस से जझना जानता है!"–'मकर छुद्रा', 'बूढ़ी इज़रगिल', 'मौत और दोशीज़ा', 'बाज़ का गीत', 'तूफ़ानी पितरेल पक्षी का गीत' तथा अन्य रोमांटिक कहानियों में इसी आदर्श की ओर संकेत किया गया है। 'बाज़ के गीत' के ये आधारभूत शब्द एक क्रान्तिकारी आवाहन की भांति गूंजते हैं–"आज़ादी और प्रकाश के लिए संघर्ष करने की गर्वीली ललकार" की भांति। बाज़ की छवि एक क्रान्तिकारी का प्रतीक है जो उच्चतम न्याय के तक़ाज़ों से अनप्रेरित जनता के भाग्य को बेहतर बनाना चाहता है।

आज़ादी का पक्षपाती और उत्पीड़ितों के हित का रखवारा होने के कारण गोर्की ने रूस के क्लासिकल साहित्य की मानववादी परम्पराओं का अनुसरण किया। वह अपने आपको अपने समसामयिक बुज़ुर्ग लेखकों का–तोल्स्तोय, चेख़ोव और कोरोलेन्को का–शिष्य कहते थे और लेखकों से हमेशा अनुरोध करते थे कि वे क्लासिक्स से सीखें। रूस के क्रान्तिकारी जनवादी और साहित्य-आलोचक बेलीन्स्की, चेर्नीशेव्स्की और दोब्रोल्यूबोव ने उनके सौन्दर्यानुभूति सम्बन्धी सिद्धान्तों पर गहरा असर डाला। इन विभूतियों की भांति वह भी दुनिया को बदलने के संघर्ष में साहित्य को एक हथियार मानते थे।

गोर्की के कतिपय समसामयिकों ने उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दशक में लिखी गई उनकी कहानियों के उत्साहपूर्ण स्वागत की साक्षी दी है। प०अ० ज़ालोमोव नामक एक क्रान्तिकारी मज़दूर ने, जो कि गोर्की के उपन्यास 'मां' में पावेल व्लासोव का मूल आधार था, लिखा–"'डान्को के हृदय' ने हम सभी में उमंगों का संचार किया। उसमें हमें अपने हृदयों की ही धड़कन सुनाई देती थी। हममें से प्रत्येक को ऐसा अनुभव हुआ जैसे हमारा हृदय समाजवादी क्रान्ति की आग से प्रज्वलित हो, और हमें लगा कि हमारा एकमात्र सुख, हमारा एकमात्र महत्व इस क्रान्ति की विजय के संघर्ष में

जूझना है। 'बाज़ का गति' हमारे लिए सैकड़ों ऐलानों-नारों से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण था।"

लम्बे घुमक्कड़ जीवन के कारण गोर्की को रूस के प्रादेशिक जीवन का सम्पूर्ण अध्ययन करने का अवसर मिला। अन्तिम दशक में लिखी गई कहानियों में उन्होंने प्रादेशिक जीवन के अटकाव का, मध्यम वर्ग की दिमाग़ी संकीर्णता का, आत्मिक दैन्य, क्रूरता और उदासीनता का पर्दाफ़ाश किया। 'खाली पंछी क्या करे?' शीर्षक कहानी ख़ास तौर से तीखी चोट करती है।

स्कूल मास्टर कोर्जिक ('स्कूल मास्टर कोर्जिक के अवकाश के क्षण') जैसे टाइप के पेशेवर लोगों के साथ—ऐसे लोगों के साथ, जो अपनी चारित्रिक दुर्बलता के कारण जीवन को बेहतर बनाने के लिए कुछ करने में असमर्थ होने के साथ-साथ समाज का सदस्य होने के नाते अपने कर्तव्यों तक को पूरा नहीं कर पाते थे,—गोर्की कोई रू-रियायत नहीं बरतते थे। इसीके साथ-साथ एक ओर जहां गोर्की उन लोगों का बखिया उधेड़ते थे जो जन-जीवन से विच्छिन्न स्वार्थपूर्ण मध्यवर्गीय हितों के तंग घेरे में बन्द रहते थे, वहां दूसरी ओर प्रगतिशील रुझान वाले बुद्धिजीवियों तथा उनके बढ़ते हुए असन्तोष को भी चित्रित करते थे। 'वह चुहिया-सी लड़की' इस विषय की एक श्रेष्ठतम कहानी है। इसमें बुद्धिजीवी वर्ग की एक लड़की का चित्रण किया गया है जो क्रान्ति के लक्ष्य की ख़ातिर अपना सभी कुछ—यहां तक कि जीवन भी—न्योछावर कर देती है। इस कहानी से पता चलता है कि बुद्धिजीवी आम लोगों के जीवन के साथ किस प्रकार अपना भाग्य जोड़ते थे, किस प्रकार उनके साथ घुल-मिलकर रहने का प्रयत्न करते थे। 'वह चुहिया-सी लड़की' कहानी एक मूल ख़ाके का काम देती है जिसके आधार पर अपनी अगली कृतियों में गोर्की क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों का चित्रण करते हैं। गोर्की ने अपनी प्रारम्भिक यथार्थवादी कहानियों में बुद्धिजीवी वर्ग सम्बन्धी विषयवस्तु का निर्वाह हमेशा आम लोगों के जीवन के साथ गुंथा

हुआ किया है। कारण कि गोर्की बुद्धिजीवी वर्ग को एक ऐसी ताक़त समझते थे जो जनता में क्रान्तिकारी चेतना फैला सकती है और जो उस समय, जब कि उन्होंने ये कहानियां लिखी थीं, वस्तुतः संघर्ष के लिए उठ रही थी।

बुर्जुआ समाज से निष्कासित 'निम्नस्तरीय लोगों'—तलछट के निवासियों—सम्बन्धी विषयवस्तु का गोर्की की प्रारम्भिक रचनाओं में प्रमुख स्थान है। मिसाल के तौर पर 'चेल्काश', 'कोनोवालोव' और 'ओरलोव दम्पति' कहानियों का उल्लेख किया जा सकता है। उन्होंने इन लोगों का चित्रण इस तरह नहीं किया है जैसे वे प्रसाद-गुण सम्पन्न हों। बल्कि उनका चित्रण करते हुए उन्होंने उनकी अराजकवादी प्रवृत्तियों तथा श्रम के जीवन के प्रति उनकी घृणा को उभारकर रख दिया है। उन्होंने दिखाया है कि बुर्जुआ जीवन-प्रणाली के प्रति उनकी घृणा ने जीवन-संगठन के सभी रूपों के प्रति घृणा का रूप धारण कर लिया था और मिल्कियत के प्रति उनकी घृणा श्रम के प्रति घृणा बनकर रह गई थी। इसीके साथ उनके चरित्र के उन उपयोगी पहलुओं को—प्रवृत्तियों को—भी वह प्रकाश में लाये हैं जो अन्य समूची जनता के साथ उनमें भी समान रूप से मौजूद थीं। आज़ादी और प्रकृति के लिए उनका प्रेम, एक जिज्ञासा, जो उन्हें जीवन की सार्थकता को खोजने के लिए कुरेदती थी,—गोर्की के अधिकांश आवारा चरित्रों में ये गुण उभरकर आते हैं। कोनोवालोव जैसे आदमी का मनोविज्ञान एक टिपीकल नमूना है। बावजूद इसके कि वह एक प्रतिभाशाली कुशल कारीगर तथा नेक भावनाओं का आदमी है, वह ह्रास को प्राप्त होता है। कारण, उसे अपने वातावरण में कोई सहारा नहीं मिलता और उसकी समझ में नहीं आता कि अपनी शक्तियों का वह क्या उपयोग करे। किसी सजग-सचेत और उद्देश्यपूर्ण क्रियाशीलता से सम्बद्ध न होने के कारण उसकी नेक भावनाएं अधिक नहीं टिक पातीं और वे धूल में मिल जाती हैं।

तिफ़लिस में रेल्वे के मरम्मत-घर में काम करने के दौरान में गोर्की को पक्का विश्वास हो गया था कि भविष्य मज़दूर-वर्ग के साथ है। केवल मज़दूर-वर्ग में ही उन्हें अपनी कहानियों के लिए सच्चे हीरो मिले। 'नमक की दलदलों में' नामक अपनी कहानी में उन्होंने दिखाया है कि असह्य श्रम इन मज़दूरों के दिमाग़ों को किस प्रकार विकृत कर देता है। कठोर और विक्षोभ से भरे, अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए वे एक युवक के साथ, जो उन्हींकी भांति मज़दूर था, एक निर्मम अमली मज़ाक़ करते हैं।

'उत्पाती' शीर्षक कहानी में छापाख़ाने के एक ऐसे मज़दूर (कम्पोज़ीटर) का चित्रण हुआ है जो ज्यादा सजग और सचेत है, जो अधिक स्पष्टता से देख सकता है कि उसके दुश्मन कौन हैं। लेकिन उसका विरोध भी एक निरर्थक उत्पात के रूप में व्यक्त होता है,—वह दैनिक समाचारपत्र के एक अंक में अग्रलेख के शब्दों को बदल डालता है।

इसके शीघ्र बाद ही गोर्की ने अपने साहित्य में ऐसे टाइपों की रचना की जो सच्ची मानी में क्रान्ति का अमली कार्यक्रम पेश करते हैं। 'फ़िलिस्तीन्स' का इंजन-ड्राइवर निल तथा 'मां' उपन्यास में चित्रित क्रान्तिकारी मिल-मज़दूर पावेल व्लासोव ऐसे ही टाइप हैं।

अन्तिम दशक में, मज़दूरों की चेतना के जागरण के उस काल में, गोर्की ने लेखकों के सामने प्रस्तुत कामों को उभारकर रखा। इस काम के दौरान में उन्हें यथातथ्यवादी (नाट्युरालिस्टिक) स्कूल के लेखकों, भविष्यवादियों (फ़्यूचरिस्टों), अनुभूतिवादियों (इम्प्रेशनिस्टों) तथा अन्य काट-छांट के लेखकों से जूझना पड़ा। नतीजा इसका यह हुआ कि नये टाइप के एक कलाकार तथा पुराने घिसे-पिटे सिद्धान्तों के हामी लेखकों के बीच व्यापक महत्व का एक वाद-विवाद शुरू हो गया। गोर्की उन लेखकों का बखिया उधेड़ते और खिल्ली उड़ाते थे जो अपनी कृतियों में सामाजिक समस्याओं की उपेक्षा करते थे और आम जनता को एक निष्क्रिय निश्चल

पिंड के रूप में चित्रित करते थे जो केवल दया की भावना को जगाने का सामर्थ्य रखता था।

कला सम्बन्धी विषयवस्तु पर जब भी कभी गोर्की कुछ कहते थे तो, अपने से पहले के क्रान्तिकारी जनवादियों की भांति, 'विशुद्ध कला' के तमाम सिद्धान्तों की कसकर ख़बर लेते थे। 'कवि' जैसी अपनी कहानियों में उन्होंने अपने समय के ऐसे ही लेखकों का चित्रण किया है जो जनता की सेवा करने की परम्परा से विच्छिन्न हो चुके हैं।

'एक पाठक' शीर्षक अपनी भावनाप्रवण कहानी में गोर्की ने लिखा है—

"साहित्य का उद्देश्य है—ख़ुद अपने को जानने में मानव की मदद करना, उसके आत्मविश्वास को दृढ़ बनाना और सत्य का पता लगाने की उसकी कोशिशों का समर्थन करना, लोगों में जो अच्छाई है उसका उद्‌घाटन करना और बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकना, लोगों के हृदयों में शर्म, गुस्से और साहस की चिंगारी जगाना, ऊंचे उद्देश्यों के लिए शक्ति बटोरने में उनकी मदद करना और सौन्दर्य की पवित्र भावना से उनके जीवन को शुभ्र बनाना।"

अपनी प्रारम्भिक कहानियों में गोर्की ने अनेक ऐसी समस्याओं को उभारकर रखा जो जीवन भर उन्हें मथती रहीं, और उनकी इन प्रारम्भिक कहानियों में, कम-विकसित चरित्रों के रूप में, हम उनकी बाद की कृतियों के कतिपय चरित्रों के मूल रूपों का पता लगा सकते हैं। अन्तिम दशक में लिखी गई रचनाओं तक में हम उस पद्धति के प्रारम्भिक तत्वों को देख सकते हैं जिसे गोर्की ने साहित्य में प्रतिष्ठित किया। यह पद्धति है समाजवादी यथार्थवाद की पद्धति, जिसमें जीवन का—जैसा भी वह है—सच्चा चित्र पेश करने के साथ-साथ सुस्पष्ट रूप से यह भी दिखाया जाता है कि उसे कैसा होना चाहिए।

गोर्की ने उस नये और उन्मुक्त प्रकार के साहित्य का पथ तैयार किया जिसके बारे में लेनिन ने कहा था :

"... लाभ या निजी महत्वाकांक्षा के कारण नहीं, बल्कि मेहनतकश जनता और समाजवाद के विचारों के प्रति उनकी सहानुभूति अधिकाधिक लेखकों को खींच लाएगी। वह एक आज़ाद साहित्य होगा, कारण कि कुछ गिनी-चुनी विकृत कुलांगनाओं या 'ऊपरी वर्ग के दस हज़ार' चर्बी-चढ़े हुए ऊब में डूबे लोगों की सेवा करने के बजाए वह उन लाखों मज़दूरों के लिए लिखा जाएगा जो देश के गौरव, उसकी शक्ति और भविष्य का प्रतिनिधित्व करते हैं।"



मकर छुद्रा

समुद्र की ठंडी नम हवा साहिल पर लहरों के छितराने के उदास संगीत और सूखी झाड़ियों की सरसराहट के साथ घास के सुविस्तृत मैदानों के ऊपर से गुज़र रही थी। रह-रहकर हवा का झोंका आता और हमारे पड़ाव की अग्नि में चुरमुर हुए पीले पत्तों की आहुति डाल देता, जिससे

लपटें लपलपा उठतीं, और तब शरद्-रात्रि का अंधेरा कांपकर भय से पीछे हट जाता, बाईं ओर सीमाहीन स्तेपी और दाहिनी ओर सीमाहीन समुद्र की एक झलक दिखाई देती और सामने की दिशा में एक वृद्ध जिप्सी मकर छुद्रा का आकार उभर आता, जो पचास एक डग दूर अपने कैम्प के घोड़ों की निगरानी कर रहा था।

ठंडी हवा के झोंकों ने उसके कौकशी कोट के पल्लों को उघार दिया था और उसकी बालदार नंगी छाती पर बेरहमी से थपेड़े मार रहे थे, लेकिन वह इस सबसे बेख़बर मेरी ओर मुंह किए सौम्य और सशक्त मुद्रा में लेटा हुआ, अपने भीमाकार पाइप से बराबर कश खींचता, अपनी नाक और मुंह से धुवें के बादल छोड़ रहा था। उसकी एकटक दृष्टि मेरे सिर पर से होती हुई सुविस्तृत स्तेपी के निस्तब्ध अंधकार पर जमी थी, और वह हवा के कुत्सित थपेड़ों से अपने आपको बचाने का जरा भी प्रयत्न न करते हुए बिना रुके बतिया रहा था—

"सो तुम दुनिया की धूल छानते घूमते हो, —क्यों? बहुत ख़ूब! बहुत अच्छा रास्ता पकड़ा है तुमने, मेरे नन्हे बाज़! एकमात्र सही तरीक़ा। दुनिया में घूम-घूमकर चीज़ें देखो, जब ख़ूब मन भर जाए तो पड़ रहो और सदा के लिए आंखें मूंद लो!"

उसकी "एकमात्र सही तरीक़ा" वाली बात मुझे जंची नहीं। मेरी आपत्ति सुन सवालिया अन्दाज़ में बोला—

"जीवन? साथी मानव? —इस सबके लिए दुबला होने की क्या ज़रूरत है? क्या तुम्हारा अपना जीवन नहीं है? और जहां तक तुम्हारे साथी मानवों का सम्बंध है, तुम्हारे बिना भी उन्होंने सदा मौज से गुज़ारी है और सदा मौज से गुज़ार देंगे। क्या तुम सचमुच यह समझते हो कि तुम्हारी किसीको ज़रूरत है? न तो तुम रोटी हो और न लाठी, —फिर भला तुम्हें कोई क्यों चाहेगा?

"सीखो और दूसरों को सिखाओ। यह तुम्हारा कहना है। लेकिन लोगों को खुशहाल बनाना क्या तुम कभी जान सकते हो? नहीं, कभी नहीं। दूसरों को सिखाने से पहले ज़रा अपने बाल तो पक जाने दो। फिर तुम उन्हें सिखाओगे भी क्या? हर आदमी अपनी ज़रूरत को समझता है। जो चतुर हैं, वे जीवन से अपना देना-पावना वसूल कर लेते हैं, जो बुद्धू हैं, वे टापते रह जाते हैं। लेकिन यह सब हर कोई अपने आप ही सीखता है।

"अजीब चीज़ हैं ये लोग-बाग भी, — उनका सारा रेवड़ एक ही जगह जमा होगा, घिचपिच, एक दूसरे को कुचलते हुए, जब कि इतनी जगह यहां मौजूद है कि समेटे न सिमटे," हाथ के सपाटे से मैदान की ओर इशारा करते हुए वह कहता गया — "और सबके सब काम में जुते रहते हैं। किसलिए? यह कोई नहीं जानता। जब कभी मैं किसी आदमी को खेत जोतते देखता हूं तो मन ही मन सोचता हूं — यह देखो, वह अपनी शक्ति और अपना पसीना बूंद-बूंद करके धरती में खपाए दे रहा है, केवल इसीलिए न कि अन्त में इसी धरती में उसे सोना और गल-सड़कर ख़त्म हो जाना है। जितना निपट मूर्ख वह पैदा हुआ था, वैसा ही वह मर जाएगा। कुछ भी वह अपने पीछे नहीं छोड़ जाएगा। अपने खेतों के सिवा और कुछ भी तो वह नहीं देख पाता।

"क्या इसीलिए उसने जन्म लिया था कि धरती को खोदता रहे और खुद अपने लिए एक क़ब्र तक खोदने का प्रबंध किए बिना इस दुनिया से कूचकर जाए? क्या उसने कभी आज़ादी का स्वाद चखा कि वह कैसी होती है? क्या उसने कभी इन मैदानी विस्तारों की ओर नज़र उठाकर देखा? समुद्र के मर्मर-संगीत को सुनकर उसके हृदय का कमल क्या कभी खिला? वह एक गुलाम है — और अपने जन्म के दिन से लेकर मृत्यु के दिन तक गुलाम रहता है। इसके लिए क्या वह कुछ कर सकता है? नहीं, कुछ नहीं, सिवा इसके कि अपने गले में फंदा डालकर लटक जाए — अगर उसमें इतनी भी समझ हो तो!

"अब रही मेरी बात, अठावन साल की उम्र में इतना कुछ मैंने देखा है कि अगर उसे काग़ज़ पर उतारा जाए तो वह, जैसा थैला तुम लिए हो न, वैसे हज़ार थैलों में भी नहीं आयेगा। भला तुम नाम तो लो किसी ऐसी जगह का, जो मैंने न देखी हो। नहीं, तुम ऐसी एक भी जगह का नाम नहीं ले सकते। नाम लेना तो दूर, मैं ऐसी-ऐसी जगह गया हूं जिनके बारे में तुमने कभी सुना तक न होगा। केवल यही तरीक़ा है जीवन बिताने का—आज यहां तो कल वहां। बस, घूमते रहो। किसी भी जगह ज्यादा दिनों तक नहीं टिको,—और कोई टिके भी क्यों? तुम्हीं देखो, दिन और रात किस प्रकार सदा चलते और एक दूसरे का पीछा करते हुए धरती का चक्कर लगाते रहते हैं। ठीक वैसे ही, अगर तुम जीने की अपनी उमंग गंवाना नहीं चाहते हो तो, तुम्हें अपने विचारों को हांकते रहना है। यह निश्चित समझो, जीवन का उल्लास वहीं समाप्त हो जाता है जहां आदमी जीवन के बारे में अत्यधिक सोचने लगता है। मैं भी कभी ऐसा ही करता था। सच, मेरे नन्हे बाज़, मैं भी इस मर्ज़ का शिकार रह चुका हूं।

"यह उन दिनों की बात है, जब मैं गालीसिया की जेल में था। 'आखिर मैंने जन्म ही क्यों लिया?' त्रस्त होकर मैं सोचता। जेल में बन्द होना भी कितनी बड़ी मुसीबत है—सच, बहुत ही भारी मुसीबत! हर बार, जब भी मैं खिड़की से बाहर खेतों की ओर देखता, तो ऐसा मालूम होता, जैसे कोई शैतान मेरे हृदय को नोच रहा हो। कौन कह सकता है कि आखिर मैंने जन्म क्यों लिया? कोई नहीं! और अपने आपसे ऐसा सवाल कभी करना भी नहीं चाहिए। जियो और जीवित रहने के लिए अपने भाग्य को सराहो। धरती पर घूमो और जो कुछ देखा जा सकता है वह सब देखो। तब दुःख तुमपर कभी हावी नहीं होगा। ओह, एक बार तो अपनी पेटी का फंदा गले में डालकर मैं झूल ही गया होता!

"एक बार एक आदमी से मेरी खूब झड़प हुई। वह कड़ा आदमी था और रूसी था, तुम्हारी ही भांति। कहने लगा—'जैसे मन में आए, वैसे ही आदमी को नहीं जीना है, बल्कि ख़ुदा की किताब में जैसे लिखा है, वैसे चलना है। अगर आदमी ख़ुदा का कहना मानकर चलता है,' वह बोला—'तो ख़ुदा उसकी हर मुराद पूरी करता है।' वह ख़ुद चिथड़े पहने था। मैंने कहा—'ख़ुदा से एक नया सूट क्यों नहीं मांग लेते?' इसपर वह बुरी तरह बिगड़ खड़ा हुआ और गालियां देते हुए मुझे भगा दिया। लेकिन, कुछ ही क्षण पहले, वह उपदेश झाड़ रहा था कि मानव को अपने पड़ोसियों से प्रेम करना चाहिए, उनके प्रति उसके हृदय में क्षमा होनी चाहिए। लेकिन अगर मैंने उसे नाराज़ कर दिया था, तो उसने मुझे क्यों नहीं क्षमा किया? देखा, ऐसे होते हैं तुम्हारे ये उपदेशक! लोगों को तो सीख देते हैं कि कम खाओ, जब कि अपना दोज़ख़ वे दिन में दस बार भरते हैं।"

उसने आग में थूका और चुपचाप अपने पाइप को फिर से ताज़ा करने लगा। हवा धीमे स्वर में कराह रही थी, अंधेरे में घोड़े हिनहिना रहे थे और जिप्सियों के कैम्प से एक गीत के कोमल अनुराग भरे स्वर वातावरण में तैर रहे थे। यह मकर की सुन्दर लड़की नोन्का थी जो गा रही थी। कंठ की गहराई से निकली उसकी आवाज़ मैं पहचानता था, जिसमें—चाहे वह कोई गीत गा रही हो अथवा केवल दुआ-सलाम के शब्द मुंह से निकाल रही हो—हमेशा एक असन्तोष और आदेश का पुट मिला रहता था। तपे ताम्बे-से उसके चेहरे पर रानी ऐसी अहम्मन्यता का भाव चस्पां हो गया था और उसकी काली आंखों की परछाइयों में उसके अपने असीम सौन्दर्य की चेतना और अपने से भिन्न हर चीज़ के प्रति घृणा की एक भावना थिरकती रहती थी।

मकर ने अपना पाइप मेरे हाथ में थमा दिया।

"यह लो, पियो। वह खूब गाती है, – क्यों, अच्छा गाती है न? क्या तुम चाहोगे उस जैसी कोई कुंवारी कन्या तुमसे प्रेम करने लगे? नहीं? बहुत ठीक। स्त्रियों पर कभी भरोसा नहीं रखना और उनसे दूर ही रहना। लड़कियों को पुरुष का मुंह चूमने में जितना आनन्द आता है, उतना मुझे अपना पाइप पीने में भी नहीं आता। लेकिन एक बार भी जहां तुमने किसी लड़की का मुंह चूमा कि समझ लो, तुम्हारी आज़ादी सदा के लिए ख़त्म हो गई। ऐसे अदृश्य बन्धनों में वह तुम्हें जकड़ लेगी, जो तोड़े नहीं टूटेंगे, और तुम हृदय और आत्मा से उसके पांव की धूल बनकर रह जाओगे। यह एकदम सच बात है। लड़कियों से ख़बरदार रहना। झूठ तो सदा उनके होंठों पर नाचता रहता है। वे कसम खाएंगी कि तुमपर ही वे सबसे ज़्यादा जान देती हैं, लेकिन अगर कहीं तुमने ज़रा भी उन्हें नाराज़ कर दिया तो पहली बार में ही तुम्हारा हृदय नोच डालेंगी। मैं यों ही कुछ नहीं कहता। मैंने बहुत कुछ देखा-जाना है। अगर तुम चाहो तो एक सच्ची कहानी तुम्हें सुनाऊं। इसे तुम अपने हृदय में गांठ-बांधकर रखना। अगर तुमने ऐसा किया तो जीवन भर पक्षियों की भांति आज़ाद रहोगे।

"बहुत दिनों की बात है। ज़ोबार – लोइको ज़ोबार – नाम का एक युवक जिप्सी था। भय उसे छू तक नहीं गया था और हंगरी और बोहेमिया और स्लावोनिया और समुद्र के इर्द-गिर्द सभी देशों में दूर-दूर तक उसकी ख्याति फैली थी। उन इलाक़ों में एक भी गांव ऐसा नहीं था, जिसमें चार या पांच लोग ज़ोबार की जान के दुश्मन न हों, लेकिन उसका कभी एक बाल तक बांका नहीं हुआ। अगर कोई घोड़ा उसकी नज़र में चढ़ जाता तो फ़ौजियों की पलटन भी उसे न रोक पाती और वह उसकी पीठ पर सवार हो हवा हो जाता। क्या वह किसीसे डरता था? नहीं! डर से ज़ोबार का कोई वास्ता नहीं था। वह खुद शैतान और उसके समूचे दल-बल को – अगर वह उसपर धावा बोलता तो – छुरे की धार पर उतारकर रख देता,

या फिर कम से कम इतना तो निश्चित ही समझो कि वह उन्हें खूब आड़े हाथों लेता और जमकर उनकी मरम्मत करता।

"जिप्सियों का कोई कैम्प ऐसा नहीं था जो ज़ोबार को न जानता हो या जिसने उसके बारे में नहीं सुना हो। केवल एक ही चीज़ से उसे प्यार था–घोड़े से, सो भी अधिक दिनों के लिए नहीं। जब वह उसपर सवारी गांठते-गांठते उकता जाता तो उसे बेच डालता और उससे मिला धन, जो भी हाथ फैलाता, उसे ही दे डालता। उसे किसी चीज़ का मोह नहीं था। अगर किसीको ज़रूरत होती तो वह अपना हृदय तक चीरकर दे देता। सच, वह ऐसा ही आदमी था।

"उस समय, जिसका कि मैं ज़िक्र कर रहा हूं,–कोई दस वर्ष पहले–हमारा क़ाफ़िला बुकोविना में घूम रहा था। बसन्त के दिन थे। एक रात हम आदमियों की एक टुकड़ी जमा थी–उनमें एक सैनिक दानिलो था, जो कोशूत की कमान में लड़ चुका था, और वृद्ध नूर, दानिलो की लड़की राद्दा तथा अन्य कई थे।

"क्या तुमने मेरी नोन्का को देखा है? वह सौन्दर्य की रानी है। लेकिन राद्दा से उसकी तुलना करना उसे आसमान पर चढ़ाना होगा। राद्दा इतनी सुन्दर थी कि बयान से बाहर। शायद वायोलिन का संगीत उसके सौन्दर्य को व्यक्त कर सके। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब कि वायोलिन-वादक अपनी आत्मा को पूर्णरूपेण उसमें उंडेलकर रख दे।

"राद्दा के प्रेम में न जाने कितने लोग घुल-घुलकर ख़त्म हो गए। एक बार मोराविया के एक धनिक वृद्ध ने उसे देखा और स्तब्ध रह गया। वह अपने घोड़े पर बैठा बस उसे ताकता ही रहा। उसका समूचा बदन इस तरह हिल रहा था मानो उसे जूड़ी आ गई हो। वह इतना सजा-धजा था कि लगता था जैसे शैतान जशन मनाने निकला हो। उसका उक्रइनी कोट ज़री के काम से अटा था, बग़ल से लटकती उसकी तलवार बहुमूल्य

रत्नों से जड़ी थी, जिनसे घोड़े के ज़रा-सा भी हिलने पर बिजली की भांति चमक निकलती थी, नीले रंग की उसकी मख़मली टोपी ऐसी मालूम होती थी मानो नीले आकाश का एक टुकड़ा नीचे उतरकर उसके सिर पर आ बिराजा हो। बहुत ही बड़ा आदमी था वह खूसट। बस, घोड़े पर बैठा राद्दा को देखता रहा, देखता रहा। अन्त में उससे बोला—'एक चुम्बन के लिए सोने की यह थैली न्यौछावर कर दूंगा!' राद्दा ने अपना मुंह फेर लिया, और बस। खूसट धनिक ने अब अपना स्वर बदला—'अगर मैंने तुम्हारा अपमान किया हो तो माफ़ी चाहता हूं। लेकिन कम से कम एक मुसकराहट तो तुम मुझे दे ही सकती हो।' और यह कहते हुए उसने अपनी थैली उसके पांवों के पास फेंक दी। थैली काफ़ी भारी थी। लेकिन उसने, मानो अनजान में ही, पांव से ठुकराकर उसे धूल में धकेल दिया, इस तरह जैसे उसने उसे देखा तक न हो।

"'उफ़, पूरी फ़ितना है!' उसने भभकारा भरा और घोड़े के पुट्ठे पर चाबुक फटकार सड़क पर धूल का बादल उड़ाता चला गया।

"अगले दिन वह फिर आया। 'इसका बाप कौन है?' उसने पूछा, इतनी तेज़ आवाज़ में कि समूचा कैम्प गूंज उठा। दानिलो आगे बढ़ आया। 'अपनी लड़की मुझे बेच दो। मुंह-मांगे दाम दूंगा।' दानिलो ने जवाब दिया—'बेचने का काम तो बड़े लोग करते हैं—सुअरों से लेकर उनकी अपनी आत्मा तक, चाहे जो ख़रीद लो। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं कोशूत की कमान में लड़ चुका हूं और बेचने का धंधा नहीं करता।' धनिक ख़ूब गरजा और अपनी तलवार पर उसका हाथ जा पहुंचा। लेकिन तभी किसीने एक जलती हुई छेपटी घोड़े के कान से छुवा दी,—जानवर बिदका और मय अपने मालिक के हवा हो गया। हमने भी अपना डंडा-डेरा उठाया और सड़क की राह ली। जब हमें सड़क पर चलते पूरे दो दिन हो गए तो एकाएक हमने उसे अपने पीछे आते हुए देखा। 'अरे! सुनो तो,' वह चिल्लाकर बोला—

'मैं कसम खाकर कहता हूं कि मेरी नीयत में बदी नहीं है। मैं इस लड़की को अपनी बीवी बनाना चाहता हूं। मेरी हर चीज़ में तुम्हारा हिस्सा होगा, और यह तुम जानते ही हो कि मैं बहुत धनी हूं।' उसका अंग-अंग तमतमा रहा था और वह इस तरह हिल रहा था जैसे हवा में सूखी घास की पत्तियां।

"उसने जो कुछ कहा था, उसपर हमने विचार किया।

"'बोल बेटी,' दानिलो अपनी दाढ़ी के भीतर से बुदबुदाया—'तेरी मन्शा क्या है?'

"राद्दा ने जवाब दिया—

"'अगर बाज़ की संगिनी ख़ुद अपनी मर्ज़ी से किसी कौवे के घोंसले को आबाद करने चली जाए तो तुम्हें कैसा लगेगा?'

"दानिलो हंसा, और उसी प्रकार हम सब भी हंस पड़े।

"'ख़ूब जवाब दिया, बेटी! कुछ सुना, श्रीमान? आपकी दाल यहां गलती नज़र नहीं आती। अच्छा हो, काबुक में रहनेवाली किसी कबूतरी पर डोरे डालो, वह सहज ही पकड़ में आ जाएगी।' और हम अपने रास्ते पर आगे बढ़ चले।

"इसपर उस धनी ने अपनी टोपी सिर से खींचकर ज़मीन पर पटक दी और इतनी तेज़ गति से नौ दो ग्यारह हो गया कि उसके घोड़े की टापों से धरती हिल उठी। देखा, मेरे नन्हे बाज़, ऐसी थी वह राद्दा।

"इसके बाद एक रात, जब कि हम कैम्प में बैठे थे, एकाएक मैदानों की ओर से संगीत की आवाज़ आती सुनाई दी। अद्भुत संगीत था वह। ऐसा कि रगों में रक्त थिरकने लगा, और ऐसा मालूम हुआ जैसे किसी अज्ञात लोक की ओर वह हमें खींचे लिए जा रहा हो। एक ऐसी प्रचंड आकांक्षा से उसने हमें भर दिया कि उसके बाद जैसे जीवन का चरम सुख हमें मिल जाएगा और फिर जीने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाएगी, और अगर जीवित रहे भी तो हम समूचे विश्व के स्वामी बनकर जीवित रहेंगे।

"तभी अंधकार में से एक घोड़ा प्रकट हुआ, और इस घोड़े पर एक आदमी बैठा हुआ चिकारा बजा रहा था। हमारे कैम्प की अग्नि के पास आकर वह रुक गया, चिकारा बजाना उसने बन्द कर दिया और मुसकराता हुआ हमारी ओर देखने लगा।

"'अरे ज़ोबार, तुम हो!' दानिलो ने उछाह से चिल्लाकर कहा।

"हां, तो वह लोइको ज़ोबार था। उसकी मूंछों के छोर उसके कंधों को छूते हुए उसके घुंघराले बालों के साथ घुल-मिल गए थे। उसकी आंखें दो उजले तारों की भांति चमक रही थीं, और उसकी मुसकान में तो जैसे सूरज की धूप खिली थी। वह और उसका घोड़ा—ऐसा मालूम होता था मानो—एक ही धातु-खंड से काटकर बनाए गए हों। सामने ही वह मौजूद था—अलाव की रोशनी में रक्त की भांति लाल, जब हंसता था तो उसके दांत चमक उठते थे। सच, मुझसे अभागा कोई न होता अगर मेरे हृदय में उतना ही प्यार न जगता, जितना कि मैं खुद अपने को प्यार करता हूं, लेकिन वह था कि उसने एक भी शब्द मुझसे नहीं कहा या कहिए कि मेरे अस्तित्व तक की ओर उसने ध्यान नहीं दिया।

"देखा, मेरे नन्हे बाज़, इस दुनिया में ऐसे लोग भी हैं। उसने तुम्हारी आंखों में देखा नहीं कि तुम, मय अपनी आत्मा के, उसके ग़ुलाम हो गए हो और, बजाय इसके कि तुम इसपर लज्जा का अनुभव करो, तुम एक गर्व से भर जाते हो। लगता है जैसे उसकी मौजूदगी ने तुम्हें ऊंचा उठा दिया हो। ऐसे लोगों की संख्या अधिक नहीं है। शायद यह अच्छा भी है। अगर दुनिया में अच्छी चीज़ों की भरमार होती, तो उनकी अच्छों में गिनती न होती। लेकिन अब आगे की बात सुनो।

"राद्दा ने उससे कहा—'ज़ोबार, तुम बहुत अच्छा चिकारा बजाते हो। इतनी सुरीली आवाज़ वाला चिकारा तुम्हें किसने बनाकर दिया है?' वह हंसा। बोला—'खुद मैंने बनाया है, और लकड़ी से नहीं, उस युवती

के हृदय से मैंने इसका निर्माण किया है, जिसे मैं जी-जान से प्यार करता था, – इसके तार उसके हृदय के स्वर हैं। अब भी कभी-कभी इससे – मेरे इस चिकारे से – झूठे स्वर निकलते हैं, लेकिन कमानी को अपने इशारे के अनुसार झुकाना मैं जान गया हूं।'

"पुरुष हमेशा इस बात का प्रयत्न करता है कि अपने प्रति चाह जगाकर लड़की की आंखों को धुंधला बनाए रखे। ऐसा करके उसके नेत्र-बाणों से वह अपने हृदय की रक्षा करता है। और ज़ोबार ने भी ऐसा ही किया। लेकिन वह यह नहीं जानता था कि इस बार किससे उसका पाला पड़ा है। राद्दा ने बस मुंह फेर लिया और जमुहाई लेते हुए कहा – 'मैंने तो सुना था कि ज़ोबार समझदार और चतुर है। एकदम ग़लत!' और यह कहकर वह दूर चली गई।

"'तुम्हारे दांत बड़े पैने हैं, सुन्दर लड़की!' ज़ोबार ने कहा और घोड़े से उतरते समय उसकी आंखें चमक उठीं – 'साथियो, अच्छी तरह से तो हो। सोचा, तुमसे मिलता चलूं। सो चला आया।'

"'अच्छा हुआ जो तुम चले आए,' दानिलो ने जवाब दिया – 'हमें इसकी ख़ुशी है।'

"हम एक दूसरे के गले लगे, कुछ देर बातचीत की और फिर सोने चले गए – ख़ूब गहरी नींद सोए। सुबह जब उठे तो देखा कि ज़ोबार के सिर पर पट्टी बंधी है। यह क्यों? मालूम हुआ कि रात को सोते समय घोड़े की लात उसके सिर में लग गई।

"वाह, लेकिन हम जानते थे कि वह कौनसा घोड़ा है जिसने उसे घायल किया है। और हम मन ही मन मुसकराए, और दानिलो भी मुसकराया। तो क्या ज़ोबार भी राद्दा से मात खाकर रहेगा? नहीं, बिल्कुल नहीं। ख़ूबसूरती में चाहे वह जितनी बढ़ी-चढ़ी हो, लेकिन आत्मा उसकी छोटी है और दुनिया भर के सोने से लद जाने पर भी छोटी ही बनी रहेगी।

"हां, तो हम उसी जगह पर पड़ाव डाले रहे। सभी कुछ मजे से चल रहा था, और लोइको ज़ोबार भी हमारे साथ ही टिका हुआ था। वह बहुत अच्छा साथी था—बड़े बूढ़ों की भांति समझदार, सभी बातों की जानकारी रखनेवाला और पढ़ा-लिखा—रूसी और मगयार दोनों ही भाषाएं वह पढ़ और लिख सकता था। और उसकी बातें—रात बीत जाए फिर भी जी न ऊबे। और जब वह चिकारा बजाता था—सच, मैं अपनी जान की बाज़ी हारने को तैयार हूं अगर कोई उसकी टक्कर का दूसरा बजानेवाला खोज लाए। वह कमानी का जैसे ही तारों से स्पर्श करता तो लगता, जैसे हृदय खिंचकर बाहर निकल आएगा। वह कमानी को फिर तारों पर खींचता—हृदय की एक-एक शिराएं पुलकित हो सुनने लगतीं, रोम-रोम में एक तनाव-सा छा जाता,— और वह उसी प्रकार बजाता और मुसकराता रहता। हास्य और रुदन के भाव हृदय में उमड़ते-घुमड़ते और एक साथ फूट पड़ना चाहते। कभी ऐसा मालूम होता, मानो कोई ज़ार-ज़ार रो रहा है और मदद की याचना कर रहा है। तब लगता, जैसे हृदय को चाकू से कुरेदा जा रहा है। कभी मालूम होता कि घास के सुविस्तृत मैदान आकाश को अपने जीवन की कथा सुना रहे हैं—ऐसी कथा, जो उदासी में डूबी है। कभी लगता कि कोई युवती अपने प्रेमी को बिदा करते समय विलाप कर रही है। फिर मालूम होता कि उसका प्रेमी घास के मैदानों से उसे पुकार रहा है। इसके बाद, आकाश से उल्कापात की भांति, आह्लादपूर्ण और अपने साथ बहा ले जानेवाला स्वर सुनाई पड़ता,—और लगता, जैसे आकाश में सूर्य तक उसे सुनकर थिरकने लगा है। ऐसा चिकारा बजाता था वह, मेरे नन्हे बाज़!

"उस संगीत के स्वर रोम-रोम में समा जाते थे, और लगता था, जैसे हमारा अब कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रहा है। अगर उस समय ज़ोबार चिल्लाकर कहता—'साथियो, अपने चाकू निकाल लो!' तो हममें से प्रत्येक

अपना चाकू निकाल लेता, और जिसकी ओर वह इशारा करता, उसीपर टूट पड़ता। चाहता तो वह हममें से किसीको भी अपनी कनकी उंगली के चारों ओर लपेट लेता। हम सब उसे बेहद प्यार करते थे। एक राद्दा ही ऐसी थी, जो उससे कोई वास्ता नहीं रखती थी। यों अपने आपमें वैसे ही यह कुछ कम बुरी बात नहीं थी, लेकिन इसके अलावा वह उसका मज़ाक भी उड़ाती थी। वह उसके हृदय में घाव करती थी और बुरी तरह घाव करती थी। वह अपने दांत भींच लेता, अपनी मूंछों के बाल खींचता, उसकी आंखें कुवें से भी ज़्यादा गहरी हो जातीं और कभी-कभी उनमें एक ऐसी बिजली-सी कौंधती कि हृदय सहमकर रह जाता। रात को वह दूर घास के मैदानों की गहराइयों में चला जाता और उसका चिकारा सुबह होने तक विलाप करता रहता– अपनी खोई हुई आज़ादी पर सिर धुनता। और हम, पड़े-पड़े, उसके इस विलाप को सुनते और मन ही मन सोचते– 'हे भगवान्, यह क्या होनेवाला है?' और हम जानते थे कि जब दो पत्थर एक दूसरे की ओर लुढ़कते हैं तो उनके रास्ते में जो भी आता है, उसे कुचल डालते हैं। यह थी उस समय की स्थिति।

"एक रात अलाव के पास बैठे गई रात तक हम अपने मामलों पर बातचीत करते रहे और जब बातें करते-करते थक चले तो दानिलो ज़ोबार की ओर घूम गया और बोला–'ज़ोबार, कोई ऐसा गीत सुनाओ, जिससे हमारे दिल ख़ुशी का अनुभव कर सकें।' ज़ोबार ने एक नज़र राद्दा पर डाली, जो कुछ ही दूर धरती पर पड़ी आसमान की ओर देख रही थी, और अपनी कमान को चिकारे के तारों पर से खींचा। चिकारे में से गीत के स्वर प्रकट हुए,–इस तरह, मानो कमान चिकारे के तारों को नहीं, वरन् वस्तुतः किसी युवती के हृदय के तारों को छेड़ रही हो। और उसने गाया–

अइहो, अइहो! मेरे हृदय में प्रेम न समाए,
स्तेपी सागर की भांति हिलोरे खाए,–
और हमारे घोड़े एकदम निर्भय
हम दोनों को हवा की भांति उड़ा ले जाएं!

"राद्दा ने अपना सिर उसकी ओर घुमा लिया, कुहनी के बल उठी और उसके मुंह की ओर खिलखिलाकर हंसने लगी। ज़ोबार का चेहरा तमतमाकर लाल हो गया–

अइहो, अइहो! मेरे सच्चे जीवन-साथी
निकट अंधियारी का अब अन्त,–
छाई रात की परछाइयां अभी मैदानों पर घास के,
लेकिन इससे क्या, नापेंगे हम आकाश की ऊंचाइयों को!
दिन के स्वागत के लिए तेज़ करो घोड़ों को अपने,
जो थिरक रहा है अब सुविस्तृत मैदानों में,–
लेकिन देखो, चन्द्रमा सुन्दरी को निहार
भटक न जाना तुम, और रह न जाए स्वागत रवि-किरणों का!

"कितना बढ़िया गाया! आजकल इस तरह के गीत दुर्लभ हो गए हैं। लेकिन राद्दा दबे स्वर में फुसफुसा उठी–

"'तुम्हारी जगह मैं होती तो कभी इस तरह आकाश में घोड़े न दौड़ाती। अगर सिर के बल जोहड़ में आ गिरे तो तुम्हारी ये सुन्दर मूंछें ख़राब हो जाएंगी।'

"ज़ोबार ने ग़ुस्से में भरकर उसकी ओर देखा, लेकिन कहा कुछ नहीं। उसने अपने आपको क़ाबू से बाहर नहीं जाने दिया और गाना जारी रखा–

अइहो, अइहो! रवि-किरणें गर आकर
देखेंगी — हम दोनों को नींद में डूबा, —
होंगे लज्जा से मुंह लाल हमारे,
गर नहीं उठे, और रहे हम लम्बी ताने!

"'कितना शानदार गीत है!' दानिलो ने कहा — 'इससे अच्छा गीत अपने जीवन में पहले कभी नहीं सुना, — अगर मैं गलत कहता हूं तो शैतान मुझ आदमी से पाइप बना डाले।'

"वृद्ध नूर अपने गल-मुच्छों को सहलाकर अपने कंधों को बिचका रहा था, — ज़ोबार के साहसपूर्ण गीत ने हम सभी के दिल खिला दिए थे। लेकिन राद्दा को वह पसंद नहीं आया। कहने लगी —

"'ऐसे ही एक बार बाज़ की आवाज़ की नक़ल में एक मच्छर को भनभनाते मैंने सुना था!'

"ऐसा मालूम हुआ, जैसे उसने हम सबके सिरों पर बर्फ़ का पानी उंडेल दिया हो। दानिलो बड़बड़ा उठा — 'कोड़े का मुंह देखे शायद बहुत दिन हो गए हैं, राद्दा!' लेकिन ज़ोबार ने, जिसका चेहरा धरती की भांति काला पड़ गया था, अपनी टोपी उतारकर नीचे फेंक दी और बोला —

"'ठहरो, दानिलो! गरमाए हुए घोड़े के लिए इस्पाती लगाम की ज़रूरत होती है। अपनी लड़की की शादी तुम मेरे साथ कर दो!'

"'क्या बात कही है तुमने,' दानिलो मुसकराया — 'ले लो, अगर तुम ले सको।'

"'अच्छी बात है,' ज़ोबार ने कहा और फिर राद्दा की ओर मुड़ते हुए बोला — 'अब ज़रा अपने हवाई घोड़े से नीचे उतर आओ, लड़की, और सुनो जो मैं कहता हूं। अपने जीवन में अनेक — हां, अनेक — लड़कियों से मेरा पाला पड़ा, लेकिन उनमें से एक भी तुम्हारी तरह मेरे हृदय को अपने क़ब्ज़े में नहीं कर सकी। आह, राद्दा, तुमने मेरी आत्मा को बन्दी बना

लिया है। इसमें किसीका बस नहीं, – जो होना है सो होकर रहेगा – और इस दुनिया में ऐसा घोड़ा कोई नहीं है जो मानव को ख़ुद उससे दूर कहीं ले जा सके। ख़ुदा और स्वयं अपनी आत्मा की साक्षी तथा तुम्हारे पिता और इन सब लोगों की मौजूदगी में मैं तुम्हें अपनी पत्नी बनाता हूं। लेकिन एक बात चेताए देता हूं कि मेरी आज़ादी में आड़े आने की कोशिश न करना, – मैं आज़ादी-पसन्द आदमी हूं और हमेशा वैसे ही रहूंगा, जैसे मेरा जी चाहेगा।'

"दांतों को कसकर दाबे और अपनी आंखों को धधकाए वह उसके पास जा पहुंचा। हमने उसे राद्दा की ओर हाथ बढ़ाते हुए देखा और सोचा – 'आख़िर राद्दा ने सुविस्तृत मैदानों के इस बनैले घोड़े के मुंह में लगाम डाल ही दी।' लेकिन तभी, एकाएक, ज़ोबार की बांहें फैल गईं और उसका सिर धरती से जा टकराया।

"यह क्या हो गया? ऐसा मालूम होता था, जैसे गोली ने उसका सीना छलनी कर दिया हो। लेकिन यह तो राद्दा का चाबुक था, जिसने उसकी टांगों में फंदा डाल झटका देकर उसे गिरा दिया था।

"और वह अब फिर, पहले की भांति, निश्चल लेट गई। उसके होंठों पर उपेक्षापूर्ण मुसकराहट खेल रही थी। हम सब, सकते की हालत में, यह देख रहे थे कि अब क्या होता है। ज़ोबार उठकर बैठ गया और अपने हाथों में उसने अपना सिर पकड़ लिया, मानो उसे डर हो कि कहीं वह टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर न जाए। फिर वह चुपचाप उठा और, एक बार भी किसी की ओर देखे बिना, मैदानों की ओर चल दिया। नूर ने फुसफुसाकर मुझसे कहा – 'अच्छा हो तुम इस पर नज़र रखो।' सो मैं भी उसके पीछे-पीछे रात के अंधेरे में मैदानों में रेंगता हुआ चला। ज़रा ख़याल तो करो, मेरे नन्हे बाज़।"

मकर ने अपने पाइप के कटोरे में से राख झाड़-खुरचकर बाहर फेंक

दी और उसे फिर भरने लगा। मैंने कोट के पल्ले खींचकर उसे अपने बदन के इर्द-गिर्द कसकर सटा लिया और धरती पर लेट गया। इस तरह धूप तथा हवा से ताम्बा बना उसका वृद्ध चेहरा और भी अच्छी तरह दिखाई देता था। वह मन ही मन कुछ बड़बड़ा रहा था और अपनी बात को बल प्रदान करने के लिए गम्भीरता के साथ अपना सिर भी हिलाता जाता था। उसकी भूरी मूंछों में बल पड़ रहे थे और हवा उसके बालों को छेड़ रही थी। उसे देखकर मुझे एक पुराने ओक वृक्ष की याद हो आई, जिसपर बिजली आ गिरी थी, लेकिन जो अभी भी मजबूत और शक्तिशाली था और अपनी इस शक्ति के गर्व में सिर ऊंचा किए खड़ा था। समुद्र की लहरें अभी भी रेत के कानों में कुछ गुनगुना रही थीं और हवा उनकी इस ध्वनि को घास के मैदानों में फैला रही थी। नोन्का ने गाना बन्द कर दिया था। आकाश में बादल घिर आए थे और शरद् की रात्रि का अन्धकार और भी ज़्यादा घना हो उठा था।

"लोइको ज़ोबार के डग बड़ी मुश्किल से उठ रहे थे। काफ़ी प्रयास के बाद वह एक के बाद दूसरा डग उठाता था। उसकी गरदन झुकी थी और बांहें चाबुक की डोरियों की भांति बेजान-सी झूल रही थीं। एक पतली-सी धारा के तट पर पहुंच वह एक पत्थर पर बैठ गया और एक कराह भरी। उसकी कराह की आवाज़ से मेरा हृदय व्यथित हो उठा, लेकिन मैं उसके निकट नहीं गया। शब्दों से क्या मानव का दुःख हल्का होता है? नहीं, उनमें इतनी सामर्थ्य नहीं। यही तो मुसीबत है। उसे वहां बैठे-बैठे एक घंटा बीत गया, फिर दूसरा और इसके बाद तीसरा। बिना हिले-डुले, वह बस बैठा ही रहा।

"सहसा राद्दा पर मेरी नज़र पड़ी। वह कैम्प की ओर से तेज़ी से हमारी दिशा में बढ़ रही थी।

"मेरी खुशी का वारपार नहीं रहा। 'बहुत ख़ूब, राद्दा, तुम बहादुर लड़की हो!' मैंने सोचा। वह चुपचाप, बिना किसी आहट के, ज़ोबार के

पास जाकर खड़ी हो गई। उसने अपने हाथ उसके कंधों पर रख दिए। वह चौंक उठा, अपने हाथों को उसने मुक्त किया और सिर उठाकर देखा। अगले ही क्षण वह अपने पांवों पर खड़ा हो गया और अपने चाकू को उसने निकाल लिया। 'हे भगवान्, क्या वह उसे मार डालेगा?'—मैंने सोचा और उछलकर मदद के लिए पुकारना ही चाहता था कि तभी मैंने सुना—

"'इसे फेंक दो, नहीं तो मैं तुम्हारा सिर उड़ा दूंगी।'

"मैंने देखा कि राद्दा के हाथ में पिस्तौल है और वह लोइको के सिर का निशाना साधे है। लड़की क्या थी,—शैतान की खाला थी। 'अच्छा है,'—मैंने सोचा—'कम से कम ताक़त में दोनों बराबर हैं। पता नहीं, अब क्या होगा?'

"'मैं तुम्हें मारने नहीं, बल्कि तुमसे सुलह करने आई थी,' पिस्तौल को अपनी पेटी में खोंसते हुए राद्दा ने कहा—'अपना चाकू दूर फेंक दो।' उसने चाकू दूर फेंक दिया और उबलती हुई नज़र से उसकी ओर देखने लगा। क्या दृश्य था वह भी! चोट खाए जंगली पशुओं की भांति दोनों एक दूसरे पर नज़र गड़ाए थे, दोनों ही इतने सुन्दर और बहादुर थे। और रुपहले चांद तथा मेरे सिवा और कोई भी उन्हें नहीं देख रहा था।

"'सुनो, ज़ोबार, मैं तुमसे प्रेम करती हूं,' राद्दा ने कहा। वह केवल कंधे बिचकाकर रह गया—उस आदमी की भांति, जिसके हाथ और पांव बंधे हों।

"'अनेक आदमियों से मेरा वास्ता पड़ा है, लेकिन तुम उन सबसे बहादुर और सुन्दर हो। अगर मैं ज़रा भी इशारा करती तो उनमें से हरेक अपनी मूंछें मुंड़ाने के लिए तैयार हो जाता, मेरे पांव की धूल तक चाटने में ज़रा भी आनाकानी न करता। लेकिन मैं ऐसा करती ही क्यों? बहादुर उनमें एक नहीं था और मेरे साथ रहकर उन्हें स्त्रैण बनते ज़रा भी देर न लगती। जिप्सियों में बहादुर बहुत ही कम रह गए हैं, ज़ोबार, बहुत ही कम। अब

तक किसीसे भी मैं प्यार नहीं कर सकी। लेकिन, ज़ोबार, तुम्हें मैं प्यार करती हूं। और आज़ादी भी मुझे उतनी ही प्यारी है। नहीं, अपनी आज़ादी को मैं तुमसे भी ज़्यादा प्यार करती हूं। लेकिन मैं अब तुम्हारे बिना उसी तरह जीवित नहीं रह सकती, जिस तरह कि तुम मेरे बिना जीवित नहीं रह सकते। और मैं चाहती हूं कि तुम मेरे बनो–शरीर और आत्मा दोनों से मेरे। सुन रहे हो न?'

"ज़ोबार छोटी-सी हंसी हंसा। फिर बोला–'सुन रहा हूं। तुम्हारी बातें बड़ी अच्छी लग रही हैं। कहे जाओ!'

"'मुझे इतना ही और कहना है, ज़ोबार, कि तुम चाहे जो करो, मैं तुम्हें अपनी गिरिफ़्त से जाने न दूंगी। तुम निश्चय ही मेरे बनकर रहोगे। और इसलिए अधिक समय गंवाने से कोई लाभ नहीं। मेरे चुम्बन और आलिंगन तुम्हारी बाट जोह रहे हैं,–और अपने चुम्बनों में समूचा प्राण उंडेलकर रख दूंगी, ज़ोबार। उनके माधुर्य के सामने तुम अपना सारा पिछला वीरतापूर्ण जीवन भूल जाओगे। तुम्हारे छलछलाते हुए आह्लादपूर्ण गीत, जिन्हें जिप्सी इतने चाव से सुनते हैं और जो इस सुविस्तृत मैदान में गूंजते हैं, उन्हें भूलकर अब तुम केवल मेरे लिए– राद्दा के लिए–प्रेम के कोमल गीत गाओगे। अब और ज़्यादा समय न गंवाओ। कहने का मतलब यह कि कल से तुम उसी लगन से मेरी सेवा करोगे, जिस लगन से कि एक युवक अपने पुराने साथी की सेवा करता है। और समूचे कैम्प की मौजूदगी में तुम मेरे क़दमों के आगे झुकोगे और मेरे दाहिने हाथ का चुम्बन करोगे,–केवल तभी मैं तुम्हारी पत्नी बन सकूंगी।'

"हां तो इस लड़की के–शैतान की इस ख़ाला के– मन का भेद अब खुला। ऐसी बात न पहले कभी देखी थी, न सुनी थी। बड़े बूढ़ों से यह ज़रूर सुना था कि मोन्टेनेग्रिन लोगों में, प्राचीन काल में, इस तरह की प्रथा प्रचलित थी, लेकिन जिप्सियों में ऐसी प्रथा का चलन कभी नहीं

था। तुम्हीं बताओ, मेरे युवक दोस्त, इससे अधिक औघड़पन की बात भला और क्या होगी? पूरे एक साल तक दिमाग़ को कुरेदने के बाद भी तुम ऐसी बात नहीं सोच सकोगे।

"जोबार को जैसे किसीने लोहे से दाग़ दिया... तिलमिलाहट भरी उसकी चीख़—एक ऐसे आदमी की चीख़, जिसके हृदय में किसीने छुरा भोंक दिया हो—समूचे मैदान में गूंज गई। राद्दा कांपी, लेकिन उसने अपने भावों को प्रकट नहीं होने दिया।

"'अच्छा तो कल तक के लिए बिदा और कल तुम वह सब करोगे, जो मैंने तुमसे कहा है। क्यों, सुन रहे हो न, ज़ोबार?'

"'हां, सुन रहा हूं। जो कहती हो, करूंगा,' ज़ोबार ने कराहते हुए कहा और अपनी बांहें उसकी ओर बढ़ा दीं, लेकिन वह चली गई, नज़र घुमाकर उसने उसकी ओर देखा तक नहीं, और वह आंधी मे टूटे रुख की भांति उखड़कर धरती पर जा गिरा, बुरी तरह सुबकियां लेता और बिलबिलाता हुआ।

"यह सब, बुरा हो उसका, कम्बख़्त राद्दा की करतूत थी। मैं उसे संभाले नहीं संभाल सका।

"आख़िर यह वेदना किसलिए?.. क्यों लोगों को इतना कुछ सहना पड़ता है? कौन ऐसा शैतान है, जो उस आदमी की कराहों को सुनकर ख़ुश होगा, जिसका हृदय टूक-टूक हो गया हो? आह, कौन है, जो इस भारी गुत्थी को सुलझा सके?

"कैम्प में लौटकर, जो कुछ हुआ था, वह सब मैंने बड़े बूढ़ों से कह दिया। हमने मामले पर विचार कर तय किया कि अभी देखा जाए, आगे क्या होता है। और जो कुछ हुआ, वह यह है। सांझ को सदा की भांति जब हम अलाव के इर्द-गिर्द जमा हुए तो ज़ोबार भी हमारे साथ आ बैठा। वह उदासी में डूबा था, उस एक ही रात में वह झटक गया था और उसकी

आंखें गढ़ों में धंसी थीं। वह उन्हें – अपनी आंखों को – ज़मीन में गड़ाए था। एक बार भी उसने उन्हें ऊपर नहीं उठाया और उसी मुद्रा में बोला –

"'साथियो, स्थिति अब इस प्रकार है। सारी रात मैं अपने हृदय को टटोलता रहा और मैंने देखा कि जिस आज़ादी-पसन्द जीवन को मैं अब तक बिताता रहा हूं, उसके लिए मेरे हृदय में अब कोई जगह नहीं है। उसके हर कोने में राद्दा ने दख़ल कर लिया है। वही राद्दा, जो सुन्दर है, शाही मुसकान जिसके होंठों पर खेलती रहती है। वह अपनी आज़ादी को मुझसे भी ज़्यादा प्यार करती है, लेकिन मैं अपनी आज़ादी से अधिक उसे प्यार करता हूं और इसलिए मैंने तय कर लिया है कि राद्दा के आदेश के आगे घुटने टेक दूं कि सब लोग देखें कि किस प्रकार उसके सौन्दर्य ने मुझे – लोहे के उस ज़ोबार को – अपना ग़ुलाम बना लिया है, जो उससे भेंट होने से पहले तक स्त्रियों से ऐसे खेलता था, जैसे बिल्ली चूहे से खेलती है। अब वह मेरी पत्नी बन जाएगी, अपने चुम्बन और प्यार-दुलार मुझपर न्योछावर करेगी, मैं इतना अभिभूत हो उठूंगा कि तुम्हें अपने गीत सुनाने की आकांक्षा मेरे मन में बाक़ी नहीं रहेगी और अपनी आज़ादी का अभाव मेरे मन में ज़रा भी कसक पैदा नहीं करेगा। क्यों, ऐसा ही होगा न, राद्दा?'

"यह कहने के बाद उसने अपनी आंखें उठाईं और राद्दा पर अपनी प्रचंड दृष्टि जमा दी। राद्दा ने बिना कुछ बोले अपनी गर्दन हिलाई और अपने सामने की धरती की ओर इशारा किया। हमारी समझ से बाहर था कि इतना उलट-फेर कैसे हो गया। हमारे मन में यह तक हुआ कि यहां से उठकर कहीं दूर चले जाएं, जिससे लोइको ज़ोबार को एक छोकरी के – चाहे वह ख़ुद राद्दा ही क्यों न हो – पांवों पर गिरते न देखना पड़े। हमें लगा जैसे यह एक लज्जा की – एक गहरे दुःख की – बात हो।

"'हां तो अब?' राद्दा ने ज़ोबार से चिल्लाकर कहा।

"'ऐसी जल्दी क्या है? काफ़ी समय मौजूद है – इतना अधिक कि तुम मुझसे उकता जाओ,' ज़ोबार हंसा और उसकी इस हंसी में ठंडे लोहे ऐसी झंकार थी।

"'हां तो, साथियो, सारी स्थिति तुम्हारे सामने है। मुझे अब और क्या करना है? मेरे लिए अब केवल यही देखना बाक़ी है कि राद्दा का हृदय क्या सचमुच इतना हठीला है कि वह हम सबको ऐसा सोचने के लिए मजबूर कर सके। माफ़ करना, मैं इसकी परीक्षा लूंगा।'

"और इससे पहले कि हम कुछ भांप पाते कि उसका इरादा क्या है, हमने देखा कि राद्दा धरती पर पड़ी है और ज़ोबार का चाकू मूठ तक उसकी छाती में धंसा हुआ है। हमें जैसे काठ मारा गया।

"लेकिन राद्दा ने चाकू को खींचकर बाहर निकाला और उसे एक ओर फेंक दिया, अपने काले बालों की एक लट से घाव को ढंका और मुसकराते हुए सुस्पष्ट और ज़ोरदार आवाज़ में बोली –

"'अच्छा तो बिदा, ज़ोबार। मैं जानती थी कि तुम ऐसा करोगे।' और इन शब्दों के साथ उसके प्राणपखेरू उड़ गए।

"देखा तुमने, मेरे युवक दोस्त, कि वह कैसी लड़की थी? एकदम शैतान की ख़ाला, ऐसी कि ढूंढे न मिले। ओ मेरे भगवान्!

"'अब मैं तेरे पांवों की धूल लूंगा, मेरी गर्वीली रानी,' ज़ोबार ने कहा और उसकी तेज़ आवाज़ सुविस्तृत मैदानों में गूंज उठी। फिर, धरती पर गिरकर, मृत राद्दा के पांवों से उसने अपने होंठ सटा दिए और इसी प्रकार निश्चल पड़ा रहा। हमने अपने सिर नंगे कर लिए और मौन खड़े रहे।

"ऐसे क्षणों में क्या कुछ कहा जा सकता है? नहीं, कुछ नहीं। नूर बड़बड़ाया—'इसकी मुश्कें कस लो।' लेकिन लोइको को बांधने के लिए किसीके हाथ नहीं बढ़े। ऐसा एक भी माई का लाल नहीं था, और नूर यह जानता था। सो वह मुड़ा और वहां से खिसक गया। दानिलो ने वह चाकू उठाया, जिसे राद्दा ने दूर फेंक दिया था, और कुछ क्षण एकटक उसे देखता रहा। उसके गलमुच्छे बल खा रहे थे। चाकू के धारदार और टेढ़े फलके पर राद्दा के खून के चिन्ह अभी भी मौजूद थे। चाकू हाथ में लिए दानिलो ज़ोबार के पास पहुंचा और उसे उसकी पीठ में—हृदय के निकट—भोंक दिया। आखिर वह—वृद्ध सैनिक दानिलो—राद्दा का पिता ही तो था।

"'जो कसर थी, वह तुमने पूरी कर दी,' दानिलो की ओर मुड़ते हुए ज़ोबार ने कहा, एकदम सुस्पष्ट आवाज़ में, और इसके बाद उसके प्राणपखेरू भी राद्दा के पास उड़ चले।

"हम वैसे ही खड़े थे और हमारी आंखें उनपर टिकी थीं। सामने, उसी जगह, राद्दा पड़ी थी, बालों की लट को हाथ से अपने सीने पर दबाए। उसकी आंखें पूरी खुली थीं और नीले आकाश की थाह ले रही थीं। वीर लोइको ज़ोबार उसके पांवों के पास पड़ा था। उसके घुंघराले बालों ने उसके चेहरे को ढककर हमारी नज़रों से ओझल कर दिया था।

"कुछ देर तक हम उसी प्रकार सोच में डूबे खड़े रहे। वृद्ध दानिलो के गलमुच्छे कांप रहे थे और उसकी घनी भौंहें खिंची हुई थीं। उसने सिर उठाकर आकाश की ओर देखा और देखता ही रह गया। उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। लेकिन वृद्ध नूर ज़मीन पर पड़ा था और उसका समूचा शरीर सुबकियों के साथ हिल रहा था।

"और यह अकारण नहीं था, मेरे नन्हे बाज़!

"इससे जो सीख मिलती है, वह यह कि किसी भी मोह में पड़कर उस पथ को न छोड़ो, जो कि तुमने अपने लिए चुना है। सीधे आगे बढ़ते जाओ – और तब, शायद, तुम्हें बुरे अन्त का मुंह नहीं देखना पड़ेगा।

"हां तो, मेरे नन्हे बाज़, पूरी कहानी मैंने तुम्हें सुना दी।"

इसके बाद मकर चुप हो गया, अपने पाइप को उसने तम्बाकू की थैली में डाला और कोट के पल्ले खींचकर अपनी छाती को ढक लिया। अब महीन बौछारें पड़ रही थीं और हवा पहले से भी ज्यादा तेज हो गई थी। लहरें, और भी झुंझलाहट में भरी, सिर धुन रही थीं और उनकी धुंधली गरज सुनाई पड़ रही थी। घोड़े एक-एक करके बुझती हुई आग के पास सिमट आए, अपनी बड़ी-बड़ी संवेदनशील आंखों से उन्होंने हमें देखा और फिर हमारे चारों ओर घेरा बनाकर खड़े हो गए।

"एइहो!" मकर ने दुलार से उन्हें पुकारा और जब वह अपने प्रिय घोड़े काल्लू की पीठ थपथपा चुका तो उसने मेरी ओर मुड़ते हुए कहा – "अब सोने की जुगत करनी चाहिए।" अपने कौकशी कोट में सिर से पांव तक अपना समूचा बदन लपेट, वह ज़मीन पर लम्बा पसर गया और निश्चल पड़ रहा।

मेरी आंखों में नींद नहीं थी। मैं वहीं बैठा स्तेपी के अंधकार की थाह लेता रहा और मेरी आंखों के सामने राद्दा का – उस गर्वीली, निर्बाध और सुन्दर राद्दा का – चित्र तैरता रहा। बालों की लट हाथ में लिए वह अपने सीने के घाव को उससे ढके थी और उसकी पीली पड़ी कोमल उंगलियों के बीच से रक्त की बूंदें चूती हुई धरती पर गिरकर अग्निमय चिंगारियों की भांति छितरा जाती थीं।

और उसके पीछे लोइको ज़ोबार की वीर आकृति तैर रही थी।

काले बालों के घुंघराले लच्छे उसके चेहरे पर छाए थे और बालों के नीचे से बड़े-बड़े बर्फ़-से ठंडे आंसुओं की धारा बह रही थी।

बारिश तेज़ हो गई और समुद्र इन दो सुन्दर जिप्सियों के—लोइको ज़ोबार और वृद्ध सैनिक दानिलो की लड़की राद्दा के—शोक में गम्भीर निनाद कर रहा था।

और वे दोनों, रात के उस अंधकार में, एक दूसरे का पीछा करते बगूले की भांति लपक रहे थे—एकदम निःशब्द और अत्यन्त कमनीय, और सुन्दर ज़ोबार—लाख चक्कर काटने और कोशिश करने के बाद भी—गर्वीली राद्दा को पकड़ नहीं पा रहा था।

१८९२



नमक की दलदलों में

१

"नमक बनाने के केन्द्र – साल्ट मार्श – जाओ, मित्र। वहां हमेशा काम की भरमार रहती है। हर समय और हर घड़ी, जब भी जाओ, काम मिल जाएगा। असल में वह काम इतना बेहूदा और जानलेवा है कि

अधिक दिनों तक वहां कोई चिपका नहीं रह सकता। सब भाग आते हैं। बरदाश्त नहीं कर पाते। सो वहां जाओ और दो-चार दिन काम करके देखो। फ़ी ठेला सात एक कोपेक मज़दूरी मिलती है। इतने में एक दिन का खर्च मज़े में चल जाएगा।"

यह सलाह देने के बाद उसने – वह एक मछियारा था – ज़मीन पर थूका, सिर उठाकर फिर समुद्र के उस पार क्षितिज की ओर देखा और मन ही मन किसी उदास गीत की धुन गुनगुनाने लगा। मैं उसकी बग़ल में मछियारों के बाड़े की छांव में बैठा था। वह अपनी कनवास की पतलून की मरम्मत कर रहा था। रह-रहकर वह जमुहाई लेता और काफ़ी काम न मिलने तथा काम की खोज में दुनिया भर की धूल छानने के बारे में निराशा भरी बातें बुदबुदाता जाता।

"जब देखो कि अब नहीं सहा जाता तो यहां चले आना और अपने आराम करना। बोलो, क्या कहते हो। जगह ज्यादा दूर भी नहीं है – यहां से तीन एक मील होगी। ऊंह, कितना अटपटा है हमारा यह जीवन।"

मैंने उससे बिदा ली, सलाह के लिए उसे धन्यवाद दिया और समुद्र के किनारे-किनारे साल्ट मार्श के लिए चल दिया। अगस्त मास की गर्म सुबह थी। आकाश उजला और साफ़ था और समुद्र शांत तथा सौम्य। हरी लहरें, एक दूसरे का पीछा करती, तट की बालू पर दौड़ रही थीं। उनकी हल्की छलछलाहट उदासी भरी थी। सामने, खूब दूर, नीली धुंध के बीच, तट की पीली बालू के ऊपर सफ़ेद पैवन्द-से नज़र आ रहे थे। यह ओचाकोव नगर था। मछियारों के बाड़े को, जो पीछे रह गया था, समुद्र की नीली-हरी आभा से रंगे रेत के उजले पीले टीलों ने निगल लिया था।

बाड़े में, जहां मैंने रात बिताई थी, दुनिया भर की ऐसी-ऐसी होनी-अनहोनी बातें और कहानियां मैंने सुनी थीं कि मेरा जी भारी हो गया था।

लहरों की ध्वनि भी जसे मेरे इस भारीपन का साथ दे रही थी और उसे और भी घना बना रही थी।

साल्ट मार्श शीघ्र ही दिखाई देने लगा। क़रीब चार-चार सौ वर्ग-मीटर के तीन प्लाट थे। नीची मेड़ें और सकरी खाइयां उन्हें एक दूसरे से अलग करती थीं। ये तीनों प्लाट नमक निकालने की तीन मंज़िलों के सूचक थे। पहला प्लाट समुद्र के पानी से भरा था। इस पानी के भाप बनकर उड़ जाने पर गुलाबी झलक लिए पीले-भूरे नमक की एक पतली तह रह जाती थी। दूसरे प्लाट में नमक के दूह जमा किए जाते थे। हाथों में फावड़े लिए स्त्रियां, जिनके ज़िम्मे यह काम था, घुटनों तक काली चमचमाती दलदल में खड़ी थीं। वे आपस में न तो बतिया रही थीं, न ही एक दूसरे को पुकार रही थीं। केवल उनकी उदास मटमैली आकृतियां इस घनी, लोनी और घाव कर देनेवाली कास्टिक 'रापा' की पृष्ठ-भूमि में–लोगों ने इस दलदल का यही नाम रख छोड़ा था–खोई-सी मुद्रा में हरकत करती नज़र आ रही थीं। तीसरे प्लाट से नमक हटाया जा रहा था। अपने हथठेलों पर झुके, मूक और निश्चेत, मज़दूर कसमसा रहे थे। हथठेलों के पहिये रगड़ खाते और चीं-चरर करते, और ऐसा मालूम होता जैसे यह आवाज़ नंगी मानवीय पीठों की लम्बी पांत द्वारा ईश्वर के दरबार में भेजी गई एक शोकपूर्ण अपील हो। और ईश्वर था कि वह धरती पर असह्न गर्मी उंडेल रहा था, जिसने लोनी दलदली घासों और नमक के कणों से युक्त पपड़ी-जमी धरती को झुलसा दिया था। हथठेलों की एकरस चरमर को वेधकर फ़ोरमैन की गहरी आवाज़ सुनाई दे रही थी। वह मज़दूरों पर गालियों की बौछार कर रहा था। मज़दूर आते और अपने ठेलों को उसके पांव के पास उंडेलकर ख़ाली कर देते। वह एक डोल में से नमक के ढेर पर पानी डालता और इसके बाद उसे एक लम्बे पिरामिड के आकार में जमा देता। वह एक

लम्बा आदमी था, अफ़्रीका के लोगों की भांति काला और नीली तथा सफ़ेद पतलून पहने हुए। उस जगह, जहां नमक के एक ढेर पर खड़ा वह अपने हाथ के बेलचे को हवा में हिला रहा था, ठेला-मज़दूरों पर वह बराबर चीख़-चिल्ला रहा था। तख़्तों के ऊपर से वे ठेले खींचकर लाते और वह वहीं से चीख़ उठता—

"ऐ, इसे बाईं ओर ख़ाली करना! बाईं ओर, भालू के बच्चे, बाईं ओर! चमड़ी उधेड़कर रख दूंगा! क्यों क्या अपने दीदे फुड़वाने की जी में है? उधर कहां जा रहा है, बिच्छू?"

कुत्सा से भरा कमीज़ के छोर से वह अपने चेहरे का पसीना पोंछता, कांखता और, गालियों की अपनी बौछार को एक मिनट के लिए भी रोके बिना, नमक की सतह को समतल बनाने में जुट जाता। पीठ की ओर से बेलचे को वह उठाता और पूरा जोर लगाकर नमक पर उसे दे मारता। मज़दूर यंत्रवत् अपने ठेलों को खींचकर लाते और उसके फ़रमान के मुताबिक़—दाहिनी या बाईं ओर—यंत्रवत् उन्हें ख़ाली कर देते। इसके बाद, खींच-तानकर, वे अपनी कमर सीधी करते और अगला बोझ लाने के लिए वापिस लौट पड़ते। डगमगाते डगों से अपने ठेलों को खींचते हुए वे लौटते. घनी काली दलदल में आधे धंसे तख़्ते उनके पांवों के नीचे डगमगाने लगते। उनके ठेले अब पहले से कम लेकिन अधिक उबा देनेवाली आवाज़ करते।

"क्या टांगें टूट गई हैं, हरामी पिल्लो?" फ़ोरमैन उनके पीछे चिल्लाता—"तेज़ी दिखाओ, तेज़ी!"

वे उसी दब्बू ख़ामोशी से काम में जुते रहते, लेकिन कभी-कभी धूल और पसीने से चिपचिपाते उनके निःसत्व चेहरे भीतर ही भीतर ग़ुस्से और असन्तोष से बल खाने लगते। अक्सर ऐसा होता कि कोई एक ठेला तख़्तों पर से खिसलकर दलदल में फंस जाता, आगे वाले ठेले बढ़ जाते, पीछे वाले वहीं

रुक जाते और मैले-कुचले तथा गंदे तलछटी मज़दूर, अपने ठेलों को थामे, पथराई-सी आंखों से अपने उस साथी की ओर देखने लगते। ऐसे देखते मानो उनका उससे कोई वास्ता न हो। भारी-भारी ठेले को—छः-सात मन पक्के वज़न को—उठाने और उसे फिर से तख़्तों पर रखने में उसकी एड़ी-चोटी का पसीना एक हो जाता और वे वैसे ही उदासीन भाव से ताकते रहते।

आकाश में बादलों की परछाईं तक नहीं थी। सूरज आग बरसा रहा था। तपन बढ़ती ही जाती थी। ऐसा मालूम होता था मानो सूरज ने, अपने आपको न्योछावर तथा धरती के साथ अपना गहरा लगाव सिद्ध करने के लिए, ख़ास तौर से आज का ही दिन चुना हो।

यह सब देखने-जांचने के बाद, काम पाने के लिए, मैंने भी अपना भाग्य आज़माने का निश्चय किया। लापर्वाही का चोला धारण कर, मैं आगे बढ़ा और उस तख़्ताबन्दी के पास पहुंचा जिसके ऊपर से मज़दूर अपने ख़ाली ठेलों को खींचते हुए ला रहे थे।

"सलाम साथियो। अच्छी तरह तो हो!"

और उनका रुख़ देखकर मैं एकदम सकते में आ गया। पहला मज़दूर मज़बूत काठी और सफ़ेद बालों वाला एक बूढ़ा आदमी था। वह अपनी पतलून को घुटनों तक और आस्तीनों को कंधों तक चढ़ाए था, जिनमें से ताम्बे के रंग का उसका कड़ियल बदन दिखाई दे रहा था। उसने मेरी आवाज़ सुनी तक नहीं और मेरी ओर ज़रा भी ध्यान दिए बिना सामने से निकल गया। दूसरा मज़दूर सुनहरी बाल और भूरी आंखों वाला एक युवक था। दुश्मन की भांति घूरकर उसने मुझे देखा, चिढ़कर मुंह बनाया और लुबाब में एक गंदी गाली देता हुआ आगे बढ़ गया। तीसरे मज़दूर ने—जो प्रत्यक्षतः ग्रीक मालूम होता था क्योंकि उसका रंग तिलचट्टे की भांति कत्थई और बाल घुंघराले थे—खिन्नता प्रकट की कि क्या करे,

उसके हाथ फंसे हैं, अन्यथा मेरी नाक से अपने मुक्के का वह ज़रूर परिचय कराता। उसकी आवाज़ में भी उतनी ही बेरुखी थी, जितनी उसकी इस इच्छा में नहीं थी, जिसे उसने प्रकट किया था। चौथा गला फाड़कर चिल्लाया— "हल्लो, कांच की आंख!" और उसने टंगड़ी मारने की कोशिश की।

अगर मैं ग़लती नहीं करता तो भले समाज में जिसे 'ठंडा स्वागत' कहते हैं, वह ऐसा ही होता है। इतने ज़ोरदार रूप में जीवन में पहले कभी मेरा उससे वास्ता नहीं पड़ा था। सकपकाहट में, अनजाने ही, मैंने अपना चश्मा उतारकर उसे जेब के हवाले कर दिया, फिर जैसे-तैसे रास्ता निकालता फ़ोरमैन की ओर बढ़ चला—यह जानने के लिए कि मुझे भी काम मिल सकता है या नहीं। मैं उसके पास पहुंचा भी नहीं था कि वह दूर से ही चिल्लाया—

"ऐ, तुम क्या चाहते हो? क्या काम की तलाश है?"

मैंने अपनी रज़ामन्दी जता दी।

"क्या तुमने कभी ठेला खींचने का काम किया है?"

मैंने बताया कि मलबा ढोने का काम कर चुका हूं।

"मलबा? उसकी कौन गिनती। मलबा एकदम दूसरी चीज़ है। हम यहां नमक ढोते हैं, मलबा नहीं। जहन्नुम का रास्ता नापो, वहीं तुम्हें काम मिलेगा। ऐ अष्टावक्र, यह ठेला ठीक यहां, मेरे पांव के पास, ख़ाली करना!"

और अष्टावक्र ने, जो कि एक ठस, लटकती हुई मूंछों और मुंहासों से लाल नाक वाला आदमी था और डील-डौल में पूरा भीम मालूम होता था, ज़ोरों से गुर्राते हुए अपना ठेला ख़ाली कर दिया। नमक बाहर आ गिरा। अष्टावक्र ने कोसा, फ़ोरमैन ने कोसने में उसे और भी मात किया, दोनों एक दूसरे की सराहना में मुसकराए और फिर मेरी ओर मुख़ातिब हुए।

"हां, तो तुम क्या चाहते हो?" फ़ोरमैन ने पूछा।

"शायद साग-भाजी में डालने के लिए नमक की बुकनी लेने आए हो, – क्यों, ठीक है न, कत्साप*?" फ़ोरमैन की ओर आंख मारते हुए अष्टावक्र ने कहा।

मैंने फ़ोरमैन से काम देने के लिए बिनती की, उसे विश्वास दिलाया कि मैं जल्दी ही काम का आदी हो जाऊंगा और अन्य किसीसे पीछे नहीं रहूंगा।

"आदी होने से पहले ही तुम्हारी कमर टूट जाएगी। लेकिन मेरी बला से, तुम अभी जुट जाओ। पर यह समझ लो, पहले दिन पचास कोपेक से ज्यादा नहीं दूंगा। ऐ, इसे एक ठेला दे दो!"

जाने कहां से एक अध-नंगा लड़का प्रकट हो गया। उसकी उघरी हुई टांगें घुटनों तक चिथड़ों में लिपटी थीं।

"मेरे साथ आओ," सन्देह भरी नज़र से मुझे देखने के बाद वह बुदबुदाया।

मैं उसके साथ चल दिया और उस जगह पहुंचा, जहां एक के ऊपर एक ठेलों का अम्बार लगा था। मैं अपने लिए एक सबसे हल्का ठेला खोजने लगा। लड़का वहीं खड़ा अपनी टांगें खुजला रहा था और मेरी ओर देख रहा था।

जब मेरी पसन्द का ठेला मिल गया तो उसने कहा – "वाह, तुमने भी क्या ठेला चुना है। तुमने यह तक नहीं देखा कि इसका पहिया टेढ़ा है?" – यह कह वह वहां से दूर खिसक गया और ज़मीन पर लेटकर बदन सीधा करने लगा।

मैंने दूसरा ठेला छांट लिया और अन्य मजदूरों के साथ जा मिला, जो नमक लादने जा रहे थे। लेकिन मेरा जी एक अजीब बेचैनी से दबा था, जो मुझे अपने अन्य साथी मज़दूरों के साथ घुलने-मिलने से रोक रही

* चिढ़ाने के लिए रूसियों को 'कत्साप' कहा जाता था।

थी। उन सबके चेहरे एक बहुत ही सुनिश्चित लेकिन अप्रकट ऊब और झुंझलाहट से भरे थे। थकान ने उन्हें चूर-चूर कर दिया था और वे बुरी तरह खार खाए थे – वे नाराज़ थे उस सूरज से, जो इतनी बेरहमी से उनकी चमड़ी को झुलसा रहा था, वे नाराज़ थे उन तख़्तों से जो उनके ठेलों के नीचे डगमग डोलते थे, और वे नाराज़ थे 'रापा' से – उस कुत्सित दलदल से, जो घनी, खारी और उन तेज़ वाणों से भरपूर थी, जो उनके पांवों को छेद डालते थे और घावों के भीतर घुसकर इस हद तक उन्हें काटते थे कि वे रिसते हुए नासूर बन जाते थे। ग़रज़ यह कि वे नाराज़ थे हर उस चीज़ से, जो उनके इर्द-गिर्द मौजूद थी और जिससे उनका वास्ता पड़ता था। यह नाराज़ी दिखाई देती थी उनकी उन प्रकट नज़रों में, जो कि कभी-कदास वे एक दूसरे पर डालते थे, और गालियों की उस बौछार में, जो कि जब-तब उनके सूखे गलों से निकलती रहती थी। मेरी ओर किसीने ध्यान तक नहीं दिया। लेकिन जब हमने प्लाट में पांव रखा और तख़्ताबन्दी पर मे नमक के ढूहों की ओर चले तब अचानक अपनी टांगों के पिछले हिस्से में एक प्रहार का मैंने अनुभव किया और मुड़ते ही निम्न शब्दों की फुंकार मुझे सुनाई दी –

"औघड़, डग तक नहीं उठते!'

और मैं, सकपकाकर, तेज़ी से डग उठाने लगा। इसके बाद, ठेले को खड़ा कर, फावड़े से मैं उसमें नमक भरने लगा।

"ऐ, पूरी तरह भर!" उक्रइन के उस भीमकाय अष्टावक्र ने कहा, जो मेरे पास ही खड़ा था।

मैंने ठेले पर नमक का भरपूर ढेर लगा दिया। तभी पीछे वाले कामगारों ने अपने आगे वालों से कहा – "रुको नहीं, बढ़े चलो।" आगे वालों ने थूककर अपनी हथेलियों पर मसला, ज़ोरों से कांखकर अपने ठेलों को उठाया और एकदम दोहरे होकर अपनी गरदनों को आगे की ओर ताने हुए–

मानो ऐसा करने से बोझ कुछ हल्का हो जाएगा—ठेलों को खींचते हुए वे बढ़ चले।

उनके तरीक़ों की नक़ल करते हुए अपनी सकत के मुताबिक़ मैं भी एकदम दोहरा हो गया और आगे की ओर ज़ोर लगाने लगा। ठेला खिसक चला। पहिये चरमराए, मेरे गले की हड्डी लगी कि तड़कना चाहती है और मेरी बांहों के पुट्ठे खिंचाव के मारे लरज़ उठे। लड़खड़ाता-सा एक डग मैंने भरा, फिर दूसरा भरा—कभी दाहिनी ओर धकिया दिया जाता, कभी बाईं ओर,—धचकोले खाता धिकल चला—ठेले का पहिया तख़्तों से नीचे उतर गया और उसके साथ-साथ मैं भी औंधे मुंह दलदल में जा गिरा। ठेले का हत्था शान के साथ मेरे सिर से टकराया और इसके बाद, धीर गति से, ऊपर का हिस्सा नीचे और नीचे का हिस्सा ऊपर हो ठेला उलट गया। कान-बेधी सीटियों, चीख़-चिल्लाहटों और हंसी की आवाज़ों ने—जो कि मुझे गिरता देख फूट पड़ी थीं— घनी और गर्म कीचड़ में जैसे मुझे और भी अधिक लथेड़ दिया और उस समय, जब कि मैं दलदल में फंसे ठेले को उठाने की बेकार कोशिश में लथपथ हो रहा था, मुझे अपने सीने में एक पैने दर्द का अनुभव हुआ।

"ज़रा अपने हाथ का सहारा तो दो, मित्र!" मैंने उक्रइनी से कहा, जो मेरे पास ही खड़ा था और अपने दोनों बाज़ुओं को पकड़े हंसी के मारे दोहरा हुआ जा रहा था।

"एह्यू, कीचड़-सोख हरामी! औंधे मुंह जा गिरा न? इसे फिर तख़्ताबंदी पर ले आ। बाएं बाज़ू नीचे की ओर धकेल। तक, तक! यह 'रापा' दलदल तुझे निगल जाएगी, अगर सावधानी न बरती तो!" यह कह वह फिर हंसने लगा, यहां तक कि उसकी आंखों में आंसू आ गए और दोनों बाज़ू पकड़े, हांफने लगा।

सफ़ेद बालों वाले वृद्ध ने, जो मेरे आगे था, मेरी ओर देखा और हवा में अपना हाथ हिलाकर मुझे दफ़ा कर दिया।

"आख़िर तख़्ताबन्दी क्या इसे काटती थी, जो कीचड़ में कूद पड़ा?" उसने कहा और गुस्से में कांखता अपने ठेले के साथ आगे बढ़ गया।

जो आगे थे वे नहीं रुके, जो पीछे थे वे भौंहें सिकोड़े मुझे अपने ठेले से जूझते और उसे निकालने का प्रयत्न करते देखते रहे। कीचड़ और पसीना मेरे बदन से चू रहा था। मेरी मदद के लिए कोई आगे नहीं बढ़ा। नमक के ढेर से फ़ोरमैन की आवाज़ आ रही थी—

"शैतान के बच्चो, क्या वहीं जाम हो गए? एइयू कुत्तो, सुअर के बच्चो! आंख बची नहीं कि हरामीपन करने लगे। रुको नहीं, आगे बढ़ो। खुदा तुम्हें ग़ारत करे!"

"ऐ, रास्ता दो," मेरे पीछे से उक्रइनी भौंक उठा और अपने ठेले का हत्था क़रीब-क़रीब मेरे सिर से टकराता खटाक से निकल गया।

फ़क़त दम, अकेले अपने ही बूते पर, जैसे-तैसे कर मैंने ठेले को बाहर निकाला, और चूंकि ठेला अब ख़ाली और बुरी तरह कीचड़ में सना था, इसलिए मैं उसे प्लाट से बाहर ले भागा ताकि उसके बदले कोई दूसरा ठेला ले सकूं।

"तुम्हारा यह ठेला तो उड़न-खटोला निकला। कोई बात नहीं, शुरू में सभी के साथ ऐसा होता है, मित्र!"

मैंने अपने चारों ओर नज़र डाली और क़रीब बीस साल का एक लड़का मुझे दिखाई दिया। वह नमक के दूह के पास, कीचड़ में बिछे एक तख़्ते पर, पड़ा था और अपने हाथ की हथेली को चूस रहा था। मुझे देखकर उसने अपनी गरदन हिलाई। उसकी आंखों में, जो उंगलियों के बीच से झांक रही थीं, सहृदयता और मुसकराहट की चमक थी।

"सो कुछ नहीं," मैंने कहा – "शीघ्र ही मैं भी सब सीख जाऊंगा। लेकिन यह तुम्हारे हाथ में क्या हो गया है?"

"यों ही एक मामूली-सी खरोंच थी, लेकिन नमक उसे काटता जाता है। सो नमक को चूसकर बाहर निकाल रहा हूं। अगर ऐसा न करूं तो धंधे से हाथ धोना पड़े – यह हाथ बिल्कुल बेकाम हो जाए। लेकिन अच्छा हो कि तुम अपने काम पर लौट जाओ। इस बात का मौक़ा ही क्यों दो कि फ़ोरमैन तुमपर चिल्लाना शुरू कर दे?"

मैं अपने काम पर पहुंच गया। दूसरी ढोवाई में कोई दुर्घटना नही हुई। तीसरी, फिर चौथी और इसके बाद दो बार और मैंने ढोवाई की। किसीने मेरी ओर नज़र तक उठाकर नहीं देखा और इस उपेक्षा के प्रति – आम तौर से जो कि एक अखरनेवाली चीज़ होती है – गहरी कृतज्ञता का मैंने अनुभव किया।

"चलो, खाने का समय हो गया," किसी ने चिल्लाकर कहा।

लोगों ने आराम की सांस ली और खाना खाने चल दिये, लेकिन उत्साह की तब भी उनमें कोई झलक नहीं थी, विश्राम का अवसर पाकर भी वे ख़ुशी से नहीं छलछलाए। उनके हर काम में, जो कुछ भी वे करते थे, एक अनमनापन झलकता था, दबा हुआ गुस्सा और असन्तोष दिखाई देता था। ऐसा मालूम होता था कि विश्राम इतनी सामर्थ्य नहीं है, जो श्रम द्वारा झंझोड़ी गई उनकी हड्डियों और गर्मी से निःसत्व उनकी मांस-पेशियों में आनन्द का संचार कर सके। मेरी पीठ दर्द कर रही थी, मेरी टांगों और कंधों का भी यही हाल था, लेकिन मैंने कोशिश की कि यह बात ज़ाहिर न होने पाए और फुर्ती से डग भरता शोरबे के देग के पास पहुंच गया।

"ऐ, इधर कहां चढ़े चले आते हो?" एक बूढ़े मज़दूर ने, जो एकदम वहशी मालूम होता था, टोका। वह नीले रंग का फटा पुराना

ब्लाउज़ पहने था। उसका चेहरा भी, नशा करने की वजह से, उसके ब्लाउज़ की भांति नीला मालूम होता था। और उसकी छप्परनुमा भारी भौंहों के नीचे – जो सदा चढ़ी रहती थीं – उसकी भयानक और उपहासपूर्ण आंखें अंगारों की भांति चमक रही थीं।

"ऐ, वहीं खड़े रहो। तुम्हारा नाम क्या है?"

मैंने उसे बता दिया।

"यह बात है। बड़ा मूर्ख था तुम्हारा पिता, जो उसने तुम्हारा यह नाम रखा। मक्सिमों को पहले दिन शोरबे के देग के पास नहीं फटकने दिया जाता, – समझे! मक्सिम पहले दिन अपने ही भोजन पर गुज़र करते हैं। अगर तुम्हारा नाम इवान या ऐसा ही कुछ और होता तो कोई बात नहीं थी। मिसाल के तौर पर मुझे लो। मेरा नाम मार्त्वेई है, इसलिए मुझे खाना मिलेगा। लेकिन मक्सिम नहीं पा सकता। वह केवल मुझे खाते हुए देख सकता है। सो देग के पास से दफ़ा हो जाओ।"

अचरज में भरकर मैंने उसे देखा, फिर वहां से हटकर दूर ज़मीन पर बैठ गया। इस व्यवहार ने मुझे स्तब्ध कर दिया। जीवन में पहले कभी ऐसा अनुभव नहीं हुआ था और निश्चय ही ऐसा कोई काम मैंने नहीं किया था, जिसके बदले में मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया जाता। इससे पहले भी बीसियों बार मजदूरों की टुकड़ियों के साथ उठने-बैठने का मुझे मौक़ा मिला था और हमारे सम्बन्ध शुरू से ही हमेशा सीधे-सादे और बिरादराना होते थे। यहां का समूचा व्यवहार कुछ इतना अजीब था कि बावजूद उस अपमान और चोट के, जो कि मुझे पहुंची थी, उत्सुकता ने मुझे घेर लिया। मैंने इरादा किया कि इस भेद का पता लगाऊंगा। यह निश्चय कर लेने के बाद प्रत्यक्षत: मैं शांत भाव से उन्हें खाना खाते देखता और काम पर लौटने की बाट जोहता रहा। यह मालूम करना आवश्यक था कि उन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार क्यों किया।

२

आख़िर उनका खाना ख़त्म हुआ, डकार लेना ख़त्म हुआ और देग से दूर हट वे धूम्रपान करने लगे। उकड़नी भीम और वह लड़का, जिसके पांवों में पट्टियां बंधी थीं, मेरे सामने आकर बैठ गए। ठेलों की पांत का वह दृश्य, जिन्हें हम नख़ाबन्दी पर छोड़ आए थे, उनकी ओट के कारण अब मेरी आंखों से ओझल हो गया था।

"कहो, मित्र, धूम्रपान करोगे?" उकड़नी भीम ने पूछा।

"धन्यवाद, कर सकता हूं," मैंने जवाब दिया।

"क्या तुम्हारे पास अपना तम्बाकू नहीं है?"

"अगर होता तो आपसे क्यों लेता?"

"ठीक कहते हो। यह लो," और उसने मुझे अपना पाइप दे दिया—"काम से भागोगे तो नहीं?—बोलो, क्या इरादा है।"

"हां, जब तक बनेगा करूंगा।"

"ठीक। तुम कहां के रहनेवाले हो?"

मैंने उसे बता दिया।

"क्या यह जगह यहां से बहुत दूर है?"

"क़रीब ढाई हज़ार मील दूर होगी।"

"ओह, यह तो काफ़ी दूर है। तुम यहां किस फेर में चले आए?"

"उसी फेर में, जिसमें कि तुम यहां आए।"

"सो गांववालों ने तुम्हें भी इसलिए गांव से खदेड़ दिया कि तुम चोरी करते थे,—क्यों?"

"ऐं, क्या कहा आपने?" यह अनुभव कर कि वह मुझे अपनी लपेट में ले रहा है, मैंने उससे पूछा।

"मैं यहां इसलिए आया था कि चोरी करने पर मुझे गांव से खदेड़ दिया गया, और तुमने बताया कि तुम्हारे यहां आने का कारण भी वही

है, जो कि मेरे आने का," यह कह वह जोरों से खिलखिलाकर हंसा। वह प्रसन्न था कि उसने मुझे खूब पकड़ा।

उसके साथी ने कुछ नहीं कहा। उसने केवल कनखियों से उसे देखा और शैतानी के साथ मुसकरा दिया।

"ज़रा रुको..." मैंने कहना चाहा।

"रुकने का समय नहीं है, मित्र। काम पर वापिस जाना है। चलो, तुम भी चलो। तुम मेरे वाला ठेला ले लेना और ठीक मेरे पीछे ही लग जाना। मेरा ठेला अच्छा है। भरोसे की चीज़। चलो, अब चलें।"

और वह चल दिया। जब मैं उसका ठेला उठाने लगा तो उसने तुरन्त टोका—"ठहरो, मैं खुद इसे ले चलूंगा। तुम अपना ठेला मुझे दे दो। अपना ठेला मैं उसपर रख दूंगा और इस प्रकार उसे चड्डी खिलाता ले चलूंगा। अच्छा है, कुछ देर वह भी आराम कर ले।"

उसकी यह बात सुन मेरे हृदय में सन्देह ने सिर उभारा। मैं उसके साथ-साथ चल रहा था और लगे हाथ उसके ठेले का भी जायज़ा लेता जाता था, जो औंधा कर मेरे ठेले में रखा था। मैं यह निश्चय करना चाहता था कि मेरे साथ कहीं कोई चाल तो नहीं चली जा रही। लेकिन मुझे कोई ऐसी चीज़ नज़र नहीं आई, सिवा इसके कि एकाएक मैं सबके आकर्षण का केन्द्र बन गया हूं। इसे छिपाने की कोशिश की जा रही थी, लेकिन रह-रहकर कनखियों से मेरी ओर देखना, गरदनें हिलाकर इशारे करना और वह सारी फुसफुसाहट, जो चल रही थी, मुझसे छिपी नहीं थी। यह मैं जानता था कि मुझे खूब चौकस रहना होगा। कारण कि अब तक जो कुछ हो चुका था, उसके आधार पर अन्दाज़ लगाया जा सकता था कि जो नया जाल अब बिछाया जा रहा है, वह अत्यन्त मौलिक होगा।

"यह लो, हम आ गए," मेरे ठेले में से अपना ठेला उठाते और उसे मेरी ओर धकेलते हुए उक्रइनी भीम ने कहा—"इसमें नमक लाद लो।"

मैंने चारों ओर देखा। सभी अपने काम में बुरी तरह डूबे थे। सो मैं भी नमक लादने लगा। नमक के बेलचे पर से गिरने की सरसराहट के सिवा अन्य कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। यह निस्तब्धता मुझे बड़ी बोझिल मालूम हुई। मेरे मन में यह बात बैठ गई कि यहां से चल देने में ही भलाई है।

"हद हो गई। क्या तुम लोग ऊंघ रहे हो? आगे क्यों नहीं बढ़ते?" नीले चेहरे वाले मात्वेई ने फ़रमान जारी किया।

मैंने ठेले के हत्थों को पकड़ा और भारी ज़ोर लगाकर उसे धकेलने लगा। तभी पैने दर्द से मैं चीख़ उठा और ठेला मेरे हाथों से छूट गया। इससे और भी ज़्यादा, पहले से भी बदतर, दर्द हुआ। मेरे दोनों हाथों की खाल छिल गई। दर्द और ग़ुस्से से दांतों को भींचकर मैंने ठेले के हत्थों की जांच की और देखा कि उनके बाहरी सिरों को चीरकर दरारों को खुला रखने के लिए उनमें लकड़ी-खपचियां खोंसी हुई हैं। यह सब इतनी होशियारी से किया गया था कि उसे आसानी से पकड़ना मुश्किल था। और सोचा यह गया था कि जब मैं हत्थों को मज़बूती से पकड़ूंगा तो खपचियां छिटककर निकल जाएंगी और मेरी खाल हत्थों की दरारों की पकड़ में आ जाएगी। ऐसा ही हुआ भी। सिर उठाकर मैंने अपने इर्द-गिर्द देखा। चीख़ों, आवाज़कशी और उपहास का एक तमाचा-सा मेरे मुंह पर पड़ा। भोंड़ी और कुत्सित मुसकराहट से सबके चेहरे रंगे थे। नमक के ढेर से फ़ोरमैन की भद्दी गालियों की बौछार आ रही थी, जिसका उनपर कोई असर नहीं हो रहा था,—इस हद तक मेरा तमाशा देखने में वे डूबे थे। सूनी और चकराई-सी आंखों से मैंने अपने चारों ओर देखा। लेकिन इस बात का मुझे चेत था कि मेरा हृदय, भीतर ही भीतर, अपमान की भावना से, इन लोगों के प्रति घृणा और बदला लेने की इच्छा से उमड़-घुमड़ रहा है। वे मेरे सामने जमघट लगाये थे। वे हंस रहे थे और गंदगी की बौछार कर

रहे थे, और मैं बुरी तरह—मर्मान्तक रूप में—उन्हें नीचा दिखाने और पांव तले रौंदने के लिए छटपटा रहा था।

"वहशी," मैं चीखा, मुक्का तानकर उनकी ओर लपकता और वैसी ही कुत्सित गालियां उन्हें देता हुआ, जैसी कि वे मुझे दे रहे थे।

जमघट में एक कंपकंपी-सी दौड़ गई और सकपकाकर वे पीछे हट गए। लेकिन उक्रइनी और नीले चेहरे वाला मात्वेई अपनी जगह से नहीं डिगे और चुपचाप अपनी आस्तीनें चढ़ाने लगे।

"अच्छा तो आओ, दो-दो हाथ हो जाएं," उक्रइनी चटखारे लेते हुए बुदबुदाया और अपनी आंखें बराबर मुझपर जमाए रहा।

"क्या देखते हो, गावरीला, आज इसे चौक चान्दनी की सैर करा दो," मात्वेई ने उसे उकसाया।

"तुमने मेरे साथ ऐसी हरकत क्यों की?" मैंने चिल्लाकर कहा—"मैंने आखिर तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? क्या मैं भी तुम सब लोगों की तरह आदमी नहीं हूं?"

ये तथा इसी तरह के अन्य कितने ही बेमानी, बेहूदा और ऊटपटांग शब्द मैंने दागे। गुस्से से मेरा सारा बदन कांप रहा था। साथ ही इस बारे में भी मैं खूब चौकस और चौकन्ना था कि वे मेरे साथ और कोई नयी हरकत न कर बैठें।

लेकिन बेजान चेहरे, जो मेरी ओर मुड़े थे, अब सहानुभूति, संवेदन से एकदम शून्य नहीं थे और उनमें से कुछ तो क़रीब-क़रीब अपराधी जैसा भाव धारण किये थे,—यहां तक कि मात्वेई और उक्रइनी भी सकपकाकर एक या दो डग पीछे हट गए। मात्वेई अपने ब्लाउज़ को नोच रहा था और उक्रइनी अपनी जेबों में डुबकी लगा रहा था।

"आखिर क्यों और किसलिए तुमने यह हरकत की?" मैंने फिर बल देकर कहा।

वे कोरी चुप्पी साधे थे। उत्राइनी एक सिगरेट से खेल कर रहा था और उसकी आंखें ज़मीन में गड़ी थीं। मात्वेई वहां से खिसक गया और दूर, अन्य सबसे पीछे, चला गया। बाक़ी सब, उदास भाव से चुपचाप सिर खुजलाते, अपने-अपने ठेलों पर वापिस पहुंच गए। चीख़ता-चिल्लाता और अपना मुक्का हिलाता आख़िर फ़ोरमैन भी वहां आ धमका। यह सब इतनी तुर्ताफुर्ती में हो गया कि नमक रोलने का काम करनेवाली स्त्रियां, जिन्होंने मेरी चीख़ सुनकर अपना काम रोक दिया था, केवल तब हमारे पास पहुंचीं, जब कि मज़दूर अपने ठेलों पर वापिस जा चुके थे। इस तीखी भावना से कुड़मुड़ाता कि एक तो मेरा बिला वजह अपमान हुआ और दूसरे बदला भी नहीं ले सका, मैं वहां अकेला ही खड़ा रह गया। यह और भी दुस्सह था। मैं अपने सवाल का जवाब चाहता था, मैं बदला चाहता था। इसलिए मैं चिल्लाया—

"ज़रा ठहरो, साथियो।"

वे ठहर गए और भन्नाए चेहरों से मेरी ओर देखने लगे।

"बोलो, तुम मुझे क्यों इतना सताते हो? क्या तुम्हारी आत्मा एकदम मर गई है?"

वे अब भी चुप थे। और यह चुप्पी ही उनका जवाब थी। मैं अब अधिक स्वस्थ चित्त था, सो उनसे बातें शुरू कीं। मैंने कहना शुरू किया कि देखो, मैं भी तुम्हारी ही भांति आदमी हूं, और यह कि तुम्हारी ही तरह मेरे भी पेट है, इसलिए मुझे भी काम करना पड़ता है, और यह कि मैं बराबर की हैसियत से तुम्हारे साथ शामिल हुआ था, क्योंकि हम सबका भाग्य एक ही डोरे से गुथा है, और यह कि मैं तुम्हें नीचा या अपने आपको तुमसे बड़ा नहीं समझता।

"हम सब बराबर हैं," मैंने कहा—"और हमें एक दूसरे को समझना तथा, जैसे भी हो, एक दूसरे की मदद करना चाहिए।"

वे वहीं, अपनी-अपनी जगह पर खड़े, ध्यान से सुन रहे थे, लेकिन नज़र बचाते हुए। मैंने देखा कि मेरे शब्दों का उनपर असर हो रहा है, और इस तथ्य ने मुझे बढ़ावा दिया। उन्हें एक नज़र देखने से ही मुझे इसका विश्वास हो गया। एक तीखे और उज्ज्वल आनन्द से मैं छलछला उठा और नमक के एक ढेर पर गिरकर मैंने खूब आंसू बहाए। जो भी होता, ऐसा ही करता,—करता न?

जब मैंने सिर उठाया तो देखा, सिवा मेरे वहां और कोई नहीं है। दिन का काम खत्म हो चुका था और मज़दूर, पांच-पांच या छः-छः टुकड़ियों में, नमक के ढेर के पास बैठे थे। सूरज की किरणों से रंजित नमक की गुलाबी पृष्ठ-भूमि में उनकी आकृतियां काले धब्बों की भांति मालूम होती थीं। अटूट सन्नाटा छाया था। समुद्री हवा के झोंके आ रहे थे। सफ़ेद बादल का एक छोटा-सा टुकड़ा धीरे-धीरे आकाश में तैर रहा था। धुंध के छोटे-छोटे गाले उसमे टूटते थे और नीले विस्तार में घुल जाते थे। हर चीज़ गहरी उदासी का संचार कर रही थी...

मैं उठ खड़ा हुआ और नमक के ढेर की ओर चल दिया। यहां से विदा ले मछियारों के बाड़े में जाने का मेरा निश्चय पक्का हो चुका था। मुझे निकट आता देख मात्वेई, उक्रइनी भीम और मझोली आयु तथा मोटी गर्दन के तीन अन्य मज़दूर उठे और मेरी ओर बढ़ आए। इससे पहले कि मैं मुंह खोल पाता, मात्वेई ने अपना हाथ बढ़ाया और, बिना मेरी ओर देखे, बोला—

"सुनो, साथी, तुम्हारा यहां रहना ठीक नहीं। अच्छा हो कि तुम गोल हो जाओ। तुम्हारी मदद के लिए हमने एक छोटी-सी रक़म जमा की है। यह लो।"

उसकी हथेली पर ताम्बे के कुछ सिक्के पड़े थे। उसका हाथ, जो मेरी ओर फैला था, कांप रहा था। यह सब इतना अनहोना था कि मैं केवल

उनकी ओर ताकता ही रह गया। वे खड़े थे—सिर लटकाए, चुपचाप, औघड़पन के साथ अपनी टांगों को खींचते, इस पांव का बोझ उस पांव पर डालते, छिपी नज़रों से इधर-उधर की थाह लेते, अपने कंधों को झटकते,—उनकी प्रत्येक हरकत बेहद अनमनी और, जहां तक हो सके, जल्दी मुझसे छुटकारा पाने की इच्छा प्रकट कर रही थी।

"नहीं, मैं यह नहीं लूंगा," माल्वेई के हाथ को दूर हटाते हुए मैंने कहा।

"बात मानो, हमें अपमानित न करो। हम वास्तव में कुछ इतने बुरे नहीं हैं। हम जानते हैं कि हमने तुम्हारी भावनाओं को चोट पहुंचाई, लेकिन अगर तुम ज़रा सोचकर देखो तो इसके लिए क्या हम सचमुच दोषी हैं? नहीं, हम दोषी नहीं हैं। इसके लिए जीवन का वह ढंग ज़िम्मेदार है, जो कि हमें बिताना पड़ता है। किस तरह का जीवन हम बिताते हैं? कुत्ते का जीवन। छः-सात मनिया ठेले, पांवों को चाट जानेवाली 'रापा' दलदल, दिन भर पीठ की चमड़ी झुलसानेवाली धूप, और—पचास कोपेक प्रति दिन। यह हर आदमी को जानवर बना देने के लिए काफ़ी है। काम, काम, काम, पगार को ठर्रे में उड़ा दो और फिर काम में जुट जाओ। आदि भी यही और अन्त भी यही। पांच साल तक ऐसा जीवन बिताओ और फिर देखो—कुछ भी मानवीय नहीं रहेगा, निरे जानवर तुम हो जाओगे—और बस। सुनो, साथी, तुम्हारे साथ तो हमने कुछ भी नहीं किया, जो कि हम एक दूसरे के साथ करते हैं, बावजूद इसके कि हम—जैसे कि कहा जाता है—पुराने यार हैं और तुम एकदम नये आए हो। तुममें क्या सुरख़ाब के पर लगे हैं, जो तुम्हारे साथ हम रियायत करते? समझ गए न? तुमने जो बातें हमसे कहीं—हां, तो क्या हम अचार डालें उनका? यों तुमने जो कुछ कहा, ठीक कहा—वह सब सच है—लेकिन वह हम पर फ़िट नहीं बैठता। तुम्हें इतना बुरा नहीं मानना चाहिए। हम तो केवल मज़ाक कर रहे थे। आखिर हमारे पास भी

तो हृदय है। लेकिन अच्छा यही है कि तुम गोल हो जाओ। तुम्हारा रास्ता और है, हमारा और। हमारी यह छोटी-सी भेंट संभालो और विदा हो जाओ। हमने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया, न ही तुमने हमारे साथ कोई अन्याय किया। यह सच है कि मामला कुछ गड़बड़ा गया, लेकिन इसके सिवा तुम और क्या आशा करते थे? यहां एक भी चीज़ हमारे हक़ में कभी भी सीधी नहीं बैठती। और तुम्हारे यहां बने रहने में कोई तुक भी नहीं है। असल बात यह है कि तुम यहां फ़िट नहीं करते। हम एक दूसरे के आदी हो गए हैं, और तुम—तुम हमारी जात के नहीं हो। यहां रहने मे कुछ भला नहीं होगा। सो तुम रास्ता नापो। तुम अपनी राह जाओ। अच्छा तो विदा!"

मैंने उन सबपर नज़र डाली। स्पष्ट ही वे सब मात्वेई से सहमत थे। सो मैंने अपना थैला कंधे पर डाला और विदा होने ही वाला था कि तभी, मेरे कंधे पर अपना हाथ रखते हुए, उक्रइनी भीम ने कहा—

"ज़रा ठहरो, एक दो शब्द मैं भी कहना चाहता हूं। तुम्हारे सिवा अगर कोई और होता तो बतौर निशानी मैं उसका जबड़ा ढीला कर देता। लेकिन हममें से कोई भी तुम्हारा बाल तक बांका करने के लिए तैयार नहीं है। उलटे हम तुम्हें भेंट दे रहे हैं। इसके लिए तुम हमारे शुक्रगुजार तक हो सकते हो।"

यह कह उसने ज़मीन पर थूका और तम्बाकू के अपने बटुवे को घमाने लगा, कुछ इस अन्दाज़ में, मानो कह रहा हो—"देखा, मैं कितना चतुर हूं।"

इस सबसे ग्रस्त, मेरे लिए एक क्षण भी रुकना असम्भव हो गया। जल्दी से मैंने विदा ली और एक बार फिर, समुद्र के किनारे-किनारे, चल दिया—मछियारों के उसी बाड़े की ओर, जहां मैंने रात बिताई थी। आसमान साफ़ और तप्त था, समुद्र रीता और शानदार। छोटी-छोटी हरी लहरें

छलछलाती हुई तट को पखार रही थीं। जाने क्यों, मैं बेहद दु:खी और लज्जित था। गर्म रेत पर भारी डग उठाता धीरे-धीरे चल रहा था। समुद्र शान्त भाव से धूप में चमक रहा था, लहरों की ध्वनि उदास और अनबूझ भावों का संचार कर रही थी...

जब मैं मछियारों के बाड़े में पहुंचा तो मेरी जान-पहचान वाला मछियारा आगे बढ़ आया।

"क्यों, पसन्द नहीं आया न, वह नमक?" उसने कहा, सन्तोष की एक ऐसी भावना के साथ, जो अपनी भविष्यवाणियों के सदा सच सिद्ध होने पर प्रकट होती है।

मैंने, एक शब्द भी कहे बिना, उसकी ओर देखा।

"नमक, और मात्रा से अधिक!" उसने दृढ़ता से कहा—"भूखे हो? जाओ और थोड़ा दलिया पेट में डाल लो। कम्बख़्तों ने जाने किस फ़िराक़ में इतना अधिक बना डाला,—आधा बच गया है। जाओ और मज़े से चमचा चलाओ। बहुत बढ़िया दलिया है,—फ़्लांडर और स्टर्जन मछली डालकर रांधा हुआ।"

इसके दो एक मिनट बाद बहुत ही गंदा, बहुत ही थका और बहुत ही भूखा बाड़े के बाहर छांव में बैठा मैं फ़्लांडर और स्टर्जन मिला दलिया निरानन्द गले के नीचे उतार रहा था।

१८९६



बूढ़ी इज़रगिल

१

ये कहानियां मैंने अकरमन के नज़दीक समुद्र-तट पर बेस्साराबिया में सुनी थीं।

सांझ का समय था। अंगूर तोड़ने का काम खत्म हो चुका था।

मोल्दाविया-निवासियों का दल, जिनके साथ मैं अंगूर तोड़ने का काम करता था, समुद्र-तट की ओर घूमने चल दिया। मैं और एक बूढ़ी स्त्री, जिसका नाम इज़रगिल था, रह गए। वह अंगूर की बेलों की घनी छांव में चुपचाप लेटी थी और समुद्र-तट की ओर जाते हुए लोगों की छायाकृतियों को रात की नीली परछाइयों में विलय होते देख रही थी।

वे गाते और हंसते-खेलते जा रहे थे। सूरज की धूप में तपे ताम्बे-सा उनका रंग था, घनी और काली मूंछें और घुंघराले बाल, जो कंधों तक लहराते थे। छोटी जाकेट और ढीले-ढाले पायजामे वे पहने थे, जो टखनों पर खूब कसे हुए थे। औरतें और लड़कियां चहक और खिलखिला रही थीं। उनकी आंखें गहरी नीली और बदन सुघड़ थे। रेशम-से मुलायम उनके काले बाल लहरा रहे थे, सुहानी हवा उनके बालों के साथ खेल रही थी और उनमें गुंथे सिक्के आपस में टकराकर झंकार कर रहे थे। हवा की एक प्रशस्त और निर्बाध धारा हमारे सिरों पर से बह रही थी, लेकिन जब-तब ऐसा मालूम होता, मानो वह कहीं अवरुद्ध हो गई हो, और फिर हवा का एक भारी झोंका आता, जो स्त्रियों के बालों को छितरा देता और वे, जैसे अजीब शक्ल की अयालें हों, सिर के इर्द-गिर्द लहराने लगते। ऐसा मालूम होता, जैसे वे परी-लोक की अद्‌भुत जीव हों। जितना ही वे दूर होते जाते, रात और मेरी कल्पना उन्हें उतने ही सुन्दर आवरणों में लपेटती जाती।

कोई वायोलिन बजा रहा था, एक लड़की गहरे और भरपूर कंठ से गा रही थी, खिलखिलाकर हंसने की आवाज़ आ रही थी...

हवा समुद्र की तीखी गंध और धरती की भाप से—सांझ से ठीक पहले बारिश ने धरती को खूब तर कर दिया था—भरी थी। आंधी से छितरे बादल, विचित्र शक्लों और रंगों में, अभी भी आकाश में तैर रहे थे—कहीं धुंवों के बगूलों की भांति अस्पष्ट, भूरे और राख जैसे हल्के नीले रंग

के, कहीं चट्टान के खण्डों की भांति कगारदार, एकदम काले और कत्थई। और उनके बीच से झांक रहा था सुनहरी तारों-जड़ा रात का कोमल आकाश। यह सबका सब – ये ध्वनियां और गंध, ये बादल और ये लोग – सभी कुछ उदास, सुन्दर और किसी अद्भुत कथा की भूमिका की भांति प्रतीत होता था। हर चीज़ ऐसी मालूम होती थी, मानो उसका विकास रुक गया हो और वह अब अपनी अंतिम घड़ियां गिन रही हो। लोगों की आवाज़ें, जैसे-जैसे वे दूर होते गए, धुंधली और उदास उसांसों में परिणत होकर शून्य में खोती गईं।

"तुम उनके साथ नहीं गए?" सिर हिलाकर समुद्र की ओर इशारा करते हुए बूढ़ी इज़रगिल ने पूछा।

समय ने उसकी कमर को झुकाकर दोहरा बना दिया था। उसकी आंखें, जो कभी ख़ूब काली और चमकदार रही होंगी, अब धुंधली और पनीली हो गई थीं। और उसकी आवाज़ अजीब थी – ऐसा मालूम होता था, जैसे उसकी जीभ चरचराती हो।

"मेरा जी नहीं चाहा," मैंने जवाब दिया।

"तुम रूसी लोग जन्म से ही बूढ़े होते हो। सबके सब अजगर की भांति उदास। हमारी लड़कियां तुमसे डरती हैं। हालांकि तुम, मेरे बच्चे, अभी जवान और मज़बूत हो।"

चांद निकल आया – बड़ा, गोल और ख़ूनी-लाल। ऐसा मालूम होता था मानो वह इस स्तेपी के – अन्तहीन मैदानों के – गर्भ में से प्रकट हुआ जिसमें जाने कितना मानवीय रक्त और मांस समाया है और जो शायद इसीलिए इतने सम्पन्न और उपजाऊ है। बूढ़ी स्त्री और मैं पत्तों की बेलबूटेनुमा परछाइयों के जाल में घिरे थे। स्तेपी के ऊपर, जो हमारी बाईं ओर दूर तक फैली थी, बादलों की परछाइयां दौड़ रही थीं जिन्हें चांद की नीली चान्दनी ने झीना और पारदर्शक बना दिया था।

"देखो, वह लारा है।"

मेरी आंखें उस ओर मुड़ गईं, जिधर बूढ़ी स्त्री की कांपती हुई टेढ़ी उंगली इशारा कर रही थी, और हरकत करती हुई परछाइयों पर मेरी नज़र टिक गई – कितनी ही परछाइयां थीं और उनमें से एक अन्य सबसे गहरी थी। वह तेज़ी से बढ़ रही थी। वह बादल के उस गाले की छाया थी जो धरती के सर्वाधिक निकट तैर रहा था और अपने साथी बादलों के मुक़ाबिले अधिक तेज़ी से उड़ा जा रहा था।

"वहां तो कुछ नहीं है," मैंने कहा।

"तुम्हारी नज़र मुझ बूढ़ी स्त्री से भी ज़्यादा गयी-बीती है। देखो, क्या तुम्हें स्तेपी के ऊपर दौड़ती वह काली-सी चीज़ नहीं दिखाई देती?"

मैंने फिर देखा, और परछाइयों के सिवा इस बार भी और कुछ दिखाई नहीं दिया।

"वह तो केवल परछाई है। तुम उसे लारा क्यों कहती हो?"

"इसलिए कि वह लारा है। एक छाया ही तो वह अब बाक़ी रह गया है, और इसमें अचरज की बात भी क्या है – हज़ारों वर्ष हो गये उसे भटकते हुए। सूरज ने उसके मांस, रक्त और हड्डियों को सुखा दिया और हवा ने धूल की भांति उन्हें छितरा दिया। देखा तुमने, जो घमंड करते हैं, उन्हें ख़ुदा किस तरह सज़ा देता है।"

"मुझे पूरी कथा सुनाओ," मैंने वृद्धा से कहा, इस आशा से कि स्तेपी की गोद में जन्मी एक अन्य विलक्षण कहानी मुझे सुनने को मिलेगी।

और वह मुझे कहानी सुनाने लगी।

* * *

"कई हज़ार साल हुए जब यह घटना घटी थी। समुद्र के पार बहुत दूर – जहां सूरज निकलता है – एक देश है, जिसमें एक बहुत बड़ी नदी बहती है, और इस देश में प्रत्येक पत्ता और घास का प्रत्येक फलका इतनी

घनी छांव देता है कि उसमें बैठकर आदमी सूरज से अपना बचाव कर सकता है – उस सूरज से, जो पूरी बेरहमी से वहां आग बरसाता है।

"देखा तुमने, उस देश की धरती इतनी उपजाऊ है!

"उस देश में कभी एक शक्तिशाली जाति बसती थी। वे अपने रेवड़ों को पालते, शक्ति तथा साहस के साथ जंगली जानवरों का शिकार करते और शिकार के बाद खूब जशन मनाते – खाते-पीते, गीत गाते और लड़कियों के साथ मौज करते।

"एक दिन, उस समय, जब कि ऐसा ही एक जशन मनाया जा रहा था, सहसा आकाश में से एक बाज़ ने झपट्टा मारा और काले बालों वाली एक लड़की को, जो रात की भांति सुहावनी थी, उठा ले गया। लोगों ने तीर छोड़े, लेकिन बाज़ का बाल तक बांका नहीं हुआ और तीर वैसे ही धरती पर आ गिरे। इसपर लड़की की खोज में आदमी रवाना किए गए, लेकिन वे भी उसका पता नहीं लगा सके। समय बीता और वे उसे भूल गए, जैसे कि इस धरती पर हर चीज़ भुला दी जाती है।"

एक गहरी सांस लेकर वृद्धा चुप हो गई। जब वह अपनी चरचराती आवाज़ में बोल रही थी तो ऐसा मालूम होता था मानो वह उन सभी विस्मृत युगों की भावनाओं को व्यक्त कर रही है जिनकी स्मृति उसके हृदय की गहराइयों में संचित थी। समुद्र धीमे स्वरों में, सम्भवतः इन्हीं तटों पर जन्म लेनेवाली इस प्राचीन कथा को सुनकर, हुंकारे भर रहा था।

"लेकिन बीस वर्ष बाद वह अपने आप लौट आई, क्षीण और मुरझाई हुई। उसके साथ एक युवक था, उतना ही मज़बूत और सुन्दर, जितना कि वह खुद बीस साल पहले थी। और जब उससे यह पूछा गया कि इतने दिन कहां रही तो उसने जवाब दिया कि बाज़ उसे उठाकर पहाड़ों में ले गया और उसकी पत्नी के रूप में वहीं वह रही। यह युवक उनका पुत्र है। बाज़ अब नहीं रहा। यह सोचकर कि उसकी शक्ति अब जवाब दे रही है, वह

ग्राखिरी बार ग्राकाश में खूब ऊंचे उड़ता चला गया और फिर, अपने पंखों को समेट, जो नीचे गिरा तो कगारदार चट्टानों से टकराकर चकनाचूर हो गया।

"बाज़ के पुत्र को सभी आश्चर्य से आंखें गड़ाए देख रहे थे और उन्होंने देखा कि वह उनसे ज़रा भी भिन्न नहीं है, सिवा इसके कि उसकी आंखें पक्षियों के राजा बाज़ की भांति ठंडे गर्व से चमक रही हैं। जब वे उससे कोई बात करते तो वह कभी-कभी जवाब तक न देता, और बड़े बूढ़े उसके पास जाते तो वह उनसे इस तरह बातें करता मानो वे उसके ही हम-उम्र हों। इसे वे अपना अपमान समझते, और वे उसे बे-पर का तथा खुट्टल फलके वाला तीर कहते। वे उसे बताते कि उसके बराबर ही नहीं, बल्कि उससे दुगनी आयु वाले लोग भी – हज़ारों की संख्या में – उनका अदब करते और उनका हुक्म मानते हैं। लेकिन वह उद्धतपन के साथ उनकी आंखों में आंखें डालकर देखता और कहता कि अन्य कोई भी उसकी बराबरी नहीं कर सकता, अगर अन्य तुम्हारा अदब करना चाहते हैं तो करें, लेकिन उसका ऐसा करने का कोई इरादा नहीं है। ओह, इसपर बड़े बूढ़े सचमुच खूब बिगड़े और गुस्से में बोले –

"'हम लोगों के साथ इसके रहने की कोई गुंजायश नहीं है। जहां इसके सींग समाएं, चला जाए।'

"वह हंसा और जहां उसके सींग समाए, चला गया – वह एक सुन्दर लड़की के पास पहुंचा जो बड़े ध्यान से उसका निरीक्षण कर रही थी। उसने उसे अपनी बांहों में जकड़ लिया। वह उसे दुतकारनेवाले उन बड़े बूढ़ों में से ही एक की लड़की थी। हालांकि वह बहुत खूबसूरत था, लेकिन लड़की ने उसे धकेलकर अलग कर दिया, क्योंकि वह अपने बाप से डरती थी। उसने उसे धकेलकर अलग कर दिया और वहां से खिसक चली। तभी पलटकर उसने पूरी शक्ति से उसपर प्रहार किया, और जब वह गिर पड़ी तो अपनी

एड़ियों से उसके सीने को उसने इतना रौंदा कि उसके मुंह से ख़ून का फ़ौवारा छूटकर आकाश को छूने लगा। लड़की ने एक भारी आह भरी, सांप की भांति उसने बल खाया और मर गई।

"जो इस घटना को देख रहे थे, भय के मारे उनका बोल बन्द हो गया। स्त्री की इतनी निर्मम हत्या उन्होंने पहले कभी नहीं देखी थी। काफ़ी देर तक वे उसी प्रकार निर्वाक् खड़े रहे। उनकी आंखें उस लड़की पर जमी थीं जो वहां पड़ी थी—आंखें फटी हुई, मुंह रक्त में सना हुआ। और वे देख रहे थे उस युवक को, जो अन्य सबसे अलग, ख़ूब गर्व से भरा अपने सिर को इस तरह ऊंचा उठाए खड़ा था मानो आकाश को क़हर बरपा करने के लिए ललकार रहा हो। आख़िर लोगों को जब कुछ चेत हुआ और उनकी आहत बुद्धि लौट आई तो उन्होंन उसे पकड़ लिया और उसकी मुश्कें बांधकर उसे वहीं छोड़ दिया, यह सोचकर कि उसे अभी मार डालना एक मामूली बात होगी, इससे उनके हृदय की जलन नहीं मिट सकेगी।"

रात अधिक गहरी और अधिक काली हो चली। दुनिया भर की छोटी-मोटी आवाज़ें सुनाई देने लगीं। गिलहरी की उदास चीं-चीं स्तेपी में छा गई, अंगूर की बेलों में झींगुरों की झंकार भर गई, पत्ते उसांसें छोड़ने और एक दूसरे से कानाफूसी करने लगे, गोल चांद, जो पहले ख़ूनी-लाल था, धरती से ऊंचा उठता हुआ अब अधिक उजला हो गया था और स्तेपी के समूचे ओर-छोर में उदारता के साथ अपनी नीली रौशनी बिखेर रहा था।

"और तब बड़े बूढ़े यह निश्चय करने के लिए जमा हुए कि इतने बड़े अपराध के लिए कौनसी सज़ा माक़ूल होगी। पहले तो उन्होंने सोचा कि घोड़ों से उसकी बोटी-बोटी रौंदवाई जाए, लेकिन यह सजा उन्हें काफ़ी नर्म मालूम हुई। फिर उन्होंने सोचा कि वे सब तीरों से उसका शरीर बींध डालें, लेकिन यह सजा भी कुछ जंची नहीं, इसलिए रद्द कर दी गई। फिर

यह सुझाव आया कि उसे ज़िन्दा जला दिया जाए, लेकिन आग के धुंवें में वे उसे तड़पता हुआ नहीं देख सकेंगे, इसलिए यह सुझाव भी गिर गया। इस तरह कितने ही सुझाव आए, लेकिन वे हरेक को सन्तुष्ट नहीं कर सके। और इस समूचे काल में युवक की मां उनके सामने घुटने टेके चुपचाप बैठी रही। उसे न तो उनके हृदयों में दया उपजानेवाले शब्द मिल रहे थे और न ही आंसू। बहुत देर तक वे मिलकर बातें करते रहे, अन्त में उनके बुद्धिमानों में से एक ने काफ़ी सोच-विचार के बाद कहा—

"'चलो, उससे ही चलकर पूछें कि उसने ऐसा क्यों किया?'

"और उन्होंने उससे पूछा।

"'मेरी मुश्कें खोलो,' उसने कहा—'जब तक मैं बंधा हूं, एक शब्द भी मेरे मुंह से नहीं निकलेगा।'

"और जब उन्होंने उसे खोल दिया तो उसने कहा—

"'तुम लोग मुझसे क्या चाहते हो?..' और उसका लहजा ऐसा था जैसे वह उनका स्वामी हो और वे उसके गुलाम।

"'यह तुम जानते हो,' उस बुद्धिमान ने कहा।

"'मैं अपने कृत्यों की तुम्हें क्यों सफ़ाई दूं?'

"'इसलिए कि हम उन्हें समझ सकें। सुनो, गर्व में भले युवक, यह निश्चित है कि तुम मारे जाओगे। इसलिए हमें समझने में मदद दो कि तुमने ऐसा काम क्यों किया। हम जीवित रहेंगे, और यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने ज्ञान के भंडार में वृद्धि करें।'

"'अच्छी बात है, मैं तुम्हें बताता हूं, हालांकि मैं खुद भी शायद पूरी तरह नहीं समझता कि मैंने ऐसा क्यों किया। मुझे ऐसा लगता है कि मैंने इसलिए उसकी हत्या की कि उसने मेरी अवहेलना की। और मैं उसे चाहता था।'

"'लेकिन वह तुम्हारी नहीं थी,' उन्होंने उससे कहा।

"'क्या तुम केवल उन्हीं चीज़ों से काम लेते हो जो तुम्हारी होती हैं? मैं देखता हूं कि हर आदमी के पास हाथ, पांव और बोलने के लिए एक जुबान के सिवा और कुछ अपना नहीं होता। फिर भी वह ढोर-डंगरों, और स्त्रियों, और ज़मीन, और अन्य कितनी ही चीज़ों का स्वामी होता है।'

"इसका उन्होंने यह जवाब दिया कि जिस किसी चीज़ को मानव अपने अधिकार में रखना चाहता है, उसका उसे दाम चुकाना पड़ता है—अपनी बुद्धि से, या अपनी शक्ति से, या अपनी जान तक से।

"उसने कहा कि वह कोई दाम नहीं चुकाना चाहता।

"कुछ देर तक उससे बातें करने के बाद उन्होंने देखा कि वह अपने आपको अन्य सबसे ऊपर समझता है, यह कि वस्तुतः 'सिवा अपने अन्य किसी का उसे ख़याल नहीं है। और वे भय से सिहर उठे उस समय, जब उन्होंने देखा कि उसने अपने आपको समूची दुनिया से अलग कर लिया है। उसके पास न तो अपनी कोई जाति थी, न मां थी, न ढोर-डंगर थे, न पत्नी थी, न ही इन चीज़ों में से किसीसे वह कोई वास्ता रखना चाहता था।

"और, यह सब जानने के बाद, उन्होंने फिर विचार किया कि उसके लिए कौनसी सज़ा उपयुक्त हो सकती है। लेकिन उन्हें ज्यादा देर बातचीत नहीं करनी पड़ी कि उसी बुद्धिमान आदमी ने, जो बातचीत में कोई हिस्सा न लेते हुए **अब** तक चुप बैठा था, उनसे कहा—

"'ठहरो। उसके लिए एक माक़ूल सज़ा मिल गई, और यह एक बहुत ही भयानक सज़ा है। हज़ारों साल तक सिर खपाने के बाद भी तुम इसके टक्कर की सजा नहीं सोच सकते। यह सज़ा ख़ुद उसके भीतर मौजूद है। उसकी मुश्कें खोल दो और उसे आज़ाद घूमने दो। यही उसकी सज़ा है।'

"और तब एक अद्भुत बात हुई। बादल-रहित आकाश में बिजली की गरज सुनाई दी। इस प्रकार दैवी शक्तियों ने उस बुद्धिमान आदमी के

निर्णय की पुष्टि की। अन्य सबने भी इसे स्वीकार किया और ऐसा करने के बाद वे चले गए। और वह युवक, आगे के लिए जिसका अब लारा नाम रख दिया गया था–लारा, अर्थात् लांछित और निष्कासित–उन लोगों पर हंसा, जिन्होंने उसे ख़ारिज किया था,–वह ज़ोरों से हंसा, अपने आपको अकेला और उतना ही आज़ाद देखकर, जितना आज़ाद कि उसका पिता था। लेकिन उसका पिता आदमी नहीं था, जब कि वह था। उसने यह नहीं देखा और बाज़ की भांति आज़ादी से रहना शुरू कर दिया। वह ढोर-डंगरों, लड़कियों और जो भी चीज़ वह चाहता उसे ही लोगों के घरों से चुरा ले जाता। वे उसे अपने तीरों का निशाना बनाते, लेकिन तीर उसके शरीर को न बींध पाते। कारण कि दैवी दंड का अदृश्य कवच उसके शरीर की रक्षा करता। वह बहुत ही तेज़, ख़ून-मुंह-लगा, मज़बूत और क्रूर था। और वह लोगों से कभी मुंह दर मुंह नहीं भिड़ता था। वह हमेशा दूर से ही उन्हें देखता था। इस प्रकार, एक लम्बे अर्से तक–बहुत-बहुत दिनों तक–वह मानवीय बस्तियों के छोरों पर ही मंडराता रहा,–अकेला और एकाकी। उसके बाद, एक दिन, वह एक बस्ती के निकट रेंग आया, और जब लोग उसपर आक्रमण करने के लिए लपके तो वह अपनी जगह से नहीं हिला, वहीं खड़ा रहा, और अपने बचाव के लिए भी उसने कोई प्रयत्न नहीं किया–ज़रा-सा भी प्रयत्न नहीं किया। तभी एक आदमी ने उसके इरादे को भांप लिया और चिल्लाकर कहा–

"'उसे हाथ नहीं लगाना। वह मरना चाहता है।'

"और लोगों ने अपने हाथ खींच लिए। वे नहीं चाहते थे कि वह व्यक्ति, जिसने उन्हें इतनी गहरी चोट पहुंचाई, उनके हाथों मरकर अपनी यंत्रणा से छुट्टी पाए। उन्होंने अपने हाथ रोक लिए और वे उसपर हंसे। उनकी हंसी की आवाज़ से वह कांप उठा और अपने सीने को उसने दबोच लिया। ऐसा मालूम होता था मानो वहां कोई चीज़ है जिसे वह पकड़ना

चाहता है। फिर, एकाएक, वह लोगों पर टूट पड़ा और पत्थरों की बौछार करने लगा। लेकिन उन्होंने डुबकी लगाई और पत्थरों की ज़द में नहीं आए, न ही इसका जवाब दिया—अपनी ओर से एक भी पत्थर उन्होंने नहीं फेंका। अन्त में, जब वह थक गया और निराशा से चीख़कर धरती पर गिर पड़ा, तो वे पीछे हट गए और अलग खड़े उसे देखते रहे। उन्होंने देखा कि बड़ी मुश्किल से जैसे-तैसे वह खड़ा हुआ, ज़मीन पर पड़े एक चाकू को उसने उठाया, जो भम्भड़ में किसीके हाथ से वहां छूट गया था, और अपने सीने पर उससे वार किया। लेकिन चाकू के दो टुकड़े हो गए, मानो किसी पत्थर से वह टकरा गया हो। इसके बाद वह फिर ज़मीन पर गिर पड़ा और अपना सिर उठा-उठाकर पटकने लगा, लेकिन ज़मीन भी उससे दूर खिसकती गई,—जिस जगह उसका सिर टकराता, वहीं एक गढ़ा बन जाता—ज़मीन झट नीचे खिसक जाती।

"'यह मर भी नहीं सकता,' लोग खुशी से चिल्लाए।

"और वे उसे वहीं छोड़कर चले गए। वह पीठ के बल पड़ा आकाश में ताक रहा था और उसने देखा कि दूर, बहुत दूर, शक्तिशाली बाज़ काले धब्बों की भांति उड़ रहे हैं। और उसकी आंखों में इतना दुःख, इतनी वेदना तैर रही थी कि समूची दुनिया उसमें डूब सकती थी। तब से आज दिन तक वह अकेला और एकदम छुट्टा मौत की प्रतीक्षा कर रहा है। वह और कुछ नहीं करता, बस इस धरती पर मंडराता रहता है। तुम खुद देख चुके हो कि किस प्रकार वह एक परछाईं भर रह गया है, और अनन्तकाल तक इसी रूप में वह भटकता रहेगा। वह कुछ नहीं समझता—न मानव की बोली, न काम-काज। वह बस चलता ही जाता है, किसी चीज़ की खोज में, हर क्षण और हर घड़ी। उसे जीवित नहीं कहा जा सकता, तिसपर भी वह मरने में असमर्थ है। और मानवों के बीच उसके लिए कोई जगह नहीं है। देखो न, गर्व मानव की क्या दशा कर डालता है।"

वृद्धा ने भारी सांस भरी, और एक या दो बार उसने अपने सिर को अजीब ढंग से हिलाया जो उसके सीने पर लुढ़क आया था।

मैंने उसकी ओर देखा। ऐसा मालूम होता था कि नींद उसपर हावी हो रही है, और जाने क्यों मेरा हृदय उसके लिए एक वेदना से भर गया। एक ऊंचे और प्रताड़णा के स्वर में उसने अपनी कहानी का अन्त किया था, फिर भी मुझे ऐसा लगा मानो उसमें भय और दासता का पुट मिला हो।

समुद्र-तट पर लोग गा रहे थे और आज वे कुछ असाधारण ढंग से गा रहे थे। महीन स्त्री-कंठ ने इस राग को छेड़ा और दो या तीन कड़ियों के बाद एक दूसरी आवाज़ ने उसे फिर शुरू से उठाया, जब कि पहले वाली आवाज़ अगली कड़ियों पर पहुंच गयी। इसी प्रकार तीसरी, चौथी और पांचवीं आवाज़ ने उसे उठाया और फिर, एकाएक, पुरुष-कंठों ने उसी राग को कोरस में गाना शुरू कर दिया।

स्त्रियों की आवाज़ में से प्रत्येक अलग सुनाई दे रही थी,—ऐसा मालूम होता था मानो वे विभिन्न रंगों की धाराएं हों, जो चट्टानों को पार करती, उछलती और चमचमाती, पुरुष-आवाज़ों की उमड़ती-घुमड़ती बड़ी धारा की ओर लपक रही हों, उसमें डूब गई हों, बल खाकर फिर बाहर निकल आई हों और इस बार पुरुष-आवाज़ों को उन्होंने डुबा दिया हो और फिर—एक-एक करके—भारी धारा से अलग होकर, सबल और सुस्पष्ट, आकाश में खूब ऊंचे उठती चली गई हों।

गीत के इन स्वरों में लहरों की ध्वनि गुम हो गई थी।

२

"क्या तुमने ऐसा गाना इससे पहले भी कभी सुना है?" अपना सिर उठाते हुए इज़रगिल ने पूछा और उसका दन्तविहीन चेहरा पोपली मुसकराहट से खिल उठा।

"नहीं, कभी नहीं। ऐसा गाना अन्य कहीं सुनने को नहीं मिला।"

"और अन्य कहीं तुम्हें सुनने को मिलेगा भी नहीं। गाना हम लोगों की जान है। केवल सुन्दर जाति, जो जीवन के प्रति प्रेम में उमगी हो, इतना अच्छा गा सकती है। हमारी जाति ऐसी ही है। देखो, ज़रा सोचो कि ये लोग, जो गा रहे हैं, दिन भर काम करने के बाद क्या थककर चूर नहीं हुए? सूरज निकलने से लेकर दिन छिपे तक उन्होंने हाड़ तोड़े, लेकिन अब, जब कि आकाश में चांद खिल आया है, वे गा रहे हैं। वे लोग, जिनकी जीवन में दिलचस्पी नहीं, बिस्तरों पर करवटें बदल रहे हैं, लेकिन वे, जो जीवन में रस लेना जानते हैं, गा रहे हैं।"

"लेकिन उनका स्वास्थ्य..." मैंने कहना चाहा।

"जीवन भर काम देने लायक़ स्वास्थ्य की पूंजी सभी के पास होती है। स्वास्थ्य? अगर तुम्हारे पास धन है तो क्या उसे ख़र्च नहीं करोगे? स्वास्थ्य की पूंजी भी धन की तरह है। क्या तुम्हें मालूम है कि मेरा यौवन किस तरह ख़र्च हुआ? सुबह से सांझ तक मैं क़ालीन बुनती थी। बैठे-बैठे कमर अकड़ जाती थी। मैं, जिसमें जीवन उसी प्रकार थिरकता था जैसे सूरज की किरन, बिना हिले-डुले पत्थर की भांति बैठी रहती। कभी-कभी, इतनी देर बैठे रहने के कारण, मेरी हड्डियां तक दुःखने लगतीं। लेकिन सांझ होते ही मैं हवा हो जाती और उस आदमी से जा लिपटती जिसे मैं प्यार करती थी। तीन महीने तक मेरा वह प्रेम चला और मेरी हर रात उसके साथ बीती। फिर भी, देखो न, मैं अब तक—इतनी बड़ी उमर तक—जीती हूं। मेरी रगों में, ऐसा मालूम होता है, काफ़ी रक्त था। न जाने कितनी बार मैं प्रेम में डूबी उतराई, न जाने कितने चुम्बनों की मैंने बौछार की और बौछार ली!"

मैंने उसके चेहरे पर नज़र डाली। उसकी काली आंखें वैसी ही धुंधली थीं। उसकी ये स्मृतियां तक उनमें चमक नहीं ला सकी थीं। उसके सूखे-फटे

हुए होंठ, उसकी नुकीली ठोड़ी, जिसपर सफ़ेद बालों के गुच्छे उगे थे, और उल्लू की चोंच की भांति टेढ़ी उसकी झुर्रियोंदार नाक चांद की रोशनी में चमक रही थी। गालों की जगह काले गड्ढे पड़े थे और उनमें से एक पर उसके सफ़ेद बालों की एक लट झूल रही थी, जो लाल रंग के उस चिथड़े से बाहर निकल आई थी, जिसे उसने अपने सिर पर लपेट रखा था। उसके चेहरे, गरदन और हाथों पर झुर्रियों का जाल बिछा था और जब भी वह हिलती-डुलती थी तो ऐसा लगता था कि उसकी यह झुर्रियोंदार सूखी खाल अभी तड़ककर अलग जा गिरेगी और धुंधली काली आंखों से युक्त हड्डियों का एक ढांचा मात्र यहां बैठा रह जाएगा।

अपनी चरचराती आवाज़ में उसने अब फिर बोलना शुरू कर दिया था –

"बिरलात नदी के किनारे, फ़ाल्मी के निकट, मैं अपनी मां के साथ रहती थी, और मैं पन्द्रह वर्ष की थी जब पहले पहल वह हमारे फ़ार्म में आया। लम्बा क़द, काली मूंछ, सुहावना और बहुत ही मनमौजी। हमारी खिड़की के तले उसने अपनी नाव रोक दी और गूंजदार आवाज़ में पुकार उठा – 'अरे कोई है? क्या यहां कुछ खाने-पीने को मिल सकता है?' मैंने खिड़की में से बाहर की ओर झांका और ऐश वृक्ष की टहनियों के बीच से देखा कि नदी चान्द की नीली चान्दनी में चमचमा रही है और वह सफ़ेद ब्लाउज़ पर पटका कसे वहां खड़ा है, एक पांव उसका नाव में है और दूसरा तट पर। वह नाव को झुला रहा था और गा रहा था। जब उसकी नज़र मुझपर पड़ी तो बोला – 'ओह, कितनी सुन्दर लड़की रहती है यहां, और मुझे पता तक नहीं!' – मानो वह दुनिया भर की सुन्दर लड़कियों का हिसाब रखता हो। पीने के लिए कुछ शराब और खाने के लिए कुछ गोश्त मैंने उसकी भेंट कर दिया और इसके चार दिन बाद मैं ख़ुद भी उसकी हो गई। हर रात मैं और वह एक साथ नाव पर घूमने जाते। वह आता

और गिलहरी की भांति धीमे-से सीटी बजाता और मैं खिड़की में से मछली की भांति नदी-तट पर कूद पड़ती। और हम दोनों हवा हो जाते। वह प्रूत का निवासी था और मछियारे का काम करता था। जब मेरी मां को हम दोनों की करतूत का पता चला और उसने मेरी मरम्मत की तो वह मेरे सिर हो गया। कहने लगा कि चलो, यहां से दूर – दोब्रूजा – बल्कि इससे भी दूर दान्यूब की उपनदियों की ओर – भाग चलें। लेकिन तब तक मैं उससे ऊब चली थी – गाने और प्रेम जताने के सिवा वह और कुछ नहीं करता था। मैं इससे उकता गई। और तभी गुत्सूलों का एक दल घूमता-घामता इधर के इलाक़ों में आ निकला। और उन्होंने इस देश की लड़कियों पर डोरे डालना शुरू कर दिया। उन लड़कियों ने खूब मौज की। कभी-कभी ऐसा होता कि प्रेमी ग़ायब हो जाता और उसकी प्रेमिका उसकी याद में घुलने लगती। सोचती, हो न हो या तो वह जेल में डाल दिया गया है, या लड़ाई में मारा गया है। और इसके बाद, एकाएक, वह इस तरह प्रकट हो जाता जैसे खुले आसमान में से टपक पड़ा हो। वह अकेला ही या फिर अपने दो या तीन साथियों के साथ प्रकट होता। बहुमूल्य उपहारों का – जो कि लूट का माल थे – वह ढेर लगा देता, अपनी प्रेमिका के साथ दावतें उड़ाता, अपने साथियों के सामने उसे लेकर खूब शेख़ी बघारता। और इस सबसे वह खिल उठती। एक बार एक लड़की से, जिसका प्रेमी इसी तरह का था, मैंने कहा कि मेरा भी किसी गुत्सूल से परिचय करा दे। लेकिन ज़रा ठहरो, भला क्या नाम था उस लड़की का? ओह, मेरी याद से उतर गया। मेरी याददाश्त अब तेज़ नहीं रही। और यह बात भी इतनी पुरानी है कि उसे कोई भी भूल सकता है। उस लड़की के ज़रिये मैं एक युवक गुत्सूल से मिली। वह बहुत खूबसूरत था। उसके बाल लाल थे। लाल बाल और लाल गलमुच्छे – दहकते हुए लाल। कभी वह अपने में ही खो जाता, कभी खूब गरजता और मरने मारने पर उतर आता। एक बार उसने मेरे मुंह पर मारा। बिल्ली की

भांति उछलकर मैं उसकी छाती पर सवार हो गई और उसके गाल में मैंने अपने दांत गड़ा दिए। तब से उसके गाल में एक भंवर पड़ गया और वह बड़े चाव से उस भंवर को मुझसे चुमवाता।"

"लेकिन उस मछियारे का क्या हुआ?" मैंने पूछा।

"वह मछियारा? वह यहीं बना रहा। वह भी उनके—गुत्सूलों के—दल में शामिल हो गया। शूरू में उसने मिन्नतें कीं कि मैं उसके पास लौट जाऊं, फिर धमकियां दीं कि अगर मैंने ऐसा नहीं किया तो वह मुझे कुवें में पटक देगा, लेकिन उसका वह घाव जल्दी ही भर गया। वह उनके दल में शामिल हो गया और अपने लिए उसने एक दूसरी प्रेमिका खोज ली। वे दोनों—वह मछियारा और मेरा गुत्सूल प्रेमी—एक साथ फांसी पर लटका दिए गए। मैं उन्हें फांसी लगते देखने गई थी। दोब्रूजा में उन्हें फांसी लगी। मछियारे को जब लटकाने के लिए ले जाया गया तो उसके चेहरे पर मुर्दनी छाई थी और वह रो रहा था, लेकिन गुत्सूल अपना पाइप पीता रहा। वह सीधा सतर आगे बढ़ा, अपने पाइप को पीता हुआ, अपनी जेबों में हाथ डाले,—उसकी मूछों का एक सिरा उसके कंधे पर लहरा रहा था और दूसरा उसके सीने पर। जब उसकी नज़र मुझपर पड़ी तो उसने अपने मुंह से पाइप निकाल लिया और चिल्लाकर बोला—'अलविदा!' उसके लिए मैंने पूरे एक साल तक आंसू बहाए। वे ठीक उस वक़्त पकड़े गए जब कि वे अपने देस—पहाड़ों में—वापिस लौटनेवाले थे। किसी रूमानियावासी के घर उनकी विदाई की दावत हो रही थी। तभी उन्हें पकड़ लिया गया। केवल वे दो ही पकड़े गए। कई वहीं के वहीं मारे गये और बाक़ी बचकर भाग निकले। लेकिन रूमानियावासी को अपनी करनी का पूरा भुगतान करना पड़ा। उसका खेत, उसकी पनचक्की और उसके अनाज के बाड़े—सब जलाकर ख़ाक कर दिए गए। वह राह का भिखारी बना दिया गया।"

"क्या यह तुम्हारी करतूत थी?" मैंने यों ही अललटप्पू पूछा।

"गुत्सूलों के अनेक मित्र थे—अकेली मैं ही नहीं थी। उनके सबसे पक्के मित्र ने—जो भी वह हो—उनकी याद में यह बदला लिया।"

समुद्र-तट पर गाना अब बन्द हो गया था और लहरों की मर्मर-ध्वनि के सिवा अन्य कोई आवाज़ वृद्धा की इस कहानी का साथ नहीं दे रही थी। लहरों की यह मर्मर-ध्वनि, बेचैन और उदासी में डूबी, बेचैन जीवन की इस कहानी के सर्वथा अनुकूल थी। रात की मृदुता जितनी बढ़ती जाती थी, चांदनी की नीलिमा उतनी ही गहरी और रात के अदृश्य जीवों की अस्पष्ट आवाज़ों का ज़ोर उतना ही धीमा पड़ता जाता था। हवा तेज़ होती जा रही थी, समुद्र का गर्जन उसी अनुपात में बढ़ता जा रहा था और रात के जीवों का शोरशर उसमें डूबता जा रहा था।

"और इसके बाद मैं एक तुर्क से प्रेम करने लगी। मैं उसके हरम में दाख़िल हो गई, जो स्कूतारी में था। पूरे सात दिन तक मैं वहां रही और किसी भी बात की मैंने पर्वाह नहीं की, लेकिन इसके बाद मैं वहां के जीवन से ऊबने लगी। जिधर नज़र डालो, औरतें ही औरतें। पूरी आठ थीं। दिन भर वे चरती रहतीं, या सोतीं, या बेमतलब चिचियातीं। या फिर वे लड़तीं,—और तब वे पूरी कुड़क मुर्ग़ियां बन जातीं। तुर्क जवान नहीं था। उसके बाल क़रीब-क़रीब पक गए थे। और वह बहुत ही अमीर तथा बहुत ही बड़ा आदमी था। शाहों की भांति बोलता था। उसकी आंखें काली और सीधी थीं—मतलब यह कि वे सीधी आत्मा की टोह लेती थीं। और वह हमेशा ख़ुदा को याद करता रहता था। सबसे पहले बुकुरेश्ती में मेरी उससे मुठभेड़ हुई। शाह की भांति, पूरे रौब के साथ, वह बाज़ार में ठुमक रहा था। मैंने मुसकराकर उसकी ओर देखा। उसी रात उसके आदमी मुझे पकड़कर उसके पास ले गए। वह चन्दन और ताड़ की लकड़ी का व्यापार करता था और कुछ माल ख़रीदने बुकुरेश्ती आया था।

"'बोलो, मेरे साथ चलोगी?' उसने कहा।

"'क्यों नहीं, ज़रूर चलूंगी,' मैंने कहा।

"'बहुत ठीक, उसने कहा।

"और मैं उसके साथ चल दी। वह बहुत अमीर था। उसके एक लड़का था—दुबला-पतला, काले बालों वाला, सोलह वर्ष का एक युवक। उसी के साथ मैं तुर्क के यहां से भागी—बुल्गारिया, लोम-पलान्का। वहां एक बुल्गारी स्त्री ने मेरी छाती में चाकू मारा। उसे वहम था कि कहीं मैं उसके पति या प्रेमी को—मुझे ठीक याद नहीं रहा—न भगा ले जाऊं।

"इसके बाद, एक लम्बे अर्से तक, मैं ईसाई साधुनियों के एक मठ में बीमार पड़ी रही। एक पोलिश लड़की, जो साधुनी थी, मेरी देख-भाल करती थी और उसका भाई, जो आर्त्सेर-पलान्का के निकट एक मठ में साधु था, उससे मिलने आया करता था। वह कीड़े की भांति मेरे चारों ओर बिलबिलाया करता और जब मैं अच्छी हो गई तो उसके साथ पोलैंड चली गई।"

"लेकिन ठहरो, उस तुर्क के लड़के का क्या हुआ?"

"ओह, वह? वह मर गया। घर की याद या शायद प्रेम उसे ले डूबा। वह वैसे ही मुरझाने लगा जैसे ज़्यादा धूप खाकर पौधा मुरझा जाता है। बस, मुरझाता चला गया। वह बिस्तरे से लग गया, नीला और बर्फ़ की भांति पारदर्शक, लेकिन प्रेम की लपटों से फिर भी लपलपाता। वह बार-बार अपने बिस्तरे पर मुझे बुलाता, अनुरोध करता कि मैं झुककर उसको चुम्बन दूं। मैं उसे बहुत चाहती थी और ख़ूब-ख़ूब चुम्बन मैंने उसे दिए। तिल-तिल करके वह गलता गया, हिल-डुल तक न पाता। वह बस वैसे ही पड़ा रहता और मेरी मिन्नत करता—भिखारियों की भांति गिड़गिड़ाता—कि मैं उसके पास लेटकर उसके निर्बल बदन को गर्मा दूं। और मैं ऐसा ही करती। जैसे ही मैं उसके पास लेटती, उसका रोम-रोम लपक उठता।

एक दिन, जब मैं सोकर उठी, तो देखा कि वह पत्थर की भांति ठंडा पड़ा है। वह मर गया था। मैं खूब रोई। कौन जाने? शायद मेरी वजह से ही उसकी मृत्यु हुई। मैं उम्र में उससे दुगनी बड़ी थी, मज़बूत और प्राणवान् थी। लेकिन वह?.. वह एक निरा बच्चा था!"

वृद्धा ने एक लम्बी सांस छोड़ी और सलीब का निशान बनाया,—इससे पहले मैंने कभी उसे ऐसा करते नहीं देखा था। तीन बार उसने सलीब का निशान बनाया, अपने सूखे होंठों के बीच कुछ बुदबुदाते हुए।

"और इसके बाद तुम पोलैंड चली गई?" मैंने कहानी का सिरा मिलाते हुए कहा।

"हां, उस नन्हे पोल के साथ। वह बेहूदा और जंगली था। जब उसे स्त्री की ज़रूरत होती तो वह बिल्ले की भांति मेरे चारों ओर मंडराता, उसके होंठों से शहद चूता। जब उसकी भूख मिट जाती तो वह कोड़े जैसी अपनी जुबान से मेरी ख़बर लेता। एक दिन, जब कि हम नदी-तट पर घूम रहे थे, उसने दम्भ में भरकर कोई अपमानजनक बात कही। ओह, मैं बुरी तरह झुंझला उठी। गुस्से में उबलने लगी। बच्चे की भांति—वह बहुत छोटा था—मैंने उसे ऊपर उठा लिया और उसे इतना दबोचा कि उसका मुंह नीला पड़ गया। इसके बाद लत्ते की भांति घुमाते हुए मैंने उसे नदी में फेंक दिया। उसके मुंह से एक चीख़ निकली, जो बड़ी मज़ेदार थी। तट की ऊंचाई से मैंने उसे पानी में हाथ-पांव मारते देखा। फिर मैं वहां से चली आई और इसके बाद वह फिर कभी दिखाई नहीं दिया। इस मामले में मैं भाग्यवान थी—जिस प्रेमी को मैंने छोड़ा, उससे फिर कभी भेंट नहीं हुई। कितना बुरा मालूम होता है छोड़े हुए प्रेमियों से मिलना जैसे मुर्दों से मिल रहे हों।"

वृद्धा चुप हो गई। मेरी कल्पना में उन लोगों के चित्र चक्कर लगाने लगे जिन्हें उसकी कहानी ने उभारा था। उसका गुत्सूल प्रेमी, जिसके सिर

के बाल और मूंछें धधकते हुए लाल रंग की थीं और जो फांसी के तख़्ते व ओर जाते समय भी शांत भाव से पाइप पीता रहा था, – उसका यह चि मेरी कल्पना में मूर्त्त हो उठा। उसकी आंखें, मुझे ऐसा मालूम हुआ, ठं नीले रंग की थीं और उनकी नज़र दृढ़ और गहरी थी। काले गलमुच्छ वाला प्रूतनिवासी मछियारा उसके साथ-साथ तख़्ते की ओर बढ़ रहा था मौत से त्रस्त वह रो रहा था और उसकी आंखें, जिनमें कभी प्रसन्नत नाचती थी, अब पथराई-सी ताक रही थीं। उसका चेहरा आसन्न मौत भय से सफ़ेद पड़ गया था और आंसुओं से भीगी उसकी मूंछें शोक में डू उसके ऐंठे हुए होंठों के छोरों पर लटक आई थीं। और वह रोब-दाब वाल बूढ़ा तुर्क, जो बिला शक भाग्यवादी और पूरा स्वेच्छाचारी था, मे कल्पना में घूम गया। साथ ही उसका पुत्र – पूर्व देश का वह कोमल बूटा विवर्ण और चुम्बनों के विष का मारा हुआ। और पोलैंडवासी वह दम्भ युवक विनम्र और क्रूर, अत्यन्त भावप्रवण और सर्द। वे सब क्षीण छायाओं के सिवा अब और कुछ नहीं रह गए थे। और वह, जिसपर इतने मनोवे से वे अपने चुम्बनों की बौछार करते थे, मेरे पास बैठी थी – जीवित लेकिन उम्र की मार से चुरमुर, रक्तहीन, मांसहीन – उसका हृदय, जिसक सभी इच्छाएं मुरझा चुकी थीं, और उसकी आंखें, जिनमें अब कोई चम नहीं थी – क़रीब-क़रीब उसी परिमाण में एक छाया मात्र, जिस परिमाण कि वे ख़ुद एक छाया बनकर रह गए थे।

वह कह रही थी –

"पोलैंड में बड़ी मुसीबत से गुज़री। वहां के लोग झूठे और हृदयही हैं। मैं उनकी सांपों ऐसी भाषा में नहीं बोल सकती थी। वे जब बोल तो लगता जैसे फुंकार मार रहे हों। वे फुंकार क्यों मारते हैं? झूठ उनक घुट्टी में मिला है, इसीलिए ख़ुदा ने उन्हें सांपों ऐसी ज़ुबान दी। सो चल पड़ी। कहां और क्यों, नहीं जानती। और मैंने देखा कि पोलैंडवास

तुम रूसियों के ख़िलाफ़ विद्रोह की तैयारी कर रहे हैं। मैं बोहनिया नगर में पहुंची। वहां एक यहूदी ने मुझे ख़रीद लिया, अपने लिए नहीं, बल्कि मेरे शरीर से पैसा कमाने के लिए। मैं इसके लिए मान गई। कमाकर खाने के लिए किसी हुनर का होना जरूरी है। मेरे पास कुछ नहीं था, सो अपने शरीर से मैंने उसका मूल्य चुकाया। लेकिन यह मैंने निश्चय कर लिया था कि जब मेरे पास अपने बिरलात नदी के किनारे पर स्थित शहर लौटने लायक़ पैसा हो जाएगा तो अपने बन्धनों को, चाहे वे कितने भी मज़बूत हों, तोड़कर फेंक दूंगी। वहां जो जीवन बीता, वह ऐसा था कि शिकवा नहीं कर सकती। एक से एक धनी लोग आते, मेरे साथ खाते-पीते। इसपर वे भारी रक़में खर्च करते। मुझे लेकर वे एक दूसरे से लड़ते और बरबाद होते। उनमें से एक, मेरा हृदय जीतने के लिए, बहुत दिनों तक मेरे पीछे पड़ा रहा। अन्त में उसने यह किया कि अपने नौकर को साथ लेकर आया। नौकर एक बहुत बड़ा थैला लिए था। इस थैले को उसने मेरे सिर पर उलट दिया। मैं सोने की मुद्राओं में नहा उठी। मेरे बदन पर से लढ़कती हुई ज़मीन पर गिरकर जब वे खन्न से बोलतीं तो मेरा हृदय चान उठता। लेकिन फिर भी उस आदमी को मैंने बाहर धकेल दिया। उसका चेहरा बुरी तरह चर्बी-चढ़ा और चीकट था और उसकी तोंद में तकिये की भांति रुई भरी थी। वह सुअर की भांति मोटिया गया था। हां, मैंने उसे बाहर निकाल दिया। वह झींकता ही रहा कि अपनी सारी ज़मीन, अपना घर और अपने घोड़े बेचकर सोने की ये मुद्राएं उसने मेरे लिए बटोरी थीं। लेकिन तब तक मैं एक अन्य नामदार महानुभाव से प्रेम जताने लगी थी। उसके चेहरे पर घाव के निशान थे—एक दो नहीं, बल्कि इन निशानों का एक जाल-सा उसके चेहरे पर बिछा था। ये निशान तुर्की तलवारों की यादगार थे। ग्रीकों की मदद के लिए तुर्कों के ख़िलाफ़ लड़कर वह अभी हाल ही में लौटा था। क्या आदमी था वह भी! उसका—पोलैंड के एक

निवासी का—ग्रीकों से भला क्या वास्ता? फिर भी वह आगे बढ़ा और उनके दुश्मन से लड़ने में उसने उन्हें मदद दी। तुर्कों ने बड़ी बेरहमी से उसका अंग-भंग किया—उनकी मार से उसकी एक आंख और बाएं हाथ की दो उंगलियां ग़ायब हो गईं। ग्रीकों से उसका—एक पोल का—कोई वास्ता नहीं था, फिर भी वह उनके लिए लड़ा और इसलिए लड़ा कि वीर-कृत्यों के लिए उसका हृदय छटपटा रहा था, और आदमी का हृदय जब वीर-कृत्यों के लिए छटपटाता है तो इसके लिए उसे सदा अवसर भी मिल जाता है। जीवन ऐसे अवसरों से पूर्ण है और अगर किसीको ऐसे अवसर नहीं मिलते तो समझ लो कि वह काहिल है, या कायर है, या यह कि वह जीवन को नहीं समझता। अगर वह समझता होता तो निश्चय ही वह अपनी कोई यादगार छोड़ जाना चाहता। और अगर हर आदमी में ऐसा करने की इच्छा होती तो जीवन उन्हें इस तरह न निगल पाता कि उनका कोई नाम-निशान तक बाक़ी न रहे। वह बहुत ही बढ़िया आदमी था—वह, जिसके चेहरे पर घावों का जाल बिछा था। भला काम करने के लिए वह दुनिया के आख़िरी छोर पर भी पहुंच जाता। मुझे डर है कि तुम्हारे लोगों ने विद्रोह के दौरान में कहीं उसका भी काम तमाम न कर दिया हो। तुम मगयारों से लड़ने क्यों गए? लेकिन चुप, कुछ कहना नहीं।"

और मुझे मुंह बन्द रखने की ताड़ना करते हुए बूढ़ी इज़रगिल खुद चुप हो गई और विचारों में खो गई। कुछ देर बाद उसने फिर कहना शुरू किया—

"मेरी जान-पहचान का एक मगयार था। एक दिन वह मुझे छोड़कर चला गया—खूब गहरे जाड़ों के दिन थे—और वसन्त के दिनों में जब बर्फ़ पिघली तो एक खेत में उसकी लाश मिली। उसके सिर में गोली लगने का निशान था। अगर गिना जाए तो प्रेम से भी काफ़ी लोग मरते हैं—बहुत काफ़ी—उतने ही अधिक, जितने कि प्लेग से मरते हैं। लेकिन मैं

कह क्या रही थी? अरे हां, पोलैंड की बात थी। अपना आखिरी खेल मैंने वहीं खेला। एक ऐसे भले आदमी से वहां मेरी मुलाक़ात हुई जो बहुत ख़ूबसूरत था—बेहद ख़ूबसूरत। लेकिन तब मैं बुढ़ा चली थी। उफ़, काफ़ी बुढ़ा चली थी। चालीस वर्ष की—कम से कम चालीस वर्ष की—तो मैं निश्चय ही रही हूंगी। और वह दम्भी तथा स्त्रियों के मुंह चढ़ा था। मैं उसे बुरी तरह चाहती थी। उसने समझा कि उसका इशारा करते ही मैं उसके सामने बिछ जाऊंगी। लेकिन मैं इतनी आसानी से घुटने टेकनेवाली नहीं थी। किसीकी गुलाम बनकर रहना मेरे बूते से बाहर था। और सच कहती हूं, उस यहूदी से क़िता-ताल्लुक़ करने तक, जो कि मेरे लिए बहुत महंगा सौदा पड़ा, मैंने धूल नहीं चाटी। मैं तब क्राकोव में थी। एक निराली शान से रहती थी। मेरे पास घोड़े थे, सोने में मैं लोटती थी, जो भी चाहती, पा जाती थी। वह मुझसे मिलने आता—दम्भी शैतान—और उम्मीद करता, मैं उसके सामने बिछ जाऊं। लेकिन मैं नहीं डिगी। जमकर खींचतान चली। लम्बे अर्से तक दोनों में युद्ध होता रहा। इतना अधिक तनाव बढ़ा कि अंजर-पंजर और भी ढीले हो गए। लेकिन अन्त में विजय मैंने ही प्राप्त की। उसने मेरे सामने घुटने टेके, तभी वह मुझे पा सका। और इसके बाद, जब मैं उसकी हो गई, फटे लत्ते की भांति मुझे उतार फेंकने में उसने कोताही नहीं की। तब मैंने अनुभव किया कि मैं बुढ़ा गई हूं। बड़ी तीखी अनुभूति थी वह—बहुत ही तीखी। मैं उसे चाहती थी—उस शैतान को—और वह मेरे मुंह पर ही मेरी हंसी उड़ाता था। जब भी वह मिलता, ऐसा ही करता। एकदम जंगली। दूसरों के सामने भी मेरा मज़ाक उड़ाने से न चूकता। मुझसे यह छिपा नहीं था। ओह, कितना असह्य था यह सब! लेकिन यह सब होने पर भी हर घड़ी वह मेरी आंखों के सामने रहता और छाया की भांति मैं उससे लगी रहती। और इसके बाद, एक दिन, वह रूसियों से लड़ने चला गया। मैं यह बिछोह न सह सकी। मैंने अपने को बहुत

संभाला, लेकिन अपने भावों पर क़ाबू न पा सकी। मैंने उसके पास जाने का निश्चय कर लिया। वारसा के निकट एक जंगल में वह तैनात था।

"लेकिन जब मैं वहां पहुंची तो मालूम हुआ कि वे तुम्हारे रूसी सैनिकों के सामने टिक नहीं सके, वह युद्ध-बन्दी बना लिया गया, और यह कि थोड़ी ही दूर एक गांव में उसे क़ैद करके रखा गया है।

"'इसका मतलब यह कि अब मैं उससे कभी भेंट नहीं कर सकूंगी,' मैंने मन में सोचा। लेकिन मैं उससे मिले बिना रह नहीं सकती थी। सो मैंने एक रास्ता निकाला। भिखारी स्त्रियों की भांति मैंने अपना भेष बनाया, लंगड़ी होने का बहाना किया, अपने मुंह को ढक लिया और उस गांव की ओर चल दी जहां कि वह बंदी था। गांव सैनिकों और कज़ाकों से भरा था, और वहां रहना मुझे भारी महंगा पड़ा। पोल क़ैदियों का मैंने पता लगाया और देखा कि उनतक पहुंचना अत्यन्त कठिन है। लेकिन पहुंचे बिना मैं रह भी नहीं सकती थी। सो एक रात मैं चल दी। उस समय, जब तरकारियों के एक खेत की क्यारियों में रेंगती हुई मैं बढ़ रही थी, मैंने देखा कि एक सन्तरी ठीक मेरे सामने खड़ा है। पोलों के गाने और बातचीत करने की तेज़ आवाज़ आ रही थी। वे मां मरियम का एक गीत गा रहे थे और मेरा आरकाडेक भी उनके साथ गा रहा था। और यह याद करके मेरा हृदय तीखेपन से भर गया कि एक वह भी दिन था, जब लोग मेरे पीछे रेंगते थे, और एक यह दिन है कि मैं एक आदमी के पीछे—शायद अपनी मौत को गले लगाने—कीड़े की भांति रेंग रही हूं। सन्तरी के कान खड़े हो गए और आगे की ओर झुक आया। अब मैं क्या करूं? मैं खड़ी हो गई और उसकी ओर बढ़ चली। मेरे पास चाकू या अन्य कोई हथियार नहीं था,— खाली हाथ और जुबान के सिवा मेरे पास और कुछ नहीं था। मुझे अफ़सोस हुआ कि मैं अपने साथ चाकू लेकर क्यों नहीं चली। सन्तरी ने मेरी गरदन की सीध में अपनी संगीन तान ली। मेरे मुंह से फुसफुसाहट

निकली – 'ठहरो। मैं जो कहना चाहती हूं पहले उसे सुन लो। इसके बाद, अगर तुम्हारी छाती में हृदय हो, तो मेरी जान बख़्श देना। तुम्हें देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है, मैं तुमसे दया की भीख मांगती हूं।' उसने अपनी संगीन झुका ली और फुसफुसाकर बोला – 'यहां क्यों आई हो, बुढ़िया मां, यहां से चली जाओ, दूर चली जाओ।' और मैंने कहा कि मेरा बेटा यहां बन्दी है। 'मेरा बेटा, क्या तुम इतना भी नहीं समझते, सैनिक? आख़िर, तुम्हारे भी मां है, तुम भी किसीके बेटे हो। मेरी ओर देखो और सोचो कि मेरे एक बेटा है, ठीक तुम्हारे जैसा, और वह यहां बन्दी है। मुझे एक नज़र उसे देख लेने दो। कौन जाने उसके भाग्य में मौत बदी हो – किसी समय भी वह मारा जाए, – और ख़ुद तुम्हारा ही क्या ठिकाना, आज हो और कल नहीं। क्या तुम्हारी मां तुम्हारी मौत पर आंसू नहीं बहाएगी? और बिना अपनी मां को देखे – बिना आख़िरी नज़र उसपर डाले – मरना क्या तुम्हारे लिए सहज होगा? किसी भी बेटे के लिए यह सहज नहीं होगा। अपने ऊपर तरस खाओ, उसपर तरस खाओ और मुझपर – उसकी मां पर – दया करो!'

"ओह, जाने कितनी देर तक मैं उसे मनाती रही। पानी पड़ने लगा और हम भीग गए। हवा फनफनाती हुई बह रही थी। वह कभी पीठ पर थपेड़े मारती थी, कभी छाती पर। और मैं लरज़ती और कांपती उस पत्थर-हृदय सैनिक के सामने खड़ी थी। वह 'नहीं, नहीं' की रट लगाए था और हर बार, जब इस संवेदनहीन शब्द को मैं सुनती, तो आरकाडेक को देखने की इच्छा मेरे हृदय में और भी तेज़ी से धधक उठती। बात करते समय मैंने उसे आंखों ही आंखों में तौला। वह एक दुबला-पतला छोटे क़द का आदमी था। खांसी ने उसे जकड़ रखा था। मैंने उसके घुटनों में सांडसी डाली और उसे ज़मीन पर पटक दिया। वह कीचड़ में जा गिरा। लपककर मैंने उसे औंधा कर दिया और कीचड़ में उसका मुंह ठूंस दिया

जिससे वह चिल्ला न सके। वह चिल्लाया नहीं, लेकिन मुझे अपनी पीठ पर से धकेलने के लिए हाथ-पांव पटकता रहा। मैंने दोनों हाथों से उसका सिर पकड़ा और उसे कीचड़ में और भी गहरा धंसा दिया। वह बेदम हो गया। तब, उसे छोड़, मैं बाड़े की ओर लपकी जहां पोल गा रहे थे। 'आरकाडेक!' बाड़े की एक दरार में से मैंने धीमी आवाज़ में पुकारा। बड़े काइयां होते हैं ये पोल, सो मेरी आवाज़ सुनते ही उन्होंने गाना बन्द किया। और सहसा, ठीक अपनी सीध में, मुझे उसकी आंखें दिखाई दीं। 'क्या तुम बाहर आ सकते हो?' मैंने पूछा। 'हां, नीचे से रेंगकर आ सकता हूं,' उसने कहा। 'तो जल्दी आओ।' और उनमें से चार बाहर रेंग आए। मेरा आरकाडेक भी उनमें था। 'सन्तरी कहां गया?' आरकाडेक ने पूछा। 'वहां पड़ा है,' मैंने कहा। और तब, एकदम दोहरे होकर, चुपचाप, वे भरसक दूर खिसक चले। पानी अभी भी पड़ रहा था और हवा ज़ोरों से फुंकार रही थी। हम गांव के छोर पर पहुंचे और बिना एक शब्द मुंह से निकाले जंगल में बढ़ते गए। हम तेज़ी से डग भर रहे थे। आरकाडेक अपने हाथ में मेरा हाथ थामे था। उसका हाथ गर्म था और कांप रहा था। ओह, उसके साथ चलना कितना अच्छा लग रहा था, कम से कम उस समय तक जब तक कि वह चुप रहा। वे मेरे आख़िरी क्षण थे—कभी न तृप्त होनेवाले मेरे जीवन के आख़िरी सुखद क्षण! अन्त में हम एक चरागाह में पहुंचे और वहां रुक गए। मैंने जो किया था, उसके लिए चारों ने मुझे धन्यवाद दिया। उनकी बातों का सिलसिला जो चला तो फिर चलता ही रहा। लगता था, उनकी बातें कभी खत्म न होंगी। मेरे कान उनकी बातें सुन रहे थे और मेरी आंखें आरकाडेक को अपने में संजो रही थीं। अब वह मेरे साथ कैसे पेश आएगा? उसने मुझे अपनी बांहों में कस लिया और बड़ी लच्छेदार आवाज़ में जाने क्या उसने कहा। मुझे याद नहीं पड़ता कि उसने क्या कहा था। उसका आशय बहुत कुछ यह था कि वह मुझे—जिसने उसे क़ैद से छुड़ाया—प्यार करेगा।

श्रौर उसने, घुटनों के बल मेरे सामने बैठकर, मुसकराते हुए कहा—'मेरी रानी!' उफ़, कितना फ़रेबी था वह, घिनौना कुत्ता! मैंने उसे एक ठोकर मारी श्रौर उसके मुंह पर एक तमाचा भी जड़ती, लेकिन वह उछलकर बच गया श्रौर लपककर श्रलग जा खड़ा हुश्रा। श्रौर वह वहां, मेरे सामने, खड़ा था—बहुत ही भयावह श्रौर एकदम फक! श्रौर श्रन्य तीनों भी वहां खड़े थे, भारी मुंह लिए श्रौर निर्वाक्। मैंने पलटकर उन्हें देखा... देखती रही। श्रौर मुझे याद है कि एक भारी ऊब श्रौर उपेक्षा ने मुझे घेर लिया। मैंने उनसे कहा—'जाश्रो, जहां तुम्हें जाना हो!' श्रौर उन्होंने—कुत्ते कहीं के—मुझसे कहा— 'श्रौर तुम... क्या तुम वापिस लौटकर उन्हें ख़बर दोगी कि हम किस दिशा में भागे हैं?' देखा, कितने जंगली थे वे—निरे वहशी! लेकिन वे चले गए। श्रौर मैं भी चली श्राई। दूसरे दिन तुम्हारे सैनिकों ने मुझे पकड़ लिया, लेकिन उन्होंने मुझे श्रधिक नहीं रोका। तब मैंने श्रनुभव किया कि बस, बहुत हो चुका। श्रब कहीं घोंसला बनाकर बैठना चाहिए। कोयल का जीवन श्रतीत की चीज़ बन गया था। मेरा बदन भारी हो चला था, डैने कमज़ोर पड़ गए थे, पर झड़ने लगे थे। मैं बुढ़ा गई थी, बूढ़ी हो चली थी। सो मैं गालीसिया चली गई श्रौर वहां से दोब्रूजा। पिछले तीस साल से मैं यहां रह रही हूं। मेरा एक पति था—मोल्दाविया का रहनेवाला, लेकिन उसे मरे क़रीब एक साल हो गया। श्रौर मैं जी रही हूं। एकदम श्रकेली। नहीं, श्रकेली नहीं, उनके साथ..."

वृद्धा ने लहरों की श्रोर इशारा किया। वे श्रब शान्त थीं। जब-तब ध्वनि का एक धुंधला-सा श्राभास होता श्रौर फिर वह तुरन्त ही—उदय होने के साथ ही—विलीन हो जाता।

"वे मुझसे प्रेम करते हैं। मैं उन्हें ख़ूब कहानियां सुनाती हूं श्रौर वे उन्हें पसन्द करते हैं। वे कितने नौ उम्र हैं। उनके साथ रहना श्रच्छा लगता है। मैं उन्हें देखती श्रौर सोचती हूं—एक समय था जब मैं भी

उन्हीं जैसी थी। लेकिन मेरे दिनों में लोग अधिक सशक्त और प्राणवान् थे और इसी कारण जीवन अधिक आनन्दपूर्ण और अधिक जीने योग्य होता था, – इसमें ज़रा भी शक नहीं!"

वह फिर चुप हो गई। और मैं, उसके पास बैठा हुआ, उदास हो उठा। शीघ्र ही वह ऊंघने लगी। सिर हिलाकर उसने हुंकारे-से भरे और होंठों ही होंठों में कुछ बुदबुदाने लगी – शायद वह प्रार्थना कर रही थी।

समुद्र से एक बादल उठा – खूब गहरा और काला, पर्वत-शृंखला की भांति कगारदार – और स्तेपी की ओर बढ़ने लगा। बादल का एक गाला, जो सबसे ऊंचे वाले छोर से टूटकर अलग हो गया था और तेज़ी से आगे उड़ा जा रहा था, एक के बाद एक सितारों को ढकता जाता था। समुद्र का गर्जन फिर शुरू हो गया था। कुछ दूर अंगूरों की बाड़ी से मुंह चूमने, फुसफुसाने और गहरी उसांसें भरने की आवाज़ आ रही थी। स्तेपी में कोई कुत्ता रो उठा। हवा में एक अजीब गंध भरी थी जो नथुनों और रगों में एक चुनचुनाहट-सी पैदा करती थी। बादलों से पड़ी परछाइयों के झुरमुट धरती पर रेंग रहे थे... कभी वे धुंधले पड़ जाते थे और कभी खूब साफ़ दिखाई देने लगते थे। चांद अब धुंधली दूधिया आभा का एक गोल धब्बा मात्र रह गया था जिसे कभी-कभी बादल का एक छोटा-सा टुकड़ा तक पूर्णतया ओझल कर देता था। स्तेपी में, जो अब काली और बोझिल हो उठी थी मानो उसके गर्भ में कोई भयानक चीज़ पनप रही हो, खूब दूर छोटी-छोटी नीली लपटें थरथरा रही थीं। वे इस तरह चमक उठतीं जैसे लोग किसी चीज़ की खोज में स्तेपी में घूम रहे हों। वे दियासलाइयां जलाते, जिन्हें हवा तुरन्त बुझा देती। बहुत ही अजीब मालूम होती थीं ये नीली रोशनियां, जैसे कि भूतविद्या का कौतुक दिखाया जा रहा हो।

"क्या तुम्हें वहां कुछ चिंगारियां-सी दिखाई देती हैं?" इज़रगिल ने पूछा।

"वे छोटी-छोटी नीली रोशनियां?" स्तेपी की ओर इशारा करते हुए मैंने कहा।

"नीली? हां, वे छोटी-छोटी रोशनियां, सो वे अब भी दिखाई देती हैं। लेकिन मेरी आंखों मे नहीं। बहुत-सी चीज़ें हैं जो अब मेरी आंखों को नहीं दिखाई देतीं।"

"ये कहां से निकल रही हैं?" मैंने वृद्धा से पूछा।

उनके रहस्य की एक कहानी मैं पहले भी सुन चुका था, लेकिन मैं यह सुनना चाहता था कि बढ़ी इजरगिल क्या कहती है।

"ये डान्को के जलते हुए हृदय से निकल रही हैं। बहुत दिन पहले एक हृदय मशाल की भांति जल उठा था। उस हृदय की अब ये चिंगारियां ही दिखाई देती हैं। मैं तुम्हें उसकी कहानी सुनाऊंगी। यह भी बहुत पुरानी है। हर चीज़ पुरानी है। देखो न, पुराने दिनों में कितनी अधिक अच्छी चीज़ें थीं। आजकल तो कुछ भी नहीं है—न वे आदमी हैं, न वे कारनामे हैं, न वे कहानियां हैं—कुछ भी तो ऐसा नहीं है जिसकी उन पुराने दिनों से तुलना की जा सके। ऐसा क्यों है? बोलो, तुम्हीं बताओ। आह, नहीं बता सकते। तुम कुछ नहीं जानते? नयी पीढ़ी के तुम लोग कुछ नहीं जानते। अगर तुम अतीत की खोज-बीन करो तो जीवन की सभी पहेलियों का जवाब मिल जाए। लेकिन तुम नहीं करते और इसीलिए इतने कोरे हो। सोचते होगे, मुझे क्या मालूम कि क्या हो रहा है? लेकिन मुझे खूब अच्छी तरह मालूम है, आंखें कमज़ोर हो जाने पर भी सब कुछ मैं देखती हूं। और मैंने देखा है कि जीने के बजाय लोग अपना समूचा जीवन जीने की तैयारी करने में गंवा देते हैं। और जब इतना सारा समय हाथ से निकल जाने के बाद वे अपने को लुटा हुआ देखते हैं तो भाग्य को कोसने लगते हैं। भाग्य का भला इससे क्या वास्ता? हर आदमी ही खुद अपना भाग्य है। आज दुनिया में हर तरह के लोग हैं, लेकिन मुझे उनमें

शक्तिवान नज़र नहीं आते। वे कहां गए? और सौन्दर्यशाली भी दिन-दिन कम होते जा रहे हैं।"

वृद्धा रुककर इस चिन्ता में डूब गई कि शक्तिवान और सौन्दर्यशाली लोग क्या हुए। वह यह सोच रही थी और उसकी आंखें स्तेपी के अंधकार में एकटक जमी थीं, मानो वे इस प्रश्न के उत्तर की वहां खोज कर रही हों।

उसके कहानी शुरू करने तक मैं चुपचाप प्रतीक्षा करता रहा। मुझे डर था कि मेरे कुछ कहने से कहीं वह भटक न जाए।

और फ़िलहाल उसने कहानी सुनानी शुरू कर दी।

३

"बहुत, बहुत पहले एक जाति थी। वह जिस जगह रहती थी उसके तीन बाज़ू अगम्य जंगल छाए थे और चौथे बाज़ू घास के मैदान फैले थे। इस जाति के लोग मज़बूत, बहादुर और ख़ुशमिज़ाज थे। लेकिन बुरे दिनों ने उन्हें आ घेरा। अन्य जातियों का वहां धावा हुआ और उन्होंने उन्हें जंगल की गहराइयों में खदेड़ दिया। जंगल अंधकार में डूबा और दलदली था, कारण कि वह बहुत पुराना था और पेड़ों की शाखाएं इतनी कसकर एक दूसरे के साथ गुंथी थीं कि आकाश की शक्ल तक नहीं नज़र आती थी और घनी हरियाली को चीरकर दलदल के पानी तक पहुंचने में सूरज की किरनों की सारी शक्ति चुक जाती थी। और जहां कहीं वे उस पानी तक पहुंचती थीं, वहां विषैली गंध उठने लगती थी। इससे लोग बीमार पड़ने और मरने लगे। तब उस जाति की स्त्रियों और बच्चों में स्यापा छा गया, पुरुष चिन्ता में घुलने लगे कि यह क्या हो गया, और वे निराश हो चले। इसका सिवा इसके और कोई इलाज नहीं था कि जंगल से बाहर

निकला जाए, लेकिन बाहर निकलने के दो ही रास्ते थे—एक यह कि जिस पथ से ग्राए थे उसीसे लौट जाएं, लेकिन इस पथ के छोर पर मज़बूत ग्रौर कुत्सित दुश्मन मौजूद थे, दूसरा यह कि जंगल को चीरते हुए ग्रागे बढ़ा जाए, लेकिन यहां जिन्नाकार पेड़ उनका रास्ता रोके थे जिनकी शक्तिशाली शाखाएं कसकर एक दूसरे के साथ गुंथी थीं ग्रौर जिनकी पेंचदार टेढ़ी-मेढ़ी जड़ें दलदली कीचड़ में ख़ूब गहरी चली गई थीं। ये चट्टाननुमा पेड़ दिन के धूसर ग्रंधेरे में निर्वाक् ग्रौर निश्चल खड़े रहते ग्रौर रात को जब ग्रलाव जलते तो ऐसा मालूम होता जैसे वे लोगों को दबोचने के लिए नीचे झुके चले ग्रा रहे हों, ग्रौर स्तेपी की उन्मुक्त गोद में जन्म लेनेवाले ये लोग हमेशा, दिन ग्रौर रात, ग्रब ग्रंधेरे की दीवारों में बन्द रहते जो मानो उन्हें कुचलने की क़सम खाए बैठी थीं। इस सबसे भी ग्रत्यन्त भयानक थी हवा, जो पेड़ों की चोटियों पर से सनसनाती ग्रौर फुंकार मारती गुज़रती, ग्रौर ऐसा मालूम होता मानो समूचा जंगल उन लोगों के लिए, जो कि उसमें क़ैद थे, किसी भयंकर शोक-गीत से गूंज उठा हो। वे लोग, जैसा कि मैं कह चुकी हूं, एक बहादुर जाति के लोग थे ग्रौर वे मृत्यु-पर्यन्त उन लोगों से लड़ते, जिन्होंने कि उन्हें एक बार हरा दिया था, लेकिन उन्हें डर था कि इस लड़ाई में कहीं वे एकदम नष्ट न हो जाएं। उनके पास ग्रपने ग्रादर्श थे, जिनकी वे रक्षा करना चाहते थे, ग्रौर ग्रगर वे नष्ट हो जाते तो उनके ग्रादर्श भी उनके साथ ही नष्ट हो जाते। इसी कारण ग्रपने भाग्य के बारे में वे इतना सोचते थे, बैठे ही बैठे लम्बी रातें गुज़ार देते थे। ज़हरीली गंध उनके चारों ग्रोर मंडराती थी ग्रौर जंगल ग्रपना शोकपूर्ण गीत गाता रहता था। ग्रौर जब कि वे इस प्रकार सोच में डूबे बैठे होते, ग्राग की लपटों की परछाइयां उनके इर्द-गिर्द मूक नृत्य में उछलती कूदतीं,—ग्रौर ऐसा मालूम होता कि ये निरी परछाइयां ही नहीं हैं, जो नृत्य कर रही हैं, बल्कि जंगल ग्रौर दलदल की प्रेतात्माएं ग्रपनी

विजय का उत्सव मना रही हैं। और आदमी को निराश विचार जितना अधिक निःसत्व कर डालते हैं, उतना और कोई चीज़ नहीं करती, – न श्रम आदमी को उतना निःसत्व करता है और न स्त्रियां। सो लोग अत्यन्त चिन्ता में घुलने लगे। भय का उनके हृदय में उदय हुआ और उनकी मज़बूत बांहों को उसने जकड़ लिया। उस समय, जब स्त्रियां विषैली गंध के कारण मरे लोगों के शवों पर रोतीं या उन जीवितों को लेकर कलपतीं जिन्हें भय ने पंगु बना दिया था, तो आतंक उन्हें अपने चंगुल में दबोच लेता। कायरतापूर्ण शब्द जंगल में भनभनाने लगे – पहले धीमी और दबी हुई आवाज़ में, फिर अधिक खुलकर – दिन प्रति दिन अधिक तेज़ होती हुई आवाज़ में। और अन्त में लोगों न सोचा कि दुश्मन के पास चलकर अपनी आज़ादी का समर्पण कर दें। मृत्यु की चिन्ता ने उन्हें इतना डरा दिया था कि ग़ुलाम की भांति जीवन बिताना उनमें से किसीको भी बुरा नहीं मालूम हुआ। लेकिन इसी समय डान्को प्रकट हुआ और उसने इस दुर्गति से उनकी रक्षा की।"

मुझे ऐसा मालूम हुआ कि डान्को के जलते हुए हृदय की यह कहानी वह पहले भी बहुत बार सुना चुकी है। बैठे हुए गले से, चरचराती आवाज़ में, अपने एक ख़ास लहजे से जब वह इसे सुना रही थी तो मुझे ऐसा लगा जैसे मैं उस जंगल की आवाज़ों को सुन रहा हूं जिसकी गहराइयों में वे अभागे जलावतन विषैली गंध से मारे गए।

"डान्को उनका अपना ही आदमी था और वह जवान तथा सुन्दर था। सुन्दर लोग हमेशा साहसी होते हैं। और उसने अपने साथियों से कहा –

"'राह की चट्टानें सोचने से नहीं हट जातीं। जो कुछ नहीं करते, वे कुछ नहीं रहते। सोच और अति चिन्ता में हम क्यों अपनी शक्तियां बरबाद करें? उठो, जंगल को चीरते हुए हम आगे बढ़ चलें, जब तक कि

दूसरे छोर पर न पहुंच जाएं। आखिर कहीं न कहीं तो इसका अन्त होगा ही—हर चीज़ का एक अन्त होता है। चलो, आगे बढ़ें।'

"उनकी आंखें उसकी ओर उठीं और उन्होंने देखा कि वह उनमें सबसे श्रेष्ठ है, क्योंकि उसकी आंखें शक्ति और जीवन से दमक रही थीं।

"'हमारी अगुवाई करो,' उन्होंने कहा।

"और उसने उनकी अगुवाई की।"

वृद्धा बोलते-बोलते रुक गई और स्तेपी के उस पार देखने लगी। अंधेरा काजल की भांति अधिकाधिक गहरा और घना होता जा रहा था। खूब दूर डान्को के जलते हुए हृदय की चिंगारियां रह-रहकर चमक उठतीं—नीले रंग के आकाश-कुसुमों की भांति, जो क्षण भर के लिए खिलते और फिर विलीन हो जाते।

"सो डान्को उन्हें लेकर आगे बढ़ा। और वे तत्परता से उसके साथ चले, क्योंकि उनका उसमें विश्वास था। रास्ता बड़ा विकट था। एक तो अंधेरा, फिर क़दम-क़दम पर मुंह बाए दलदल, जो लोगों को निगल जाती थी, और पेड़, जो लोहे की दीवारों की भांति राह रोके थे, कसकर एक दूसरे में गुंथी उनकी शाखाएं, सांप की भांति हर तरफ़ फैली उनकी जड़ें। हर क़दम पर, जो ये लोग उठाते, उन्हें अपना रक्त और पसीना भेंट करना पड़ता। एक लम्बे अर्से तक वे चलते रहे, और जितना ही आगे वे जाते, जंगल उतना ही अधिक घना होता जाता और उनके अंग उतने ही अधिक क्षीण पड़ते जाते। और तब वे डान्को के खिलाफ़ भुनभुनाना शुरू करते। कहते कि वह निरा लड़का और अनुभवहीन है, उसकी यह अनधिकार चेष्टा है जो वह उन्हें यहां लाया। लेकिन वह उनके आगे-आगे चलता रहा। उसकी हिम्मत अडिग थी और मस्तिष्क धुंध से मुक्त।

"लेकिन एक दिन तूफ़ान ने जंगल को घेर लिया और पेड़ों में एक साथ आतंकपूर्ण सनसनाहट दौड़ गई। क्षण भर में इतना घना अंधेरा

छा गया कि लगता था जसे वे तमाम रातें एक साथ यहां जमा हो गई हों जो जंगल के जन्म से लेकर अब तक बीती थीं। और वे नन्हे लोग भीमाकार पेड़ों के नीचे तथा तुफ़ानी गरज के बीच चलते रहे। वे चलते जाते, भीमाकार पेड़ चरचराते और भयंकर गीत गाते और पेड़ों की चोटियों के ऊपर बिजली चमकती, क्षण भर के लिए एक ठंडी नीली रोशनी बर्छी की भांति जंगल में प्रवेश करती और फिर उतनी ही तेज़ी से विलीन हो जाती जितनी तेज़ी से कि वह प्रकट हुई थी। लोगों के हृदय भय से कांप उठते। बिजली की ठंडी रोशनी में पेड़ ऐसे मालूम होते जैसे वे जानदार जीव हों—अपनी गांठ-गठीली लम्बी बांहों को फैलाते और उन्हें गूंथकर अपना जाल बिछाते ताकि ये लोग, जो अंधकार से छूटने की कोशिश कर रहे हैं, उसमें फंसकर रह जाएं। और उनके पत्तों के घटाटोप में से ऐसा मालूम होता जैसे कोई सर्द, काली और भयानक चीज़ उनकी ओर घूर रही हो। बड़ा ही बीहड़ मार्ग था और ये लोग, जो उसपर चल पड़े थे, थककर चूर-चूर हो गए और हिम्मत हार बैठे। लेकिन शर्म के मारे वे अपनी कमज़ोरी स्वीकार नहीं करते और अपना गुस्सा तथा असन्तोष डान्को पर उतारते जो उनके आगे-आगे चल रहा था। वे उसपर आरोप लगाते कि वह उनकी अगुवाई करने की योग्यता नहीं रखता।

"वे एक जगह रुक गए और थकान तथा गुस्से से चूर, उस कांपते हुए अंधेरे और तूफ़ान की विजयोन्मत्त गरज के बीच, उन्होंने उसे भला बुरा कहना शुरू किया।

"'तुम कमीने और कुत्सित जीव हो। तुमने ही हमें इस मुसीबत में फंसाया है,' उन्होंने कहा—'यहां लाकर तुमने हमारी जान सोख ली और इसके लिए तुम्हें अब अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा।'

"डान्को ने पलटकर उनकी ओर देखा और चिल्लाकर बोला—

"तुमने कहा—'हमारी अगुवाई करो,' और मैंने तुम्हारी अगुवाई

की। मुझमें तुम्हारी अगुवाई करने का साहस है और यही वजह है जो मैंने इसका बीड़ा उठाया। लेकिन तुम? तुमने अपनी मदद के लिए क्या किया? तुमने कुछ नहीं किया सिवा इसके कि मेरे पीछे चलते रहे, तुमसे इतना भी नहीं हुआ कि एक लम्बे अभियान के लिए अपनी शक्ति को ही संचित रखते। भेड़ों के रेवड़ की भांति तुम केवल मेरे पीछे चलते रहे।'

"उसके इन शब्दों ने उन्हें और भी ज्यादा भड़का दिया।

"'तुम्हें अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा। तुम्हें मौत के घाट उतरना होगा,' वे चीख़ उठे।

"जंगल गड़गड़ाहट और उनकी चीखों से गूंज उठा। बिजली ने अंधेरे की चिन्दियां बिखेर दीं। डान्को की नज़र उनपर टिकी थी, जिनके लिए उसने इतना महान् कष्ट उठाया था, और उसने देखा कि वे जंगली पशुओं से कम नहीं हैं। उनकी एक अच्छी-ख़ासी भीड़ उसे घेरे थी, लेकिन मानवता का कोई चिन्ह उनमें नज़र नहीं आता था। और वह जान गया कि उनसे किसी दया की उसे उम्मीद नहीं करनी चाहिए। तब असन्तोष का एक उबाल-सा उसके हृदय में उठा, लेकिन संवेदनशीलता ने उसे शान्त कर दिया। वह इन लोगों को चाहता था और उसे डर था कि उसके अभाव में वे नष्ट हो जाएंगे। उन्हें बचाने और सुगम पथ पर उन्हें ले जाने की एक महती आकांक्षा की जोत उसके हृदय में जल उठी और इस जोत की सशक्त लपटें उसकी आंखों में नाचने लगीं। और यह देखकर लोगों ने सोचा कि वह गुस्से में है, उन्होंने सोचा कि इसी कारण उसकी आंखों में लपटें थिरक रही हैं। और वे उसी क्षण भेड़ियों की भांति चौकस-चौकन्ने हो गए—इस आशंका से कि वह अब टूट पड़ना ही चाहता है, और वे उसके इर्द-गिर्द और भी निकट घिर आए—इस ताक में कि उसे दबोच लें और मार डालें। उसने उनके इस इरादे को देखा, लेकिन इससे केवल उसके

हृदय की जोत और भी उज्ज्वल हो उठी, कारण उनके इस इरादे ने उसकी आकांक्षा की जोत में शोक-संवेदन के तेल का काम किया।

"और जंगल अपना शोकपूर्ण गीत गाता रहा, बादल गरजे और पानी बरसने लगा।

"'इन लोगों को बचाने के लिए मैं और क्या कर सकता हूं,' डान्को की आवाज़ बादलों की गरज को बेधकर प्रकट हुई।

"और सहसा उसने अपना वक्ष चीर डाला, अपने हृदय को नोचकर बाहर निकाला और उसे अपने सिर से ऊंचा उठा लिया।

"वह सूरज की भांति दमक रहा था, बल्कि उसका प्रकाश सूरज से भी ज़्यादा तेज़ था। जंगल की गरज शान्त हो गई और इस मशाल का — मानव-जाति के लिए महान प्रेम की इस मशाल का — आलोक फैल चला। अंधकार के पांव उखड़ गए और वह कांपता-थरथराता मुंह-बाए एक दलदल में कूदकर जंगल की अतल गहराइयों में समा गया। और वे लोग आश्चर्य के मारे पत्थर की मूर्ति बने वहीं खड़े रह गए।

"'मेरे साथ बढ़ चलो!' डान्को ने चिल्लाकर कहा और अपने जलते हुए हृदय को ख़ूब ऊंचा उठाए तेज़ी से आगे बढ़ चला।

"और लोग, मंत्रमुग्ध-से, उसके साथ हो लिए। और जंगल एक बार फिर भुनभुनाने और अपनी फुनगियों को अचरज से हिलाने लगा। लेकिन उसकी यह भुनभुनाहट दौड़ते हुए पांवों की आवाज़ में खो गई। लोग अब साहस और तेज़ी के साथ भागते हुए आगे बढ़ रहे थे। जलते हुए हृदय का अद्‌भुत आलोक उन्हें अनुप्राणित कर रहा था। अब भी वे गिरकर मरते थे, लेकिन उनके मरने पर न अब आंसुओं की झड़ी लगती थी, न ही शिकायतों की बौछार होती थी। और डान्को सबसे आगे बढ़ रहा था और उसका जलता हुआ हृदय अधिकाधिक उज्ज्वल आलोक बिखेर रहा था।

"और सहसा ठीक उनके सामने जंगल बीच से फटकर अलग हो गया—अलग हो गया उन्हें रास्ता देने के लिए—और उनके आगे बढ़ते ही फिर पीछे से बंद हो गया—मूक और ठोस दीवार की भांति, और डान्को तथा उसके साथी सूरज की धूप और बारिश से धुली हवा के सागर में हिलोरें लेने लगे। तूफ़ान अब पीछे, जंगल के ऊपर, सिर धुन रहा था, जब कि यहां सूरज सोना बिखेर रहा था, स्तेपी जीवन से उमंग रही थी, घास पर वर्षा की बूंदें मोतियों की भांति झिलमिला रही थीं और नदी सुनहरी धारियों से दमक रही थी। सांझ का समय था और छिपते हुए सूरज की किरनों ने नदी को उतना ही लाल रंग दिया था जितना लाल कि गर्म ख़ून की उस धारा का रंग था जो डान्को के हृदय में हुए घाव से बह रही थी।

"वीर डान्को ने अन्तहीन स्तेपी को—घास के अन्तहीन मैदानों को—एक नज़र देखा, आनन्द से छलछलाती नज़र आज़ादी के इस देस पर उसने डाली और गर्व से खिलखिलाकर हंसा। इसके बाद वह ज़मीन पर गिर पड़ा और उसके प्राणपखेरू उड़ गए।

"और उसके अनुगामी ख़ुशी और आशा में मगन थे। इस ओर उनका ध्यान तक नहीं गया कि वह मर गया है और उसका वीर-हृदय उसके मृत शरीर के पास पड़ा अभी भी जल रहा है। लेकिन उनमें से एक की—जो डरपोक-सा था—नज़र उसपर गई और जाने किस भय से कांपकर उसने उस जलते हुए हृदय को रौंद डाला। चिंगारियों की एक फुहार-सी उसमें से निकली और फिर वह बुझ गया।

"यही वजह है जो स्तेपी में बिजली-तूफ़ान आने से पहले हमेशा नीली चिंगारियां दिखाई देती हैं।"

वृद्धा की सुन्दर कहानी का अन्त होते न होते स्तेपी में कल्पनातीत निस्तब्धता छा गई। ऐसा मालूम होता था मानो वीर डान्को की शक्ति से

वह आतंकित हो उठी हो—उस डान्को की शक्ति से, जिसने अपने साथी मानवों के लिए खुद अपने हृदय की मशाल जलाई और जो अपने कृतित्व के बदले किसी भी पुरस्कार की इच्छा किए बिना इस दुनिया से बिदा हो गया।

वृद्धा ऊंघ चली। मैं उसकी ओर देख रहा था और अचरज में भरकर सोच रहा था कि उसका हृदय कहानियों और स्मृतियों का जाने कितना बड़ा ज़खीरा है। और मैं डान्को के जलते हुए हृदय के बारे में और इतनी सुन्दर तथा प्रेरक लोक और देव-कथाओं को जन्म देनेवाली मानवीय कल्पना की शक्ति के बारे में सोचने लगा।

इज़रगिल अब गहरी नींद में सो गई थी। हवा ने उन चिथड़ों को हटाकर अलग कर दिया था जो उसकी हड़ियल छाती को ढके थे। मैंने उसके बूढ़े बदन को ढक दिया और उसकी बग़ल में ज़मीन पर लेट गया।

स्तेपी अंधेरे से घिरी और निस्तब्ध थी। बादल धीमी गति से—अलसाए-से—आकाश में तैर रहे थे और सागर मर्मर-ध्वनि कर रहा था—धीमी और शोकपूर्ण ...

१८६४



चेलकाश

नीला दक्खिनी आकाश धूल मे इतना अटा था कि मटमैली चादर कीभांति दिखाई देता था। सूरज के चेहरे पर भूरे रंग का पतला नक़ाब-सा पड़ा था जिसके भीतर से वह हरे सागर की ओर झांक रहा था। उसकी किरनें पानी पर, जिसे चप्पुओं की चोटों, माल के जहाज़ों के पंखों, तुर्की

फ़ेलुकाम्रों—दो-मस्तूली छोटे व्यापारी जहाज़ों—की पैनी बल्लियों और अति व्यस्त बन्दरगाह से सभी दिशाओं में आ-जा रहे भांति-भांति के अन्य जहाज़ों ने मथ डाला था, बहुत ही फीका अक्स डाल रही थीं। सागर की लहरें, जो ग्रेनाइट पत्थर के बांध से जकड़ी थीं और जिन्हें उनपर से गुज़रनेवाले भारी बोझों ने कुचल डाला था, तट से और जहाज़ों के बाजुओं से टकरा रही थीं—फनफनाती और झाग उगलती, अपने दामन में भांति-भांति का कचरा लथेड़ती।

लंगरों की ज़ंजीरों की खनखनाहट, मालगाड़ियों के कांटों की खड़खड़, लोहे की चादरों की विलाप-ध्वनि, जिन्हें उतारकर फ़र्श के पत्थरों पर पटका जा रहा था, लकड़ी के लकड़ी से टकराने की धुंधली ठकठक, गाड़ियों की खड़खड़, हल्के रुदन से लेकर गला फाड़कर चीख़ उठनेवाली भाप के जहाज़ों की सीटियां, घाट-मज़दूरों, जहाज़ियों और चुंगी की गारद के सिपाहियों की चिल्लाहट—ये सब मिलकर दिन के काम की चहल-पहल से पूर्ण सन्ना देनेवाले संगीत की रचना करतीं, जो बन्दरगाह के ऊपर आकाश में विद्रोह के साथ उमड़ता-घुमड़ता,—और नीचे धरती पर से आवाज़ों की नयी लहरें उसमें शामिल होने के लिए निरन्तर आकाश की ओर बढ़ती रहतीं—कभी धरती को कंपा देनेवाली गड़गड़ाहट के रूप में और कभी ऊमस-भरी वायु को छार-छार कर देनेवाले धमाके के रूप में, जैसे कोई भारी चीज़ टूटकर चकनाचूर हो गई हो।

बांध के ग्रेनाइट पत्थर, इस्पात, लकड़ी, फ़र्श के पत्थर, जहाज़ और लोग-बाग—हर चीज़ वाणिज्य और लूटा-जाए-सो-लूट के देवता की वन्दना के सबल स्वरों में डूबी थी। आवाज़ों के इस ऊहापोह में—सामूहिक कोरस में—मानवीय आवाज़ें मुश्किल से ही पकड़ में आती थीं,—इतनी बलहीन और उपहासास्पद तक थीं वे। और ख़ुद लोग भी—वे, जिनके प्रयत्नों ने इन सब आवाज़ों को जन्म दिया था,—निरीह और उपहासास्पद थे। उनके

गंदे, चिथड़े हुए छड़-से शरीर, जो कमर पर लदे बोझ से दोहरे हो गए थे, धूल, तपन और शोरगुल के बीच इधर से उधर आ-जा रहे थे, और अजगरों से भी बड़े लोहे के यंत्रों, व्यापारिक माल के अम्बारों, खड़खड़ करते रेल के डिब्बों तथा अन्य तमाम चीज़ों की तुलना में – जिनका खुद उन्होंने ही निर्माण किया था – वे नगण्य मालूम होते थे। खुद उनकी बनाई हुई चीज़ों ने उन्हें गुलाम बना लिया था और उन्हें व्यक्तित्व से वंचित कर दिया था।

भारी-भरकम और लम्बे-चौड़े जहाज़, अपनी भाप गरम किए, सीटियों की सिसकार और फुंकार छोड़ रहे थे और भारी उसांसें ले रहे थे, और प्रत्येक ध्वनि, जो उनसे निकलती थी, उन गंदे और मटमैले जीवों का घृणा से उपहास करती प्रतीत होती थी जो उनके गहरे तहखानों में बाधित श्रम से तैयार हुआ माल लादने के लिए उनके डेकों पर रेंग रहे थे। अपने पेट में डालने के लिए दो मुट्ठी अनाज की खातिर घाट-मज़दूरों की ये लम्बी क़तारें जब जहाज़ का लौह पेट भरने के लिए हज़ारों मन अनाज अपनी कमर पर लादकर चलतीं तो उन्हें देखकर इतना हंसने को जी चाहता कि आंखों में आंसू निकल आएं। तपन, शोरगुल और जानलेवा श्रम से बेसुध मैले-कुचैले और पसीने से तर-ब-तर इन जीवों और उन शक्तिशाली मशीनों में, जिन्हें इन्हीं लोगों ने बनाया था और जो सूरज की धूप में खड़ी शान से चमचमा रही थीं, इतनी विभिन्नता थी कि उसपर बहुत ही तीखे महाकाव्य की रचना की जा सकती थी। ये मानव और ये मशीनें, जिन्हें, सब कुछ कहने और कर लेने के बाद, भाप नहीं बल्कि इन मानवों का रक्त और पुट्ठे हरकत में लाते थे जिन्होंने कि उन्हें बनाया था।

आवाज़ों का यह ऊहापोह बड़ा बोझिल मालूम होता था। धूल नाक और आंखों में घुसी जाती थी। तपन इतनी थी कि शरीर झुलसा और

बेदम हुआ जाता था। हर चीज़ में एक कसाव और तनाव था, मानो धीरज का बांध टूटना चाहता हो, कोई प्रलयंकर घटना सिर पर मंडरा रही हो— एक भीषण विस्फोट जो इस समूचे दमघोट वातावरण को ख़त्म कर देगा ताकि लोग उन्मुक्त होकर और सहज भाव से सांस ले सकें। और तब एक शांत निस्तब्धता दुनिया में उतर आएगी और लोगों को बहरा, चिड़चिड़ा तथा पागल बना देनेवाली यह धूल और चिल्लपौं सदा के लिए विदा हो जाएगी, और यह नगर, यह सागर और यह आकाश—यह समूचा वायुमंडल— स्वच्छ, ताज़ा और सुन्दर हो उठेगा...

एक के बाद एक बारह बजे के घंटों की सधी हुई आवाज़ सुनाई दी। जब घंटों की गूंज—उनका धातुवी कम्पन—कहीं दूर जाकर विलीन हो गयी तो श्रम के बनैले संगीत ने भी विराम ग्रहण किया और अगले ही क्षण असन्तोष की भुनभुनाहट मात्र में परिणत होकर रह गया। अब लोगों की आवाज़ें और सागर की मर्मर-ध्वनि अधिक स्पष्टता से सुनाई देने लगीं।

यह खाने का समय था।

१

उस समय, जब अपना काम बन्द करने के बाद घाट-मज़दूर छोटे-छोटे दलों में बातें करते और चहकते घाट में इधर-उधर फैलकर और खोंचेवालों से खाने की चीज़ें ख़रीदकर छायादार ओनों-कोनों की खोज कर रहे थे जहां फ़र्श पर आराम से बैठकर वे अपना भोजन कर सकें, तब ग्रिश्का चेल्काश ने वहां अपनी सूरत दिखाई। सारे के सारे घाट-मज़दूर उसे ख़ूब अच्छी तरह जानते थे। वह पक्का पियक्कड़, साहसी और बहुत ही दक्ष चोर था। वह नंगे पांव और नंगे सिर था। वह मोटे कपड़े का एक तार-तार हुआ पायजामा और एक मैली-कुचैली सूती कमीज़ पहने था जिसका कालर फटा हुआ था जिसके भीतर से सांवली चमड़ी चढ़ी उसकी हड़ियल

छाती दिखाई पड़ रही थी। भूरापन लिए लोहे के रंग के उसके उलझे हुए बाल और उसके दुबले-पतले तथा बाज़ ऐसे चेहरे की चुरमुर चेष्टा यह सूचित करती थी कि वह अभी सोता उठा है। एक तिनका उसकी मूंछों में और दूसरा बाएं गाल पर उगी हुई 'घास' में उलझा था, और अपने कान में वह लाइम का एक अंखुवा खोंसे था। दुबला-पतला और लम्बा, कंधे कुछ झुके हुए, पत्थर-जड़ी सड़क पर सामने से वह आ रहा था—अलस गति से झूमता-झामता, हुकदार नाक से वायु को सूंघता और अपनी चमकदार भूरी आंखों से घाट-मज़दूरों की टोह लेता, मानो वह उनमें से किसीकी खोज कर रहा हो। उसकी लम्बी काली मूंछें, बिल्ली की मूंछों की भांति, बराबर फरफरा रही थीं, अपने हाथों को वह कमर के पीछे बांधे था और उन्हें बराबर आपस में ऐंठता हुआ अपनी टेढ़ी-मेढ़ी सांडसीनुमा उंगलियों को चटखा रहा था। यहां भी, जहां उसके जैसे अन्य सैंकड़ों तलछटी लोग मौजूद थे, वह तुरत ध्यान आकर्षित करता था। कारण, वह स्तेपी का बाज़ मालूम होता था और उसकी चौर थिरता तथा चौकस चाल में—उस शिकारी पक्षी की उड़ान की भांति जिससे कि वह मिलता-जुलता था—सधी हुई शांति के चोले में झपट्टा मारने की सन्नद्धता छिपी थी।

कोयले की टोकरियों के एक ढेर की छाया में बैठे मज़दूरों के एक दल के पास जब वह पहुंचा तो मज़बूत काठी का एक युवक, जिसके बेरंग चेहरे पर चकत्ते उभर आए थे और गर्दन पर पड़े खरोंच के निशान बताते थे कि हाल ही में उसकी किसीसे झड़प हुई है, उससे मिलने के लिए उठ खड़ा हुआ। चेल्काश के पास पहुंचकर और उसके साथ-साथ चलते हुए उसने धीमी आवाज़ में कहा—

"जहाज़ियों को पता चला है कि कपड़े की दो गांठें ग़ायब हैं। वे खोज कर रहे हैं।"

"तो क्या हुआ?" शांत भाव से ऊपर से नीचे तक उसका जायज़ा लेते हुए चेल्काश ने कहा।

"तुम भी अजीब आदमी हो। कहते हो – 'तो क्या हुआ?' हुआ क्यों नहीं, वे खोज कर रहे हैं।"

"और तुमने सोचा, इस खोज में मुझे भी उनका हाथ बंटाना चाहिए?" गोदाम की ओर देखते हुए चेल्काश ने मुसकराकर कहा।

"मेरी बला से, तुम चाहे जहन्नुम में जाओ!"

और वह उलटे पांव लौट आया।

"रुको! यह तो बताओ कि तुम्हारे चेहरे का यह सिंगार किसने किया है। और भी कुछ नहीं, एकदम सामने का चौखटा – अपना शोकेस – ही बिगाड़ डाला। क्यों, मिश्का को तो नहीं देखा?"

"नहीं, उसे काफ़ी देर से नहीं देखा," युवक ने अपने साथियों के निकट पहुंचते हुए मुड़कर कहा।

चेल्काश को जो भी देखता, पुराने परिचित की भांति उसका अभिनन्दन करता, लेकिन वह – आम तौर से इतना ख़ुशमिज़ाज और छेपटियां लेने में इतना तेज़ होने पर भी – इस समय कुछ इतना उखड़ा हुआ था कि वह किसीका भी जमकर जवाब नहीं दे पा रहा था।

सहसा माल के एक अम्बार के पीछे से चुंगी-गारद का एक सिपाही नमूदार हो गया – गहरे हरे रंग की वर्दी पहने, धूल-धूसरित, सीधा-सतर, टूट पड़ने के लिए तैयार। वह चेल्काश की राह छेंके चुनौती की मुद्रा में खड़ा था। एक हाथ उसका अपनी तलवार की मूठ पर था और दूसरा चेल्काश की गरदन की ओर बढ़ रहा था।

"ठहरो, कहां जाते हो?"

चेल्काश एक डग पीछे खिसक गया, अपनी आंखें उठाकर गारद के सिपाही के लाल चेहरे की ओर देखा और एक ठंडी मुसकान उसके होंठों पर दौड़ गई।

गारद के सिपाही ने, धूर्तता के बावजूद जो भला था, अपने चेहरे पर भयानकता का पुट लाने का प्रयत्न किया, – अपने गालों को उसने फुलाया और तमतमाकर लाल कर लिया, अपनी भौंहों को उसने सिकोड़ा और आंखों को टेरा, – लेकिन इससे उसका चेहरा, कुल मिलाकर, अत्यन्त हास्यास्पद हो उठा।

"मैंने तुम्हें एक बार आगाह कर दिया कि अगर अपनी हड्डी-पसलियों की ख़ैर चाहते हो तो घाट के पास तक न फटकना, लेकिन तुम फिर यहां चले आए?" उसने गरजकर कहा।

"कहो, सेम्योनिच, मज़े में तो हो?" चेल्काश ने शांत भाव से अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा – "आज बहुत दिनों के बाद दिखाई दिए।"

"अगर तुम पचास साल और न दिखाई देते तो भी मेरा कुछ नहीं बिगड़ता – समझे! बस, अब दफ़ा हो जाओ यहां से!"

लेकिन उसने बढ़े हुए हाथ को अपने हाथ में थाम लिया।

"मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता था," गारद के सिपाही के हाथ को अपनी इस्पाती उंगलियों में थामे और घनिष्ठता के अन्दाज़ में उसे हिलाते हुए चेल्काश ने कहा – "वह यह कि मिश्का को तो कहीं नहीं देखा?"

"कौन मिश्का? मैं किसी मिश्का को नहीं जानता। बस, दफ़ा हो जाओ, भले आदमी, – अगर गोदामघर के सिपाही ने तुम्हें देख लिया तो ..."

"वही लाल बालों वाला लड़का, जिसके साथ पिछली बार मैं 'कोस्त्रोमा' पर काम करता था?" चेल्काश ने फिर पूछा।

"जिसके साथ मिलकर तुम चोरी करते थे, – यही न? वह अस्पताल में है, – तुम्हारा वह मिश्का। उसके ऊपर लोहा आ गिरा और उसकी टांग कचर गई। लेकिन मैं तुमसे कहता हूं, दफ़ा हो जाओ यहां से। नहीं तो गर्दन पकड़कर मुझे धकियाना पड़ेगा।"

"भाई वाह, यह भी एक ही रही। अभी तो तुम कहते थे कि मिश्का को नहीं जानते, और अब – तुम इतनी कलाबाज़ी क्यों खाते हो, सेम्योनिच?"

"बस-बस, बहुत बकवास न करो! और नौ दो ग्यारह हो जाओ।"

गारद का सिपाही झुंझला उठा। उसने अपने चारों ओर देखा और अपना हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगा। लेकिन चेल्काश ने उसका हाथ नहीं छोड़ा, शान्त भाव से अपनी झाड़ीनुमा भौंहों के नीचे से उसे देखा और बोलता गया –

"ऐसी जल्दी क्या है? क्या तुम मेरे साथ थोड़ी देर तबीयत से बतियाना भी नहीं चाहते? बताओ न, कैसे गुज़र रही है? तुम्हारी बीवी और बच्चे तो मज़े में हैं न?" और फिर, अपनी आंखों को टिमटिमाते तथा व्यंगपूर्ण हंसी में अपनी बत्तीसी झलकाते हुए उसने कहा – "बहुत दिनों से तुमसे मिलने को जी छटपटा रहा था, लेकिन बस आ ही नहीं सका। इस कम्बख़्त शराब के मारे ..."

"बन्द करो, मैं कहता हूं। यह मज़ाक नहीं चलेगा, – समझे, मीकिया लबार! मेरी बात को यों ही उड़ाओगे तो धोखा खाओगे। लेकिन शायद तुमने अब घरों में सेंध लगाना और बाज़ार-हाट में लोगों को लूटना शुरू कर दिया है।"

"भला क्यों? यहां घाट पर इतनी गुंजाइश है कि मैं और तुम ज़िन्दगी भर व्यस्त रह सकते हैं। सच, सेम्योनिच, यहां बहुत गुंजाइश है। और मैंने सुना है कि तुमने कपड़े की दो और गांठें तिड़ी कर दी हैं। ज़रा संभलकर चलो, नहीं तो मुसीबत में फंसे नज़र आओगे।"

सेम्योनिच गुस्से से कांपने और उसे व्यक्त करते समय थूक की बौछार छोड़ने लगा। चेल्काश ने उसका हाथ छोड़ दिया और शांत भाव से लम्बे डग धरता घाट के दरवाज़े की ओर चल दिया। गारद का सिपाही भी जमकर गालियां देता उसके पीछे-पीछे हो लिया।

चेल्काश अब अधिक मगन था। अपने दांतों के बीच से सीटी की आवाज़ निकालता कोई धुन गुनगुना रहा था। दोनों हाथ अपनी जेबों में डाले था और बीच-बीच में ठिठककर दाहिने और बाएं ख़ूब सधे हुए छींटे कसता जाता था। जवाब भी उसे उतना ही करारा मिलता था।

"तुम्हारे भी ख़ूब ठाठ हैं, ग्रिश्का। साथ में मालिकों ने एक टहलुवा भी लगा

दिया है ! " एक घाट-मज़दूर ने, जो अपने साथियों के साथ ज़मीन पर पांव पसारे भोजन के बाद सुस्ता रहा था, चिल्लाकर कहा।

"सेम्योनिच को इस बात का बड़ा ख़याल है कि मेरे नंगे पांवों में कहीं कोई कील-कांटा न गड़ जाए! " चेल्काश ने जवाब दिया।

वे दरवाज़े पर पहुंच गए। दो सिपाहियों ने चेल्काश के कपड़ों को टटोल-टटोलकर तलाशी ली और फिर उसे बाहर सड़क पर धकेल दिया।

सड़क को पार कर, क़हवाख़ाने के सामने, पटरी के किनारे एक पत्थर पर वह बैठ गया। माल से लदी गाड़ियों की एक पांत खड़खड़ करती घाट के दरवाज़े में से बाहर निकल रही थी और ख़ाली गाड़ियों की एक दूसरी पांत दूसरी ओर से भीतर प्रवेश कर रही थी जिनके गाड़ीवान, अपनी गद्दियों पर बैठे, धचकोले खाकर उछल रहे थे। घाट से भयानक कोलाहल की आवाज़ और धूल के गुब्बारे उड़कर आ रहे थे जो बदन से चिपक जाते थे।

इस अंध कोलाहल और धूलधानी ने चेल्काश को अपने पूरे रंग में रंग दिया था। वह उस रात किसी भारी माल पर हाथ मारने की कल्पना में मगन था। इस मुहिम में उसे कोई ख़ास मेहनत भी नहीं करनी पड़ेगी, लेकिन भारी दक्षता से अवश्य काम लेना होगा। उसे पूरा यक़ीन था कि दक्षता में वह ओछा नहीं पड़ेगा। और यह सोचकर उसने ख़ुशी से अपनी आंखों को सिकोड़ा कि नोटों की उन तमाम गड्डियों को वह अगली सुबह किस प्रकार ख़र्च करेगा। उसे अपने साथी मिश्का का ख़याल आया। उसकी उसे सख़्त ज़रूरत थी, लेकिन वह था कि अपनी टांग तोड़ बैठा था। चेल्काश ने मन ही मन उसे कोसा। कारण, उसे डर था कि वह अकेले ही इस मुहिम को पार नहीं लगा सकेगा। मौसम का उस समय जाने क्या रंग होगा? सिर उठाकर उसने आकाश पर नज़र डाली, फिर सामने फैली सड़क को नापा।

कोई छः एक डग दूर, खूंटे के खम्बे से कमर टिकाए, पटरी पर एक युवा लड़का बैठा था। वह घर के कते सूत की एक नीली कमीज़ और पतलून, पांवों में बक्कल की चप्पलें और सिर पर ख़ाकी रंग की एक फटी हुई छज्जेदार टोपी पहने

था। उसकी बग़ल में एक छोटा-सा थैला और बिना हत्थे का एक हंसिया पड़ा था। हत्थे की जगह घास लिपटी थी और उसे बड़ी सफ़ाई के साथ रस्सी से बांधा गया था। लड़का हट्टा-कट्टा और चौड़े कंधों वाला था। उसके बाल सुनहरी थे और उसका चेहरा हवा और धूप से सांवला पड़ गया था। अपनी बड़ी-बड़ी नीली आंखों से वह चेल्काश की ओर मित्र-भाव से देख रहा था।

चेल्काश ने अपनी बत्तीसी चमकाई, जीभ बाहर निकाली, अपने चेहरे को बुरी तरह बिचकाया और दीदे निकालकर उसकी ओर देखने लगा।

लड़के ने, अचरज में भरकर, पहले तो आंखें मिचमिचाईं, फिर ज़ोरों से हंसने लगा और हंसी के इस दौरे के बीच चिल्लाकर बोला – "मौज में पगला गया है!" फिर, उठे बिना ही, फ़र्श के पत्थरों पर से खिसकता, वह चेल्काश की ओर बढ़ चला। उसका थैला भी उसके साथ-साथ धूल में लिथड़ रहा था और उसके हंसिये की नोक पत्थरों से टकराकर खनखना रही थी।

"क्यों, बहुत पी गए हो क्या?" चेल्काश के पायजामे को एक झटका देते हुए उसने पूछा।

"तुमने ठीक कहा, मेरे छौने, तुमने ठीक कहा," चेल्काश ने मुसकराते हुए स्वीकार किया। इस स्वस्थ, भले हृदय और बच्चों ऐसी निश्छल आंखों वाले लड़के ने तुरत उसके हृदय में घर कर लिया।

"और तुम... तुम क्या चांदी बना रहे थे?" उसने पूछा।

"हां, चांदी बना रहा था, लेकिन कुछ बनी नहीं। ख़राब दिन आ गए हैं। लोगों को देखो तो उनका अन्त नहीं। ऐसी भीड़ पहले कभी नहीं देखी। अकाल के मारे चले आते हैं। ऐसे लोगों का काम करने से कुछ पल्ले नहीं पड़ता। ज़रा सोचो तो, कुबान प्रदेश में अब साठ कोपेक मिलते हैं। कहते हैं कि पहले तीन या चार, बल्कि पांच रूबल तक, मिल जाते थे।"

"पहले की बात करते हो! पहले तो एक रूसी की शक्ल मात्र देखकर वे तीन-तीन रूबल तक दे डालते थे। दस साल पहले मैं इसी तरह रोज़ी कमाता था।

किसी कज़ाकों के गांव में मैं चला जाता। कहता – 'देखो, लोगो, तुम्हारे गांव में एक असली रूसी आया है!' और वे मेरे चारों ओर जमा हो जाते, ऊपर से नीचे तक मुझे देखते, मेरे बदन में उंगलियां गड़ाते और चुटकियां काटते, ओह और आह करते और तीन रूबल मेरी भेंट कर देते। इसके अलावा, खूब खिलाते-पिलाते और जब तक जी चाहे गांव में रहने का बुलावा देते।"

लड़का पहले तो मुंह बाए और अपने गोल चेहरे पर अचरज-भरी प्रशंसा के भाव लिए सुनता रहा, लेकिन जब उसने अनुभव किया कि चेल्काश दून की हांक रहा है तो उसने सटाक से अपना मुंह बन्द कर लिया और इसके बाद फिर ज़ोरों से हंसने लगा। चेल्काश ने अपने चेहरे से कोई भाव नहीं प्रकट होने दिया और अपनी मुसकराहट को मूंछों के भीतर छिपाए रहा।

"तुम भी अजीब पंछी हो। बातें इस तरह करते हो मानो सीधे खुदा के घर से आए हो – सच के सिवा और कुछ नहीं उगल रहे हो, और मैं हूं कि सब कुछ गले के नीचे उतारता जाता हूं। लेकिन, ईमान से कहता हूं, उन दिनों ..."

"और मैं भी तो ठीक यही कह रहा था कि उन दिनों ..."

"ओह, छोड़ो इसे!" लड़के ने हवा में हाथ हिलाते हुए कहा – "यह बताओ कि तुम हो क्या – मोची, या दर्ज़ी, या क्या?"

"मैं?" चेल्काश ने एक क्षण कुछ सोचा और फिर बोला – "मैं मछियारा हूं।"

"मछियारा? कोई सोच तक नहीं सकता। सो तुम मछलियां पकड़ते हो, – क्यों?"

"मछलियां ही क्यों? यहां मछियारे केवल मछलियां नहीं पकड़ते। ज्यादातर मुर्दा लाशें, पुराने लंगर, डूबी हुई नावें पकड़ते हैं। इनके लिए खास क़िस्म के कांटे होते हैं।"

"फिर बेपर की उड़ाने लगे। शायद तुम उन मछियारों में से हो जिनका यह गीत है –

हम डालते हैं अपना जाल
सागर के तटों पर,
बाज़ार की दुकानों
और खुले हुए दरवाज़ों पर!"

"इस तरह के मछियारों से कभी मिले हो?" चेल्काश ने पूछा। अपनी बत्तीसी चमकाते हुए वह कड़ी नज़र से लड़के की ओर देख रहा था।

"नहीं, लेकिन मैंने उनके बारे में सुना है।"

"और तुम्हें वे अच्छे लगे?"

"कौन, —क्या उस तरह के लोग? अच्छे क्यों न लगते? कम से कम वे आज़ाद तो हैं। जो मन में आता है, करते हैं।"

"वाह, तुम भी आज़ादी की बात करते हो? क्या तुम्हारा हृदय भी आज़ाद होने के लिए कसकता है?"

"बेशक। इससे अच्छी बात भला और क्या होगी कि आदमी ख़ुद ही अपना मालिक हो, — जहां जी चाहे जाए, जो मन में आए करे। केवल अपना दामन बेदाग़ रखे, ऐसा न हो कि गले में चक्की के पाट बन्ध जाएं। अपनी आत्मा और ख़ुदा छोड़ और किसीकी चिन्ता न करे। ख़ूब आगे बढ़े और मज़े से जीवन बिताए।"

चेल्काश ने घिन से मुंह बिचकाकर ज़मीन पर थूका और अपना मुंह मोड़ लिया।

"मैं अनेक मुसीबतों में फंसा हूं," लड़का कहता गया — "मेरा बाप बिना कुछ छोड़े मर गया, मेरी मां बूढ़ी है और ज़मीन में कुछ पैदा होता नहीं। ऐसी हालत में मैं क्या करूं? भले घर की एक लड़की से मेरी शादी हो सकती है। मुझे कोई एतराज़ नहीं, अगर घर वाले उसका हिस्सा उसके नाम कर दें। लेकिन वे नहीं करेंगे। उसका खूसट बाप उसे एक इंच भी ज़मीन नहीं देगा। सो मुझे उसका दास बनकर काम करना पड़ेगा, बहुत दिनों तक — बल्कि सालों तक। देखा तुमने, कैसी

मुसीबत है। अधिक नहीं, अगर सौ डेढ़ सौ रूबल भी मेरे हाथ लग जाएं तो मैं उसके बाप के सामने गरदन उठाकर कह सकता हूं – 'क्या तुम अपनी जायदाद का हिस्सा मारफ़ा के नाम कर देना चाहते हो या नहीं? नहीं करना चाहते? तुम्हारी मर्ज़ी। गांव में अकेली वही नहीं है, और लड़कियां भी हैं, – भला हो उस भगवान् का!' और मैं, देखा तुमने, आज़ाद हो जाऊंगा, जो चाहूंगा कर सकूंगा!"

लड़के ने एक आह भरी। फिर कहता गया –

"लेकिन ऐसा मालूम होता है कि उसका बन्धक घर-जमाई बनने के सिवा मेरे लिए और कोई चारा नहीं है। मैंने सोचा था कि कुबान में मज़दूरी सौ दो सौ रूबल कमा लूंगा। यह एक बहुत बड़ी बात होगी। मैं भी भला आदमी बन जाऊंगा। लेकिन वहां कुछ पल्ले नहीं पड़ा। मेरे भाग्य में तो खेत मज़दूर बनना ही बदा है। मैं कभी निजी खेत का मालिक नहीं बन सकूंगा, – देखा तुमने।"

बन्धक घर-जमाई बनने की कल्पना उसे इतनी अप्रिय थी कि कहते-कहते उसके बदन में बल पड़ गए और उसका चेहरा उदास हो गया।

"अब कहां जाओगे?" चेल्काश ने पूछा।

"घर। और कहां जाता?"

"यह मैं क्या बता सकता हूं? जाने को तो तुम तुर्की भी जा सकते हो।"

"तुर्की?" वह चकित हो उठा – "क्या कोई सच्चा ईसाई कभी तुर्की जाता है? तुम भी क्या बात करते हो!"

"तुम्हारे भेजे में निरा गोबर भरा है!" चेल्काश बुदबुदाया और फिर अपना मुंह फेर लिया। लेकिन गांव के इस अछूते लड़के ने उसके हृदय में एक खुदबुद मचा दी थी। उसके भीतर ही भीतर असन्तोष की एक भावना आकार ग्रहण कर रही थी जिसकी वजह से रात की मुहिम पर वह अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर पा रहा था।

चेल्काश के शब्दों से आहत होकर लड़का मन ही मन कुछ भुनभुनाया और कनखियों से उसकी ओर देखा। उसके गाल फूलकर कुप्पा बन गए थे, उसके होंठ

बाहर को निकले थे और वह तेज़ी से अपनी सिकुड़ी हुई आंखों को मिचमिचा रहा था, – इस तरह कि देखकर हंसी आती थी। स्पष्ट ही उसे यह उम्मीद नहीं थी कि मूंछों वाले इस तलछटी आवारा जीव के साथ उसकी बातों का इतने अचानक और इतने असन्तोषजनक रूप में अन्त हो जाएगा।

लेकिन इस तलछटी जीव ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। उसका दिमाग़ कहीं और ही उलझा था। पटरी के किनारे पत्थर पर बैठा वह मन ही मन सीटी की आवाज़ में कुछ गुनगुना रहा था और अपने पांव के गंदे अंगूठे से ताल दे रहा था।

लड़के का हृदय उससे सुलटने के लिए कुड़मुड़ा रहा था।

"ऐ मच्छीमार, क्या तुम अक्सर इसी प्रकार नशे में धुत्त रहते हो ?" उसने कहना शुरू किया, लेकिन तभी वह मछियारा अनायास ही उसकी ओर मुड़ते हुए बोला –

"सुनो, मेरे छौने, क्या आज रात एक काम में तुम मेरा हाथ बंटा सकते हो ? जल्दी से तय करके बताओ।"

"कैसा काम है ?" लड़के ने दुविधा से पूछा।

"कैसा क्या ? जो भी काम मैं तुम्हें दूं। हम मच्छी पकड़ने जा रहे हैं। तुम डांड़ चलाना।"

"ओह, यह तो मैं कर सकता हूं। मैं काम से नहीं डरता। केवल ... ऐसा न हो, तुम किसी मुसीबत में फंसा दो। तुम बहुत अजीब जीव हो। तुमसे कोई पार नहीं पा सकता।"

चेल्काश ने अपने हृदय में एक जलन का अनुभव किया।

"जब तुम कुछ जानते नहीं, तो क्यों अपनी टांग अड़ाते हो," निर्मम वैर-भाव से वह बोला – "अभी इस थूथनी पर एकाध जड़ दूं तो अकल ठिकाने पर आ जाए।"

वह उछलकर खड़ा हो गया। उसकी आंखें चिंगारियां छोड़ रही थीं। उसका बायां हाथ मूंछ ऐंठ रहा था और दायां हाथ खूब कसा और गांठ-गंठीला मुक्का बन कर तना हुआ था।

लड़का भय से कांप उठा। उसने जल्दी से अपने अग़ल-बग़ल देखा और फिर, घबराहट में आंखें मिचमिचाता, ख़ुद भी उछलकर खड़ा हो गया। दोनों चुपचाप खड़े आंखों ही आंखों में एक दूसरे को तौल रहे थे।

"हां तो?" चेल्काश ने कठोर आवाज़ में कहा। वह भीतर ही भीतर उबल रहा था। उसका समूचा बदन, ऊपर से नीचे तक, बल खा रहा था कि इस ज़रा-से पिल्ले ने उसका अपमान किया। अब तक यों ही उपेक्षा के साथ वह उससे खेलवाड़ करता रहा, लेकिन अब उसकी समूची आत्मा घृणा से उबल रही थी, क्योंकि उसकी नीली आंखें इतनी निश्चल थीं, उसका तपा हुआ चेहरा इतना स्वस्थ था, उसकी छोटी-छोटी बांहें इतनी पुष्ट थीं, क्योंकि उसका एक गांव था और उस गांव में उसका एक घर था, और एक धनी किसान उसे अपना घर-जमाई बनाने को तैयार था, – उसे घृणा थी जीवन के उस ढंग से, जिसे वह अतीत में बिता चुका था और जिसे वह भविष्य में बिताना चाहता है, और सबसे अधिक घृणा थी उसे इस बात से कि उसमें –चेल्काश की तुलना में एक निरा बच्चा होते हुए भी – आज़ादी से जीवन बिताने की एक ऐसी भावना मौजूद थी जिसे न तो वह सराह सकता था और न ही जिसकी उसे ज़रूरत थी। यह बात कभी अच्छी नहीं लगती कि वह आदमी भी, जिसे हम अपने से नीचा समझते हैं, ठीक उन्हीं चीज़ों से प्यार अथवा घृणा करे जिनसे कि हम करते हैं, क्योंकि ऐसा करके वह एक प्रकार से हमारे साथ अपनी समानता की स्थापना करता मालूम होता है।

लड़के ने चेल्काश की ओर देखते हुए उसके स्वामित्व का अनुभव किया।

"असल में मुझे ... सच ... कोई एतराज़ नहीं," उसने कहा –"आख़िर मुझे काम चाहिए। इससे क्या फ़र्क पड़ता है कि मैं तुम्हारे लिए काम करता हूं अथवा अन्य किसीके लिए? मेरे मुंह से वह बात कुछ यों ही ... इसलिए निकल गई कि तुम कुछ कामकाजी आदमी नहीं दिखाई पड़े। तुम ... तुम ... नशे में चूर थे। लेकिन सो कुछ नहीं। मैं जानता हूं, ऐसा किसीके भी साथ हो सकता है। नशे में धुत्त लोग

क्या मैंने पहले नहीं देखे? देखे हैं, बहुत देखे हैं, कई तो ऐसे, जिनकी तुमसे भी ज़्यादा बुरी हालत थी।"

"ठीक है, ठीक है। तो तुम राज़ी हो?" चेल्काश ने नर्म पड़ते हुए कहा।

"ख़ुशी से। बोलो, क्या दोगे?"

"यह तो काम पर निर्भर करता है। इस बात पर कि कितना हमारे हाथ लगता है। हो सकता है, तुम पांच रूबल तक पा जाओ।"

बात अब धन की हो रही थी। इसलिए किसान का वह बीज पक्की बात कर लेना चाहता था—अपनी ओर से भी और उस आदमी की ओर से भी, जो कि उसे ठेके पर रख रहा था। यह निश्चित मालूम होना चाहिए कि वह क्या लेगा और वह क्या देगा। सो एक बार फिर सन्देह और आशंकाओं ने उसे घेर लिया।

"नहीं, भाई, इस तरह नहीं चलेगा।"

चेल्काश ने भी अपना पांसा फेंका।

"अभी इस बारे में बात न करो। चलो, पहले क़हवाख़ाने में चलें।"

और वे, अग़ल-बग़ल, बाज़ार में चल दिए। चेल्काश स्वामी के अन्दाज़ में अपनी मूंछें ऐंठता हुआ और लड़का सहमा-सा, हृदय में अविश्वास लिए, किन्तु झुकने को तैयार।

"तुम्हारा नाम क्या है?" चेल्काश ने पूछा।

"गावरीला," लड़के ने जवाब दिया।

धुंधले और धुंवें से काले पड़े क़हवाख़ाने में प्रवेश करने के बाद चेल्काश कलवार के पास पहुंचा और पुराने ग्राहक के अन्दाज़ में एक बोतल वोडका, रसेदार गोभी, तन्दूरी मांस और चाय के लिए उसने आर्डर दिया। इन चीज़ों के नामों को उसने एक बार फिर दोहराया और इसके बाद लापर्वाही के अन्दाज़ में बोला—"टांक लेना!" जवाब में कलवार ने चुपचाप सिर हिला दिया। यह देखकर गावरीला का हृदय अपने मालिक के प्रति सम्मान से तुरत भर गया जो, अपनी इस आवारा सजधज के बावजूद, प्रत्यक्षतः इतनी अधिक जान-पहचान और साख रखता था।

"अब कुछ खाने-पीने के साथ-साथ बातें भी कर लेंगे। तुम यहीं बैठो, मैं अभी आता हूं।"

यह कहकर वह बाहर चला गया। गावरीला ने अपने चारों ओर नज़र डाली। क़हवाख़ाना नीचे के तल्ले में था। अंधेरा और सीलन भरा। वोडका, तम्बाकू के धुएं, राल तथा ऐसी ही अन्य किसी तेज़ गंध से दम घुटता था। नशे में धुत्त एक लाल दाढ़ी वाला जहाज़ी, कोयले की धूल और राल में लिथड़ा, गावरीला के सामने वाली मेज़ पर दोहरा हो गया था। हिचकियों के बीच वह किसी गीत के ग़रारे-से कर रहा था, जिसके बोल कभी तो सिसकारियों का समूह मात्र मालूम होते, और कभी ऐसा मालूम होता जैसे उसका घेंटवा घरघरा रहा हो। साफ़ मालूम होता था कि वह रूसी नहीं है।

उसके पीछे मोल्दाविया की दो स्त्रियां बैठी थीं। तपे ताम्बे-सा रंग, काले बाल, खुरदरी, चिथड़ों में लिपटी। नशे में धुत्त वे भी कोई गीत भुनभुना रही थीं।

धुंधले वातावरण में अन्य शक्लें भी अधर तैरती नज़र आ रही थीं – सबकी सब हल्ला करती, बेचैन, अस्त-व्यस्त और नशे में धुत्त ...

गावरीला को भय ने दबोच लिया। उसका मालिक ही अगर आ गया होता, – जाने वह कहां अटक गया। क़हवाख़ाने की सभी आवाज़ें मिलकर एक आवाज़ बन गई थीं। ऐसा मालूम होता था जैसे कोई भीमाकार बहुजिह्वा जन्तु, पत्थरों की इस खोह से बच निकलने का प्रयत्न बेकार होने के बाद, गरज और गुर्रा रहा हो। गावरीला को ऐसा मालूम हुआ जैसे एक नशा-सा उसके बदन में सरसरा रहा हो। उसका सिर चकरा रहा था और आंखों में एक धुंध-सी छा गई थी। भयभीत उत्सुकता से वह क़हवाख़ाने में चारों ओर नज़र डालता था, और सभी कुछ धुंधला-धुंधला-सा दिखाई देता था।

आखिर चेल्काश आ गया और दोनों खाने-पीने तथा बातें करने लगे। तीसरा गिलास पीने के बाद गावरीला पर वोडका का रंग जम गया। वह ख़ूब प्रसन्न था और

अपने इस राजा-साथी को खुश करने के लिए – जिसने उसे इतना बढ़िया खाना खिलाया था – कोई बहुत ही अच्छी बात कहना चाहता था। लेकिन, जाने क्यों, शब्द उसके गले में ही उमड़-घुमड़कर रह जाते, मुंह से बाहर न निकल पाते, – एकाएक वे कुछ इतने मोटे और भारी हो जाते कि संभाले न संभलते।

चेल्काश, होंठों पर एक व्यंगपूर्ण मुसकराहट लिए, उसकी ओर देख रहा था।

"एकदम उल्टे हो गए? बिल्कुल चिथड़ा हो तुम भी। लगे हवा में उड़ने और केवल पांच जाम पीकर। भला, आज रात काम क्या ख़ाक करोगे?"

"नहीं, साथी," गावरीला बुदबुदाया – "चिन्ता न करो। वह काम करूंगा कि देखते रह जाओगे। बस, मुझे एक चुम्मा दे दो, साथी!"

"बस-बस, रहने दो। लो, यह भी चढ़ा जाओ।"

गावरीला पीता गया और पीते-पीते उस स्थिति में पहुंच गया जब कि उसे अपने आस-पास की हर चीज़ तालबद्ध लहरों की भांति हिलोरें लेती और डोलती नज़र आने लगी। इससे उसका सिर चकरा गया और उसका जी डांवाडोल होने लगा। उसके चेहरे पर एक मूर्खतापूर्ण गम्भीरता छाई थी। जब भी वह कुछ कहने की कोशिश करता, उसके होंठ हास्यास्पद ढंग से एक दूसरे से जुड़ जाते और अललटप्पू ध्वनियों का उच्चारण करते। चेल्काश एकटक दृष्टि से–मानो वह किसी बात की याद करता हो – उसकी ओर देखता हुआ अपनी मूंछों को ऐंठ रहा था और होंठ बन्द किए मुसकरा रहा था।

क़हवाख़ाना अब भी मदमत्त आवाज़ों से गूंज रहा था। लाल बालों वाले जहाज़ी ने अपनी बांहों को मोड़कर मेज़ पर रख लिया था और उनके सहारे सिर टिकाए गहरी नींद में डूब गया था।

"चलो, अब चलें," चेल्काश ने उठते हुए कहा।

गावरीला ने उसके साथ चलने का प्रयत्न किया, लेकिन सफल नहीं हो सका। उसने मुंह से एक बेहूदा-सी गाली निकाली और बेवकूफ़ों की भांति – जैसा कि नशे में धुत्त लोग करते हैं – हंसने लगा।

"एकदम सराबोर हो गया है!" चेल्काश बुदबुदाया और फिर अपनी जगह पर बैठ गया।

गावरीला हंसता और चुंधी-सी आंखों से अपने मालिक की ओर देखता रहा। चेल्काश ने अपनी तेज़ और गम्भीर नज़र से उसका जायज़ा लिया। एक ऐसे आदमी का उसने जायज़ा लिया जिसका भाग्य वह अपने भेड़ियों-ऐसे पंजों में दबोचे था। उसने अनुभव किया कि वह उसके साथ चाहे जो कर सकता है। चाहे तो वह उसे ताश के पत्ते की भांति अपनी मुट्ठी में चुरमुर कर सकता है अथवा सहारा देकर उसे उसके ठोस किसानी जीवन में पहुंचा सकता है। उसपर अपनी शक्ति का अनुभव करते हुए उसने सोचा कि इस लड़के को वह प्याला कभी न पीना पड़े जो उसे – चेल्काश को – पीना पड़ा है। लड़के के प्रति उसके हृदय में ईर्ष्या और दया के भावों का उदय हुआ। वह उससे घृणा करता था, फिर भी यह सोचकर उसका हृदय कसकता कि अगर वह दूसरे – उससे भी बुरे – हाथों में पड़ गया तो क्या होगा। अन्त में चेल्काश के हृदय को मथनेवाले इन विभिन्न भावों ने मिलकर एक भाव का रूप धारण कर लिया – एक ऐसे भाव का, जिसमें पिता का स्नेह भी था और व्यावहारिकता भी। इस लड़के की उसे ज़रूरत भी थी और उसे उसपर तरस भी आ रहा था। सो उसने गावरीला को अपनी बांहों का सहारा दिया, उसे उठा लिया और अपने घुटनों से धीरे-धीरे धकेलता हुआ उसे बाहर क़हवाख़ाने के आंगन में ले गया। वहां पहुंचकर लकड़ियों के एक ढेर के साये में उसने उसे लेटा दिया और ख़ुद उसके बराबर में बैठकर अपना पाइप पीने लगा। गावरीला कुछ देर छटपटाया और दो-चार बार गुर्रा और कांखकर सो गया।

२

"क्यों, तैयार हो गए?" चेल्काश ने फुसफुसाकर गावरीला से कहा जो डांड़ों से उलझ रहा था।

"बस, एक मिनट। डांड़ों का कुन्दा ढीला है। क्या मैं डांड़ से उसे ठोक सकता हूं?"

"नहीं, आवाज़ बिल्कुल नहीं होनी चाहिए। उसे अपने हाथों से दबा दो। वह अपनी जगह पर बैठ जाएगा।"

दोनों के दोनों, बिना कोई शब्द किए, एक नाव के साथ जूझ रहे थे जो ओक वृक्ष के तनों से लदे बजरों और खजूर, चन्दन की लकड़ी तथा साइप्रेस के मोटे लट्ठों से लदे तुर्की फ़ेलुकाओं के समूचे बेड़े में से एक के साथ बंधी थी।

रात अंधेरी थी। छितरे-फटे बादलों के भारी झुंड आकाश में तैर रहे थे। समुद्र शांत, काला और तेल की भांति भारी था। उसमें से नम, लोनी गंध निकल रही थी। उसकी लहरें तट और जहाज़ों के बाज़ुओं से टकराकर हल्की छपछप की आवाजें कर रही थीं और चेल्काश की नाव को धीरे-धीरे डोला रही थीं। तट से कुछ दूर आकाश की पृष्ठ-भूमि में जहाज़ों की काली बाह्य रेखाएं नज़र आ रही थीं और उनके मस्तूलों की चोटियां रंग-बिरंगी रोशनियों से चमक रही थीं। सागर में इन रोशनियों का अकस पड़ रहा था। पानी की काली मखमली सतह पर रोशनियों के अनगिनत पीले धब्बे कांपते और थिरकते बड़े सुन्दर मालूम होते थे। समुद्र दिन भर काम करने के बाद थके हुए मज़दूर की भांति गहरी नींद में सोया था।

"चलो, अब चलें," अपने डांड़ को पानी में डालते हुए गावरीला ने कहा।

"चलो," चेल्काश ने कहा और चप्पू को भारी मेहनत से संभालता हुआ नाव को जहाज़ों और बजरों के बीच गलियारों में से ले चला। नाव तेज़ी से तैर चली। जब डांड़ पानी से टकराते, तो लहरों पर फ़ास्फ़ोरसी नीली चमक की एक गोट-सी चढ़ जाती। नाव आगे निकल जाती और यह गोट, चमकदार फ़ीते की भांति, लहराती हुई नाव का पीछा करती मालूम होती।

"तुम्हारी तबीयत अब कैसी है? सिर दर्द तो नहीं कर रहा?" चेल्काश ने हार्दिकता से पूछा।

" सिर बुरी तरह भन्ना रहा है। और सीसे की भांति भारी हो गया है। सोचता हूं, पानी में तर कर लूं।"

" किसलिए ? सिर नहीं, अपना अन्दर तर करो। उससे जल्दी ठीक हो जाओगे," चेल्काश ने एक बोतल बढ़ाते हुए कहा।

" भई वाह, परमात्मा तुम्हारा भला करे।"

गटगट की आवाज़ आई।

" ऐ, बस करो!" चेल्काश ने उसे रोका।

नाव फिर आगे बढ़ चली – अन्य जहाज़ों के बीच से, बिना शब्द किए और तेज़ी से, अपना रास्ता बनाती हुई। अनायास ही, सबको पीछे छोड़, वह आगे निकल आई। सागर, शक्तिशाली और सीमाहीन, दूर काले-नीले क्षितिज तक फैला था। वहां, क्षितिज पर, बादलों के दल लहरों की भांति उठ और बढ़ रहे थे – भूरे और बैंजनी, किनारों पर रुई के गालों ऐसी पीले रंग की गोट लगी हुई, और हरे, समुद्र के पानी के रंग के, और सीसे ऐसे रंग के, काली और डरावनी परछाइयां डालते हुए। बादल धीरे-धीरे आकाश में बढ़ रहे थे। कभी वे एक दूसरे पर छा जाते,– उनके रूप और रंग का विलय होता, दोनों में से किसीका कुछ बाक़ी न रहता, – और फिर, अगले ही क्षण, नये रूपों में वे प्रकट होते, – भयानक शान के साथ। जीवन के स्पन्दन से वंचित इन आकारों की धीमी गति एक अजीब आतंक का संचार करती। ऐसा मालूम होता जैसे वे अनगिनत संख्या में वहां मौजूद हों और इसी प्रकार अनन्त काल तक उठकर वे आकाश में रेंगते रहेंगे, – इस कुत्सित आकांक्षा से उत्प्रेरित होकर कि कहीं आकाश सोते हुए सागर के सौन्दर्य को न देख ले – अपनी असंख्य सुनहरी आंखों से – उन बहुरंगी सितारों से, जो उसमें जड़े, अपनी जीवित और स्वप्निल ज्योति से टिमटिमाते हुए उन लोगों के हृदयों में ऊंची आकांक्षाओं का संचार कर रहे थे, जिनके लिए उनकी स्वच्छ चमक ही एकमात्र बहुमूल्य सम्बल थी।

" कितना अद्भुत है यह सागर, – है न?" चेल्काश ने पूछा।

"है तो, लेकिन मेरे हृदय में यह भय का संचार करता है," अपने डांड़ों को पूरा ज़ोर लगाकर और समगति से चलाते हुए गावरीला ने कहा। जब डांड़ पानी से टकराते तो उसमें एक हल्की-सी गरज और छपछपाहट पैदा होती और नीली फ़ास्फ़ोरसी चमक की एक गोट अब भी उसमें लहराने लगती।

"डर लगता है, – क्यों? तुम भी निरे बुद्धू हो!" चेल्काश गुर्राया।

वह – एक चोर – समुद्र को प्यार करता था। उसका प्राणवान हठीला स्वभाव, जो हमेशा नये अनुभवों के लिए अकुलाता रहता था, अंधकार में डूबे उसके विस्तारों को – इतने उन्मुक्त, इतने सशक्त और इतने सीमाहीन विस्तारों को – देखते कभी नहीं अघाता था। और जिस चीज़ को वह इतना प्यार करता था, उसके सौन्दर्य के प्रति उदासीन उछाह का यह प्रदर्शन उसे अच्छा नहीं मालूम हुआ। नाव के पिछले भाग में बैठा वह पतवार से पानी को काट रहा था और शान्त भाव से एकटक सामने की ओर देख रहा था। उसका हृदय इस समय एक ही इच्छा से भरा था, – वह यह कि सागर की इस मख़मली सतह पर अनन्त काल तक वह इसी प्रकार यात्रा करता रहे।

सागर उसमें सदा हार्दिकता की एक प्रशस्त भावना का संचार करता था। यह भावना उसके रोम-रोम में समा जाती और आए दिन के जीवन की कीट को धोकर साफ़ कर देती। उसे यह अच्छा लगता और अपने आपको एक अच्छे आदमी के रूप में देखना वह पसन्द करता। उसकी यह इच्छा यहां – लहरों के बीच और खुली हवा में, जहां जीवन का तीखापन तिरोहित हो जाता और खुद जीवन का भी कोई मूल्य नहीं रहता, – पूरी हो जाती। रात को सोते हुए सागर की सांसों की कोमल और निर्लिप्त ध्वनि पानी की सतह पर धीमे-धीमे प्रवाहित होती, मानव के हृदय में शान्ति का संचार करती, उसकी कुत्सित भावनाओं को दूर भगाती और महान् सपनों को जन्म देती है।

"मछली पकड़ने का सामान कहां है?" अचानक गावरीला ने पूछा और व्यग्र भाव से नाव के ओनों-कोनों की टोह लेने लगा।

चेल्काश यह सुनकर चौंका।

"सामान? यहां मेरे पास है, नाव के पिछले हिस्से में।"

इस एकदम अछूते लड़के के साथ एक तो वह झूठ नहीं बोलना चाहता था, दूसरे अपने विचारों तथा भावनाओं का इतने अचानक रूप में भंग हो जाना उसे अच्छा नहीं लगा। सो वह झुंझला उठा। अपने गले और हृदय में उसने फिर एक जलन का अनुभव किया और कठोर तथा रोबीली आवाज़ में गावरीला से बोला –

"सुनो, जहां तुम हो वहीं जमकर बैठे रहो और अपने काम से काम रखो। डांड़ चलाने के लिए मैंने तुम्हें रखा था, सो डांड़ चलाए जाओ, और अगर तुम अपनी जुबान को इस तरह बेलगाम होने दोगे तो तुम्हारे साथ बुरी बीतेगी। समझ गए न?"

एक हल्का-सा झटका खाकर नाव रुक गई। डांड़ पानी में घिसटने और भंवर पैदा करने लगे। गावरीला अपनी जगह पर से उचक गया।

"डांड़ चलाओ!"

एक गंदी गाली से हवा कांप उठी। गावरीला ने डांड़ों को उठाया और नाव, मानो डरकर, उछली और आगे की ओर व्यग्रता से बढ़ चली, – झटके खाती और पानी को छलछलाती।

"संभलकर!"

चेल्काश आधा उठ खड़ा हुआ। पतवार को वह अब भी थामे था। गावरीला का चेहरा सफ़ेद पड़ गया था। चेल्काश अपनी तेज़ नज़र उसपर जमाए था। आगे की ओर झुका वह इस तरह खड़ा था जैसे बिल्ली अभी झपट्टा मारनेवाली हो। उसकी बत्तीसी भिंची हुई थी और उसके दांतों के रगड़ने की आवाज़ उसी प्रकार सुनाई दे रही थी जैसे कि भयभीत गावरीला के दांतों के बजने की।

"ऐ, वहां कौन चिल्ला रहा है?" समुद्र के विस्तार में से किसीकी कड़ी आवाज़ सुनाई दी।

"डांड़ क्यों नहीं चलाता, हरामी पिल्ले? मैं कहता हूं, डांड़ चला। शिह! क्या मरने की जी में है, कम्बख़्त?! चला डांड़! एक, दो! ख़बरदार, जो ज़रा भी आवाज़ की तो। तेरी बोटी-बोटी उधेड़ दूंगा!" चेल्काश फुंकार उठा।

"मां मरियम ... हे भगवान्!.." गावरीला बुदबुदाया। वह भय और थकान से कांप रहा था।

नाव घूम गई और बन्दरगाह की ओर वापिस लौट चली जहां जहाज़ों की क़ंदीलें रंग-बिरंगी रोशनियों की बंदनवार मालूम होती थीं और उनके मस्तूल अधर दिखाई दे रहे थे।

"ऐ, उधर कौन चिल्ला रहा है?" वह आवाज़ फिर सुनाई दी।

लेकिन अब वह पहले से अधिक दूर थी। चेल्काश का ढारस बंधा, वह आश्वस्त हो उठा।

"तुम्हारे सिवा यहां और कौन चिल्ला रहा है?" उसने पलटकर जवाब दिया। फिर वह गावरीला की ओर मुड़ा जो अब भी मां मरियम को याद कर रहा था।

"तुम भाग्यवान हो, लड़के! अगर उन शैतानों ने पीछा किया होता तो तुम्हारा पत्ता कट जाता। सबसे पहले तो मैं ही तुम्हें समुद्र में झोंककर मछलियों का कलेवा बना देता।"

यह देखकर कि अब चेल्काश नर्म पड़ गया है और उसका मूड भी अच्छा है, कांपते हुए गावरीला ने उससे बिनती की –

"मुझे जाने दो, भगवान् के लिए मुझे जाने दो। जहां भी हो, मुझे छोड़ दो। ओह, ओह, ओह, ओह, मैं बुरा फंसा। भगवान् के लिए मुझे जाने दो। तुम मुझसे क्या चाहते हो? मैं यह काम नहीं कर सकता। मैं कभी ऐसे काम में शामिल नहीं हुआ। यह पहला ही मौक़ा है। हे भगवान्, मैं तो सदा के लिए मारा गया। तुमने मेरे साथ ऐसा क्यों किया? यह गुनाह है। अपनी आत्मा के रक्त से तुम्हें इसे धोना पड़ेगा। ओह, यह भी कोई धंधा है?".

"धंधा ?" चेल्काश ने पूछा – "कैसा धंधा ?"

लड़के को इतना आतंकित देख उसे मज़ा आया। वह उसके बारे में सोचता हुआ रस लेने लगा और यह कल्पना करने में भी उसे कुछ कम आनन्द नहीं मिला कि वह ख़ुद किस हद तक एक भयानक जीव बन सकता है।

"यह बुरा धंधा है, भाई, बुरा धंधा। मुझे जाने दो, ख़ुदा के लिए मेरी जान बख़्शो। तुम्हें भला मेरी क्या ज़रूरत हो सकती है ? सुनो, मुझपर अहसान करो, भले आदमी ..."

"चुप रहो। अगर मुझे तुम्हारी ज़रूरत न होती तो अपने साथ यहां लाता ही क्यों, – समझे ? बस, अब अपनी जुबान बन्द रखो।"

"हे मेरे भगवान् ! . ." गावरीला बुदबुदाया।

"ऐ, यह बुदबुदाना बन्द करो !" चेल्काश ने उसे बीच में ही तेज़ी से काट दिया।

लेकिन गावरीला में अब इतनी सामर्थ्य नहीं थी कि अपने आपको क़ाबू में रख सके। वह दबी आवाज़ में भुनभुनाता, खांसता-खंखारता, ऐंठता और बल खाता हुआ भी निराशा से उत्पन्न शक्ति से डांड़ चलाता रहा। नाव तीर की भांति उड़ चली। वे अब जहाज़ों के काले आकारों के बीच पहुंच गए। पानी की सकरी गलियों में से मुड़ती और बल खाती हुई उनकी नाव उनके बीच खो गई।

"ऐ, ज़रा कान खोलकर सुनो। अगर तुमसे सवाल पूछे जाएं तो अपना मुंह बन्द रखना। इसीमें तुम्हारी जान की ख़ैर है, समझे !"

"हे भगवान् !" गावरीला ने उसांस छोड़ी और फिर तीखे स्वर में कहा – "भाग्य जो न कराए थोड़ा है !"

"फिर बुदबुदाने लगे, – क्यों ?" चेल्काश ने फुंकार छोड़ी।

इस फुंकार ने गावरीला की सुधबुध छीन ली। आसन्न मुसीबत की सर्द आशंका से वह सुन्न हो गया। भुतहे आदमी की भांति उसने डांड़ पानी में डाले, अपने बदन को पीछे की ओर फेंकते हुए डांड़ों को खींचा, उन्हें उठाया

ग्रौर फिर उन्हें पानी में डाल दिया, आंखों को थिर गति से बक्कल की अपनी चप्पलों पर जमाए।

लहरों की उनींदी छपछप भय और आतंक का संचार कर रही थी। लेकिन अब वे घाट-क्षेत्र में पहुंच गए थे। पत्थर की एक दीवार के उधर से आदमियों के बोलने की, गाने और सीटी बजाने की और लहरों के टकराने-छितराने की आवाज़ आ रही थी।

"बस करो," चेल्काश फुसफुसाया – "अपने डांड़ों को छोड़ दो। दीवार के सहारे हाथों से धकेलो। शि-शिह आवाज़ न कर, कम्बख़्त!"

गावरीला नाव को दीवार के सहारे ले चला। पलस्तर पर काई जमी थी और हाथ रपटता था। नाव बिना आवाज़ किए चल रही थी। पत्थरों पर जमी करैलीमिट्टी की तह नाव के टकराने की आवाज़ को मार देती थी।

"ठहरो। डांड़ मुझे दे दो, – सुना नहीं, डांड़ इधर लाओ। तुम्हारा पासपोर्ट कहां है? थैले में? उसे भी निकालकर मेरे हवाले करो। जल्दी! यह इसलिये कि कहीं तुम तिड़ी न हो जाओ। अब कोई डर नहीं। डांड़ों के बिना तुम भाग सकते हो, लेकिन पासपोर्ट के बिना नहीं। बस, यहां खड़े रहना। और देखो, अगर कुछ भी ज़ुबान से उगला तो बच नहीं पाओगे, – समुद्र की तलहटी में से भी मैं तुम्हें पकड़ लाऊंगा।"

और इसके बाद, हाथों के बल अपने को खींचते हुए, वह दीवार पर चढ़ा और उसके दूसरी ओर ग़ायब हो गया।

पलक झपकते यह सब हो गया। गावरीला मुंह बाए देखता रहा। और फिर उसके हृदय का वह भारीपन और वह भय, जो उस दाढ़ी-मूंछों वाले दुबले-पतले चोर ने उसमें भर दिया था, इस तरह उतर गया जैसे उसने अपने बदन के कपड़े उतारकर दूर फेंक दिए हों। अब वह भाग जाएगा। मुक्त होकर उसने सांस ली और अपने अग़ल-बग़ल देखा। बाईं ओर एक मस्तूलविहीन जहाज़ की काली काया उठती-उभरती चली गई थी। ऐसा मालूम होता था जैसे वह कोई भीमाकार ताबूत

हो, – सूना और परित्यक्त। हर बार, जब भी लहरें उससे टकरातीं, एक खोखली-सी आवाज़ उसमें से निकलती, – लगता, जैसे वह कराह रहा हो। दाहिनी ओर बांध की काई-जमी दीवार थी जो एक ठंडे, भारी-भरकम, कुंडली-खोले अजगर की भांति सागर की सतह पर फैली थी। उसके पीछे अन्य आकार अंधेरे में तैर रहे थे और आगे की ओर, दीवार और उस ताबूत के बीच खुली जगह में से, सूने सागर की झलक दिखाई दे रही थी। ऊपर काले बादल घिरे थे। बोझिल और भीमाकार, वे आकाश में धीमे-धीमे बढ़ रहे थे,– अंधकार में भय और आतंक का संचार करते हुए। ऐसा मालूम होता था जैसे वे अपने भारी बोझ से मानव-जीवधारियों को कुचल डालेंगे। हर चीज़ सर्द, काली और डरावनी मालूम होती थी। गावरीला भय से कांप उठा। और उसका यह भय चेल्काश के भय से कहीं ज़्यादा भयानक था। उसने उसके सीने को हर ओर से बुरी तरह जकड़ लिया और इतना दबोचा कि उसकी समूची प्रतिरोध-शक्ति निचोड़ ली और वह वहां – अपनी जगह पर – जाम हो गया।

हर चीज़ निस्तब्धता में डूबी थी। समुद्र की उसांसों के सिवा और कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ रही थी। बादल अब भी उतनी ही धीमी और भयानक गति से हरकत कर रहे थे और समुद्र में से इतनी बड़ी संख्या में उठ रहे थे कि खुद आकाश भी एक समुद्र की भांति मालूम होता था, – मानो एक उमड़ते-घुमड़ते सागर को इस चिकने और सोते हुए सागर के ऊपर उलटकर रख दिया गया हो। बादल लहरों की भांति मालूम होते थे जिनकी झागदार शिराएं नीचे – धरती की ओर – दौड़ रही थीं – फिर उसी गह्वर में समा जाने के लिए, जिसमें से कि उनका उदय हुआ था, और उन नवजात लहरों पर छा जाने के लिए, जिन्होंने अभी उबलना-उफनना और अत्यन्त विक्षुब्ध होकर हरे झाग उगलना शुरू नहीं किया था।

इस निर्मम निस्तब्धता और अपने चारों ओर के भयानक सौन्दर्य से गावरीला इतना अभिभूत और आतंकित हो उठा कि अपने मालिक के वापिस लौटने की चिन्ता ने उसे व्यग्र बना दिया। अगर वह नहीं लौटा तो? समय के

पांव में जैसे बेड़ियां पड़ गई थीं, – वह बहुत ही धीरे-धीरे घिसट रहा था, आकाश में बादलों की गति से भी अधिक धीरे। और प्रतीक्षा की घड़ियों के साथ-साथ निस्तब्धता भी अधिक आतंकपूर्ण होती जा रही थी। आखिर बांध की दीवार के दूसरी ओरसे छपछपाने, सरसराने और किसीके फुसफुसाने की आवाज़ सुनाई दी। गावरीला को लगा जैसे अगले क्षण उसकी जान ही निकल जाएगी।

"अरे, क्या ऊंघ रहे हो? यह लो, इसे पकड़ो। सावधानी से," चेल्काश की दबी हुई आवाज़ सुनाई दी।

दीवार के ऊपर से कोई भारी और चौरस-सी चीज़ नीचे लटक आई। गावरीला ने उसे नाव में रख लिया। इसके बाद वैसा ही एक दूसरा बंडल आया। फिर चेल्काश की दुबली-पतली आकृति नीचे उतर आई। डांड़ों की शक्ल दिखाई दी और गावरीला का थैला उसके पांवों के पास जा गिरा। और चेल्काश, हांफता हुआ, नाव के पिछले हिस्से में अपनी जगह पर जम गया।

गावरीला के चेहरे पर प्रसन्न किन्तु आशंकित मुसकान दौड़ गई।

"क्या थक गए हो?" उसने पूछा।

"किसी हद तक। हां तो अब अपने डांड़ों को संभालो और पूरी शक्ति से ले चलो। आज तुम्हारे गहरे हैं, – अच्छी मज़दूरी तुम पाओगे। आधा काम तो पूरा हो गया। अब इतना और करना है कि उन हरामखोरों को धता बताते हुए तेज़ी से निकल चलो – और फिर, अपना हिस्सा लेकर, अपनी माश्का के साथ मौज करना। क्यों, तुम्हारी एक माश्का तो है न?"

"न-हीं!"

गावरीला अपनी पूरी शक्ति से नाव खेने में जुटा था। उसके फेफड़े धौंकनी की भांति उठ-गिर रहे थे और उसकी बांहें इस्पात का स्प्रिंग बनी हुई थीं। पानी नाव के नीचे सनसना रहा था और वह नीला और चमकदार

फ़ीता अब भी वैसे ही नाव के पीछे लहरा रहा था। गावरीला पसीने में तर था, लेकिन उसने डांड़ों को फिर ढीला नहीं पड़ने दिया। उस रात दो बार मारी भय उसे जकड़ चुका था और अब तीसरी बार जकड़े जाने की उसकी ज़रा भी इच्छा नहीं थी। उसकी केवल एक ही इच्छा थी, – वह यह कि जैसे भी हो, इस जंजाल से जल्दी से जल्दी छुटकारा मिले, काम को ख़त्म कर वह सूखी धरती पर पांव रखे और जीते जी तथा जेल की हवा खाए बिना इस आदमी के चंगुल से छूटकर निकल भागे। उसने निश्चय किया कि उसके सामने अब वह अपना मुंह नहीं खोलेगा, किसी भी रूप में उसका विरोध नहीं करेगा, जो कुछ भी वह आदेश देगा उसे मानेगा, और इस सबके बाद अगर वह सही-सलामत यहां से निकल सका तो अगले ही दिन चमत्कारों की खान संत निकोलस का जाप करेगा। वह इतना अभिभूत हो उठा कि जाप के शब्द उसके होंठों पर थिरकने लगे। लेकिन उसने उन्हें प्रकट नहीं होने दिया और इंजन की भांति हांफते हुए खिंची हुई पलकों के नीचे से नज़र उठाकर चेल्काश की ओर देखा।

चेल्काश, लम्बा और दुबला-पतला, पक्षी की भांति इस तरह झुका बैठा था मानो उड़ने से पहले अपने पंख तौल रहा हो। उसकी बाज़ ऐसी आंखें सामने फैले अंधकार को बींध रही थीं, उसकी हुकदार नाक वायु की गंध सुड़क रही थी, उसका एक हाथ पतवार को थामे था और दूसरा मूंछों को ऐंठ रहा था जो उस समय, जब मुसकान में उसके होंठ फैलते थे, फरफराने लगती थीं। चेल्काश प्रसन्न था, – अपनी इस मुहिम से, खुद अपने आप और इस युवक से, जिसे उसने आतंकित किया था और अपना गुलाम बना लिया था। गावरीला जी-तोड़ मेहनत से डांड़ चला रहा था। चेल्काश ने उसे देखा और उसका हृदय उसके लिए तरस से भर गया। उसके जी में हुआ कि उसे बढ़ावा देने के लिए कुछ कहे।

"ऐ," कुछ मुसकराते हुए नर्म आवाज़ में उसने कहा। — "तुम बहुत डर गए थे, — क्यों?"

"नहीं, बहुत तो नहीं," गावरीला भुनभुनाया।

"अब घबराने की ज़रूरत नहीं। ख़तरा पार हो गया। केवल एक स्थल और पार करना है। कुछ सुस्ता लो।"

गावरीला ने, आज्ञाकारी की भांति, नाव खेना रोक दिया, पसीने से तर चेहरे को आस्तीन से पोंछने लगा। कुछ देर बाद उसने अपने डांड़ों को फिर पानी में डाल दिया।

"धीरे-धीरे चलाओ। इस तरह कि पानी आवाज़ न करे। आगे एक फाटक है जिसे पार करना है। शि-शिह! यहां खिलवाड़ नहीं चलेगी। मज़ाक का जवाब भी वे गोली से देते हैं। तुम्हारी खोपड़ी बिंध जाएगी और तुम जान भी न पाओगे कि आखिर यह हुआ क्या।"

अब नाव, क़रीब-क़रीब निःशब्द, पानी पर तैर रही थी। केवल डांड़ों से नितरकर गिरनेवाले पानी की नीली चमक से और समुद्र की उस नीली झिलमिल से, जो बूंदों के उससे टकराने पर पैदा होती थी, यह पता चलता था कि नाव हरकत कर रही है। रात का अंधेरा और भी अधिक घना और सन्नाटा और भी अधिक गहरा होता जा रहा था। आकाश अब उमड़ते-घुमड़ते सागर की भांति नहीं मालूम होता था, — बादलों ने फैलकर एक भारी कम्बल का रूप धारण कर लिया था जो पानी के ऊपर ख़ूब नीचे और एकदम थिर लटका हुआ था। समुद्र और अधिक थिर तथा काला हो गया था। उसकी सुहावनी तीखी लोनी गंध और भी अधिक तेज थी और अब वह उतना सीमाहीन नहीं मालूम होता था।

"क्या ही अच्छा हो अगर इस समय बारिश होने लगे," चेल्काश भुनभुनाया — "वह हमें इस तरह छिपा लेगी जैसे पर्दा डाल दिया गया हो।"

नाव के दाहिनी और बाईं ओर — पानी की सतह पर — भारी-भरकम

आकार उभर आए। ये माल ढोनेवाले जहाज़ थे जो अंधेरे में लिपटे निश्चल खड़े बड़े डरावने मालूम होते थे। उनमें से एक पर एक रोशनी हरकत करती दिखाई दे रही थी – कोई आदमी हाथ में लालटेन लिए उसपर रौंद-सा लगा रहा था। सागर इन जहाजों के बाजुओं से टकराकर मानो छोटी-छोटी आवाज़ों में उनसे बिनती कर रहा था और वे सर्द तथा खोखली आवाजों में जवाब दे रहे थे, – मानो सागर की बिनती उन्हें मंजूर न हो।

"घेराबन्दी!" मुश्किल से सुनाई पड़नेवाली आवाज़ में चेल्काश ने कहा।

उसी समय से, जब कि उसने गावरीला से नाव को धीरे-धीरे खेने के लिए कहा था, गावरीला के हृदय में फिर एक कसाव पैदा हो गया था और किसी समय कुछ भी हो जाने की आशंका ने उसे दबोच लिया था। पूरी व्यग्रता के साथ वह आगे को झुका और सामने फैले अंधकार को बेधकर देखने का प्रयत्न करने लगा। उसे ऐसा अनुभव हुआ मानो वह बढ़ रहा हो, – उसकी हड्डियां और पट्ठे दर्द कर रहे थे क्योंकि उनमें बढ़ने का खिंचाव था, और उसका सिर भी दर्द कर रहा था क्योंकि एक ही विचार ने उसे झंझोड़ डाला था। उसकी पीठ की चमड़ी तड़क रही थी और उसके पांवों में सुइयां-सी चुभ रही थीं। उसकी आंखें, अंधेरे में ताकते-ताकते, इतनी तन गई थीं कि लगता था जैसे वे फट जाएंगी। वह अंधेरे में ताक रहा था – इस आशंका से कि किसी भी समय, किसी भी क्षण, कोई उसमें से प्रकट होगा और उनकी राह छेंककर चिल्ला उठेगा – "ठहरो, कहां भागे जाते हो, चोर!"

चेल्काश के मुंह से 'घेराबंदी' की आवाज सुनकर गावरीला कांप उठा। उसके मस्तिष्क में एक भयावना विचार कौंध गया और उसने उसके तने हुए स्नायुओं को झनझना दिया। मदद के लिए चिल्लाने की बात उसके मन में आई। उसने अपना मुंह तक खोल लिया, नाव के बाजू से सीना सटाया और एक गहरी सांस ली। फिर अचानक – भय से आतंकित हो –

उसकी आंखें बन्द हो गई और सीट पर से लुढ़ककर वह नीचे जा गिरा।

दूर क्षितिज तक फैले समुद्र के उस काले अंधकार में से प्रकाश की एक नीली तलवार प्रकट हुई। वह ऊपर उठी और उसने रात के अंधकार को चीर दिया, और आकाश के बादलों को काटती हुई प्रकाश के एक चौड़े फ़ीते की भांति समुद्र के वक्ष पर आकर वह टिक गई। और वहां से — सागर के वक्ष पर जहां कि वह टिकी थी — उसकी किरनें फैलीं और उन्होंने अब तक अदृश्य जहाज़ों के आकारों को अंधकार में से खींचकर उजागर करना शुरू कर दिया, — काले और मूक आकार, रात के अंधेरे की धुंधली चादर ओढ़े हुए। ऐसा मालूम होता था जैसे ये जहाज़ चिरकाल से समुद्र की अतल गहराइयों में बन्द थे, जहां तूफ़ान की शक्तियों ने उन्हें पटक दिया था, और अब — समुद्र में से निकली प्रकाश की इस तलवार के इशारे पर — वे उस क़ैद से मुक्त कर बाहर ले आए गए ताकि वे आकाश को और पानी की सतह से ऊपर की हर चीज़ को देख सकें। उनके मस्तूलों से लिपटी रस्सियां उन समुद्री लताओं की भांति मालूम होती थीं जो समुद्र की अतल गहराइयों में से — जहां उन्होंने इन भारी-भरकम काले जहाज़ों को अपने जाल में जकड़ रखा था — अब उनके साथ ही साथ लिपटी हुई ऊपर उभर आई थीं। इसके बाद वह नीली तलवार, भयावह और चमचमाती, फिर समुद्र के वक्ष पर से उठी, रात के अंधकार को फिर उसने चीरा और फिर समुद्र के वक्ष पर आकर टिक गई — इस बार दूसरी जगह। और अब तक अदृश्य जहाज़ों के आकार फिर उसकी रोशनी में उजागर हो उठे।

चेल्काश की नाव रुक गई और पानी की सतह पर डोलने लगी, मानो वह सोच रही हो कि अब क्या करे। गावरीला नाव के तले में पड़ा था। अपना चेहरा उसने हाथों से ढक रखा था और चेल्काश उसके बदन में अपने जूते की ठोकर गड़ाता हुआ वहशियाना आवाज़ में फुंकार रहा था —

"वह चुंगीवालों का क्रूजर है, बेवकूफ़! और वह उसकी स्पाट-लाइट है। उठ, खड़ा हो। किसी क्षण हमपर भी उनकी रोशनी पड़ सकती है। तुम मुझे, और साथ ही अपने आपको भी, बरबाद करके छोड़ोगे। उठ, खड़ा हो, बेवकूफ़!"

कमर पर एक करारी – खास तौर से करारी – ठोकर लगने पर गावरीला सकपकाकर खड़ा हो गया। उसकी आंखें डर के मारे अभी भी बन्द थीं। वह बैठ गया। टटोलकर अपने डांड़ों को उसने पकड़ा और नाव को खेने लगा।

"संभलकर, आराम के साथ, कम्बख्त! हे भगवान्, मैंने भी किस बेवकूफ़ को चुना। आखिर तुम्हारी जान क्यों निकली जाती है? चेहरा देखो, जैसे सूअर की थूथनी हो! क्या कभी लालटेन नहीं देखी? वह एक तरह की लालटेन ही तो है। धीरे-धीरे डांड़ चला, कम्बख्त! वे चोरी से माल लानेवालों की खोज में हैं। लेकिन वे हमें नहीं पकड़ सकते। वे बहुत दूर हैं। ओह नहीं, वे हमें नहीं पकड़ सकते। हम अब," विजय के भाव से चेल्काश ने इधर-उधर देखा – "खतरे से बाहर हैं। फ़ ... उड़नछू! लेकिन हो तुम तक़दीर के सिकन्दर, – यह बात दूसरी है कि तुम्हारे भेजे में गोबर के सिवा और कुछ नहीं है!"

गावरीला नाव खेता रहा, – चुपचाप, बिना कुछ बोले, भारी सांस लेते और कनखियों से प्रकाश की उस तलवार की ओर देखते हुए जो बराबर उठ और गिर रही थी। चेल्काश ने कहा कि यह एक लालटेन मात्र है। लेकिन उसे विश्वास नहीं हुआ। यह सर्द नीली रोशनी, जो अंधेरे को चीरती और समुद्र में चांदी के तारों का जाल-सा बिछा देती है, लालटेन से अधिक उसे एक छलावा मालूम हुई है। और गावरीला का हृदय एक बार फिर भय से जकड़ गया। वह यंत्रवत डांड़ चला रहा था और उसकी एक-एक रग तनी हुई थी – इस आशंका से कि आकाश से कोई न कोई वज्रपात होकर रहेगा।

यह सब कुछ अब वह नहीं चाहता था—एकदम रीता और चेतनाशून्य, जो कुछ भी उसमें मानवीय था, वह सब निचोड़ लिया गया था।

लेकिन चेलकाश प्रसन्न था। उसके स्नायु, जो तनाव के अभ्यस्त थे, तुरत अपनी स्वाभाविक स्थिति में आ गए। उसकी मूंछें सन्तोष से थिरक रही थीं और उसकी आंखें चमक रही थीं। इतना मगन वह पहले कभी नहीं हुआ। वह दांतों के भीतर से सीटी बजा रहा था, समुद्र की नम हवा को गहरी सांस लेकर अपने फेफड़ों में भर रहा था, चारों ओर नज़र दौड़ा रहा था और गावरीला को देखकर—जब भी उसकी नज़र घूम-घामकर उसपर टिकती—सहृदयता से मुसकरा रहा था।

हवा बहने लगी। समुद्र को उसने जगा दिया और छोटी-छोटी लहरियां उसकी सतह पर नाचने लगीं। बादल पतले और अधिक पारदर्शक हो गए, लेकिन आकाश अब भी घिरा था। हवा के हल्के झोंके, इधर से उधर, सागर के वक्ष पर किलोलें कर रहे थे। लेकिन बादल थिर थे,—वैसे ही भारी और झुके, नीरस और अनाकर्षक विचारों में सिर तक डूबे।

"अरे, यह क्या भाई? तुम तो ऐसे बैठे हो जैसे फ़रिश्तों ने तुम्हारी रूह ही क़ब्ज़ कर ली हो,—हड्डियों का एक ढांचा मात्र, जैसे इस दुनिया का तुम्हारे लिए अन्त हो गया हो।"

एक मानवीय आवाज़—भले ही वह चेलकाश की हो—सुनकर गावरीला खुश हुआ।

"मैं बिल्कुल ठीक हूं," वह गुनगुनाया।

"तो फिर मुर्दा-से क्यों बैठे हो! जैसे कुछ दम न हो। यह लो, तुम पतवार संभालो, और मैं डांड़ चलाऊंगा। तुम थक गए होगे।"

गावरीला यंत्रवत उठा और जगह की अदलबदली कर ली। पास से गुज़रते समय चेलकाश ने लड़के के सफ़ेद चेहरे पर एक नज़र डाली और

देखा कि उसके घुटने इस बुरी तरह कांप रहे हैं कि वे उसे संभाल तक नहीं सकते। यह देखकर उसे उसपर और भी अधिक तरस आया – इतना कि पहले कभी नहीं आया था, और उसने उसके कंधों को थपथपाते हुए कहा –

"अरे, ज़रा अपनी ठोड़ी ऊंची रखो। तुमने बहुत बढ़िया ढंग से काम किया है। इसके लिए तुम्हें अच्छा इनाम दूंगा। बोलो, अगर मैं तुम्हें बीस और पांच – पच्चीस रूबल – दूं तो कैसा?"

"मुझे कुछ नहीं चाहिए। तट पर पहुंचने के सिवा मेरी और कोई इच्छा नहीं है।"

चेल्काश ने अपना हाथ हवा में हिलाया, थूका और नाव को खेने लगा, – अपनी लम्बी बांहों से डांड़ों को खूब पीछे तक खींचते हुए।

समुद्र अब पूर्णतया जाग गया था। वह छोटी-छोटी लहरियां बनाने, झाग की गोटों से उन्हें सजाने और उन्हें एक दूसरे के पीछे दौड़ाने में रमा था। लहरियां एक दूसरे के पीछे लपकतीं, एक दूसरे से टकरातीं, और झाग की फुलझड़ियां बन जातीं। झाग फुंकारे छोड़ता और सिसकारियां लेता घुल जाता और वायु में संगीतमय ध्वनियां गूंजने लगतीं। तब ऐसा मालूम होता मानो अंधकार भी अब जाग उठा है।

"हां तो अब," चेल्काश ने कहा – "तुम अपने गांव लौट जाओगे, शादी कर अपना घर बसाओगे, जमीन जोतोगे, अनाज उपजाओगे, तुम्हारी बीवी इतने बच्चे पैदा करेगी कि उनके लिए पूरा खाना तक नहीं जुटा सकोगे और तुम जीवन भर एड़ियां रगड़ते नज़र आओगे। भला बताओ तो सही, इसमें तुम्हें क्या मज़ा मिलेगा?"

"मज़ा?" गावरीला ने धीमी आवाज़ में और कुछ कांपते हुए दोहराया।

हवा ने बादलों को छितराकर जहां-तहां दरारें डाल दी थीं। उनके बीच से नीले आकाश के टुकड़े – जिनमें एक या दो तारे जड़े थे – नज़र आ रहे थे। ये तारे, प्रतिबिम्बित होकर, लहरों के साथ आंख-मिचौनी-सी

खेल रहे थे, – कभी वे छिप जाते, कभी प्रकट होकर फिर झिलमिलाने लगते।

"ज़रा दाहिनी ओर दाबे चलो," चेल्काश ने कहा – "अब क्या है? समझ लो कि ठिकाने पर पहुंच गए। काम पूरा हुआ। बहुत बड़ा काम। ज़रा सोचो तो, एक ही रात में पांच सौ रूबल!"

"पांच सौ?" गावरीला ने आंखें फाड़ते हुए दोहराया। फिर, इन शब्दों से सहमकर, नाव में पड़ी गांठों में उसने एक हल्की-सी ठोकर मारी और बोला – "इनमें क्या है?"

"इनमें बहुत क़ीमती माल है। अगर ठीक दाम मिले तो हज़ारों की पूंजी हाथ में आ जाए। लेकिन कौन इतनी ज़हमत मोल ले? बोलो, है न यह सफ़ाई का काम?"

"हे मेरे भगवान्!" अविश्वास के साथ गावरीला ने कहा – "अगर मुझे भी ऐसी ही एक गांठ मिल जाती!" एक टीस-सी उसके हृदय में उठी और उसे अपने गांव का, उस मनहूस खेत का, अपनी मां का और दूर तथा पास की उन सब चीज़ों का ख़याल हो आया जिनकी ख़ातिर घर छोड़कर वह काम की खोज में निकल पड़ा था और जिनकी ख़ातिर उस रात की यंत्रणाओं को उसने सहा था। स्मृतियों की एक बाढ़-सी आई और उसमें वह बह चला, – पहाड़ी के ढलुवान पर बसा उसका छोटा-सा गांव, नीचे तलहटी में बहती हुई नदी और नदी के उस पार बर्च, विल्लो, रोवन और बर्डचेरी के जंगल।

"ओह, धन की कितनी अधिक ज़रूरत है मुझे!" उसने एक उदास सांस भरते हुए कहा।

"भई ख़ूब! लगता है जैसे तुम सीधे स्टेशन पहुंच घर का टिकट कटा लोगे। और लड़कियां तुम्हें देखकर पागल हो उठेंगी। इतना ही नहीं, जिसकी तरफ़ तुम इशारा करोगे, वही तुम्हारी हो जाएगी। और तुम

अपने लिए एक नया घर बनाओगे, हालांकि इतनी पूंजी में घर बनना मुश्किल है।"

"नहीं, घर नहीं। उधर लकड़ी बहुत महंगी है।"

"कम से कम पुराने घर की तो मरम्मत करोगे न? और घोड़ा– उसके बारे में तुम क्या सोचते हो? क्या तुम्हारे पास घोड़ा है?"

"हां है तो, लेकिन वह यों ही मरियल-सा और बूढ़ा है।"

"सो तुम्हें एक नया घोड़ा खरीदने की भी जरूरत होगी। और एक गाय... और कुछ भेड़ें। और कुछ मुर्गे-मुर्गियां भी,–क्यों?"

"ओह, इन सब चीज़ों का क्यों ज़िक्र करते हो? कौन जाने, मेरे भाग्य में इतना अच्छा जीवन बिताना बदा है या नहीं?"

"बदा क्यों नहीं है, भाई? तुम्हारा जीवन एक गीत की भांति मधुर होगा। मुझे इन चीज़ों का थोड़ा बहुत अनुभव है। कभी मेरा भी एक अपना घोंसला था। मेरा बाप गांव के सबसे धनी लोगों में से था।"

चेल्काश अब नाव को खे धीरे-धीरे रहा था। नाव लहरों के थपेड़े खाकर डोल रही थी जो, शैतानी से हुमकती, उसके बाजुओं से आ-आकर टकरा रही थीं। काली लहरों के बीच, जिनकी चंचलता अब अधिकाधिक बढ़ती जा रही थी, नाव क़रीब-क़रीब थिर थी,–वह आगे नही खिसक रही थी। और वे दोनों, धचकोले खाते और इधर-उधर नज़र डालते, अपने-अपने सपनों में खोए उसमें बैठे थे। गावरीला को उसके गांव की याद खुद चेल्काश ने ही दिलाई थी। यह इसलिए कि इससे उसके स्नायुओं का तनाव कम हो जाएगा और वह खुश हो उठेगा। जान-बूझकर उसने यह नाटक रचा था। अपने साथी के हृदय को छेड़ने और गुदगुदाने के लिए उसने कृषक-जीवन के सुखों का राग अलापना शुरू किया,–उन सुखों का, जिनकी क़द्र करना एक मुद्दत हुई तभी उसने छोड़ दिया था और जिन्हें वह–इस क्षण से पहले तक–एकदम भूले हुए था। धीरे-धीरे खुद उसकी स्मृति भी ताज़ा

हो गई और वह उसके साथ बह चला। अनजाने में ही यह हो गया। इससे पहले कि उसे इसका चेत होता, गांव और उसके मामलों के बारे में लड़के से पूछताछ करने के बजाय वह ख़ुद ही इस विषय का प्रतिपादन करने लगा।

"किसान-जीवन के बारे में सबसे अच्छी बात यह है कि आदमी आज़ाद रहता है, वह ख़ुद अपना मालिक होता है। उसका एक अपना घर होता है, भले ही वह गरीबामऊ हो। और उसके पास अपनी ज़मीन होती है, – छोटा-सा खंड ही सही लेकिन उसका अपना तो होता है। अगर ज़मीन उसके पास है तो वह राजा है, – अपनी ज़मीन का राजा – उसे यों ही नहीं टाला जा सकता। वह सम्मान का हक़दार होता है – सबके सम्मान का। क्यों, ठीक है न?" उसने उत्साह से पूछा।

गावरीला, कौतुक में भरा, उसकी ओर देख रहा था और वह भी, उसकी भांति, उत्साहित हो उठा था। बात करते-करते उसे यह तक ध्यान नहीं रहा था कि वह किस कैंड़े का आदमी है। वह उसे अब अपनी ही भांति केवल एक अन्य किसान के रूप में देख रहा था जो पूर्वजों की अनेक पुश्तों के ख़ून-पसीने और बचपन की स्मृतियों के सूत्रों से ज़मीन के साथ मज़बूती से चिपका और बंधा रहता है, – एक ऐसा किसान, जिसने ख़ुद अपनी मर्ज़ी से ज़मीन और ज़मीन पर किए जानेवाले श्रम से नाता तोड़ लिया था और जो इसके लिए माक़ूल सज़ा भी पा चुका था।

"सच भाई, तुम्हारी बात बिल्कुल सच है। अब तुम अपने को ही देखो। ज़मीन के बिना तुम क्या हो? ज़मीन, भाई, तुम्हारी मां की भांति है। उसे कोई भूल नहीं सकता।"

चेल्काश **अब** अपनी वास्तविक परिस्थितियों में लौट आया था। अपने सीने में उसने फिर एक जलन का अनुभव किया जो उसे हमेशा उस समय परेशान करती थी जब कोई उसके गर्व को – मौत से खेलनेवाले उस

दुस्साहसिक शैतान के गर्व को–चोट पहुंचाता था। और उस समय तो इस जलन का कोई ठिकाना ही नहीं रहता था जब चोट पहुंचानेवाला व्यक्ति, उसकी समझ में, बिल्कुल पिद्दी होता था, एकदम नगण्य।

"मुझे सबक पढ़ाने की कोशिश न करो!" उसने गुस्से से फुंकारते हुए कहा–"क्या तुम मेरी बातों को सच समझ बैठे? अपनी औक़ात पहचानकर बात करो। आखिर तुम हो किस खेत की मूली?"

"तुम भी अजीब आदमी हो," गावरीला पहले की भांति सहमा हुआ बोला–"मेरा मतलब खास तुमसे ही नहीं था। तुम्हारी भांति और भी बहुत-से हैं। हे भगवान्, दुःख के मारों से यह दुनिया कितनी अटी पड़ी है। न घर, न बार,–आवारगी में डूबे!"

"यह लो, अब इधर आकर डांड़ संभालो," चेल्काश ने तड़ककर कहा और गले तक उमड़ आई गालियों की बाढ़ को वहीं का वहीं रोक लिया।

उन्होंने अब फिर एक दूसरे से अपनी जगह बदली और उस समय, जब चेल्काश नाव के पिछले हिस्से में जाने के लिए गांठों को लांघ रहा था, वह एक अदम्य इच्छा से उतावला हो उठा। उसके जी में आया कि गावरीला को ऐसा धक्का दे कि वह गुड़मुड़ियां खाता समुद्र की अतल गहराइयों में समा जाए।

वे अब मुंह बन्द किए बैठे थे। लेकिन, मुंह बन्द होने पर भी, गावरीला की सांसों से गांव की हवा निकल रही थी। चेल्काश अतीत के विचारों में इतना डूबा था कि वह पानी काटना भूल गया था, और लहरों ने नाव को फिर समुद्र की ओर मोड़ दिया था। लहरों ने जैसे भांप लिया था कि इस नाव का कोई खेवैया नहीं है, और वे उसके साथ मनमानी खेलवाड़ करने में मगन थीं। वे उसे अपनी उंगलियों के छोरों पर नचा रही थीं और नन्ही नीली चिंगारियों के रूप में उसके

डांड़ों के इर्द-गिर्द उछल रही थीं। चेल्काश की आंखों के सामने अतीत का—सुदूर अतीत का, ग्यारह साल की आवारगी की खाई ने जिसे वर्तमान से अलग कर दिया था,—चलचित्र घूम रहा था। उसका अपना बचपन, उसका गांव, उसकी मां—लाल गालों और सदय भूरी आंखों वाली एक सबल स्त्री—और उसका पिता—पूरा देव, लाल दाढ़ी और कठोर चेहरा—सभी कुछ उसकी आंखों के सामने घूम गया। वह दुल्हा बना, दुलहिन आई—काली आंखों वाली गुदगुदी अनफ़ीसा, नर्म और ख़ुशमिज़ाज, पीठ पर बालों की लम्बी चोटी लहराती हुई। फिर वह चित्र आंखों के सामने आया जब कि वह एक ख़ूबसूरत गार्ड्समैन का काम करता था। फिर पिता का चेहरा दिखाई दिया जिनके बाल अब सफ़ेद हो गए थे और कंधे श्रम के बोझ से झुक गये थे। और मां, जो अब झुर्रियों का पिंड बन गई थी और जिसकी दोहरी कमर ज़मीन छूती थी। और वह दृश्य, जब अपनी फ़ौजी सर्विस पूरी कर वह घर लौटा और गांववालों ने उसका स्वागत किया। उस समय उसका पिता, जो अपने इस स्वस्थ, सुन्दर और गलमुच्छों वाले सैनिक बेटे को देख गर्व से फूल उठा था, ख़ुश हो-होकर उसे अपने पड़ौसियों से मिला रहा था। सभी कुछ उसकी आंखों के सामने घूम गया। स्मृतियां, क्षय की भांति, उन लोगों का पीछा नहीं छोड़तीं दुर्भाग्य जिनका सब कुछ हर लेता है। वे अतीत के पत्थरों तक को—समूचे मलबे को—सजीव कर देती हैं और जीवन के उन कटुतम प्यालों में भी—बीते ज़माने में जिनका कभी पान करना पड़ा था—शहद की एकाध बूंद घोल देती हैं।

चेल्काश को ऐसा मालूम होता था जैसे कि वह गांव की सुहावनी हवा में तैर रहा हो। उसकी मां के कोमल शब्द, उसके पिता की खड़तल देहाती बोली और अन्य कितनी ही आवाज़ें, जिन्हें

वह भूला हुआ था, उसे सुनाई दे रही थीं। धरती की मधुर गंध से उसके नथुने फरक रहे थे जो उस समय उठती थी जब बर्फ़ पिघलती थी, जब उसमें नया-नया हल चलता था, जब राई की हरीकंच कोंपलों का बाना वह धारण करती थी। वह अपने आपको एकदम एकाकी, उखड़ा हुआ और जीवन के उस ढंग से सदा के लिए विच्छिन्न अनुभव कर रहा था जिसकी विरासत उसे मिली थी।

"ऐ, हमारी यह नाव किधर जा रही है?" गावरीला चिल्लाया।

चेल्काश चौंका। शिकारी पक्षी की भांति सतर्क दृष्टि से उसने अपने चारों ओर नज़र डाली।

"अरे, यह हम कहां निकल आए? जहन्नुम में जाए यह सब! ज़रा कसकर डांड़ चलाओ!"

"सपनों में खो गए थे,—क्यों?" गावरीला मुसकराया।

"यों ही ज़रा अलसा गया था।"

"अब तो इनकी बदौलत पकड़े जाने का खतरा नहीं?" गांठों पर एक हल्की-सी ठोकर मारते हुए गावरीला ने पूछा।

नहीं, अब कोई डर नहीं। मैं अभी इन्हें ठिकाने लगाकर पैसा वसूल कर लूंगा।"

"पांच सौ?"

"इससे कम नहीं।"

"हे भगवान्, कितनी बड़ी रक़म है। काश, यह मेरे हाथ लगती। वह रंग जमता कि..."

"देहाती रंग,—क्यों?"

"और नहीं तो क्या? मैं..."

और गावरीला ने अपनी कल्पना के पंख फैलाए। चेल्काश चुपचाप बैठा रहा। उसकी मूंछें झुक आई थीं, उसका दाहिना बाज़ू

ऐक लेहर ने उछलकर तर कर दिया था, उसकी आंखें धंसी थीं और उनमें अब कोई चमक नज़र नहीं आ रही थी। उसका समूचा शिकारीपन ग़ायब हो गया था, अपमानजनक अन्तर-मन्थन ने उसे निचोड़ लिया था जो उसकी गंदी कमीज की सलवटों तक के भीतर से झांकता दिखाई पड़ रहा था।

नाव को तेज़ी से मोड़कर वह उसे एक काले आकार की दिशा में ले चला जो पानी में से उभर रहा था।

आकाश अब फिर बादलों से घिरा था। सुहावनी महीन बौछार पड़ने लगी थी। बूंदें पानी से टकराती हुई पटापट की नन्ही आह्लादपूर्ण ध्वनि कर रही थीं।

"ठहरो, नाव को रोको!" चेल्काश ने आदेश दिया।

नाव की नाक माल ढोनेवाले जहाज़ के बाज़ू में जा धंसी।

"पता नहीं, सब लम्बी ताने हैं या क्या, – हरामी कहीं के!" चेल्काश गुर्राया और नाव के कुन्दे को जहाज के बाज़ू से लटकती रस्सी में फंसा दिया – "ऐ, सीढ़ी लटकाओ! उफ़, यह कम्बख़्त बारिश भी जैसे इसी घड़ी का इन्तज़ार कर रही थी। ऐ, धोंधा-बसंतो, बहरे पत्थरो!"

"चेल्काश?" कोई डैक पर बर्राया।

"सीढ़ी कहां है?"

"कालीमेरा,* चेल्काश!"

"सीढ़ी, कम्बख़्तो, सीढ़ी लटकाओ!"

"बाप रे, आज पारा खूब चढ़ा है। ऐ-होय!"

"गावरीला, ऊपर चढ़ो," चेल्काश ने अपने साथी से कहा।

* नमस्ते – ग्रीक भाषा में। – संपा०

अगले कुछ क्षणों में वे डैक पर पहुंच गए जहां काली चमड़ी वाले तीन दढ़ियल व्यग्रता के साथ हकलाती आवाज़ में बातें कर रहे थे और जहाज की मुंडेर पर से नीचे चेल्काश की नाव में ताक-झांक रहे थे। एक चौथा आदमी, लबादे में लिपटा, बढ़कर चेल्काश के पास पहुंचा, बिना कुछ बोले उससे हाथ मिलाया और फिर गावरीला को सवालिया नज़र से देखा।

"रुपया सुबह तैयार रखना," चेल्काश ने संक्षेप में कहा — "मैं अब एक झपकी लेना चाहता हूं। चलो, गावरीला, यहां से चलें। तुम्हें भूख तो नहीं लगी है?"

"नहीं, आंखों में नींद झुकी है। सोना चाहता हूं," गावरीला ने कहा।

पांच ही मिनट बाद वह ज़ोरों से घर्राटे ले रहा था और चेल्काश उसके पास बैठा किसी और के जूतों को अपने पांवों में डालने की कोशिश कर रहा था। रह-रहकर वह एक बग़ल थूकता था और अपने दांतों के बीच से सीटी की आवाज़ में कोई धुन गुनगुना रहा था। फिर वह भी गावरीला के बराबर में लम्बा लेट गया, अपने हाथों को उसने सिर के नीचे लगा लिया और अपनी मूंछों को फरकाता उसी प्रकार पड़ा रहा।

जहाज़ लहरों के साथ डोल रहा था। एक तख़्ता रोनी-सी आवाज़ में चरचरा उठा। बारिश की बूंदें डैक की सतह से और लहरें जहाज के बाज़ुओं से टकरा रही थीं। सभी कुछ भारी उदासी से भरा था और उस लोरी की याद दिलाता था जिसे एक मां, अपने बच्चे के लिए सुखी जीवन की कोई आशा न देख, निराश हृदय से गाती है।

चेल्काश की बत्तीसी झलकी, उसने अपना सिर उठाया, अग़ल-

बग़ल एक नज़र डाली, मन ही मन कुछ बुदबुदाया और फिर लेट गया। उसने अपनी टांगें चौड़ी फैला दीं। ऐसा मालूम होता जैसे कोई बहुत बड़ी क़ैंची अपने दोनों फल खोले फ़र्श पर पड़ी हो।

३

वह सबसे पहले जागा। चौकन्नी दृष्टि से उसने इधर-उधर देखा, तुरत आश्वस्त हो गया, फिर उसने गावरीला पर नज़र डाली जो मज़े से घर्राटे भर रहा था और जिसके स्वस्थ, धूप में तपे, बच्चों ऐसे चेहरे का रोम-रोम मुसकरा रहा था। चेल्काश ने एक गहरी उसांस ली और एक सकरी रस्सेदार सीढ़ी से ऊपर चढ़ गया। सुरमई रंग के आकाश का एक टुकड़ा डैक के झरोखे में से झांक रहा था। उजाला फैल चला था, लेकिन दिन उदासी और ऊब में डूबा था, जैसा कि शरद में अक्सर होता है।

चेल्काश दो-एक घंटे बाद लौटा। उसका चेहरा लाल दमक रहा था और मूंछें कांटे की भांति ऊपर को ऐंठी हुई थीं। पांवों में ख़ूब मज़बूत ऊंचे बूट कसे था। बदन पर जाकेट और चमड़े का बिरजिस डाटे था। लगता था जैसे कोई शिकारी शिकार के लिए जा रहा हो। यह साज-सज्जा – शिकारी की-सी यह वर्दी – नयी नहीं थी, लेकिन अच्छी हालत में थी और ख़ूब फबती थी। उसका सारा बदन भरा हुआ नज़र आता था, – ओने-कोने और कगार छिप गए थे और एक फ़ौजी जंचाव उभर आया था।

"क्या सोते ही रहोगे, कबूतर!" एक हल्की-सी ठोकर मारते हुए उसने गावरीला को जगाया।

गावरीला अध-जागी अवस्था में उछलकर खड़ा हो गया और भयभीत आंखों से चेल्काश की ओर देखने लगा। वह उसे पहचान नहीं सका। चेल्काश खिलखिलाकर हंसा।

"वाह, तुम तो पूरे नवाब मालूम होते हो!" आखिर उसके मुंह से बोल फूटा और एक खुली मुसकान के साथ वह बोला – "क्या ठाठ बांधा है तुमने – एकदम बड़े आदमियों की तरह!"

"यह तो बाएं हाथ का खेल है! लेकिन तुम, बिल्कुल छुई-मुई हो। कल रात न जाने कितनी बार तुम्हारी जान निकलते-निकलते बची!"

"इसके लिए तुम मुझे दोष नहीं दे सकते। पहले कभी मैंने ऐसे काम में हाथ नहीं लगाया था। उफ़, मेरी आत्मा हमेशा के लिए पाप की दलदल में फंस जाती।"

"बोलो, मेरे साथ फिर ऐसे काम पर चलोगे?"

"फिर? केवल तभी... ओह, मुझसे कहते नहीं बनता। अच्छा तो यह बताओ, मुझे मिलेगा क्या?"

"मान लो, अगर तुम्हें दो चटकदार मिलें तो?"

"मतलब सौ-सौ रूबल के दो नोट? यह तो बुरा नहीं है। मैं चल सकता हूं।"

"और तुम्हारी आत्मा का क्या होगा?"

"कौन जाने, उसका कुछ न हो और वह मेरे पास ही बनी रहे," बत्तीसी झलकाते हुए गावरीला ने कहा।

"तुम्हारी आत्मा कहीं नहीं जाएगी और तुम आदमी बनकर मज़े से अपना बाक़ी जीवन बिता सकोगे।"

चेल्काश प्रसन्नता से खिलखिला उठा।

"हां तो अब मज़ाक छोड़ो। चलो, तट पर चलें।"

और वे अब फिर अपनी नाव में आ गए। चेल्काश पानी काट रहा था, गावरीला डांड़ चला रहा था। सिर पर भूरे बादलों का ठोस तनौवा तना था। समुद्र धुंधला हरा था और मौज में भरा नाव

के साथ खेल कर रहा था—उसे लहरों पर उछालता, जो अभी कोई ख़ास आकार नहीं ग्रहण कर पाई थीं, और उसके बाजुओं पर अंजुलि भर-भरकर झागों की बौछार करता। सामने, बहुत दूर, पीले रेत की एक पट्टी-सी झिलमिला रही थी और पीछे, झागदार लहरों से कटा-फटा, समुद्र फैला था। पीछे की ओर ही जहाज़ भी थे,—मस्तूलों का एक समूचा जंगल नज़र आ रहा था और इससे भी पीछे, पृष्ठभूमि के रूप में, बंदरगाह की सफ़ेद इमारतें दिखाई पड़ रही थीं। बंदरगाह की ओर से, समुद्र की सतह पर तैरती हुई, गड़गड़ाहट की एक अस्पष्ट ध्वनि आ रही थी और लहरों के गरजन के साथ मिलकर एक बहुत ही बढ़िया सबल संगीत की रचना कर रही थी। और हर चीज़ धुंध की एक पतली चादर में लिपटी थी जिससे सब चीज़ें दूर, बहुत दूर, मालूम होती थीं।

"एह, ज़रा रात होने दो, तब देखना, यह क्या रंग लाता है," समुद्र की ओर गरदन से इशारा करते हुए चेल्काश चहक उठा।

"क्या तूफ़ान आएगा?" लहरों को चीरकर पूरी शक्ति से डांड़ चलाते हुए गावरीला ने पूछा। उसके कपड़े पानी की बौछार से तर थे।

"ओह-हो!" चेल्काश ने कहा।

गावरीला ने थाह लेनेवाली नज़र से उसे देखा।

"हां तो उन्होंने तुम्हें क्या दिया?" आख़िर वह पूछ ही बैठा। चेल्काश के अन्दाज़ से उसने समझ लिया था कि वह अपने आप इस बारे में कुछ बतानेवाला नहीं है।

"यह देखो," चेल्काश ने कहा और अपनी जेब में से कोई चीज़ निकालकर उसे दिखाने लगा।

करारे हरे नोटों की इतनी बड़ी गड्डी देखकर गावरीला की आंखें चौंधिया गईं।

"और मैं समझा था कि तुम यों ही गप्प मार रहे हो। कितने हैं ?"

"पांच सौ और चालीस।"

"ओह!" गावरीला के मुंह से निकला और ललचाई हुई आंखों से नोटों की गड्डी को फिर उसकी जेब में समाता हुआ देखता रहा।

"काश कि मेरे पास इतना धन होता!"– और उसने भारी हृदय से एक सर्द आह भरी।

"हम दोनों जमकर रंग-पानी करेंगे, मित्र!" चेल्काश ने उछाह से कहा –"इतना कि समूचा नगर हमारी लाली से लाल हो उठे। अरे डरो नहीं, तुम्हें अपना हिस्सा बराबर मिलेगा। तुम्हें चालीस दूंगा। क्यों, ठीक है न ? चाहो तो अभी, हाथ के हाथ, मुझसे ले सकते हो।"

"ठीक है। अगर दे सको तो अभी ले लूंगा।"

गावरीला का समूचा बदन धन पाने की आशा से डोल रहा था।

"एइयू, छछूंदर की दुम! क्या भीख-सी मांगते हो –'ले लूंगा!' इधर आओ और यह लो। लेते क्यों नहीं? – लो ये रंगे कागज़ के टुकड़े,– ले लो इन्हें। मैं नहीं जानता कि इतने धन का क्या होगा। ले लो कुछ और मेरा बोझ हल्का करो।"

चेल्काश ने गावरीला की ओर कुछ नोट बढ़ा दिए। डांड़ों को छोड़कर उसने उन्हें अपनी कांपती हुई उंगलियों से पकड़ा और भीतर की जेब में खोंस लिया। उसने अपनी आंखें सिकोड़ लीं और मुंह बाकर हवा के भारी घूंट लिये – इस तरह, मानो किसी गर्म चीज़ से

एकाएक उसका गला झुलस गया हो और उसे ठंडा करने के लिए भट्टी-सा मुंह खोले हवा भर रहा हो। चेल्काश उसे देख रहा था और उसके होंठों पर घिन से भरी मुसकान रेंग रही थी। गावरीला ने फिर अपने डांड़ों को संभाला और विचलित-सा जल्दी-जल्दी नाव खेने लगा। उसकी आंखें नीचे झुकी थीं—उस आदमी की भांति, जिसे भयानक भय ने अभी-अभी ग्रसा हो। उसके कंधों और कानों में बल पड़ रहे थे।

"तुम लालच की पोट हो। यह अच्छा नहीं है। लेकिन इसके सिवा और आशा भी क्या की जा सकती है?—आखिर को तो तुम किसान हो न?" चेल्काश ने मन ही मन सोचते हुए कहा।

"ओह, धन से आदमी कुछ भी कर सकता है!" आकस्मिक उमंग के उछाह में गावरीला के मुंह से निकला और फिर बड़ी तेज़ी से और असम्बद्ध रूप में अपने विचारों के पीछे लपकते और हाथ न आनेवाले शब्दों को पकड़ने की कोशिश करते हुए उसने बताया कि धन होने पर गांव का जीवन कैसा होता है और धन न होने पर कैसा। सम्मान, आराम, सुख!

चेल्काश ध्यान से उसकी बात सुनता रहा—चेहरे को गम्भीर बनाए और भौंहों को इस तरह सिकोड़े जैसे कुछ सोच रहा हो। रह-रहकर उसके होंठों पर एक प्रसन्न मुसकराहट भी खेल जाती।

"यह लो, हम किनारे से आ लगे!" गावरीला के शब्दों की बाढ़ को उसने काट दिया।

नाव एक लहर की चपेट में आकर रेत में धिकल गई थी।

"हां तो हमारी मंजिल अब पूरी हुई। लेकिन नाव को खींचकर काफ़ी दूर ऊंचाई पर ले जाना होगा जिससे लहरें उसे बहा न ले जाएं। कुछ लोग इसे लेने के लिए आएंगे। अच्छा तो अब विदा।

नगर से हम कोई सात-आठ मील दूर हैं। तुम भी नगर ही लौट रहे हो न?"

चेल्काश का चेहरा शैतान लेकिन भली मुसकराहट से चमक रहा था मानो वह अपने लिए बहुत ही मज़ेदार और गावरीला के लिए बहुत ही अप्रत्याशित चीज़ की कल्पना कर रहा हो। अपने हाथ को जेब में खोंसे वह उसमें पड़े नोटों को मरमरा रहा था।

"नहीं,—मैं नगर नहीं जा रहा हूं। मैं... मैं..." गावरीला हकलाने लगा, जैसे उसकी सांस घुट रही हो।

चेल्काश ने उसकी ओर देखा।

"क्यों, इतने परेशान क्यों हो?"

"नहीं, कुछ नहीं।"

लेकिन गावरीला का चेहरा पहले लाल और फिर काला पड़ता गया। और वह, रह-रहकर, कभी इस पांव के बल उचकता और कभी दूसरे के। ऐसा मालूम होता जैसे वह चेल्काश पर टूट पड़ना चाहता हो या अन्य कोई अत्यन्त दुस्सह काम करने के लिए उतावला हो उठा हो।

चेल्काश की समझ में नहीं आया कि वह क्यों इतना विचलित हो उठा है। वह थिर होकर देखने लगा कि इसका नतीजा क्या निकलता है।

गावरीला एकाएक इस तरह हंसने लगा जैसे सुबकियां भर रहा हो। उसका सिर इतना झुका था कि वह उसके चेहरे के भावों को नहीं देख सका, लेकिन उसने उसके कानों को लाल से सफ़ेद पड़ते हुए देखा।

"यह अच्छा तमाशा है?" भन्नाकर हाथ हिलाते हुए चेल्काश ने कहा — "तुम मुझसे प्रेम करते हो या किसी और बला में फंसे हो? क्या लड़की की तरह खड़े कुनमुना रहे हो। या फिर तुम मझसे

जुदा नहीं होना चाहते? तुम्हारे लिए यह असह्य है? बोलो, कबूतर की दुम, नहीं तो मैं तुम्हें यहीं छोड़कर चल दूंगा।"

"तुम चले जाओगे?" गावरीला चीख़ा।

निर्जन तट इस चीख़ से कांप उठा और लहरों के दौड़ने से रेत में पड़ी पीली धारियों ने जैसे एक उसांस भरी। ख़ुद चेल्काश भी सहम गया। एकाएक गावरीला चेल्काश की ओर झपटा, उसके पांवों पर जा गिरा और उसके घुटनों को अपनी लपेट में लेकर एक झटका दिया। चेल्काश लड़खड़ाया और धम्म से रेत में बैठ गया। दांत पीसते हुए उसने अपनी लम्बी बांह हवा में उठाई। उसकी मुट्ठी कसकर बंधी थी और मुक्का तना था। लेकिन गावरीला की हल्की फुसफुसाहट और मिन्नतों ने उसके प्रहार को रोक दिया।

"तुम बड़े अच्छे आदमी हो। वह धन मुझे दे दो। भगवान् तुम्हारा भला करेगा, वह धन मुझे दे दो। तुम उसका क्या करोगे? देखो न, एक रात में—केवल एक रात में! और मुझे सालों तक—जाने कितने सालों तक—एड़ियां रगड़नी पड़ेंगी। वह धन मुझे दे दो। मैं तुम्हारे लिए दुआ करूंगा। सारी उम्र दुआ करूंगा। तीनों गिरजों में। तुम्हारी आत्मा की मुक्ति के लिए प्रार्थना करूंगा। तुम इसे यों ही उड़ा दोगे, जब कि मैं इसे ज़मीन में लगाऊंगा। मुझे दे दो। तुम्हारे लिए यह क्या है? कुछ नहीं, हाथ का मैल। एक रात, और तुम फिर धनी के धनी। जीवन में एक बार तो किसीका भला करो। आख़िर, तुम अपनी आत्मा खो चुके हो। तुम्हारे आगे कोई नहीं है। और मैं... इस धन से मैं क्या कुछ नहीं करूंगा। मुझे दे दो,—वह धन मुझे दे दो।"

चेल्काश रेत में कोहनियां टेके बैठा था—सहमा-सा, हतबुद्धि और क्षुब्ध। वह चुपचाप बैठा था, बिना कुछ बोले। उसकी आंखें उसे—

इस लड़के को, जो उसके घुटनों से अपना सिर सटाए मिनमिना रहा था, — बींध रही थीं। आख़िर चेल्काश उछलकर खड़ा हो गया, अपना हाथ उसने जेब में डाला और नोटों का बंडल गावरीला की ओर फेंक दिया।

"यह लो, अब चाटो इन्हें लेकर!" वह चिल्लाया। उसका समूचा बदन कांप रहा था — उद्वेग से, तरस से और लालच के इस ग़ुलाम के प्रति घृणा और ऊब से। उसके सामने धन फेंकते हुए उसने एक प्रकार के गर्व का — वीरत्व की भावना का — अनुभव किया।

"जो हो, मैं ख़ुद तुम्हें ज़्यादा देने जा रहा था। पिछली रात ख़ुद अपने गांव की याद करते-करते मेरा हृदय पिघल गया था। मैंने मन में सोचा — लड़के की मदद करूंगा। लेकिन मैं देख रहा था कि तुम ख़ुद भी दांत निपोरते हो या नहीं। और तुमने दांत निपोर दिए। तुम निरे भिखारी निकले। ज़रा भी कसबल नहीं। धन क्या ऐसी चीज़ है जिसके लिए इस तरह जान दी जाए? बेवक़ूफ़! लालची शैतान! गर्व का नाम तक नहीं। पांच-पांच कोपेक के लिए अपने आपको बेचने के लिए तैयार!"

"ख़ुदा तुमपर अपना साया रखे। अरे, यह क्या है? यह तो धन है। ओह, अब मेरे पास भी धन है, — मैं भी धनी हूं," गावरीला मिनमिनाया। उसका रोम-रोम ख़ुशी से प्रफुल्लित हो रहा था। नोटों को उठाकर उसने अपनी जेब में छिपा लिया। फिर बोला —

"तुम देवता हो, मेरे मित्र! मैं तुम्हें कभी नहीं भूलूंगा। नहीं, कभी नहीं भूलूंगा। मेरी पत्नी और बच्चे, वे सब भी तुम्हारे लिए दुआ करेंगे।"

ख़ुशी से भरे उसके उद्‌गारों को सुनकर और लालच के इस

उभार से विकृत उसके चमकते हुए चेहरे को देखकर चेल्काश ने अनुभव किया कि वह—चोर और पियक्कड़ होने पर भी—कभी इतना नीचे नहीं गिरेगा, कभी इस प्रकार—इस हद तक अपना आत्म-सम्मान खोकर—धन के पीछे नहीं पड़ेगा। नहीं, वह कभी ऐसा नहीं करेगा, कभी इतना नीचे नहीं गिरेगा। और इस विचार तथा इस भावना ने उसके हृदय को—उसके रोम-रोम को—खुद अपनी आज़ादी की चेतना से सराबोर कर दिया और वह वहीं, समुद्र के उस तट पर, गावरीला की बग़ल में खड़ा रहा।

"तुमने मुझे सुख का—जीवन की ख़ुशी का—दान दिया है," गावरीला ने चिल्लाकर कहा और चेल्काश के हाथ को खींचते हुए अपने चेहरे से सटा लिया।

चेल्काश भेड़िये की भांति अपने दांतों को झलकाता रहा, लेकिन बोला कुछ नहीं।

"और ज़रा सोचो तो, मैं क्या करने पर उतर आया था!" गावरीला कहता गया—"यहां आते समय, रास्ते में, मैंने सोचा—मन ही मन—मैं इसे मारूंगा—तुम्हें यानी तुम्हारे सिर पर—डांड़ से—खटाक!—धन निकाल लूंगा—और इसे फेंक दूंगा—तुम्हें यानी—समुद्र में। कौन है इसका नामलेवा? और अगर इसकी लाश उनके हाथ लग भी गई—तो कोई यह खोज करने में सिर नहीं खपाएगा कि यह किसने किया और कैसे किया। इसके लिए कोई इतनी हाय-तोबा नहीं मचाएगा। किसीको इसकी ज़रूरत नहीं। कोई इसके लिए परेशान नहीं होगा।"

"वापिस करो वह धन!" गावरीला की गरदन दबोचते हुए चेल्काश गरज उठा।

छिटककर जान छुड़ाने के लिए गावरीला ने ज़ोर लगाया—एक

बार, दो बार,—लेकिन चेल्काश की बांह सांप की भांति उसकी गरदन को जकड़े थी। चर्र से कमीज फटी और गावरीला चारों खाने चित्त रेत पर जा गिरा। उसके दीदे बाहर निकल आए। उसकी उंगलियां जैसे हवा को दबोचे थीं और उसकी टांगें निराशा से छटपटा रही थीं। चेल्काश उसके ऊपर खड़ा था—छड़-सा, सीधासतर, बाज़ के समान। वह हंस रहा था—एक रूखी कठोर हंसी। उसकी बत्तीसी चमक रही थी और उसके पैने हड़ियल चेहरे के बाल—उसके गलमुच्छे—आवेग से बल खा रहे थे। अपने समूचे जीवन में इतनी क्रूरता से वह पहले कभी घायल नहीं हुआ था, न कभी उसे इस हद तक गुस्सा चढ़ा था।

"क्यों, अब तो तबीयत हरी हो गई न?" वह जोरों से हंसा और फिर, पलटकर, नगर की दिशा में चल दिया। वह पांच एक डग भी न गया होगा कि गावरीला ने, बिल्ली की भांति, पंजों के बल बदन को तौला, उछलकर खड़ा हो गया, ज़ोरों से बांह घुमाई और एक बड़ा-सा पत्थर फेंककर मारा।

"यह लो!"

चेल्काश कराह उठा, अपने हाथों से सिर पकड़ा, लड़खड़ाकर कुछ आगे बढ़ा, गावरीला की ओर घूमा और मुंह के बल रेत पर गिर पड़ा। गावरीला भय से जाम हो गया। चेल्काश की एक टांग हिली, अपना सिर उठाने की उसने कोशिश की और फिर, इकतारे के तार की भांति कांपकर, पसर गया। गावरीला अब भाग खड़ा हुआ—जी तोड़कर भाग खड़ा हुआ—उस अंधेरे शून्य में, जहां, कोहरे में लिपटी स्तेपी के ऊपर, बड़ा-सा और बेढंगा एक काला बादल लटका हुआ था। लहरें सरसरा रही थीं। बल खाती हुई वे आतीं, क्षण भर के

लिए रेत से गले मिलतीं और बल खाती हुई फिर भाग जातीं। झाग फुंकारें छोड़ते, हवा में फुहारें नाचने लगतीं।

बूंदें पड़ने लगीं। पहले इक्की-दुक्की, फिर मूसलधार। लगता था जैसे आकाश ने अपने झरनों के मुंह खोल दिए हों। स्तेपी के समूचे विस्तार में और समुद्र के समूचे विस्तार में इन झरनों का एक जाल-सा बुन गया। गावरीला उसमें ओझल हो गया। बारिश और समुद्र के किनारे रेत पर पड़ी मानव की एक लम्बी आकृति के सिवा और कुछ नजर नहीं आता था। काफ़ी देर तक यही हाल रहा। आख़िर, अंधकार को चीरकर, पक्षी की भांति उड़ता हुआ गावरीला प्रकट हुआ। वह चेल्काश के पास पहुंचा, घुटनों के बल उसकी बग़ल में बैठा और उसे उठाने की कोशिश करने लगा। उसका हाथ किसी गर्म, लाल और चिपचिपी चीज के स्पर्श में आया। वह कांप उठा और चौंककर पीछे हट गया। उसका चेहरा सफ़ेद था और वहशियाना भाव उसपर छाए थे।

"उठो, भाई, उठो!" बारिश की आवाज़ को बेधते हुए उसने चेल्काश के कान में फुसफुसाकर कहा।

चेल्काश ने अपनी आंखें खोलीं और गावरीला को एक हल्का-सा धक्का दिया।

"जाओ... दफ़ा हो जाओ!" भरे हुए गले से वह फुसफुसाया।

"भाई मेरे, मुझे माफ़ करो। मेरे सिर शैतान सवार था। यह उसीकी करतूत है!" गावरीला ने फुसफुसाकर कहा और चेल्काश का हाथ उठाकर अपने होंठों से लगाया। उसका समूचा बदन कांप रहा था।

"चले जाओ। मेरी जान न खाओ!"

"मुझे माफ़ करो, भाई, मुझे माफ़ करो। पाप का यह बोझ मेरे सीने से उतार लो।"

"जाओ... चले जाओ... जहन्नुम में जाओ!" एकाएक चीखकर चेल्काश उठ बैठा। उसका चेहरा सफ़ेद और क्रुद्ध था, उसकी आंखों में धुंध-सी छाई थी और इस प्रकार मुंदी जा रही थीं जैसे उनमें नींद घिरी हो।

"अब और क्या इरादा है? तुमने अपनी करनी पूरी कर ली। जाओ, दफ़ा हो जाओ यहां से!" उसन कहा और दुःख से आहत गावरीला को ठोकर मारने की कोशिश की, लेकिन ताक़त ने साथ नहीं दिया और वह फिर ढह जाता अगर गावरीला उसके कंधों में बांह डालकर उसे संभाल न लेता। चेल्काश का चेहरा भी अब उसी तल पर था जिसपर कि गावरीला का, और दोनों ही चेहरे सफ़ेद तथा भयावह नज़र आ रहे थे।

"थू!" चेल्काश ने कहा और अपने इस साथी के बरबट्टे-से फटे दीदों में थूक दिया।

गावरीला ने दबकर आस्तीन से अपना चेहरा पोंछा।

"जो भी तुम चाहो, मेरे साथ करो," वह फुसफुसाया—"मैं एक शब्द नहीं कहूंगा। बस, मुझे माफ़ कर दो,—ख़ुदा के लिए मुझे माफ़ कर दो।"

"मरदूद! बुरा काम करने के लिए भी चौड़ी छाती चाहिए। कम्बख़्त को मोरी तक में गिरना नहीं आता!" चेल्काश ने झुलसा देनेवाले शब्दों से उसे दाग़ा, अपनी जाकेट के भीतर हाथ डाला और अपनी कमीज़ का एक हिस्सा फाड़कर बाहर निकाला। फिर, बिना मुंह से एक उफ़ तक निकाले और रह-रहकर अपने दांतों को पीसते हुए, उस कपड़े से उसने अपना सिर बांध लिया।

"क्या धन तुमने निकाल लिया था?" दांतों के बीच से उसने पूछा।

"नहीं, भाई, मैंने नहीं लिया। और मैं लूंगा भी नहीं। मुझे वह नहीं चाहिए। वह धन मुझे कभी नहीं फलेगा।"

चेल्काश ने अपनी जाकेट की जेब में हाथ डाला, नोटों का बंडल खींचकर बाहर निकाला, उसमें से सौ रूबल का एक पत्ता खिसकाकर अपनी जेब में वापिस पहुंचा दिया और बाक़ी नोट गावरीला के सामने फेंक दिए।

"उठा लो इन्हें और यहां से दफ़ा हो जाओ!"

"नहीं, भाई, नहीं! मैं नहीं ले सकता। मुझसे जो हुआ, उसके लिए माफ़ करो।"

"सुना नहीं?—मैं कहता हूं, इसे उठा लो!" चेल्काश गरज उठा। उसकी आंखों से भयंकरता झांक रही थी।

"मुझे माफ़ कर दो। जब तक नहीं करोगे, मैं नहीं लूंगा," गावरीला ने विनीत भाव से कहा और बारिश से भीगे रेत में चेल्काश के पांवों पर गिर गया।

"यह झूठ है। मैं जानता हूं कि तुम इसे लोगे—मुंह के बल गिरकर लोगे!" चेल्काश ने विश्वास के साथ कहा। अपने साथी के बाल पकड़कर उसका सिर उसने ऊपर की ओर खींचा और उसके मुंह में नोटों को ठूंसते हुए बोला—

"यह लो। ले लो। तुमने कोई मुफ़्त में थोड़े ही काम किया था। डरो नही, ले लो। और इस बात की शर्म न करो कि तुमने एक आदमी को मार ही डाला था। मेरे जैसे आदमी को मारने के लिए तुम्हारे पीछे कोई हाथ धोकर नहीं पड़ेगा। और अगर उन्हें इसका पता लग भी गया तो वे तुम्हें इसके लिए धन्यवाद तक देंगे। लो, इन्हें ले लो।"

यह देखकर कि चेल्काश हंस रहा है, गावरीला का हृदय हल्का हो गया। उसने नोट अपने हाथ में दबोच लिए।

"और भाई, तुमने मुझे माफ़ कर दिया न? क्या तुम मेरे लिए इतना भी नहीं करोगे?" डबडबाई आवाज़ में उसने बिनती की।

"मेरे प्यारे मित्र," खड़े होते और अपने पांवों पर डगमगाते हुए चेल्काश ने भी उसी अन्दाज़ में जवाब दिया—"माफ़ करने की ऐसी बात भी क्या है? कुछ हो तो माफ़ करूं। आज तुमने मुझपर चोट की, कल मैं भी कर सकता हूं।"

"ओह भाई, मेरे भाई!" विक्षुब्ध भाव से सिर हिलाते हुए गावरीला ने आह भरी।

चेल्काश उसके सामने खड़ा था। उसके होंठों पर एक अजीब मुसकान रेंग रही थी। उसके सिर की पट्टी, जो क्रमशः अधिकाधिक लाल होती जा रही थी, तुर्की फ़ेज़ टोपी की भांति मालूम होती थी।

बारिश अब धुआंधार पड़ रही थी। सागर दबी हुई आवाज़ में गरज रहा था। लहरें अत्यन्त विक्षुब्ध तट से टकरा रही थीं।

वे दोनों चुप थे।

"अच्छा तो अब विदा," चेल्काश ने चलने के लिए मुड़ते हुए कहा। उसकी आवाज़ में उपहास का पुट था।

वह लड़खड़ाया, उसकी टांगें हिल रही थीं और वह अपने सिर को पकड़े था, मानो डर रहा हो कि कहीं वह गिर न पड़े।

"मुझे माफ़ करना, भाई!" गावरीला ने फिर मिन्नत की।

"ठीक है, ठीक है। इसकी कोई ज़रूरत नहीं," चलते हुए चेल्काश ने ठंडे स्वर में कहा।

वह लड़खड़ाता हुआ चल दिया। बाएं हाथ से वह अपना सिर पकड़े था और दाहिने से अपनी काली मूंछों को हल्के-हल्के ऐंठ रहा था।

गावरीला वहीं खडा पानी के पर्दे में उसे ओझल होता हुआ देखता रहा। बारिश की अन्तहीन धाराओं ने, जो अभी भी गिर रही थीं, समूची स्तेपी को इस्पाती भूरे रंग की अभेद्य चादर में लपेट लिया था।

तब उसने अपनी भीगी हुई टोपी उतारी, क्रास का चिन्ह बनाया, हाथ के नोटों पर नज़र डाली, सन्तोष की गहरी सांस ली, नोटों को अपनी कमीज़ के भीतर छिपा लिया और समुद्र के किनारे-किनारे, चेल्काश से विपरीत दिशा में, मज़बूती से डग रखता हुआ चल दिया।

समुद्र गरज-गरजकर अपनी भीमाकार लहरों को तट पर फेंक रहा था और वे चूर-चूर होकर झाग उगल रही थीं, बौछारों में फूटी पड़ रही थीं। बारिश जल और थल दोनों पर कोड़े बरसा रही थी। हवा चीख़ और चिल्ला रही थी। गरज, चीख़ और भनभनाहट से वायुमंडल गूंज उठा था। बारिश ने समुद्र और आकाश दोनों को एक कर दिया था।

शीघ्र ही बारिश की बौछारों और फुहारों ने रेत पर उस लाल स्थल को धो दिया, जहां चेल्काश पड़ा था, उन पद-चिन्हों को मिटा दिया, जो चेल्काश ने डाले थे, और उस युवक के पांव के निशानों को भी नहीं रहने दिया, जो समुद्र के किनारे-किनारे चला गया था। समुद्र के इस निर्जन तट पर अब एक भी ऐसा चिन्ह बाक़ी नहीं रहा जो उस छोटे-से नाटक की याद दिलाता जिसे अकेले इन दो पात्रों ने अभिनीत किया था।

१८९४



एक छोटे लड़के और एक छोटी लड़की की कहानी

बड़े दिन की एक कहानी

यह एक आम रिवाज हो गया है कि साल में एक बार बड़े दिन की कहानियों में कुछ एक छोटे लड़कों और लड़कियों को बर्फ़-पाले में

जामकर मार दिया जाता है। बड़े दिन की प्रतिष्ठित कहानी का बेचारा ग़रीब छोटा लड़का या बेचारी ग़रीब छोटी लड़की आम तौर से किसी प्रासाद की खिड़की के रास्ते शानदार दीवान-खाने में जगमग करते बड़े दिन के पेड़ को मुग्ध भाव से खड़ी देखती रहती है और इसके बाद बर्फ़-पाले में जाम होकर मर जाती है, कड़वाहट और घोर निराशा में डूबी।

इन लेखकों के भले इरादों की मैं क़द्र करता हूं, बावजूद उस निर्ममता के, जिससे कि वे अपने नन्हे हीरों और हीरोइनों का टिकट कटाते हैं। मैं जानता हूं कि ये लेखक इन ग़रीब छोटे बच्चों को इसलिए जाम करते हैं कि छोटे धनी बच्चों को उनके अस्तित्व की याद दिलाई जा सके, लेकिन जहां तक मेरा सम्बन्ध है, इतने शुभ लक्ष्य तक के लिए किसी छोटे ग़रीब लड़के या छोटी ग़रीब लड़की को जाम करके मारना मेरे बूते से बाहर है।

मैं ख़ुद बर्फ़-पाले में जाम होकर कभी नहीं मरा और मैंने किसी छोटे ग़रीब लड़के या छोटी ग़रीब लड़की को कभी जाम होकर मरते नहीं देखा। इसलिए मुझे डर है कि जाम होकर मरने की वेदना का चित्रण करने का मेरा प्रयत्न—अगर मैंने ऐसा किया तो—कहीं हास्यास्पद बनकर न रह जाए। इसके अलावा यह कुछ बहुत ही अटपटा भी मालूम होता है कि एक जीवित प्राणी को केवल इसलिए मार दिया जाए कि एक दूसरे जीवित प्राणी को उसके अस्तित्व की याद दिलाई जा सके।

और यही कारण है जो मुझे एक ऐसे छोटे लड़के और एक ऐसी छोटी लड़की की कहानी कहना ज़्यादा पसन्द है जो बर्फ़-पाले में जाम होकर नहीं मरे।

बड़े दिन से ठीक पहली सांझ थी। छः बजे थे। हवा चल रही थी, बर्फ़ के बादल उड़ाती। ये ठंडे पारदर्शक बादल, झिलमिल के

चूरे की भांति हल्के और कमनीय, हर जगह सपाटे लगा रहे थे। वे राह-चलतों के चेहरों से टकराते, गालों में बर्फ़ की सुइयां-सी चुभाते और घोड़ों के सिरों पर हिम-कणों की बौछार करते। घोड़े अपने सिरों को झटकते, ज़ोरों से हिनहिनाते और अपने नथुनों से भाप के बादल छोड़ते। बिजली के तारों पर पाला जमा था और वे सफ़ेद रेशमी रस्सी की भांति मालूम होते थे। आसमान साफ़ और सितारों से अटा था। वे इतनी तेज़ी से चमक रहे थे मानो किसीने, बड़े दिन के उपलक्ष्य में, उन्हें ब्रास-पोलिश से चमका दिया हो, हालांकि यह एक असम्भव बात थी।

सड़क पर लोगों की भारी चहल-पहल थी और ख़ूब शोर हो रहा था। बीच घोड़े थिरक रहे थे और लोग पटरियों पर चल रहे थे – कुछ उतावली में और कुछ फ़ुरसत के साथ। उतावली में इसलिए कि उन्हें चिन्ताओं और ज़िम्मेदारियों का बोझ ढोना था और उनके पास गर्म कोट नहीं थे, और फ़ुरसत में इसलिए कि वे चिन्ताओं या ज़िम्मेदारियों के बोझ से मुक्त थे और उनके पास गर्म – यहां तक कि बालदार भी – कोट थे।

इन्हीं लोगों में से एक – जो चिन्ताओं से मुक्त था और जो फ़र का कोट पहने था, सो भी ऐसा, जिसमें बहुत ही ख़ूबसूरत कालर लगा था, – बहुत ही क़ायदे के साथ पटरी पर चल रहा था कि इस सज्जन के ठीक पैरों के नीचे चिथड़ों और गूदड़ में लिपटी दो छोटी-छोटी गेंदें-सी लुढ़कती दिखाई दीं और साथ ही साथ दो नन्ही आवाज़ें सुनाई दीं –

"दया के सागर..." एक छोटी लड़की ने सुर छेड़ा।

"राजाओं के राजा..." एक छोटे लड़के का स्वर भी उसके साथ आ मिला।

"हम ग़रीबों का भी कुछ ध्यान करो,– कुछ तो दो, मालिक!"

"एक कोपेक, रोटी के लिए। त्योहार के दिन के लिए!" उन्होंने अपना कोरस सम्पन्न किया।

यही मेरे हीरो और हीरोइन थे – छोटे ग़रीब बच्चे। लड़के का नाम था मिश्का प्रीश्च और लड़की का कात्का रियाबाया।

चूंकि उक्त सज्जन ने रुकने की ज़हमत नहीं उठाई, इसलिए बच्चे उसके पांवों के नीचे डुबकियां लगाते और उसके सामने आ जाते, जब कि कात्का आशा से दम साधे फुसफुसाकर कहती – "एक मिनट, मालिक, एक मिनट," और मिश्का इस सज्जन की राह छेंकने में कोई कोशिश बाक़ी नहीं छोड़ता।

और जब यह सज्जन इस सबसे ऊब उठा तो उसने अपने फ़र-कोट के पल्ले खोले, अपना बटुवा बाहर निकाला, नाक के पास तक उसे ले गया, नथुने फड़काते हुए एक सिक्का उसमें से बाहर खींचा और बहुत ही छोटे तथा अत्यन्त गन्दे हाथों में से एक में – जो सामने फैला था – उसे ठूंस दिया।

और चिथड़े-गूदड़ की वे दोनों गेंदें, पल भर में, इस सज्जन के रास्ते से लुढ़ककर एक फाटक में जा रुकीं जहां वे कुछ देर तक एक दूसरे से चिपकी खड़ी रहीं और चुपचाप सड़क पर ऊपर-नीचे नज़र डालती रहीं।

"बूढ़ा शैतान, हमारी ओर कम्बख़्त ने देखा तक नहीं," छोटा ग़रीब लड़का कुत्सा से भरे विजयी अन्दाज़ में फुसफुसा उठा।

"वह मोड़ के उधर, गाड़ीवानों के यहां, गया है," लड़की ने बताया – "लेकिन मूज़ी ने दिया क्या?"

"दस कोपेक," मिश्का ने लापर्वाही से कहा।

"तो अब कुल कितने हो गए?"

"सतहत्तर कोपेक।"

"ग्रोह, इतना? तब तो ग्राज जल्दी ही घर लौट चलेंगे, – क्यों, ठीक है न? बड़ी ठंड है।"

"ऐसी क्या जल्दी है," मिश्का ने उत्साह पर ठंडा पानी डालते हुए कहा – "ग्रौर देखो, ग्रधिक खुलकर काम न करना। ग्रगर किसी दिन दारोग़ा ने पकड़ लिया तो सारे बाल कटवाकर तुझे कबूतरी बना देगा। ग्ररे देखो, वह बजरा चला ग्रा रहा है। चलो, चलें।"

यह बजरा एक मोटी स्त्री थी जो फ़र का कोट पहने थी। इससे पता चलता है कि मिश्का एक बहुत ही शैतान लड़का था, बहुत ही गंवार ग्रौर ग्रपने से बड़ों की इज़्ज़त न करनेवाला।

"दया की देवी..." वह मिनमिनाया।

"मां मरियम के नाम पर..." कात्का ने साथ दिया।

"छि:! कम्बख़्त तीन कोपेक से ज़्यादा नहीं उगल सकी, बूढ़ी चुड़ैल!" मिश्का ने उसे कोसा ग्रौर फिर लपककर फाटक पर पहुंच गया।

हिम के बादल ग्रब भी सड़क पर सपाटा लगा रहे थे ग्रौर हवा ग्रधिकाधिक तेज़ होती जा रही थी। टेलीग्राफ़ के तार भनभना रहे थे। हिम-गाड़ियों के रनर्स के नीचे बर्फ़ चरचरा रही थी। ग्रौर सड़क के उस ग्रोर, कहीं दूर से, किसी स्त्री के खिलखिलाने की गूंजदार ग्रावाज़ ग्रा रही थी।

"क्यों चची ग्रनफ़िसा ग्राज रात को फिर नशे में धुत्त नज़र ग्राएगी न?" कात्का ने पूछा ग्रौर ग्रपने साथी के बदन से ग्रौर ग्रधिक चिपक गई।

"मालूम तो ऐसा ही होता है। ग्रौर उसे रोक भी कौन सकता है? वह ज़रूर गड़गच्च होगी," मिश्का ने निश्चित स्वर में जवाब दिया।

हवा छतों पर से हिम समेटती सीटी की आवाज़ में बड़े दिन की धुन गुनगुना रही थी। एक दरवाज़े की अरगल खुलने की खटाक से आवाज़ आई। फिर कांच के दरवाज़े की झनझनाहट सुनाई दी और किसीने गहरी आवाज़ में पुकारा –

"गाड़ीवान!"

"चलो, घर चलें!" काल्का ने कहा।

"तुमने तो नाक में दम कर दिया," भरे हुए हृदय से मिश्का फूट पड़ा – "पता नहीं, घर जाने की तेरे सिर पर ऐसी क्या धुन सवार हुई है?"

"वहां इतना ठंडा नहीं है," काल्का ने संक्षेप में सफ़ाई देते कहा – "कुछ तो गरमाई मिलेगी।"

"बड़ी गरमाई मिलेगी, – वाह!" मिश्का ने उसे कोंचा – "और जब वे जमा होकर तुझे नाच नचाएंगे तब... तब कैसा मालूम होगा? या फिर, जैसा कि पिछली बार हुआ था, अगर उन्होंने तेरे गले में ज़बर्दस्ती वोडका उंडेलकर तुझे छत तक उछालना शुरू कर दिया तो? – घर? वाह!"

और उसने एक ऐसे आदमी के अन्दाज़ में अपने कंधों को सिकोड़ा जो जानता है कि वह क्या है और जिसे अपनी बातों के सही होने में कोई शक व शुबहा नहीं है। काल्का ने बल-सा खाकर बरबस जमुहाई ली और फाटक के एक कोने में ढह गई।

"तुम बस चुप बनी रहो। अगर ठंड लगे तो बत्तीसी भींच लो और जी को कड़ा रखो। तब नहीं लगेगी। तुम और मैं, दोनों मिलकर, किसी दिन खूब मौज करेंगे। यह कौन बड़ी बात है। मैं केवल यह चाहता हूं कि..."

और उसने अपनी बात को अधूरा छोड़ दिया – यह इसलिए कि

उसकी साथिन कौतुक में भर उठें। लेकिन वह, कौतुक का ज़रा-सा भी भाव दिखाए बिना, कसमसाकर और भी दोहरी हो गई। मिश्का ने, कुछ चिन्तित होकर, उसे चेताया –

"देखो, कात्का, सोना नहीं। कहीं पाला न मार जाए। सुन रही हो न?"

"डरो नहीं, मुझे पाला-वाला कुछ भी नहीं मरेगा," कात्का ने कहा। उसके दांत ठंड से किटकिटा रहे थे।

अगर मिश्का न होता तो कात्का निश्चय ही पाले में जाम होकर मर जाती। लेकिन उस छोटे तलछटी लड़के का दृढ़ निश्चय था कि बड़े दिन के अवसर पर वह ऐसी भद्दी बात नहीं होने देगा।

"पसरो नहीं, उठकर बैठो। पसरना तो और भी बुरा है। घुटने टूटे नहीं गए। सीधे सतर रहने से आदमी बड़ा दिखता है और उसे ठंड नहीं दबोचती। बड़ों के सामने ठंड की मार नहीं बसाती। मिसाल के लिए घोड़ों को देखो। वे कभी पाले में जाम नहीं होते। आदमी घोड़ों से छोटे हैं, सो वे हमेशा जाम होते रहते हैं। बात मानो, उठ बैठो। पूरा एक रूबल हो जाए तो समझें कि हां, आज का दिन भी कुछ है।"

कात्का, जिसका सारा बदन कांप रहा था, उठ बैठी।

"सच, – भयानक ठंड है," वह फुसफुसाई।

और ठंड, वास्तव में, अत्यन्त भयानक हो चली थी। बर्फ़ के बादलों ने क्रमशः गहरे घने बगूलों का रूप धारण कर लिया था, – कहीं वे खम्भों की शक्ल में दिखाई पड़ रहे थे और कहीं लम्बी चादरों की शक्ल में, जिनमें हिम-कण हीरों की भांति जड़े थे। जब वे सड़क के लैम्पों के ऊपर से मंडराते हुए निकलते या दुकानों के चमचमाते शो-केसों के सामने से गुज़रते तो बहुत ही ख़ूबसूरत मालूम होते।

वे इन्द्रधनुषी रंगों में जगमगाते और उनकी तेज़ ठंडी चमक आंखों में खुबने लगती।

लेकिन हमारे छोटे हीरो और छोटी हीरोइन की इस सारे सौन्दर्य में कोई दिलचस्पी नहीं थी।

"ओ-हो !" अपने बिल में से थूथनी बाहर निकालते हुए मिश्का ने कहा – "यह तो पूरा रेवड़ चला आ रहा है। उठो कात्का, उन्हें पकड़ें।"

"दया के सागर..." तीर की भांति सड़क पर पहुंच कांपती आवाज़ में छोटी लड़की मिनमिनाई।

"कुछ देते जाओ, मालिक!" मिश्का न चिरौरी की और फिर, एकाएक, चिल्ला उठा – "भागो, कात्का, भागो!"

"भुतने! ज़रा हाथ तो लगने दो। फिर देखो, तुम्हारी क्या गत बनाता हूं, शैतान!" शहतीर की भांति लम्बे पुलिसमैन ने, जो अचानक पटरी पर प्रकट हो गया था, बमककर कहा।

लेकिन वे ग़ायब हो चुके थे। दो चिथड़ा-गेंदें तेज़ी से लुढ़ककर आंखों से ओझल हो गई थीं।

"ग़ायब हो गए, शैतान के बच्चे!" पुलिसमैन भुनभुनाया और सड़क पर नज़र डालते हुए भले स्वभाव से मुसकरा उठा।

और शैतान के बच्चे पत्ता तोड़ भाग रहे थे और हंस रहे थे। कात्का का पांव बार-बार उसके चिथड़ों में उलझ जाता था और वह गिर पड़ती थी।

"हाय राम, फिर गिर पड़ी!" अपने पांवों पर फिर खड़ी होने के लिए जूझते हुए वह कहती, पीछे की ओर मुड़कर भय से देखती, और उसके चेहरे पर बरबस हंसी खेलने लगती – "कहां गया वह मरदूद ?"

मिश्का – हंसी से दोहरा हुआ – राह-चलतों से टकराता और इस अपराध के बदले, काफ़ी बार, उसे करारी झिड़कियां खानी पड़तीं।

"बस, बस, बहुत लुढ़कियां खा चुकी, – तुझे शैतान उठा ले जाए... ज़रा शक्ल तो देखो, – क्या बन गई है? बुद्धू कहीं की! अरे, फिर गिर पड़ी! बाप रे, तुम तो मुझे हंसाते-हंसाते मार डालोगी!"

कात्का की लुढ़कियों ने उसमें भारी उछाह का संचार कर दिया था।

"वह अब हमें कभी नहीं पकड़ सकता। ज़्यादा भागने की ज़रूरत नहीं। वह इतना बुरा नहीं। वह दूसरे वाला, जिसने सीटी बजाई थी। एक बार मैं भाग रहा था कि एकदम अचानक – खटाक! सीधे रात के सन्तरी के पेट में जा धंसा और मेरा सिर ज़ोरों से उसके डंडे से टकरा गया!"

"मुझे याद है। इतना बड़ा गुमटा पड़ गया था," कात्का ने कहा और एक बार फिर हंसते-हंसते दोहरी हो गई।

"बस करो अब। बहुत हंस ली," मिश्का ने भारी मुंह बनाकर उसे रोका– "और मैं जो कहता हूं, वह सुनो।"

दोनों, गम्भीर और चिन्तित मुद्रा बनाए, साथ-साथ चलने लगे।

"मैं वहां तुमसे झूठ बोला। दस नहीं, उस खूसट ने मेरे हाथ में बीस कोपेक ठोंसे थे। और उससे पहले भी मैं तुमसे झूठ बोला– इस डर से कि कहीं तुम फिर घर चलने की रट न लगाने लगो। आज का दिन बहुत अच्छा रहा। जानती हो, कितना मिला? एक रूबल और पांच कोपेक। है न बहुत!"

"और नहीं तो क्या?" कात्का ने सांस छोड़ी–"चाहो तो इससे जूते खरीद सकते हो–कबाड़ी बाज़ार में।"

"जूते, – ऊंह! वे तो मैं यों ही उड़ाकर तुम्हें दे सकता हूं। ज़रा ठहर जाओ। कितने ही दिनों से जूतों की एक जोड़ी पर मेरी नज़र है। मौक़ा लगने की देर है, साफ़ उड़ा लाऊंगा। लेकिन बात सुनो – चलो, अब ज़रा क़हवाख़ाने में चलें। क्यों, ठीक है न?"

"चची को फिर पता चल जाएगा और वह हमारी मरम्मत करेगी, – जैसा कि तब हुआ था," कात्का ने आशंका से कहा, लेकिन क़हवाख़ाने में जाकर गरमाने का मोह इतना प्रबल था कि उसे छिपाना मुश्किल था।

"हमारी मरम्मत करेगी? नहीं, इसकी नौबत नहीं आएगी। हम और तुम, दोनों, एक ऐसे क़हवाख़ाने में चलेंगे जहां एक भी पंछी यह न पहचान सके कि हम कौन हैं।"

"क्या सचमुच?" कात्का ने उछाह में भरकर कहा।

"अच्छा तो सुनो, हम क्या करेंगे। सबसे पहली और सबसे बड़ी बात तो यह कि हम आधा पौंड सासेज लेंगे – आठ कोपेक के, फिर आधा पौंड सफ़ेद रोटी – पांच कोपेक की। तेरह कोपेक तो ये हुए। इसके बाद तीन-तीन कोपेक की दो मीठी रोटियां लेंगे, – छः कोपेक ये हुए। इस तरह उन्नीस कोपेक हो गए। फिर एक केतली चाय – छः कोपेक की। पूरे पच्चीस कोपेक, – ज़रा सोचो तो! और हमारे पास बाक़ी बच रहेंगे..."

मिश्का अचकचाकर चुप हो गया। कात्का ने उसे भारी और शंका की नज़र से देखा।

"इतना ख़र्च कर डालोगे," उसने दबी आवाज़ में पूछा।

"बोलो नहीं, चुपचाप सुनो। यह ज़्यादा नहीं है। इसके अलावा आठ कोपेक की चीज़ें हम और खाएंगे। कुल तेंतीस कोपेक। और जब यह सब करना ही है तो फिर कहना-सुनना क्या? बड़े

दिन का त्योहार है,—क्यों, है न? सो हमारे पास बाक़ी बचेगा... अगर पच्चीस ख़र्च किए तो अस्सी कोपेक... और अगर तेंतीस ख़र्च किए तो सतहत्तर कोपेक—सात दस दस के और कुछ फुटकर अलग। देखो, कितना अधिक बच रहेगा? उस बूढ़ी खूसट को और क्या चाहिए? इतना काफ़ी है उस शैतान की खाला के लिए। चलो, चलें। जल्दी करो।"

हाथ में हाथ डाले, उछलते और रपटते, वे पटरी पर बढ़ चले। हिम-कण उड़ते हुए उनकी आंखों से टकराते और उन्हें कुछ दिखाई न देता। जब-तब बर्फ़ का बादल ऊपर से उनपर झपटता और उन दोनों के छोटे आकारों को पारदर्शक चादर में लपेट लेता जिसे वे, भोजन और गरमाई की आशा में उमगे, तुरत तार-तार कर डालते।

"सुनो," कात्का ने—इतनी तेज़ी से चलने के कारण जिसकी सांस फूल आयी थी—हांफते हुए कहा—"तुम बुरा मानो चाहे भला,—अगर उसे मालूम हो गया तो मैं साफ़ कह दूंगी—यह सब तुम्हारी करतूत है... मैं पर्वाह नहीं करती — तुम हर बार भाग जाते हो, और अकेले मैं भुगतती हूं — वह मुझे सदा पकड़ लेती है और तुमसे कहीं ज्यादा मारती है... समझ गए न? मैं सब कह दूंगी।"

"जाओ, जो जी में आए कह देना," मिश्का ने गरदन हिलाई—"अगर वह मारेगी तो देखा जाएगा!—मैं सब भुगत लूंगा। जाओ... और तुम भी अपने मन की कर लो।"

मुंह से सीटी बजाता, अपना सिर पीछे की ओर फेंके, वीर-भावना में पगा वह चल रहा था। उसका चेहरा पतला था। उसकी आंखों में शैतानी भरी थी और उनमें, आम तौर से, ऐसा भाव झलकता था जो उसकी इस छोटी आयु से ज़रा भी मेल नहीं खाता था। उसकी नाक नुकीली और कुछ मुड़ी हुई थी।

"यह लो, क़हवाख़ाना आ गया। एक नहीं, दो। बोलो, किसमें चला जाए?"

"छोटे वाले में। लेकिन आओ, पहले किराने की दुकान पर चलें।"

खाने की सारी चीज़ें ख़रीदने के बाद उन्होंने छोटे क़हवाख़ाने में प्रवेश किया।

क़हवाख़ाना धुंवें, भाप और एक तेज़ खट्टी गंध से भरा था। आवारा भिखमंगे, गाड़ीवान और सैनिक अंधेरे में लिपट बैठे थे और अत्यन्त गन्दे वेटर मेज़ों के बीच मंडरा रहे थे। चीख़-चिल्लाहट, गाने और गालियों का बाज़ार गर्म था।

कोने में एक ख़ाली मेज़ पड़ी थी। मिश्का ने उसे भांपा और सपक सुई की भांति वहां पहुंच गया। उसने अपना कोट उतारकर रख दिया और इसके बाद काउंटर के पास पहुंचा। कात्का भी, लजीली नज़रों से इधर-उधर देखते हुए, अपना कोट उतारने लगी।

"क्यों, मिस्टर, चाय मिलेगी?" काउंटर को अपनी मुट्ठियों से धीरे-धीरे बजाते हुए मिश्का ने वहां बैठे आदमी से पूछा।

"चाय? मिलेगी क्यों नहीं? थोड़ा कष्ट करो। उधर जाकर कुछ गर्म पानी ले लो। और देखो, कोई चीज़ टूटे-फूटे नहीं। अगर तोड़-फोड़ की तो ऐसा सबक पढ़ाऊंगा कि याद रखोगे।"

लेकिन मिश्का पानी के लिए लपक चुका था।

दो मिनट बाद वह अपनी साथिन के साथ बैठा काग़ज़ में तम्बाकू लपेटकर भरे-पूरे अन्दाज़ में अपने लिए एक ताज़ा सिगरेट बना रहा था—उस गाड़ीवान की भांति, जो दिन में अच्छी मज़दूरी कर चुका हो। कात्का मुग्ध भाव से उसे देख रही थी। उसके हृदय पर इस बात का रोब छाया था कि लोगों के बीच वह कितने बढ़िया और

सहज ढंग से व्यवहार करता है। क़हवाख़ाने के इस कान-फोड़ होहल्ले के बीच वह सात जनम भी अपने आपको संभाले नहीं रख सकती और भी कुछ नहीं तो एक यही डर उसके सिर पर सवार रहता कि कोई क्षण जा रहा है जब उन्हें कान पकड़कर यहां से बाहर निकाल दिया जाएगा। लेकिन, चाहे दुनिया इधर से उधर हो जाए, मिश्का के सामने वह अपने इन भावों और आशंकाओं को प्रकट नहीं होने दे सकती। सो वह अपने सन के रंग के बालों को थपथपाने और सीधे-सादे तथा अकृत्रिम अन्दाज़ में अपने इधर-उधर देखने लगी। ऐसा करने के प्रयास में उसके मैले गालों में रंग की बाढ़ उतर आई और अपनी अचकचाहट छिपाने के लिए अपनी नीली आंखों को उसने सिकोड़ लिया। इस बीच मिश्का, अहाते के चौकीदार सिगनेई के लहजे और शब्दों में, उसे पाठ पढ़ा रहा था। यह चौकीदार—उस समय भी जब कि वह नशे में धुत्त होता था—मिश्का को बहुत ही प्रभावशाली आदमी मालूम होता था और अभी-अभी चोरी के अपराध में तीन महीने की जेल काटकर आया था। सो उसके लहजे और शब्दों की नक़ल करता मिश्का कात्का से कह रहा था—

"हां तो, मिसाल के लिए, समझ लो कि तुम भीख मांगने निकली हो। अब भीख कैसे मांगी जाती है? केवल यह चिचियाते रहना कि दया करो, दया करो, बिल्कुल बेकार है। यह कोई तरीक़ा नहीं है। तुम्हें जो करना चाहिए वह यह कि उस मरदूद के पांवों से उलझ जाओ—इस तरह कि वह घबरा जाए और डरने लगे कि कहीं वह लड़खड़ाकर तुम्हारे ऊपर न गिर पड़े।"

"यह तो मैं कर लूंगी," कात्का ने दबे स्वर में सहमति प्रकट की।

"बहुत ठीक," उसके साथी ने सराहना से सिर हिलाते हुए कहा—"यही असली चीज़ है। अब, मिसाल के लिए, चर्बी

अनफ़िसा को लो। चची अनफ़िसा क्या है? सबसे पहली बात तो यह कि वह पियक्कड़ है। और इसके अलावा ..."

और मिश्का ने, सराहनीय साहस के साथ, खुलकर बताया कि चची अनफ़िसा इसके अलावा और क्या है।

कात्का ने सिर हिलाकर चची के बारे में उसके मूल्यांकन से पूर्ण सहमति प्रकट की।

"तुम उसका कहना नहीं मानतीं। यह ठीक नहीं है। तुम्हें, मिसाल के तौर पर, कहना चाहिए – 'मैं अच्छी लड़की बनूंगी, चची, तुम्हारी बात का मैं ध्यान रखूंगी...' दूसरे शब्दों में यह कि उसके मुलायम मक्खन लगाती रहो और इसके बाद जो मन में आए करो। यह सही तरीक़ा है।"

मिश्का चुप हो गया और रोबीले अन्दाज़ में अपना पेट खुजलाने लगा, जैसे कि अपना भाषण झाड़ने के बाद सिगनेई करता था। और जब उसे और कोई विषय नहीं सूझा तो उसने अपने सिर को हल्का-सा झटका दिया और बोला –

"हां तो अब खाना चाहिए।"

"आओ, शुरू करें," कात्का ने, जो कितनी ही देर से रोटी और सासेज की ओर भूखी आंखों से देख रही थी, सिर हिलाकर सहमति प्रकट की।

और सीलन की गंध भरे रोशनीविहीन इस क़हवाखाने के एक अंधेरे कोने में वे अपना सांझ का खाना खाने लगे। गंदे गीतों और भद्दी गालियों की आवाज़ पृष्ठ-संगीत का काम कर रही थी। दोनों बड़ी लगन से, अपनी पसन्द और नापसंद का परिचय देते और बीच-बीच में कुछ रुकते हुए, सच्चे रसज्ञों की भांति खा रहे थे। और अगर कात्का, शालीनता की भावना को भूलकर, लालच के मारे अपने मुंह में

इतना बड़ा निवाला भर लेती कि उसके गाल कुप्पे से निकल ग्राते ग्रौर उसके दीदे बाहर झांकने लगते, तो शांत ग्रौर स्थिर मिश्का दुलार के स्वर में कहता—

"ऐसी जल्दी क्या है, रानी साहिबा?"

ग्रौर फिर, उस भारी-भरकम निवाले को निगलने की उतावली में, उसका दम-सा घुटने लगता।

ग्रौर यही मेरी कहानी का ग्रन्त है। बिना किसी क्षोभ या पछतावे के मैं इन बच्चों को बड़े दिन की यह रात बिताने के लिए ग्रकेला छोड़ सकता हूं। ग्रौर यह ग्राप निश्चित समझिए कि उनके जाम होकर मरने का ख़तरा ज़रा भी नहीं है। वे ग्रपने पूरे रंग में हैं। ग्राखिर उन्हें बर्फ़-पाले में जाम करके मारने से मेरा—या इस दुनिया का—क्या भला होगा?

मुझे यह एक बहुत ही बड़ी ग्रौर भारी मूर्खता मालूम होती है कि बच्चों को पाले मे जाम करके मारा जाए—ख़ास तौर से उस हालत में, जब कि वे निश्चय ही किसी न किसी दिन मरेंगे, लेकिन इससे कहीं ग्रधिक सीधे ग्रौर साधारण तरीक़े से।

१८९४



बाज़ का गीत

सीमाहीन सागर, तट-रेखा के निकट अलस भाव से छलछलाता और तट से दूर निश्चल नींद में डूबा, नीली चांदनी में सराबोर था। नर्म और रुपहली, क्षितिज के निकट दक्खिनी आकाश की नीलिमा से लिपटा वह मीठी नींद सो रहा था—रूई ऐसे बादलों की पारदर्शक

बिनावट को प्रतिबिम्बित करते हुए, जो उसकी ही भांति आकाश में निश्चल लटके थे—तारों के सुनहरी बेलबूटों पर अपना आवरण डाले, लेकिन उन्हें छिपाए हुए नहीं। आकाश सागर पर झुकता हुआ प्रतीत होता था, मानो वह कान लगाकर यह सुनने के लिए उत्सुक हो कि उसकी बेचैन लहरें, जो अलस भाव से तट को पखार रही थीं, फुसफुसाकर क्या कह रही हैं।

पहाड़, आंधी से टूटे पेड़ों से आच्छादित, अपनी खुरदरी कगारदार चोटियों से ऊपर नीले शून्य को छूते, जहां दक्खिनी रात का सुहावना और दुलार-भरा अंधेरा अपने स्पर्श से उनके खुरदरे कठोर कगारों को मुलायम बना रहा था।

पहाड़ गम्भीर चिन्तन में लीन थे। उनके काले साये, अवरोधी आवरणों की भांति, उमड़ती हुई हरी लहरों पर पड़ रहे थे, मानो वे ज्वार को रोकना चाहते हों, पानी की निरन्तर छलछलाहट, झागों की सिसकारियों और उन तमाम आवाज़ों को शांत करना चाहते हों जो पहाड़ की चोटियों के पीछे से अभी तक नहीं निकले चांद की रुपहली नीली आभा की भांति समूचे दृश्यपट को प्लावित करनेवाली रहस्यमय निस्तब्धता का उल्लंघन कर रही थीं।

"अल्लाह अो अकबर!" नादिर रहीम अोगली के होंठों से धीमी आवाज़ प्रकट हुई। वह क्रीमिया-निवासी एक वृद्ध गड़रिया था—लम्बा क़द, सफ़ेद बाल, दक्खिनी धूप में तपा रंग, दुबला-पतला, एक बुद्धिमान बुज़ुर्ग।

वह और मैं रेत पर पड़े थे—साये में लिपटी और काई-उगी एक भीमाकार चट्टान की बग़ल में—एक उदास और धुंधली चट्टान, जो अपने मूल-पहाड़ से टूटकर अलग हो गई थी। उसके एक बाज़ू समुद्री सरकंडों और पानी के पौधों की बन्दनवार थी जो उसे सागर तथा

पहाड़ों के बीच रेत की सकरी पट्टी से जकड़े मालूम होती थी। हमारे अलाव की लपटें समुद्र-तट को आलोकित कर रही थीं और उनकी कांपती हुई लौ की परछाइयां उसकी प्राचीन सतह पर नाच रही थीं जो गहरी दरारों से क्षत-विक्षत थी।

रहीम और मैं कुछ मछलियां उबाल रहे थे, जिन्हें हमने अभी पकड़ा था, और हम दोनों ऐसे मूड में थे जिसमें हर चीज़ साफ़, अनुप्राणित और बोधगम्य मालूम होती है। हमारे हृदय हल्के और निश्छल थे और सिवा इसके हमारा जी और कुछ नहीं चाहता था कि यहां लेटे रहें और सपने देखते रहें।

सागर तट पर छपछपा रहा था। लहरों की आवाज़ इतनी हल्की थी जैसे वे हमारे अलाव से अपने आपको गरमाने की याचना कर रही हों। रह-रहकर लहरों की एकरस भनभनाहट में एक अधिक ऊंचा और अधिक आह्लादपूर्ण स्वर सुनाई दे जाता,—यह शायद अधिक साहसी लहरों में से किसी एक का स्वर था जो ठीक हमारे पांवों तक रेंग आती थी।

रहीम सागर की ओर मुंह किए पड़ा था। उसकी कोहनियां रेत में धंसी थीं, उसका सिर उसके हाथों पर टिका था और वह विचारों में डूबा दूर धुंधियाले में ताक रहा था। उसकी भेड़ की खाल की टोपी खिसककर उसके सिर के पिछले हिस्से पर पहुंच गई थी और समुद्र की ताज़ा हवा महीन रेखाओं से टके उसके ऊंचे मस्तक पर पंखा झल रही थी। उसके मुंह से दार्शनिक उद्गार प्रकट हो रहे थे—इस बात की चिन्ता किए बिना कि मैं उन्हें सुन भी रहा हूं या नहीं। ऐसा लगता था जैसे वह समुद्र से बातें कर रहा हो।

"जो आदमी सचाई के साथ खुदा की खिदमत करता है उसे बहिश्त नसीब होता है। और वह, जो खुदा या पैग़म्बर की खिदमत

नहीं करता? शायद वह वहां है, जहां झाग दिखाई पड़ रहे हैं। पानी की सतह पर वे रुपहले धब्बे शायद उसीके हों, – कौन जाने?"

काला और गहरी उसांसें लेता सागर उजला हो चला था और चान्दनी के टुकड़े बेतर्तीबी से उसकी सतह पर छितरे थे। चांद पहाड़ों की कगारदार टेढ़ी-मेढ़ी चोटियों के पीछे से बाहर खिसक आया था और उनींदे-से तट पर, उस चट्टान पर, जिसकी बग़ल में हम लेटे हुए थे, और सागर पर, जो हल्की सांस भरकर उससे मिलने के लिए उठ खड़ा हुआ था, अपनी आभा बिखेर रहा था।

"रहीम, मुझे कोई कहानी सुनाओ," मैंने वृद्ध से कहा।

"किसलिए?" अपने सिर को मेरी ओर मोड़े बिना ही उसने पूछा।

"ओह, सिर्फ़ इसलिए कि तुम्हारी कहानियां मुझे बड़ी अच्छी लगती हैं।"

"मैं तुम्हें सब सुना चुका। अब कोई कहानी बाक़ी नहीं रही।"

वह चाहता था कि उसकी खुशामद की जाए, और मैंने उसकी खुशामद की।

"अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें एक गीत सुना सकता हूं।" उसने राज़ी होते हुए कहा।

इससे अच्छी बात और क्या हो सकती थी कि उसके पुराने गीतों में से एक सुनने को मिलेगा? मैं तुरत तैयार हो गया और उसने गाने ऐसी आवाज़ में – गीत की पुरानी धुन को क़ायम रखते हुए – सुनाना शुरू कर दिया।

१

ऊंचे पहाड़ों पर एक सांप रेंग रहा था। रेंगते-रेंगते उसने एक दर्रे में जाकर विश्राम किया। दर्रा धुंध से घिरा था और नीचे समुद्र फैला हुआ था।

ऊंचे आसमान में सूरज चमचमा रहा था और पहाड़ों की सांस गर्म होकर आसमान में उठ रही थी, और नीचे लहरें शोर मचाती चट्टानों से टकरा छितरा रही थीं।

और दर्रे के बीच से, अंधेरे और धुंध में लिपटी, तेज़ तर्रार एक नदी बह रही थी—समुद्र से मिलने की उतावली में राह के पत्थरों को उलटती-पलटती।

झागों का ताज पहने, प्राणवान् और सनातन, चट्टानी बाधाओं को काटती, गुस्से में उबलती-उफनती, गरज मारकर वह समुद्र में छलांग रही थी।

अचानक एक बाज़, जिसके पंख खून में रंगे थे और जिसके सीने में एक घाव था, आकाश में से दर्रे में आ गिरा—उसी जगह, जहां सांप कुंडली मारे पड़ा था।

धरती से टकराते ही उसके मुंह से एक चीख़ निकली और वहां चट्टान पर पड़ा, जीवन से निराश, अपने पंख फटकने लगा।

सांप डरकर तेज़ी से भागा, लेकिन शीघ्र ही उसने देखा कि पक्षी मौत के किनारे पहुंच चुका है और यह कि एकाध मिनट में ही वह ठंडा हो जाएगा।

सो रेंगकर वह फिर घायल पक्षी के पास लौट आया और ताने के साथ उसके कान में फुंकार छोड़ा—

"अभी क्या, तुम्हारे मरने का वक़्त आ गया?"

"अभी क्या, मेरे मरने का वक़्त आ गया!" गहरी उसांस लेते हुए बाज़ ने कहा—"लेकिन ओह, मैंनें खूब जीवन बिताया है। मैंने सुख का उपभोग किया है, जमकर लड़ाइयां लड़ी हैं। आकाश की ऊंचाइयां मैंने नापी हैं। तुम—धरती के कीड़े—कभी भी आकाश की उस तरह सैर नहीं कर सकते जैसे कि मैंने की है।"

"आकाश? वह क्या है? निरा शून्य – किस काम का है तुम्हारा आकाश? क्या मैं आकाश में रेंग सकता हूं? उससे तो यह दर्रा कहीं अच्छा है, – जहां गरमाई भी है और तरी भी।"

इस प्रकार सांप ने बाज़ से – आज़ादी के प्रेमी बाज़ से – कहा और बाज़ के वीरतापूर्ण शब्दों पर मन ही मन हंसने लगा।

और उसने अपने हृदय में सोचा – "क्या फ़र्क पड़ता है इससे अगर कोई रेंगता या उड़ता है? अन्त हम सबका एक ही होना है – सबको इसी धरती पर मरना है, – उसकी धूल में ही फिर वापिस लौट जाना है।"

एकाएक बाज़ ने अपना सिर उठाया और नीचे की ओर देखते हुए अंधेरे दर्रे को छान गया।

चट्टान की दरारों में से पानी रिस रहा था और दर्रे का वातावरण मृत्यु और ह्रास से गंधा रहा था।

बाज़ ने अपनी समूची शक्ति बटोरी और शोक तथा आकांक्षा से चिल्ला उठा –

"ओह, आकाश में वह उड़ान, अगर मैं एक बार और उड़ सकता – अपने दुश्मन को झपटकर दबोच लेता, अपने सीने से दबाकर उसका सिर कुचल डालता, अपने रक्त की गर्मी से उसका दम घोट देता, – ओह, संघर्ष का वह सुख!"

सांप ने अब सोचा – "अगर आकाश में रहना वास्तव में इतना अच्छा न होता तो बाज़ के हृदय से कभी इतनी वेदनापूर्ण चीख न निकलती!"

और उसने आज़ादी के प्रेमी बाज़ से कहा – "रेंगकर चोटी के सिरे पर आ जाओ और लुढ़ककर नीचे गिर पड़ो। शायद तुम्हारे पंख अब भी काम दे जाएं और तुम फिर आकाश में उड़ने लगो।"

बाज़ का बदन ख़ुशी से थरथरा उठा। उसके मुंह से गर्व-भरी हुंकार निकली और रेंगकर बाहर चोटी पर निकल आया — मिट्टी और काई की लेसदार परत का सहारा लेते हुए।

और कगार पर पहुंचकर उसने अपने प्रशस्त पंख फैला दिए, गहरी सांस लेकर अपने फेफड़ों में हवा भरी और अपनी आंखों से एक, चमक-सी छोड़ शून्य में कूद गया।

और बाज़, पत्थर की भांति, तेज़ गति से गिर चला। गति इतनी तेज़ थी कि उसके पंख टूट-टूटकर बिखरने लगे।

एक लहर ने उसे लपक लिया, उसका रक्त धोकर साफ़ कर दिया, झागों में उसे लपेटा और उसे दूर समुद्र में बहा ले गई।

समुद्र की लहरें, शोक से सिर धुनती, चट्टान की सतह से टकराने लगीं। और पक्षी चला गया — समुद्र के व्यापक विस्तारों में ओझल हो गया।

२

सांप, बहुत देर तक, कुंडली मारे दर्रे में पड़ा हुआ सोचता रहा — पक्षी की मौत के बारे में, आकाश के प्रति उसके प्रेम के बारे में। वह पड़ा रहा और सोचता रहा।

और उसने शून्य में आंखें जमा दीं जहां सपने जन्म लेते और बेचैन हृदयों को दिलासा देते हैं।

"क्या ख़ूबी देखी उसने — उस अभागे बाज़ ने — इस शून्य में, इस अन्तहीन आकाश में? ऊंची उड़ान भरने की अपनी गहरी आकांक्षा से ये पक्षी दूसरों की शांति में क्यों खलल डालते हैं? आकाश में ऐसा क्या भेद है? एक ही उड़ान में, चाहे वह कितनी ही संक्षिप्त क्यों न हो, मैं सारा भेद मालूम कर लूं।"

और इस प्रकार बोलकर, उसने और भी कसकर कुंडली मारी, शून्य में उछला और सूरज की धूप में एक काली धारी-सा कौंध गया।

लेकिन धरती पर रेंगने के लिए जो जन्मे हैं, वे कभी उड़ नहीं सकते। सांप उछला और नीचे चट्टानों पर जा गिरा, लेकिन गिरकर वह मरा नहीं। वह हंसा और हंसकर बोला –

"सो यही है उड़ने का आनन्द – गिरने का आनन्द ! ओह, मूर्ख पक्षी ! धरती पर दुःखी हो, जिसे वे नहीं जानते, वे आकाश में चढ़ते और उसके थरथराते विस्तारों में रमते हैं। लेकिन आकाश सिवा शून्य के और क्या है? प्रकाश की भरमार, लेकिन ऐसी कोई चीज़ नहीं जो शरीर को क़ायम रख सके। तब फिर इतना गर्व किसलिए? और इतनी घृणा किसलिए? दुनिया की नज़रों से अपनी पागल आकांक्षाओं को छिपाने के लिए, जीवन के व्यापार में अपनी विफलता पर पर्दा डालने के लिए? हास्यास्पद पक्षी! तुम्हारे शब्द मुझे फिर कभी धोखा नहीं दे सकते। अब मुझे सारा भेद मालूम है। मैंने आकाश को देख लिया है। मैं उड़ा, मैंने उसकी सैर की और आकाश के बीच से ही मैं गिरा हूं, हालांकि मैं गिरकर मरा नहीं। अपने में मेरा विश्वास अब और भी दृढ़ हो गया है। वे अपने भरमों में डूबे रहें, वे, जो धरती को प्यार नहीं करते। मैंने सत्य का पता लगा लिया है। पक्षियों की ललकार अब कभी मुझपर असर नहीं करेगी। धरती से मैं जन्मा हूं और धरती का मैं हूं।"

और इस प्रकार बोलकर, एक पत्थर पर गर्व से कुंडली मारकर, वह जम गया।

सागर, चौंधिया देनेवाले प्रकाश का पुंज बना, चमचमा रहा था और लहरें पूरी निर्ममता के साथ तट से टकरा रही थीं।

और उनकी सिंह ऐसी गरज में बाज़ का गीत गूंज रहा था।

चट्टानें समुद्र के आघातों से कांप रही थीं और आसमान गीत के स्वरों से थरथरा रहा था –

"गाते हैं हम उस पागलपन का गीत, जो साहस से जूझना जानता है!

"साहस से जूझने का यह उन्माद जीवन का मूल मंत्र है। ओह, कभी न डिगने-झुकनेवाले बाज़, दुश्मन से लड़कर तूने क़ीमती रक्त बहाया है, लेकिन वह समय अभी आना है जब तेरा यह रक्त जीवन के अंधकार में चिंगारी बनकर चमकेगा और वीर हृदयों को आज़ादी तथा प्रकाश के प्रेम से अनुप्राणित करेगा।

"तूने अपना जीवन देकर मूल्य चुकाया। लेकिन तू वीरों के गीतों में सदा जीवित रहेगा, आज़ादी और प्रकाश के लिए संघर्ष करने की गर्वीली ललकार के रूप में गूंजता रहेगा।

"गाते हैं हम उस पागलपन का गीत, जो साहस से जूझना जानता है!"

* * *

...सागर के पारदर्शक विस्तार निस्तब्ध हैं। तट से छलछलाती लहरें धीमे स्वरों में गुनगुना रही हैं और मैं खुद भी उतना ही निस्तब्ध हूं जितना कि वह शून्य, जिसपर मेरी आंखें जमी हैं। अब पानी की सतह पर चान्दनी के रुपहले खंड पहले से अधिक हो गए हैं... और हमारी केतली शांत भाव से भुनभुना रही है।

लहरों में से एक, जो अपनी अन्य बहिनों को पीछे धकेल आगे बढ़ आई थी, ठिठोली में एक हल्की चीख़ मारकर उछली और रहीम के सिर को छूने का प्रयत्न करने लगी।

"भाग यहां से! और क्या सिर पर चढ़ेगी?" हाथ हिलाकर उसे दूर करते हुए रहीम चिल्लाया और वह, उसका कहना मान, तुरत लौट गई।

और इसमें, लहर को सजीव मानकर रहीम के इस तरह उसे झिड़कने में, मुझे हंसने या चौंक उठनेवाली कोई बात नहीं मालूम हुई। हमारे चारों ओर की हर चीज़ असाधारण रूप में सजीव, कोमल और सुहावनी थी। समुद्र शान्त था और उसकी शीतल सांसों में, जो कि वह दिन की तपन से अभी तक तप्त पहाड़ों की चोटियों की ओर प्रवाहित कर रहा था, बड़ा प्राण मालूम होता था। आकाश की गहरी नीली पृष्ठभूमि पर सुनहरी अक्षरों में तारों का एक गम्भीर संदेश अंकित था जो आत्मा को मंत्र-मुग्ध करता और हृदय को किसी नये आत्मबोध की मधुर आशा से विचलित करता प्रतीत होता था।

हर चीज़ उनींदी थी, लेकिन जागरूकता की गहरी चेतना अपने हृदय में बटोरे,—मानो अगले ही क्षण सभी पदार्थ नींद की अपनी चादर उतारकर दूर फेंक देंगे और अवर्णनीय मधुर स्वर में समवेत गान शुरू कर देंगे। और उनका यह समवेत गान जीवन के रहस्यों को प्रकट करेगा, उन्हें मस्तिष्क को समझाएगा और फिर मस्तिष्क को छलावे की अग्नि-शिखा की भांति ठंडा कर देगा। और आत्मा को रात के नीले विस्तारों में उड़ा ले जाएगा जहां तारों के कोमल बेलबटे भी आत्मबोध के उसी दैवी गीत को गाते होंगे।

१८९५



भण्डाफोड़

गांव की सड़क पर से, सफ़ेदी-पुते उसके कच्चे घरौंदों को पार करती, ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाते लोगों की एक भीड़ गुज़र रही थी। मजमा, एक बड़ी लहर की भांति, धीमी गति से बढ़ रहा था और उसके आगे-आगे एक मरियल-सा घोड़ा सिर झुकाए चल रहा

था। जब भी वह अपना अगला पांव उठाता तो उसका सिर कुछ इस तरह डुबकी खाता मानो वह अभी मुंह के बल आगे की ओर गिर पड़ेगा और उसकी थूथनी सड़क की धूल चाटती नज़र आएगी। और जब वह अपने पिछले पांव को हरकत में लाता तो उसका पृष्ठ-भाग इस तरह डगमगाता मानो वह अभी ढेर हो जाएगा।

एक युवा स्त्री, जिसने अभी अपनी बीसी भी मुश्किल से ही पार की होगी, बहुत छोटी और मादरज़ात नंगी, – कलाइयां गाड़ी के डैशबोर्ड से – गाड़ीवान के सामने वाले तख़्ते से – बंधी हुई। वह बगल के रुख़ चल रही थी, उसके घुटने कांप रहे थे जैसे अभी जवाब दे जाएंगे, काले और अस्त-व्यस्त बालों से घिरा उसका सिर ऊपर की ओर उचका था और उसके फटे हुए दीदे सूनी अमानवीय दृष्टि से शून्य में ताक रहे थे। उसका बदन काली और नीली धारियों तथा निशानों से भरा था। कुमारियों ऐसी दृढ़ उसकी बाईं छाती में गहरा घाव था और उसमें से ख़ून की धार निकल रही थी। ख़ून की एक लाल लकीर उसके पेट के उपर से होती हुई नीचे बाईं टांग के घुटने तक खिंची थी और उसकी नाज़ुक टांगों की पिंडलियों पर धूल के थक्के चढ़े थे। ऐसा लगता था जैसे स्त्री के शरीर से खाल की एक लम्बी डोरी उतार ली गई हो। और उसके पेट को, इसमें ज़रा भी शक नहीं, मूंगरी से पीटा या बूटदार एड़ियों से रौंदा गया था, – वह इतनी बुरी तरह से सूजा और बदरंग बना हुआ था।

स्त्री के लिए भूरी धूल में एक डग के बाद दूसरा डग घसीटना मुश्किल हो रहा था। उसका समूचा बदन ऐंठ रहा था और यह देखकर अचरज हो रहा था कि उसकी टांगें, जो, उसके बदन की भांति, चोट के निशानों-खरोंचों से भरी थीं, किस प्रकार उसका

बोझ संभाले थीं, किस प्रकार वह अपने आपको गिरने से और कुहनियों के बल घिसटने से रोके थी।

लम्बे क़द का एक देहाती गाड़ी में खड़ा था। वह सफ़ेद रंग का रूसी ब्लाउज़ और काले रंग की अस्त्राख़ानी टोपी पहने था जिसके नीचे से निकलकर चटक रंग के लाल बालों का एक गुच्छा उसके माथे पर झूल रहा था। एक हाथ में वह लगाम थामे था और दूसरे में एक हंटर, जिसे वह बाक़ायदा पहले घोड़े पर और फिर छोटे क़द की उस स्त्री पर झटकार रहा था जो पहले ही इतनी मार खा चुकी थी कि पहचानी तक नहीं जाती थी। आदमी की आंखें लाल अंगारा बनी थीं, प्रतिशोध की विजयी भावना उनमें चमक रही थी और उसके बाल उनमें हरी परछाइयां डाल रहे थे। उसके ब्लाउज़ की आस्तीनें ऊपर तक चढ़ी थीं और उसकी लाल रोएंदार मांसल बांहें साफ़ दिखाई दे रही थीं। उसका मुंह खुला था जिसमें सफ़ेद पैने दांतों की दो पांतें चमक रही थीं और रह-रहकर, बैठी हुई आवाज़ में, वह चिल्ला उठता था—

"ले, यह ले, कुतिया! हा-हा-हा! और ले, यह और ले!"

स्त्री और गाड़ी के पीछे लोगों की भीड़ चल रही थी—चीख़ती-चिल्लाती, हंसती, आवाज़ें कसती, सीटी बजाती, कोचती-उकसाती, खिल्लियां उड़ाती। बच्चे इधर से उधर लपक-झपक रहे थे। कभी-कभी उनमें से कोई एक दौड़कर आगे निकल जाता और स्त्री के मुंह पर गंदे शब्दों की बौछाड़ करता। तब भीड़ ठहाका मारकर हंस पड़ती और उसकी हंसी की आवाज़ में हंटर के हवा में सनसनाने की पतली आवाज़ डूब जाती। भीड़ में स्त्रियों के चेहरे असाधारण उछाह से लहरा रहे थे और उनकी आंखें प्रसन्नता से चमक रही थीं।

पुरुष गाड़ी में खड़े देहाती को लक्ष्य कर निर्लज्जता का बघार लगा रहे थे और वह, भट्टे-सा पूरा मुंह बाए, उनकी ओर मुड़-मुड़कर हंस रहा था। सहसा हंटर सनसनाकर स्त्री के शरीर से टकराया। लम्बा और पतला, वह उसके कंधों का चक्कर काटता और बांहों के नीचे उसकी चमड़ी में धंस जाता। इसपर देहाती उसे अचानक एक झटका देता और स्त्री, एक तेज़ चीख मारकर, कमर के बल धूल में गिर जाती। भीड़ के लोग उछलकर आगे बढ़ते, झुक करके उसके इर्द-गिर्द एक दीवार-सी खड़ी कर देते और वह आंखों से ओझल हो जाती।

घोड़ा ठिठककर खड़ा हो गया, लेकिन क्षण भर बाद वह फिर डगमगाता-सा लुढ़क चलता और लांछित स्त्री उसके पीछे-पीछे घिसटने लगती। घोड़ा रह-रहकर अपने कोढ़ियल सिर को इस तरह हिलाता मानो कह रहा हो—

"कितनी बुरी बीतती है उस घोड़े के साथ, जिसे लोग अपने चाहे जैसे घिनौने काम में जोत लेते हैं।"

और आकाश—दक्खिनी आकाश—एकदम स्वच्छ और साफ़ था। बादलों का कहीं ज़रा-सा भी चिन्ह नज़र नहीं आ रहा था और सूरज जी खोलकर धरती पर अपनी गर्म किरनों की बौछाड़ कर रहा था।

प्रतिशोधपूर्ण न्याय का यह चित्र, जो मैंने यहां दिया है, मेरी कल्पना की देन नहीं है। नहीं, दुर्भाग्यवश यह कोई मनगढ़ंत चीज़ नहीं है। इसे 'भण्डाफोड़' कहा जाता है और इसके द्वारा पति विश्वासघात करनेवाली अपनी कुलटा स्त्रियों को दंडित करते हैं। यह जीवन से लिया गया चित्र है। यह उन प्रथाओं में से एक है जो हमारे यहां प्रचलित हैं और इसे १५ जुलाई १८९१ के दिन, निकोलायेवस्की ज़िला में ख़ेरसोन गुबर्निया के कान्दीबोवका गाव में, ख़ुद अपनी आंखों से मैंने देखा था।

वोल्गा प्रदेश में, जहां का मैं रहनेवाला हूं, यह मैंने सुना था कि अपने पतियों के साथ विश्वासघात करनेवाली पत्नियों के कोलतार पोता जाता था और उनके पंख चिपका दिए जाते थे। यह भी मैं जानता था कि कुछ अधिक सूझ-बूझ वाले पति और ससुर और भी आगे बढ़कर विश्वासघात करनेवाली अपनी पत्नियों पर गर्मियों के दिनों में शीरा पोतकर उन्हें पेड़ों से बांध देते थे और कीड़े-मकोड़े काट-काटकर उनके बदन में घाव कर डालते थे। कभी-कभी ऐसी स्त्रियों के हाथ-पांव बांधकर उन्हें चींटियों-दीमकों की बांबी में डाल दिया जाता था।

यह सब मैंने सुना ही था। अब उसे ख़ुद अपनी आंखों से देखकर सिद्ध हो गया कि जाहिल और हृदयहीन लोगों के बीच – उन लोगों के बीच, जिन्हें 'कुत्ता कुत्ते को खाए' वाली जीवन-प्रणाली ने लालच और ईर्ष्या से धधकते जंगली जानवरों में परिवर्तित कर दिया था – इस तरह की चीज़ों का होना सचमुच में सम्भव है!

१८६५



वह चुहिया-सी लड़की

"नन्ही मुन्नी, एकदम चुहिया-सी लड़की थी वह, बटोही!"

हर बार, जब भी इस जुमले की मुझे याद आती है, काल के आवरण को बेध आयु से जर्जर दो क्षीण आंखें मेरी ओर मुसकरा उठती हैं—प्रेम और करुणा में पगी मृदु और कोमल मुसकान से मुसकरा

उठती हैं – और मेरे कानों में दो कड़क आवाज़ें गूंजने लगती हैं जो एक स्वर से मेरे दिल में यह बैठाने का प्रयत्न कर रही थीं कि बहुत ही "नन्ही मुन्नी, एकदम चुहिया-सी लड़की थी वह!"

और इस याद से मेरा हृदय ख़ुशी और आशा से भर जाता है। यह उन दस महीनों की सबसे अच्छी यादगार है जो मैंने अपने इस देश की – इतने व्यापक और शोक में डूबे अपने देश की – ऐंड़ी-बेंड़ी सड़कों को नापते हुए बिताए थे।

* * *

ज़ादोन्स्क से वोरोनेज के पथ पर दो यात्रियों से मेरी मुठभेड़ हो गई – एक वृद्ध पुरुष और एक वृद्ध स्त्री। दोनों के दोनों उम्र में सौ से भी ऊपर मालूम होते थे, – बहुत ही धीमे और अटक-अटककर वे चल रहे थे और सड़क की झुलसा देनेवाली धूल में बहुत ही कष्ट के साथ उनके पांव उठ रहे थे। उनके पहनावे और उनके चेहरों से कुछ ऐसा पकड़ में न आनेवाला भाव झलकता था मानो वे बहुत दूर से – चिरकाल से – इसी प्रकार चलते आ रहे हों।

"परमात्मा ही पार लगानेवाला है। तोबोलस्काया गुबर्निया* से यहां तक सारा रास्ता हम पैदल ही पार करते आ रहे हैं," मेरी धारणा को पुष्ट करते हुए वृद्ध ने कहा।

वृद्धा ने, चलते-चलते, सहृदय आंखों से – उन आंखों से, जिनमें कभी नीला सागर लहराता था, – मेरी ओर देखा और एक गहरी उसांस छोड़ते तथा करुण भाव से मुसकराते कहा –

---

*साइबेरिया का एक दूरस्थ प्रदेश, जहां ज़ारशाही सरकार राजनीतिक कैदियों को जलावतन करती थी। – सम्पा०

"लीसाया गांव में 'क' फ़ैक्टरी से हम दोनों – मैं और मेरे बूढ़े भरतार – चले आ रहे हैं।"

"तब तो बहुत थक गए होगे?"

"नहीं, बहुत नहीं। अभी भी चलने की ताक़त है। किसी तरह रेंगते हुए निकल जाएंगे। परमात्मा सब पार लगा देगा।"

"क्या तुम लोगों ने कोई मानता मानी थी या यों ही बुढ़ापे में तीर्थ-यात्रा के लिए निकल पड़े हो?"

"हमने मानता मानी थी, बटोही! हमने किएव और सोलोवकी मठों के सन्तों की मानता मानी थी, – मानता!" वृद्ध ने दोहराते हुए कहा और फिर अपनी संगिनी की ओर मुड़ते हुए बोला – "आओ, मालकिन, यहां बैठकर अपने हाड़ों को ज़रा सुस्ता लें।"

"ठीक है, कुछ सुस्ता लें," वृद्धा ने कहा।

और हम, सड़क के किनारे, एक पुराने विल्लो वृक्ष की छाया में बैठ गए। दिन गरम था, आकाश में बादलों का कहीं पता नहीं था, हमारे सामने और पीछे की ओर सड़क बल खाती हुई फैली थी और दूर गर्मी धुंधलके में ओझल हो गई थी। यह एक शांत और निराली जगह थी। सड़क के दोनों ओर झुलसे हुए-से राई के खेत फैले थे।

"धरती को उन्होंने इतना दूहा है कि उसकी कोख सूख गई है," कुछ डंठलों को मेरी ओर बढ़ाते हुए, जिन्हें उसने तोड़ लिया था, वृद्ध ने कहा।

धरती और उसकी दया पर निर्भर रहनेवाले किसानों के बारे में हम बातें करते रहे। वृद्धा हमारी बातों को सुन रही थी और रह-रहकर गहरी उसांस छोड़ती जाती थी। कभी-कभी अपनी ज्ञान और बुद्धिमत्तापूर्ण बातों से योग भी देती जाती थी।

"अगर वह जीवित होती तो ऐसे खेत में अपने नन्हे हाड़-गोड़ एक करके रख देती," सहसा वृद्धा ने कहा,—राई की कुंठित चुरमुर पांतों और खेत के उन गंजे स्थलों पर एक नज़र डालते हुए, जहां वह ज़रा भी नहीं उगी थी।

"अरे हां, वह अपने आपको बिल्कुल खपा देती," वृद्ध ने भी सिर हिलाते हुए कहा।

और वे चुप हो गए।

"यह किसकी बात कर रहे हो?" मैंने पूछा।

वृद्ध भोलेपन से मुसकराया। फिर बोला—

"एक नन्ही लड़की की।"

"वह हमारे घर में छोड़ दी गई थी। यों थी वह कुलीन घराने की," वृद्धा ने उसांस छोड़ी।

और तब दोनों ने मेरी ओर देखा और जैसे पहले से तय किए हों, धीरे-धीरे और आकुल स्वर में, एक साथ कह उठे—

"ओह, बहुत ही नन्ही मुन्नी, एकदम चुहिया-सी लड़की थी वह!"

कुछ इतने विचित्र ढंग से उन्होंने यह कहा था कि इसने सीधे मेरे हृदय में घर कर लिया। इन शब्दों की ध्वनि लड़खड़ाकर शान्त होती हुई अन्त-समय के प्रार्थना-पाठ की भांति मालूम होती थी। इसके बाद वृद्ध पुरुष और वृद्ध स्त्री ने सहसा इतनी तेज़ी से बोलना शुरू किया कि वे बहुत कुछ एक दूसरे के मुंह से शब्दों को छीनते-लपकते मालूम होते थे और मैं, जो उनके बीच में बैठा था, अपना सिर इधर से उधर और उधर से इधर घुमा रहा था।

"फ़ौजी पुलिस का एक आदमी उसे हमारे गांव में लाया और उसे पंचों को सौंपते हुए बोला—'इसे ठिकाने लगा दो'"

"दूसरे शब्दों में, इसे किसी परिवार में रख दो," वृद्धा ने स्पष्ट किया।

"और उन्होंने उसे हमारे पास भेज दिया।"

"ओह, अगर तुम उसे देख पाते—एकदम लाल और जाड़े से कांपती।"

"उसे देखकर रोना आता था।"

"'भगवान की माया, जो ऐसी लड़की ऐसी जगह में आई है,' हमने सोचा।"

"लेकिन किस कारण? किस अपराध की वजह से?"

"इन्हीं इलाक़ों से वह आई थी।"

"यानी पछांह से।"

"आते ही सबसे पहले हमने तन्दूर की छत पर उसका आसन लगा दिया।"

"हमारा तन्दूर खूब बड़ा और खूब गरम रहता है," वृद्धा ने उसांस छोड़ी।

"और फिर उसे खाने को दिया।"

"ओह, उसका चेहरा हंसी से कितना खिल उठा था।"

"और उसकी काली-काली आंखें थीं—चमकदार, चुहिया जैसी!"

"वह खुद भी तो चुहिया जैसी ही थी—गोल-मटोल और चिकनी।"

"और जब उसमें कुछ जान आई तो आंसू छलकाकर बोली—'धन्यवाद, बहुत बहुत धन्यवाद!'"

"और फिर किस तरह उसने सारे घर की सफ़ाई की!"

"ओह, हर चीज़ को सिर के बल खड़ा कर दिया!" अपनी आंखों को सिकोड़ते हुए वृद्ध प्रसन्नता से हंसा।

"हमारी झोंपड़ी के इर्द-गिर्द गेंद की भांति उछलती-फिरती—

यहां, वहां, हर जगह, — कभी इस चीज़ को संवारती, कभी उस चीज़ को ठीक से लगाती। 'ओह यह नांद,' वह बोली – 'इसे बाहर सुअर-घर में जाना चाहिए।' और सुअरों को नहलाने-धुलाने की नांद खुद उठाकर ले चली और पांव जो फिसला तो धम्म! बांहें कंधों तक भीतर! बाप रे बाप, क्या दृश्य था वह भी!"

और दोनों इतने हंसे कि खांसते-खांसते आंखों में आंसू छलक आए। तब, आंसुओं को पोंछते हुए, उनका हंसना रुका।

"और सुअरों की बात..."

"ओह, सीधे उनकी थूथनी पर चुम्बन जड़ती।"

"'सुअरों को भी बाहर रखो,' वह बोली – 'घर के भीतर उनके लिए जगह नहीं है।'"

"पूरे सात दिन तक वह सब कुछ ठीक-ठाक करती रही।"

"हम दोनों को भी उसने खूब जोता..."

"हंसती, चिल्लाती और अपने छोटे-छोटे पांव पटकती..."

"और फिर, एकाएक, शांत और गम्भीर..."

"जैसे उसकी जान निकलनेवाली हो..."

"आंसुओं की धार बहाती और चीख़ती जैसे उसका हृदय ही टूट जाएगा। मैं उसके इर्द-गिर्द मंडराती कि हाय राम, यह क्या हो गया। बड़ी अजीब बात थी। और मैं खुद भी रोने लगती, — यह जाने बिना ही कि क्यों रो रही हूं। और मैं अपनी बांहें उसके गले में डाल देती और इस तरह दोनों रो-रोकर अपनी आंखें सुजा लेतीं..."

"और यह स्वाभाविक ही था। आख़िर वह अभी एक छोटी-सी लड़की ही तो थी..."

"और हम दोनों एकाकी थे। हमारा एक लड़का फ़ौज में चला गया था और दूसरा सोने की खानों में..."

"और वह केवल सत्रह साल की थी..."

"सत्रह! उसे कोई देखता तो बारह से अधिक कभी न बताता!"

"बस-बस, इतनी हद न करो। बारह बताकर तुमने हद कर दी!"

"तो तुम क्या उसे ज़्यादा की कहोगी? बोलो, कहो न?"

"कहूंगी क्यों नहीं? वह एक छोटा पका हुआ फल थी। और जहां तक उसके इतने छोटा होने का सम्बन्ध है, सो इसके लिए क्या उसे दोष दिया जा सकता है?"

"और मैं क्या इसे उसका दोष बता रहा हूं? टट-टट!"

"नहीं, तुम इसे दोष नहीं बताते," वृद्धा ने भले स्वभाव से स्वीकार किया।

झगड़ा ख़त्म होने पर दोनों चुप हो गए।

"और उसके बाद क्या हुआ?" मैंने पूछा।

"उसके बाद? उसके बाद कुछ नहीं हुआ, बटोही," वृद्ध ने उसांस छोड़ी।

"वह मर गई। अग्नि-ज्वर से मर गई।" और वृद्धा के झुर्रियोंदार गालों के ऊपर से दो आंसू ढुरक आए।

"वह मर गई, बटोही। हमारे साथ वह केवल दो साल रही। गांव में सभी उससे परिचित थे। गांव के ही क्यों? और भी बहुतेरे उसे जानते थे। वह पढ़ी-लिखी थी और पंचों के साथ परिषद में बैठती थी। कभी-कभी वह तेज़ बोलती, लेकिन कोई बुरा न मानता। वह बहुत चतुर थी।"

"आह, असल चीज़ तो उसका हृदय था। उसका हृदय फ़रिश्ते का हृदय था। उसके हृदय में हमारी सारी मुसीबतों के लिए जगह

थी और वह उन सबको खुद अपने कंधों पर ओट लेती थी। वह पूरी मेम थी, जैसी कि नगर में होती हैं, — मखमली जाकेट, फ़ीते और खड़ी एड़ी के जूते, — और वह किताबें आदि सभी कुछ पढ़ती थी, लेकिन फिर भी हम किसानों को वह कितना समझती थी। हमारी हर बात से वह वाक़िफ़ थी, कुछ भी ऐसा न था जो वह न जानती हो। 'यह सब तुमने कहां सीखा, मुनिया?' 'अरे, यह सब किताबों में लिखा है,' वह जवाब देती। सुना तुमने? लेकिन यह सब ज़हमत उसने क्यों उठाई! वह शादी करती, मेम साहब बनकर रहती। बजाय इसके उन्होंने उसे यहां भेज दिया, और... वह मर गई।"

"जब वह सबको सीख देती तो बड़ी हंसी आती। छोटी इतनी कि बिल्कुल चुहिया, और भारी-भरकम मुंह बनाकर हरेक को सीख देती — 'तुम्हें यह नहीं करना चाहिए, तुम्हें वह नहीं करना चाहिए'..."

"ओह, उसके पास विद्या थी। इसमें कोई सन्देह नहीं। और हर चीज़ के बारे में, हर व्यक्ति के बारे में, कितनी परेशान वह होती थी। अगर कोई बीमार पड़ता, वह तुरत उसे ठीक करने पहुंच जाती, अगर कोई..."

"जब वह मरी तो उसका मस्तिष्क भटक गया। रह-रहकर, बड़ी आकुलता के साथ, वह यही एक रट लगाए रही — 'मामा, मामा!' हमने पादरी को बुला भेजा। सोचा, शायद वह उसे लौटा लाए। लेकिन वह क्या रुकनेवाली थी? वह चली गई।"

वृद्धा के गालों पर से आंसू ढुरक चले और एक बहुत ही रमणीय भाव मुझपर छा गया, — मुझे लगा जैसे ये आंसू मेरे लिए बहाए जा रहे हों।

"सारा गांव हमारे घर पर जमा हो गया। हमारा आंगन उनसे भरा था, सड़क पर उनकी भीड़ जमा थी। और वे कह रहे थे—'अरे, यह क्या कहते हो? क्या वह सचमुच नहीं रही?'—इतना अधिक चाहते थे वे उसे..."

"ओह, ऐसी लड़की भला और कहां मिलेगी?" वृद्ध ने आह भरी।

"जब वह दफ़नाई गई, सारा गांव मौजूद था। थ्रोवटाइड के समय तक उसके चालीस दिन पूरे हो गए और हमने सोचा—'उसकी आत्मा की शांति के लिए क्यों न एक तीर्थ-यात्रा कर ली जाए?' और पड़ोसियों ने भी कहा कि सच, क्यों न एक तीर्थ-यात्रा कर ली जाए। 'जाओ,' वे बोले—'तुम आज़ाद हो। काम-काज का कोई बन्धन भी तुम्हें नहीं बांधे है। शायद तुम्हारी प्रार्थनाओं का उसे लाभ पहुंचे।' सो हम चल दिये।"

"तो उसके लिए ही तुम इस यात्रा पर चल पड़े हो?" मैंने पूछा।

"उसके लिए, उस फ़रिश्ते के लिए। हमारा प्यारा प्रभु—यह जानते हुए भी कि पापों का बोझ हमपर भी लादा—हमारी प्रार्थना सुने और उसे गुनाहों से नजात दे। लेण्ट के पहले सप्ताह में हम चल पड़े, मंगलवार था उस दिन..."

"उसके लिए?" मैंने फिर दोहराया।

"हां, उसके ही लिए, बटोही," वृद्ध ने कहा।

मैं बार-बार उनके मुंह से सुनना चाहता था कि ठीक उस लड़की की आत्मा की शांति के लिए ही वे हजारों मील की यह यात्रा कर रहे हैं। यह एक इतनी अद्‌भुत बात थी कि उसपर विश्वास नहीं होता था। केवल उसके लिए—काली आंखों वाली उस चुहिया-सी लड़की के लिए—उन्होंने यह अद्‌भुत काम किया,—अपने हृदय को

इस बात का यक़ीन दिलाने के लिए मैं इतना चिन्तित हो उठा कि मैंने अन्य कितने ही प्रकार के सम्भव कारणों की ओर इशारा किया। लेकिन, अत्यन्त भारी सन्तोष के साथ, उन्होंने मुझे विश्वास करा दिया कि सिवा इसके अन्य कोई कारण उनकी यात्रा के पीछे नहीं था।

"और यह समूचा रास्ता क्या सचमुच तुम लोगों ने पैदल ही तय किया है ?"

"नहीं, भाई, बीच-बीच में हमने सवारी का भी सहारा लिया। एक दिन सवारी और एक दिन पैदल। ऐसे ही बढ़ रहे हैं—धीरे-धीरे, अपनी काया को घसीटते। उम्र इतनी अधिक है कि सारा रास्ता पैदल काटते नहीं बनता। भगवान् साक्षी है कि हम कितने बूढ़े हो गए हैं। अगर हम उसके पांवों से चलते होते तो फिर क्या कहना था!"

और वे एक बार फिर उसके बारे में बात करने की उत्सुकता में एक दूसरे से होड़ लेने लगे,—उस युवती के बारे में, जिसे भाग्य ने घर और मां से इतनी दूर और इतने अनजान साहिल पर फेंक दिया था—'अग्नि ज्वर' से मरने के लिए!

दो घंटे बाद हम उठ खड़े हुए और अपने रास्ते पर चल दिए। मेरे मस्तिष्क में इस लड़की के सिवा अन्य किसी चीज़ के बारे में विचार नहीं उठ रहे थे, लेकिन भरसक कोशिश करने पर भी मैं उसका चित्र अपनी कल्पना में मूर्त न कर सका। अपनी कल्पना की इस कमज़ोरी का अनुभव कर मेरा हृदय कचोट उठा।

किसी भली और सुन्दर चीज़ की कल्पना करना एक रूसी के लिए सदा कठिन होता है . . .

शीघ्र ही उक्रइन का एक निवासी अपनी गाड़ी को हांकता पीछे से आ निकला। उदास नज़र से उसने हमारी ओर देखा और दुआ-सलाम के जवाब में अपनी टोपी उठाता हुआ वृद्ध दम्पति से बोला—

"आओ, गाड़ी में आ जाओ। अगले गांव तक चले चलो।"

वे गाड़ी में चढ़ गए और धूल के एक बादल में विलीन हो गए। और मैंने इस बादल के बीच आगे डग बढ़ाया। मेरी आंखें उस गाड़ी पर जमी थीं जो उस वृद्ध पुरुष और उस वृद्ध स्त्री को ले जा रही थी जो एक चुहिया-सी लड़की की आत्मा की शांति के लिए, जिसने उनका मन हर लिया था, हज़ारों मील की यात्रा पर निकल पड़े थे।

१८९५



कोलुशा

क़ब्रिस्तान का वह कोना, जहां भिखारी दफ़नाए जाते हैं। पत्तों से छितरे, बारिश से बहे और आंधियों से जर्जर क़ब्रों के ढूहों के बीच, दो मरियल-से बर्च वृक्षों के जालीदार साये में, जिंघम के

फटे पुराने कपड़े पहने और सिर पर काली शाल डाले एक स्त्री एक क़ब्र के पास बैठी थी।

सफ़ेद पड़ चले बालों की एक लट उसके मुरझाए हुए गाल के ऊपर झूल रही थी, उसके महीन होंठ कसकर भिंचे थे और उनके छोर उसके मुंह पर उदास रेखाएं खींचते नीचे की ओर झुके थे, और उसकी आंखों की पलकों में भी एक ऐसा झुकाव मौजूद था जो अधिक रोने और काटे न कटनेवाली लम्बी रातों में जागने से पदा हो जाता है।

वह बिना हिले-डुले बैठी थी – उस समय, जब कि मैं कुछ दूर खड़ा उसे देख रहा था, – न ही उसने उस समय कुछ हरकत की जब मैं और अधिक निकट खिसक आया। उसने केवल अपनी बड़ी-बड़ी चमकविहीन आंखों को उठाकर मेरी आंखों में देखा और फिर उन्हें नीचे गिरा लिया। उत्सुकता, परेशानी या अन्य कोई भाव, जो कि मुझे निकट पहुंचता देख उसमें पैदा हो सकता था, नाम मात्र के लिए भी उसने प्रकट नहीं किया।

मैंने अभिवादन में एकाध शब्द कहा और पूछा कि यहां कौन सोया है।

"मेरा बेटा," उसने भावशून्य उदासीनता से जवाब दिया।

"बड़ा था?"

"बारह बरस का।"

"कब मरा?"

"चार साल पहले।"

उसने एक गहरी सांस ली और बाहर छिटक आई लट को फिर शाल के नीचे खोंस लिया। दिन गरम था। सूरज बेरहमी के साथ मुर्दों के इस नगर पर आग बरसा रहा था। क़ब्रों पर उगी इक्की-

दुक्की घास तपन और धूल से पीली पड़ गई थी। और धूल-धूसरित रूखे-सूखे पेड़, जो सलीबों के बीच उदास भाव से खड़े थे, इस हद तक निश्चल थे मानो वे भी मुर्दा बन गए हों।

"वह कैसे मरा ?" लड़के की क़ब्र की ओर गरदन हिलाते हुए मैंने पूछा।

"घोड़ों से कुचलकर," उसने संक्षेप में जवाब दिया और अपना झुर्रियां-पड़ा हाथ फैलाकर लड़के की क़ब्र सहलाने लगी।

"यह दुर्घटना कैसे घटी ?"

मैं जानता था कि इस तरह खोदबीन करना शालीनता के ख़िलाफ़ है, लेकिन इस स्त्री की निस्संगता ने गहरे कौतुक और चिढ़ का भाव मेरे हृदय में जगा दिया था। कुछ ऐसी समझ में न आनेवाली सनक ने मुझे घेरा कि मैं उसकी आंखों में आंसू देखने के लिए ललक उठा। उसकी उदासीनता में कुछ था, जो अप्राकृतिक था, और साथ ही उसमें बनावट का भी कोई चिन्ह नहीं दिखाई देता था।

मेरा सवाल सुनकर उसने एक बार फिर अपनी आंखें उठाकर मेरी आंखों में देखा। और जब वह सिर से पांव तक मुझे अपनी नज़रों से परख चुकी तो उसने एक हल्की-सी सांस ली और अटूट उदासी में डूबी आवाज़ में अपनी कहानी सुनानी शुरू की।

"घटना इस प्रकार घटी। उसका पिता गबन के अपराध में डेढ़ साल के लिए जेल में बन्द हो गया। इस काल में हमने अपनी सारी जमा पूंजी खा डाली। यों हमारी वह जमा पूंजी कुछ अधिक थी भी नहीं। अपने आदमी के जेल से छूटने से पहले ईन्धन की जगह मैं हार्स-रेडिश के डंठल जलाती थी। जान-पहचान के एक माली ने ख़राब हुए हार्स-रेडिश का गाड़ी भर बोझ मेरे घर भिजवा दिया था।

मैंने उसे सुखा लिया और सूखी गोबर-लीद के साथ मिलाकर उसे जलाने लगी। उससे भयानक धुआं निकलता और खाने का ज़ायक़ा ख़राब हो जाता। कोलुशा स्कूल जाता था। वह बहुत ही तेज़ और किफ़ायतशार लड़का था। जब वह स्कूल से घर लौटता तो हमेशा एकाध कुन्दा या लकड़ियां—जो रास्ते में पड़ी मिलतीं—उठा लाता। वसन्त के दिन थे तब। बर्फ़ पिघल रही थी। और कोलुशा के पास कपड़े के जूतों के सिवा पांवों में पहनने के लिए और कुछ नहीं था। जब वह उन्हें उतारता तो उसके पांव लाल रंग की भांति लाल निकलते। तभी उसके पिता को उन्होंने जेल से छोड़ा और गाड़ी में बैठाकर उसे घर लाए। जेल में उसे लक़वा मार गया था। वह वहां पड़ा मेरी ओर देखता रहा। उसके चेहरे पर एक कुटिल-सी मुसकान खेल रही थी। मैं भी उसकी ओर देख रही थी और मन ही मन सोच रही थी—'तुमने ही हमारा यह हाल किया है,—और तुम्हारा यह दोज़ख़ मैं अब कहां से भरूंगी? एक ही काम अब मैं तुम्हारे साथ कर सकती हूं। वह यह कि तुम्हें उठाकर किसी जोहड़ में पटक दूं।' लेकिन कोलुशा ने जब उसे देखा तो चीख़ उठा,—उसका चेहरा धुली हुई चादर की भांति सफ़ेद पड़ गया और उसके गालों पर से आंसू ढुरकने लगे। 'यह इन्हें क्या हो गया है, मां?' उसने पूछा। 'यह अपने दिन पूरे कर चुका,' मैंने कहा। और इसके बाद हालत बद से बदतर होती गई। काम करते-करते मेरे हाथ टूट जाते, लेकिन पूरा सिर मारने पर भी बीस कोपेक से ज़्यादा न मिलते, सो भी तब, जब भाग्य से दिन अच्छे होते। मौत से भी बुरी हालत थी, अकसर मन में आता कि अपने इस जीवन का अन्त कर दूं। एक बार, जब हालत एकदम असह्य हो उठी, तो मैंने कहा—'मैं तो तंग आ गई इस मनहूस जीवन से। अच्छा हो अगर मैं मर जाऊं—या फिर तुम दोनों

में से कोई एक ख़त्म हो जाए!' – यह कोलुशा और उसके पिता की तरफ़ इशारा था। उसका पिता केवल गरदन हिलाकर रह गया, मानो कह रहा हो – 'झिड़कती क्यों हो? ज़रा धीरज रखो, मेरे दिन वैसे ही क़रीब आ लगे हैं।' लेकिन कोलुशा ने देर तक मेरी ओर देखा, इसके बाद वह मुड़ा और घर से बाहर चला गया। उसके जाते ही अपने शब्दों पर मुझे बड़ा पछतावा हुआ। लेकिन अब पछताने से क्या होता था? तीर हाथ से निकल चुका था। एक घंटा भी न बीता होगा कि एक पुलिसमैन गाड़ी में बैठा हुआ आया। 'क्या तुम्हीं शिशेनीना साहिबा हो?' उसने कहा। मेरा हृदय बैठने लगा। 'तुम्हें अस्पताल में बुलाया है,' वह बोला – 'तुम्हारा लड़का सौदागर आनोखिन के घोड़ों से कुचल गया है।' गाड़ी में बैठ मैं सीधे अस्पताल के लिए चल दी। ऐसा मालूम होता था जैसे गाड़ी की गद्दी पर किसीने गर्म कोयले बिछा दिए हों। और मैं रह-रहकर अपने को कोंच रही थी – 'अभागी औरत, तूने यह क्या किया?'

"आख़िर हम अस्पताल पहुंचे। कोलुशा पलंग पर पड़ा पट्टियों का बंडल मालूम होता था। वह मेरी ओर मुसकराया, – और उसके गालों पर आंसू ढुरक आए... फिर फुसफुसाकर बोला – 'मुझे माफ़ करना, मां। पैसा पुलिसमैन के पास है।' 'पैसा ... कैसा पैसा? यह तुम क्या कह रहे हो?' मैंने पूछा। 'वही, जो लोगों ने मुझे सड़क पर दिया था और आनोखिन ने भी,' उसने कहा। 'किसलिए?' मैंने पूछा। 'इसलिए,' उसने कहा और एक हल्की-सी कराह उसके मुंह से निकल गई। उसकी आंखें फटकर ख़ूब बड़ी हो गईं, – कटोरा जितनी बड़ी। 'कोलुशा,' मैंने कहा – 'यह कैसे हुआ? क्या तुम घोड़ों को आता हुआ नहीं देख सके?' और तब वह बोला, बहुत ही साफ़

और सीधे-सीधे,—'मैंने उन्हें देखा था, मां, लेकिन मैं जान-बूझकर रास्ते में से नहीं हटा। मैंने सोचा कि अगर मैं कुचला गया तो लोग मुझे पैसा देंगे। और उन्होंने दिया।' ठीक यही शब्द उसने कहे। और तब मेरी आंखें खुलीं और मैं समझी कि उसने—मेरे फ़रिश्ते ने—क्या कुछ कर डाला है। लेकिन मौक़ा चूक गया था। अगली सुबह वह मर गया। उसका मस्तिष्क अन्त तक साफ़ था और वह बराबर कहता रहा – 'दद्दा के लिए यह खरीदना, वह खरीदना और अपने लिए भी कुछ ले लेना।' मानो धन का अम्बार लगा हो। वस्तुतः वे कुल सैंतालीस रूबल थे। मैं सौदागर आनोखिन के पास पहुंची, लेकिन उसने मुझे केवल पांच रूबल दिए, सो भी भुनभुनाते हुए। कहने लगा—'लड़का खुद जान-बूझकर घोड़ों के नीचे आ गया। पूरा बाज़ार इसका साक्षी है। सो तुम क्यों रोज़ आ-आकर मेरी जान खाती हो? मैं कुछ नहीं दूंगा।' मैं फिर कभी उसके पास नहीं गई। इस प्रकार वह घटना घटी,—समझे युवक!"

उसने बोलना बन्द कर दिया और पहले की भांति अब फिर सर्द तथा निस्संग हो गई।

क़ब्रिस्तान शान्त और वीरान था। सलीब, मरियल-से पेड़, मिट्टी के ढूह और क़ब्र के पास इस शोकपूर्ण मुद्रा में बैठी यह मनोविकारशून्य स्त्री – इन सब चीज़ों ने मुझे मृत्यु और मानवीय दुख के बारे में सोचने के लिए बाध्य कर दिया।

लेकिन आकाश में बादलों का एक धब्बा तक नहीं था और वह धरती पर झुलसा देनेवाली आग बरसा रहा था।

मैंने अपनी जेब से कुछ सिक्के निकाले और उन्हें इस स्त्री की ओर बढ़ा दिया जो, दुर्भाग्य की मारी, अभी भी जी रही थी।

उसने सिर हिलाया और विचित्र धीमेपन के साथ बोली –

"कष्ट न करो, युवक। आज के लिए मेरे पास काफ़ी है। आगे के लिए भी मुझे अधिक नहीं चाहिए। मैं एकदम अकेली हूं। इस दुनिया में एकदम अकेली!"

उसने एक गहरी सांस ली और अपने पतले होंठ एक बार फिर उसी शोक से बल-खाई रेखा में भींच लिए।

१८९५



नीली आंखों वाली स्त्री

१

सहायक पुलिस-अफ़सर पोदशिबलो उक्रइन का निवासी था – मोटी और उदास प्रकृति। दफ़्तर में बैठा वह अपनी मूंछों में बल डाल रहा था और उदास मुंह बनाए खिड़की से बाहर पुलिस-स्टेशन के हाते में ताक रहा था। दफ़्तर अंधेरा, दमघोट और बहुत ही निस्तब्ध था।

घंटे के पेंडुलम की टिकटिक के सिवा—जो एक सुर से घड़ियां गिन रहा था—और कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। बाहर अहाता खूब उजला था और बरबस हृदय को खींचता था। उसके बीच में उगे बर्च के तीन वृक्ष भरपूर छांह किए थे और इस छांह में पुलिसमैन कुखारिन, जो अभी अपनी ड्यूटी पूरी करके लौटा था, घास के एक ढेर पर—जो आग बुझानेवाले घोड़ों के लिए वहां जमा थी—पड़ा सो रहा था। यही वह दृश्य था जिसने सहायक पुलिस-अफ़सर पोदशिबलो का पारा गरम कर दिया था। उसका मातहत सो सकता था जब कि उसे—अभागे चीफ़ को—इस दड़बे में बैठना और दमघोट हवा में सांस लेना पड़ रहा था। पत्थर की दीवारें गंध छोड़ रही थीं। उसने कल्पना की—कितना आनन्द आता अगर वह वहां, बर्च वृक्षों की छाया में भीनी गंध वाली घास के उस ढेर पर, सो पाता। लेकिन इसका समय कहां था? फिर उसका पद भी इसकी इजाज़त नहीं देता था। सो, सोचते-सोचते, उसने अपने बदन को ताना, जमुहाई ली और पहले से और भी अधिक खीज उठा। उसके हृदय में पुलिसमैन कुखारिन को जगाने की इच्छा इतने ज़ोरों से उभरी कि दबाए न दबी।

"एइयू, कुखारिन! ऐ सुअर, कुखारिन!" वह गरजा।

उसके पीछे का दरवाज़ा खुला और किसीने भीतर पांव रखा। पोदशिबलो, पहले की भांति, खिड़की से बाहर देखता रहा,—न तो उसने पलटकर पीछे की ओर देखा और न ही यह जानने के लिए ज़रा-सी भी उत्सुकता प्रकट की कि कौन आया है और दरवाज़े के रास्ते में खड़ा अपने बोझ से फ़र्श के तख़्ते को चरचरा रहा है। कुखारिन पर उसके गरजने का कोई असर नहीं हुआ,—वह कसमसाया तक नहीं। वह गहरी नींद में सो रहा था। अपने हाथों का उसने तकिया लगा रखा था,—और उसकी दाढ़ी ऊपर को नोक

किए आकाश से बतिया रही थी। सहायक पुलिस-अफ़सर को लगा जैसे उसके मातहत के खर्राटे भरने की आवाज़ उसकी खिल्ली-सी उड़ा रही हो, झपकी लेने की उसकी अपनी इच्छा को उकसा रही हो और ऐसा न कर सकने पर उसे कोंच और कुरेद रही हो। इससे उसकी खीज और भी तेज़ हो गई। उसके जी में हुआ कि अभी उठकर जाए और कुखारिन की मोटी तोंद पर कसकर एक लात जड़े, फिर उसकी दाढ़ी पकड़कर खींचता हुआ उसे साये से बाहर ले आए और झुलसा देनेवाली धूप में खड़ा कर दे।

"एइयू, वहां पड़ा खर्राटे भर रहा है। सुनता नहीं!"

"हुकुम, सरकार, ड्यूटी पर अब मैं हूं," उसके पीछे से एक नर्म आवाज़ आई।

पोदशिबलो घूम गया और उस पुलिसमैन पर अपनी चौंधिया देनेवाली नज़र जमा दी जो सूनी आंखों से, दीदे फाड़े, उसकी ओर ऐसे देख रहा था कि कब हुकुम मिले जिसकी तामील में वह तुरत ज़मीन-आसमान एक कर दे।

"क्या मैंने तुम्हें बुलाया था?"

"नहीं, सरकार।"

"क्या तुम्हारी पेशी थी?" पोदशिबलो ने अपनी आवाज़ तेज़ की और अपनी कुर्सी में बल खाने लगा।

"नहीं, सरकार।"

"तब, अपनी खोपड़ी की ख़ैर चाहते हो तो यहां से फ़ौरन जहन्नुम रसीद हो जाओ!" उसका बायां हाथ किसी ऐसी चीज़ की टोह में मेज़ पर पहुंचा जिससे उसकी खोपड़ी की मरम्मत की जा सके और दाहिना हाथ मज़बूती से कुर्सी की पीठ को दबोचे था। लेकिन पुलिसमैन दरवाज़े में से चुपचाप पहले ही ग़ायब हो गया। उसका

इस तरह जाना सहायक पुलिस-अफ़सर को नहीं रुचा, उसे यह असभ्यतापूर्ण मालूम हुआ। इसके अलावा उसके लिए अपनी खीज उतारना भी बेहद ज़रूरी था जिसे दफ़्तर की ऊमस, काम के बोझ, सोते हुए कुख़ारिन, आनेवाले मेले और अन्य कितनी ही अप्रिय बातों ने बिना बुलाए दिमाग़ में घुसकर उकसा दिया था।

"इधर आओ!" वह दरवाज़े में से चिल्लाया।

पुलिसमैन लौट आया और दरवाज़े में तनकर खड़ा हो गया। उसके चेहरे पर भय का भाव झलक उठा था।

"बेवकूफ़!" पोदशिबलो गुर्राया—"आंगन में जाओ और उस गधे के बच्चे कुख़ारिन को जगाकर कहो कि थाने का आंगन खर्राटे भरने की जगह नहीं है। बस, दफ़ा हो जाओ!"

"अच्छा, सरकार। एक स्त्री थाने में आई है और..."

"क्या-आ-आ?"

"एक स्त्री..."

"कैसी स्त्री?"

"लम्बा क़द ..."

"बेवकूफ़! वह क्या चाहती है?"

"आपसे मिलना..."

"पूछो, क्यों मिलना चाहती है। जाओ!"

"मैंने पूछा था। लेकिन उसने नहीं बताया। कहने लगी, वह ख़ुद सरकार से बात करना चाहती है।"

"अजीब मुसीबत हैं ये स्त्रियां भी। उसे यहां लिवा लाओ। क्या वह युवती है?"

"हां, सरकार!"

"अच्छा, उसे पेश करो। लेकिन जल्दी," पोदशिबलो ने नर्म

पड़ते हुए कहा। वह तनकर बैठ गया और मेज़ पर पड़े काग़ज़ों को उलटने-पलटने लगा। उसने अपने उदास चेहरे पर अफ़सरियत का कठोर नक़ाब धारण कर लिया।

पीछे से स्त्री के स्कर्ट के सरसराने की आवाज़ सुनाई दी।

उसने आधा मुड़कर अपनी आसामी की ओर देखा और पैनी नज़र से उसका जायज़ा लेते हुए बोला – "मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूं ?"

बिना कुछ कहे, सिर झुकाए, उसने अभिवादन किया और धीरे-धीरे मेज़ की ओर तैर चली। उसकी भौंहें खिंची थीं और अपनी गम्भीर नीली आंखों से वह अफ़सर की ओर देख रही थी। निम्न मध्य वर्ग की स्त्री की भांति वह मामूली और सीधे-सादे कपड़े पहने थी। उसके सिर पर एक शाल पड़ा था और वह कंधों पर बिना आस्तीन का एक भूरा लबादा डाले थी जिसके छोरों को वह अपने छोटे-छोटे सुन्दर हाथों की नाज़ुक उंगलियों से बराबर मसोस रही थी। उसका क़द लम्बा, बदन गुदगुदा और वक्ष ख़ूब भरे-पूरे थे। उसका माथा ऊंचा और अधिकांश स्त्रियों से ज़्यादा गम्भीर और कठोर था। उसकी उम्र सत्ताईस के क़रीब मालूम होती थी। वह बहुत ही धीरे-धीरे और विचारों में डूबी मेज़ की ओर बढ़ रही थी, मानो मन ही मन कह रही हो – "क्या उल्टे पांव लौट जाना अच्छा न होगा ?"

"नमूना बढ़िया है, – जिसे निशाना बनाए, उड़ा दे !" पहली ही झलक में पोदशिबलो ने सोचा – "मुसीबत की पुड़िया !"

"मैं जानना चाहती हूं," हरी गम्भीर समृद्ध आवाज़ में उसने कहना शुरू किया और फिर रुक गई। उसकी नीली आंखें दुविधा में अफ़सर के गलमुच्छेदार चेहरे पर टिकी थीं।

"बैठ जाओ। अब बोलो, तुम क्या जानना चाहती हो ?"

पोदशिबलो ने अफ़सरी अन्दाज़ में पूछा और मन ही मन सोचा– "है बढ़िया, पूरी रसभरी !"

"मैं उन कार्डों के लिए आई हूं," उसने कहा।

"कैसे कार्ड, रिहाइश के ?"

"नहीं, वे नहीं।"

"तो फिर कौनसे ?"

"वे, जो... उन्हें दिए जाते हैं... स्त्रियों को," उसने अटकते और लाज से लाल पड़ते हुए कहा।

"स्त्रियां ? कैसी स्त्रियां ? क्या मतलब है तुम्हारा ?" अपनी भौंहों को उठाते और छेड़छाड़ के भाव से मुसकराते हुए पोदशिबलो ने पूछा।

"दूसरे प्रकार की स्त्रियां... वे, जो सड़कों पर घूमती हैं... रात को।"

"तक ! तक ! तक ! तुम्हारा मतलब यह कि वेश्याएं ?" पोदशिबलो की बत्तीसी खिल गई।

"हां, मेरा मतलब यही है," स्त्री ने एक गहरी सांस ली और मुसकराई भी, मानो अब, जब कि वह शब्द उच्चारित हो चुका, उसका काम आसान हो गया।

"अरे, यह तुम क्या कहती हो ? हां तो ?.." पोदशिबलो ने उसे फिर उकसाया। वह किसी दिलचस्प रहस्य के प्रकट होने की आशा कर रहा था।

"हां, मैं उसी तरह के कार्डों के सिलसिले में आई हूं," स्त्री ने कहना शुरू किया और एक आह भरकर तथा अपने सिर को अजीब ढंग से झटका देते हुए, जैसे किसीने उसपर आघात किया हो, कुर्सी पर ढह गई।

"समझा। सो तुम चकला चलाने की बात सोच रही हो ?"

"नहीं, मैं खुद अपने लिए एक कार्ड चाहती हूं," —और उसका सिर झुकता चला गया—काफ़ी नीचे तक।

"ओह! तुम्हारा पुराना कार्ड कहां है?" अपनी कुर्सी को उसकी कुर्सी के और अधिक निकट खिसकाते और उसकी कमर की ओर अपना हाथ बढ़ाते हुए पोदशिबलो ने पूछा। उसकी एक आंख बराबर दरवाज़े पर टिकी थी।

"कैसा पुराना कार्ड? मेरे पास कोई कार्ड-वार्ड नहीं है," पैनी नज़र से उसने उसकी ओर देखा, लेकिन उसके हाथ के स्पर्श से बचने का कोई प्रयत्न नहीं किया।

"सो तुम लुक-छिपकर धंधा करती थीं,—क्यों? बिना नाम दर्ज कराए? कितनी ऐसा करती हैं। लेकिन अब तुम नाम दर्ज कराना चाहती हो। यह ठीक है। अधिक सुरक्षित," उसे बढ़ावा देते और उसके बदन पर और भी अधिक खुलकर हाथ डालते हुए पोदशिबलो ने कहा।

"मैंने पहले कभी यह धंधा नहीं किया," स्त्री के मुंह से निकला और उसने अपनी आंखें झुका लीं।

"क्या सचमुच? यह कैसे हो सकता है? मेरी समझ में नहीं आता," अपने कंधों को बिचकाते हुए पोदशिबलोने कहा।

"मैंने इसपर अभी सोचना शुरू किया है। पहली बार मेले में यहां आने पर," धीमी आवाज़ में, अपनी आंखों को उठाए बिना, स्त्री ने स्पष्ट किया।

"सो यह बात है," पोदशिबलो ने अपना हाथ उसकी कमर पर से हटा लिया, अपनी कुर्सी को फिर वापिस खिसकाया और पीठ से कमर टिकाकर बैठ गया, खोया हुआ-सा।

दोनों के दोनों चुप थे।

"तो यह बात है। ठीक। तुम चाहती हो... ऊंह... यह ग़लत है। बेशक ग़लत है। और कठिन है। यानी, देखो न... लेकिन आख़िर... हां तो... बड़ी अजीब बात है... अगर सच पूछो तो मेरी समझ में नहीं आता कि तुम कैसे वह सब कर सकोगी। यानी, अगर तुम सचमुच वही करना चाहती हो जो तुम कहती हो।"

सहायक पुलिस-अफ़सर अनुभवी था। उसने देखा कि सचमुच में बात ऐसी ही है। वह इतनी सहज, स्वस्थ और भली थी कि वह उस बदनाम धंधे की सदस्या नहीं बन सकती थी। इस धंधे के चिन्हों का, जो कि हर वेश्या के चेहरे पर अंकित होते हैं—चाहे वह कितनी ही नौसिखिया या अनुभवहीन क्यों न हो,—उसमें अभाव था।

"आप सच कहते हैं," उसके मुंह से निकला और विश्वास में उमड़कर उसकी ओर झुक गई—"सच, मेरा रोम-रोम इसका साक्षी है। क्या मैं झूठ बोलूंगी,—मैं, जो इस घिनौने धंधे तक को अपनाने का एकबारगी निश्चय कर चुकी हूं? निश्चय ही नहीं। लेकिन मुझे धन पैदा करना है। मैं विधवा हूं। मेरा पति—वह अगन-बोट चलाता था—पिछले अप्रैल में बर्फ़ तड़कने से डूबकर मर गया। मेरे दो बच्चे हैं—नौ साल का एक लड़का और सात साल की एक छोटी-सी लड़की। और पैसा एक नहीं। सगे-सम्बन्धी भी कोई नहीं। जब मेरा विवाह हुआ, मैं अनाथ थी। मेरे पति के सम्बन्धी बहुत दूर रहते हैं और वे मुझे भिखारी से अधिक नहीं गिनते। मैं किसका मुंह देखूं? मैं कोई मजूरी कर सकती थी, इसमें शक नहीं। लेकिन मुझे काफ़ी धन चाहिए,—इतना अधिक, जितना कि मजूरी से मुझे कभी नहीं मिल सकता। मेरा लड़का स्कूल में पढ़ता है। मेरा ख़याल है कि उसकी फ़ीस माफ़ कराने के लिए मैं दरख़ास्त दे सकती हूं। लेकिन उसपर—मेरी जैसी

अकेली स्त्री की दरख़ास्त पर—कौन ध्यान देगा? और वह, इतना छोटा होते हुए भी, बहुत ही होशियार लड़का है। उसे स्कूल से उठाना अत्यन्त बुरा होगा। और मेरी छोटी लड़की,—उसके लिए भी दुनिया भर की चीज़ें चाहिएं। जहां तक खरे धंधों का सवाल है, वे मिलते ही कहां हैं? और अगर कोई मिल भी जाए तो क्या कुछ मैं पाऊंगी और उससे क्या कुछ मैं कर सकूंगी? अगर बावर्ची का काम करूं? महीने में केवल पांच रूबल हाथ लगेंगे। यह काफ़ी नहीं है। क़तई काफ़ी नहीं है। जब कि इस धंधे में, अगर स्त्री का भाग्य चमक उठे तो, वह इतना अधिक पैदा कर सकती है कि अपने परिवार का पूरे एक साल तक पेट भर सकती है। पिछले मेले में हमारे गांव की एक स्त्री ने चार सौ से भी ज्यादा रूबल बनाए थे। धन के इस अम्बार के बल पर उसने जंगलों के वार्डेन से शादी कर ली और अब कुलीन घराने की स्त्री की भांति जीवन बिताती है। खूब मौज से रहती है। अगर उसने वह न किया होता—उसकी लाज पर वह दाग़ न लगा होता। लेकिन तुम खुद निर्णय करो। मुझे लगता है कि यह भाग्य का खेल है। हमेशा भाग्य ही सब कराता है। और जब यह विचार मेरे दिमाग़ में जम गया है, मैं समझती हूं कि भाग्य मुझसे यही कराना चाहता है। अगर मैं धन पैदा कर लेती हूं—अन्त भला तो सब भला, और अगर सिवा दुःख और कलंक के और कुछ हाथ नहीं लगता—तो मेरा भाग्य! इस तरह मैं इसे देखती हूं।"

पोदशिबलो उसके हर शब्द को पकड़ रहा था, उसके लिए जैसे उसका सम्पूर्ण चेहरा बोल रहा था। पहले उसके चेहरे पर भय की एक झलक थी, लेकिन धीरे-धीरे उस दृढ़ निश्चय का भाव उसके चेहरे पर झलकने लगा।

सहायक पुलिस-अफ़सर बड़ी बेचैनी का और एक हद तक सकपकाहट का भी अनुभव कर रहा था।

पहली बार उसे देखने पर उसके हृदय में आशंका उठी थी और उसने सोचा था—"इस जैसी स्त्री के हाथों में किसी बेवकूफ़ के फसने भर की देर है, यह जीते जी उसकी खाल उतार लेगी और उसकी हड्डियों पर ज़रा-सा भी मांस नहीं रहने देगी,"—लेकिन अब—उसकी कहानी सुनने के बाद—उसने रूखी आवाज़ में कहा—

"मुझे दुःख है कि मैं तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर सकता। चीफ़ आफ़ पुलिस के पास अपनी दरख़ास्त भेजो। यह उसका काम है—और डाक्टरी कमीशन का। मेरा इससे कोई वास्ता नहीं है।"

वह अब उससे छुटकारा पाना चाहता था। वह तुरत खड़ी हो गई, अभिवादन में यों ही ज़रा-सा सिर उसने झुकाया और धीरे-धीरे दरवाज़े की ओर तैर चली। पोदशिबलो, अपने होंठों को कसकर भींचे और आंखों को सिकोड़े, उसे जाता हुआ देखता रहा। उसकी पीठ पर थूकने से अपने को रोकने के लिए इसके सिवा वह और कर भी क्या सकता था?

"सो मुझे चीफ़ आफ़ पुलिस के पास जाना चाहिए?" दरवाज़े तक पहुंचने पर उसने घूमकर पूछा। उसकी नीली आंखें शांत संकल्प की दृढ़ता से उसे देख रही थीं और उसके माथे पर एक गहरी कठोर रेखा खिंची थी।

"हां, ठीक है," पोदशिबलो ने तुरत जवाब देकर उसे निबटा दिया।

"अच्छा तो विदा। धन्यवाद," और वह बाहर निकल गई।

सहायक पुलिस-अफ़सर ने मेज़ पर अपनी कोहनियां टिका दीं और वहां बैठा सीटी की आवाज़ में मन ही मन दसेक मिनट तक कुछ गुनगुनाता रहा।

"कुतिया, – एह!" अपना सिर उठाए बिना वह ज़ोर से बड़बड़ा उठा – "बच्चे! भला बच्चों का इससे क्या वास्ता? ऊंह, हरजाई कहीं की!"

और एक बार फिर वह चुप हो गया, काफ़ी देर के लिए।

"लेकिन यह जीवन कौन कम हरजाई है, – उसने जो कुछ कहा अगर वह सच है तो। वह आदमी को अपनी कनकी उंगली पर नचाता है। सच्चा आदमी भी क्या करे, कहां सिर पटके?"

और फिर, एक क्षण रुककर, अपने मस्तिष्क की कारगुज़ारी की अन्तिम आहुति के रूप में, उसने एक गहरी सांस ली, अपनी उंगलियों को चटखाया और ज़ोरों के साथ यह उद्‌गार प्रकट किया –

"छिनाल!"

"क्या आपने मुझे बुलाया था?" ड्यूटी पर तैनात पुलिसमैन फिर दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ।

"थू!.."

"क्या आपने मुझे बुलाया था, सरकार?"

"दफ़ा हो जाओ!"

"अच्छा, सरकार।"

"बेवकूफ़!" पोदशिबलो के मुंह से निकला और खिड़की से बाहर उसने नज़र डाली।

कुखारिन अभी भी घास के ढेर पर सो रहा था। स्पष्ट ही ड्यूटी पर तैनात पुलिसमैन उसे जगाना भूल गया था।

लेकिन सहायक पुलिस-अफ़सर की झुंझलाहट ग़ायब हो चुकी थी, सोते हुए पुलिसमैन को देखकर अब उसपर ज़रा-सा भी असर नहीं हुआ। किसी चीज़ ने उसे आतंकित कर दिया था। उस स्त्री की शान्त नीली आंखें उसकी कल्पना में तैर रही थीं।

वे उसका पीछा नहीं छोड़ रही थीं। दृढ़ निश्चय के साथ सीधे उसकी ओर ताक रही थीं। इसने उसका हृदय बैठा दिया था और वह एक बेचैनी का अनुभव कर रहा था।

घड़ी पर उसने एक नज़र डाली, अपनी पेटी को उसने कसा और फिर दफ़्तर से बाहर हो गया।

"लगता है कि उससे फिर किसी समय मेरी भेंट होगी,—भेंट होकर रहेगी," वह बुदबुदा उठा।

२

और उसकी भेंट हुई।

सांझ का वक़्त था। बड़े दफ़्तर के सामने वह ड्यूटी पर खड़ा था। तभी, कोई पांच डग दूर, उसकी नज़र उसपर पड़ी। वह चौक की ओर जा रही थी—वैसे ही धीरे-धीरे, जैसे तैर रही हो। उसकी नीली आंखें सीधे सामने की ओर ताक रही थीं और उसकी समूची आकृति में, जो इतनी ऊंची और कमनीय थी, उसके पृष्ठ-भाग और वक्षों की हरकत में, उसकी आंखों के उस निस्संग भाव में ऐसा कुछ था जो किसीको पास नहीं फटकने देता था। उसकी भौंहों की गहरी रेखा ने, जो भाग्य के सामने अत्यन्त निरीहता की सूचक थी और जो अब—उस वक़्त की तुलना में, जब कि पहली बार उसने उसे देखा था,—कहीं अधिक प्रत्यक्ष मालूम होती थी, उसके गोल रूसी चेहरे को अत्यन्त कठोर बनाकर बिगाड़ दिया था।

पोदशिबलो ने अपनी मूंछों को ऐंठा, मनोरंजक कल्पनाओं में रम गया और निश्चय किया कि वह उसे अपनी आंखों की ओट नहीं होने देगा।

"ज़रा ठहर तो, शैतान की पुड़िया कहां भागी जाती है!" मन ही मन उसने उसे चुनौती दी।

इसके पांच मिनट बाद चौक में पड़ी एक बेंच पर वह उसकी बग़ल में बैठा था।

"क्यों, मुझे पहचाना नहीं?" उसने मुसकराते हुए पूछा।

उसने अपनी आंखें उठाईं और शांत भाव से उसपर एक नज़र डाली।

"पहचाना। कहो, कैसे हो?" उसने खिन्न आवाज़ में कहा और उसे अपना हाथ तक नहीं भेंट किया

"तुम सुनाओ, कैसे चल रहा है? क्या तुम्हें अपना कार्ड मिल गया?"

"यह रहा," और वह, उसी निस्संग भाव से, अपने कपड़ों की जेब टटोलने लगी।

इससे वह अचकचा उठा।

"अरे नहीं, उसे दिखाने की ज़रूरत नहीं। मैं तुम्हारा यक़ीन करता हूं। इसके अलावा, मुझे कोई अधिकार नहीं है... मतलब यह कि... कैसे गुज़र रही है?" और इस प्रश्न के मुंह से निकलते ही उसने मन ही मन कहा –"जहन्नुम में जाए, मेरी बला से! और यह लाग-लपेट और अग़ल-बग़ल से ताक-झांक कैसी? क्या उसे छूते डर लगता है? सुनो, पोदशिबलो, क्यों नहीं एकदम खुलकर सीधे क़िस्सा पार कर लेते!"

लेकिन, इन तथा इस तरह की अन्य बातों से अपने आपको लाख बढ़ावा देने पर भी, वह 'एकदम खुलकर सीधे क़िस्सा पार' नहीं कर सका। उस स्त्री में कुछ था जो आदमी को एक निश्चित प्रसंग को छेड़ने से रोकता है।

"कैसे गुज़र रही है? कोई खास बुरी नहीं, भला हो उस..."

वह आगे नहीं बोल सकी। उसके गाल शर्म से लाल हो उठे।

"तब तो बहुत अच्छा है। बधाई। लेकिन इस धंधे को निभाना बड़ा कठिन है,—जब तक कि उसकी आदत न पड़ जाए। क्यों, ठीक है न ?"

सहसा वह उसकी ओर झुक गई—सफ़ेद और बल खाता हुआ चेहरा, गोल मुंह,—लगता था जैसे वह रोने के लिए उमड़-घुमड़ रही हो, लेकिन वह उसी प्रकार सहसा पीछे भी हट गई—अपने आपको पीछे खींचकर वह फिर वैसी ही निस्संग हो गई।

"ठीक है। मैं इसकी अभ्यस्त भी हो जाऊंगी," उसने सुस्पष्ट और समतल आवाज़ में कहा, फिर रूमाल निकालकर ज़ोरों से अपनी नाक साफ़ की।

उसका सामीप्य, उसका हिलना-डोलना और उसकी शांत निश्चल नीली आंखें,—पोदशिबलो को ऐसा मालूम हुआ जैसे वह भीतर ही भीतर किसी अतल गहराई में डूबा जा रहा हो।

उसकी घबराहट सीमा पार कर चली। वह बैठा न रह सका। वह उठ खड़ा हुआ और बिना एक शब्द मुंह से निकाले उसने अपना हाथ बढ़ा दिया।

"अच्छा तो अब बिदा," उसने धीमे से कहा।

उसने अपना सिर हिलाया और तेज़ डग भरता तथा अपनी बेवकूफ़ी पर अपने को कोसता वहां से चल दिया।

"लेकिन ज़रा ठहरो, मेरी शरीफ़ पतुरिया। तुमने अभी मेरा रंग नहीं देखा। एक दिन, जब तुम्हें पता चलेगा कि मैं क्या हूं, तो भूल जाओगी अपने हवाई घोड़े पर सवार होना!" वह मन ही मन बड़बड़ाया और साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि वह व्यर्थ ही उसपर अपना बुखार उतार रहा है।

और इससे वह और भी अधिक झुंझला उठा।

अगले सप्ताह, एक दिन सांझ के समय, पोदशिबलो कारवां-सराय से साइबेरियाई घाट की ओर जा रहा था। तभी गाली-गलौज, स्त्रियों की चीख़-चिल्लाहट तथा अन्य कुत्सित आवाज़ें सुनकर वह रुक गया। ये आवाज़ें एक क़हवाख़ाने की खिड़की में से आ रही थीं।

"मदद! पुलिस!" किसी स्त्री की मरमराती आवाज़ आई। भयानक घूंसों की घनघनाहट, मेज़-कुर्सियों की उठा-पटक और इन सब आवाज़ों को डुबाती हुई एक आदमी की गहरी आवाज़।

"ख़ूब, बहुत ख़ूब! और, एक बार और सीधे थूथनी पर!" वह ज़ोरों से चिल्ला-चिल्लाकर उकसा रहा था।

सहायक पुलिस-अफ़सर तेज़ी से दौड़कर सीढ़ियों पर चढ़ गया, क़हवाख़ाने के दरवाज़े पर जमा तमाशा देखनेवालों की भीड़ को धकियाता भीतर घुसा और यह दृश्य उसने देखा—

नीली आंखों वाली उसकी परिचित स्त्री एक मेज़ पर पड़ी अपने बाएं हाथ से एक अन्य स्त्री के बालों को दबोचे थी और दाहिने हाथ से उस स्त्री के सूजे हुए मुंह पर तेज़ और निर्मम घूंसों की बौछार कर रही थी।

अपनी नीली आंखों को वह बेरहमी से सिकोड़े थी और उसके होंठ कसकर भिंचे हुए थे। उसके मुंह के छोरों से ठोड़ी तक दो गहरी रेखाएं खिंची थीं और उसका चेहरा—जो कभी इतना विकारशून्य था कि देखकर अचरज होता था—अब बनैले जन्तु की भांति निर्मम गुस्से से तमतमा रहा था,— एक ऐसे जीव का चेहरा, जो एक सह-जाति को दारुण यंत्रणा देने और इसमें आनन्द लेने के लिए तत्पर था।

जिस स्त्री पर वह प्रहार कर रही थी, वह केवल धीमी आवाज़ में भुनभुना रही थी, अपने को छुड़ाने का प्रयत्न कर रही थी और हवा में अपनी बांहें छटपटा रही थी।

पोदशिबलो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे उसका समूचा रक्त तेज़ी से दिमाग़ की ओर दौड़ रहा हो। किसीसे किसी चीज़ का बदला लेने की अंधी इच्छा से वह उतावला हो उठा और तेज़ी से आगे लपककर, क्रोध से पागल उस स्त्री की कमर को दबोच, उसे अलग खींच लिया।

मेज़ उलट गई। रकाबियां झनझनाकर फ़र्श पर जा गिरीं। दर्शकों की बनैली चीखें और हंसी गूंज उठी।

गुस्से और झुंझलाहट में पोदशिबलो की आंखों के सामने सभी काट-छांट के चेहरे कौंध गए – हंसते हुए और लाल। स्त्री को वह अपनी बांहों में दबोचे था और वह हाथ-पांव पटक रही थी। वह उसके कानों के पास अपना मुंह ले गया और फुंकार उठा –

"सो यह तुम हो, – क्यों? इस तरह तमाशा खड़ा करती, उत्पात मचाती?"

नीली आंखों वाली स्त्री की शिकार – दूसरी स्त्री – टूटी रकाबियों के बीच फ़र्श पर पड़ी सुबकियां भर रही थी और सुध-बुध भूलकर कलप रही थी।

नाटे क़द का एक चपल आदमी, जो लम्बा कोट पहने था, पोदशिबलो को घटना का विवरण बता रहा था –

"बात यह हुई, सरकार, कि उसने, जो वहां पड़ी है, इसे गाली दी। कहा – 'हरजाई, कुतिया!' सो इसने उसके एक तमाचा जड़ दिया और उसने इसपर चाय का गिलास फेंक मारा, और तब इसने उसका झोंटा पकड़कर चित कर दिया और – धमाधम! एक के बाद एक

घमाधम! इसने उसे ऐसी मार पिलाई कि कोई भी उसपर गर्व कर सकता है। सच, बड़े मज़बूत पुट्ठे हैं इसके—इस स्त्री के।"

"मज़बूत पुट्ठे,—क्यों?" स्त्री को अपनी बांहों में और भी ज्यादा कसते हुए पोदशिबलो गरजा और खुद उसका हृदय किसीसे जूझने की भयानक इच्छा से विह्वल हो उठा।

लाल गरदन और चौड़ी पीठ वाला एक आदमी—खिड़की से बाहर अपनी गरदन निकाले और हास्यजनक ढंग से अपनी चौड़ी पीठ को कमान बनाए—नीचे सड़क की ओर चिल्लाया—

"ऐ कोचवान, इधर आओ!"

"चलो अब। पुलिस-स्टेशन चलो। दोनों की दोनों। एड्यू, उठकर खड़ी हो... और तुम कहां मर रहे थे अब तक? अपनी ड्यूटी का कुछ खयाल नहीं? बेवकूफ़! ले जाओ इन्हें थाने,—जल्दी करो। दोनों की दोनों को, समझे!"

पुलिसमैन पहले एक के और फिर दूसरी के बदन में डंडा गड़ाता बहादुरी के साथ उन्हें खदेड़ ले गया।

"कनयक और सोडा-वाटर, जल्दी लाओ—चटपट!" खिड़की के पास एक कुर्सी पर ढहते हुए पोदशिबलो ने बैरा से कहा। थकान और हर किसीसे तथा हर चीज़ से वह झुंझलाहट का अनुभव कर रहा था।

* * *

अगली सुबह वह उसके सामने खड़ी थी—वैसी ही शांत और दृढ़ जैसी कि वह पहली भेंट के समय थी। वह अपनी नीली आंखों से सीधे उसकी ओर देख रही थी और उसके बोलने की प्रतीक्षा कर रही थी।

पोदशिबलो ने, जिसे रात ढंग से नींद नहीं आई थी और जो इस कारण और भी अधिक झुंझलाया हुआ था, मेज़ पर पड़े काग़ज़ों को इधर से उधर पटका, लेकिन इससे उसे कुछ मदद नहीं मिली और ऐसी कोई बात उसे नहीं सूझी जिसे वह उससे कहता। वे पक्षपातपूर्ण अभियोग और लांछनापूर्ण जुमले – जिनका ऐसे मौक़ों पर आमतौर से प्रयोग किया जाता है – उसके मुंह से नहीं ही निकले। वह उनसे कहीं अधिक ज़ोरदार और प्रतिशोधपूर्ण चीज़ उसके मुंह पर पटकना चाहता था।

"हां तो बोलो, उस झगड़े की शुरुआत कैसे हुई?"

"उसने मेरा अपमान किया," स्त्री ने कहा।

"ओह, बहुत बड़ा अपराध किया!" पोदशिबलो ने व्यंग से कहा।

"उसे इसका कोई अधिकार नहीं था। मेरा उससे कोई मुक़ाबिला नहीं किया जा सकता।"

"हे भगवान्! तो तुम अपने को क्या समझती हो?"

"मैंने मजबूरी से इस धंधे को अपनाया है, लेकिन वह..."

"तो तुम्हारी राय में वह मौज-मज़े के लिए यह करती है। क्यों, यही न?"

"वह?"

"हां, वह!"

"उसके कोई बाल-बच्चे नहीं हैं।"

"बस करो, मोरी की कीच! क्या तुम समझती हो कि अपने बच्चों का रोना रोकर मुझे फुसला लोगी? इस बार तो मैं तुम्हें छोड़ दूंगा, लेकिन अगर तुमने फिर कोई गड़बड़ की तो चौबीस घंटों के भीतर तुम्हें यह नगर छोड़ देना पड़ेगा। मेले से अपने पांव दूर ही

रखना। समझी! घबराती क्यों हो, तुम्हारी जैसियों को मैं ख़ूब समझता हूं। ज़रा-सी देर में ठीक कर दूंगा। उत्पात मचाती हो, क्यों? वह सबक पढ़ाऊंगा कि याद रखोगी, – छिनाल कहीं की!" शब्द तेज़ी से, बिना किसी प्रयास के, उसके मुंह से निकल रहे थे, हर शब्द पिछले शब्द से अधिक अपमानजनक। स्त्री का चेहरा पीला पड़ गया था और उसने अपनी आंखों को ठीक वैसे ही सिकोड़ रखा था जैसे कि पिछली रात क़हवाख़ाने में उसने सिकोड़ा था।

"जाओ, दफ़ा हो जाओ यहां से!" मेज़ पर घूंसा मारते हुए पोदशिबलो चिल्ला उठा।

"भगवान् ही तुम्हारा न्याय करेगा," उसने रूखी और धमकी भरी आवाज़ में कहा और तेज़ डगों से दफ़्तर से बाहर चली गई।

"न्याय की बच्ची!" पोदशिबलो चीख़ा। उसका अपमान करने में उसने सुख का अनुभव किया। उसके शांत और चिर विकारशून्य चेहरे से और जिस ढंग से अपनी नीली आंखों से सीधे उसकी ओर वह देखती थी उससे वह बुरी तरह झुंझला उठा था। पता नहीं, अपने को क्या समझती है? बच्चे? ग़लत, निरा बहाना! बच्चों का भला इससे क्या वास्ता? एक मामूली बेसवा – सड़कों की धूल चाटनेवाली – मेले में आई कि धन कमाएगी लेकिन बनती है शराफ़त की पुतली! पता नहीं क्यों? एक शहीद – मजबूरी – बच्चे, – भला किसके गले के नीचे उतरेगी यह ख़ुराफ़ात? इतनी हिम्मत है नहीं कि अपने को उसी रूप में देख सके जो कि वह है, सो परिस्थितियों के सिर दोष मढ़ ख़ुद अपने को दूध का धुला जताती है! वाह!

लेकिन बच्चे भी आख़िर थे ही। गोरे चेहरे का एक छोटा लड़का, लजीला, स्कूल की पुरानी फटी वर्दी पहने, कानों पर एक काला रूमाल बांधे, और एक छोटी लड़की, प्लेटदार मैकिन्टोश पहने, जो उसके बदन से काफ़ी बड़ी और ढीली-ढाली थी। दोनों काशिन घाट के तख़्तों पर बैठे शरद् की हवा में कांप रहे थे और चुपचाप बतिया रहे थे। उनकी मां उनके पीछे खड़ी थी, कुछ गांठों की टेक लगाए, और मुग्ध नीली आंखों से उन्हें देख रही थी।

छोटे लड़के की शक्ल उससे मिलती-जुलती थी। उसकी आंखें भी नीली थीं। रह-रहकर वह अपना सिर उठाता,—जिसपर वह ऐसी टोपी पहने था, जिसकी कलगी टूटी हुई थी,—अपनी मां की ओर देखकर मुसकराता और कुछ कहता। छोटी लड़की के चेहरे पर बुरी तरह चेचक के दाग़ थे। छोटी-सी पैनी नाक और दो बड़ी-बड़ी भूरी आंखें, जिनमें चंचलता और समझदारी की चमक थी। घाट के तख़्तों पर, उनके अग़ल-बग़ल, भांति-भांति के बंडल और पोटले-पोटलियां पड़ी थीं।

सितम्बर के अन्त के दिन थे। सारे दिन बारिश पड़ती रही थी। नदी-तट पर कीचड़ फैली थी और ठंडी नम हवा चल रही थी।

वोल्गा नदी बढ़ी हुई थी। गंदली लहरें ज़ोरों से आवाज़ करती तट से टकरा रही थीं और हवा में एक धीमी थिर गूंज भरी थी। भांति-भांति के, सभी तरह के, लोग आ-जा रहे थे। उन सभी के चेहरों पर व्यग्रता की एक झलक थी, जैसे उन्हें अपने काम की उतावली हो। नदी के दृश्य की इस उमड़ती-घुमड़ती पृष्ठभूमि में एक मां और दो बच्चों की यह शांत तिकड़ी अपनी ओर तुरत ध्यान खींचती थी।

सहायक पुलिस-अफ़सर पोदशिबलो की नज़र उनपर पड़ चुकी थी–और, दूर खड़े रहने पर भी, वह इन तीनों को बड़ी बारीकी से देख रहा था। वह उनकी प्रत्येक हरकत से अवगत था और, जाने क्यों, शर्म का अनुभव कर रहा था।

काशिन वाला स्टीम-बोट आध घंटे में इस घाट से छूटकर वोल्गा के चढ़ाव की ओर जानेवाला था।

लोग बाहर जैटी पर पहुंचने लगे थे।

नीली आंखों वाली स्त्री झुकी, थैलों और पोटले-पोटलियों को अपने कंधों तथा बग़ल में दाबकर सीधी हो गई और सीढ़ियां उतरती चल दी। बच्चे उसके आगे चल रहे थे–हाथ में हाथ थामे और अपने हिस्से की पोटलियों को अपने कंधों पर रखे।

पोदशिबलो को भी बाहर जैटी पर पहुंचना था। वह चाहता तो यही था कि न जाए, लेकिन उसके सामने और कोई चारा न था। सो कुछ देर बाद वह भी वहां, टिकट-घर से कुछ दूर, जाकर खड़ा हो गया।

उसकी परिचित स्त्री टिकट ख़रीदने आई। एक हाथ में वह अपना भारी बटुवा थामे थी जिसमें से नोटों की एक गड्डी बाहर झांक रही थी।

"मैं चाहती हूं," उसने कहा– "... मतलब यह... ओह, बात यह है कि बच्चे तो दूसरे दर्जे में जाएंगे–कोस्त्रोमा... और मैं तीसरे में, लेकिन यह बताइए, क्या मैं उन दोनों के लिए एक ही टिकट नहीं ख़रीद सकती? नहीं? अपवाद रूप में–ख़ास तौर से–तो बना सकते हैं न? ओह धन्यवाद, बहुत-बहुत धन्यवाद! भगवान् तुम्हारा भला करे।"

और वह टिकट लेकर चल दी। उसका चेहरा खिला हुआ था। बच्चे उससे चिपके जा रहे थे, घाघरा खींच-खींचकर उससे पूछ रहे थे। उसने उनकी बात सुनी और मुसकरा दी।

"तुम भी ख़ूब हो। मैंने कहा न कि ख़रीद दूंगी,—क्यों, कहा था न? क्या मैं कभी किसी चीज़ से तुम्हें वंचित रख सकती हूं? हरेक के लिए दो-दो? अच्छी बात है। तुम लोग यहीं ठहरो। अभी लेकर आती हूं।"

वह दरवाज़े के पास कुछ दुकानों पर गई जहां फल और मिठाइयां बिकती थीं।

वहां से लौटकर वह अब फिर अपने बच्चों के बीच आ गई थी और उनसे कह रही थी—

"यह बहुत ही बढ़िया ख़ुशबूदार साबुन तुम्हारे लिए है, वारिया,—ज़रा सूंघकर देखो! और यह क़लमतराश चाकू तुम्हारे लिए है, पेत्या! देखा, मैं ज़रा भी नहीं भूली। और ये हैं पूरी एक दरजन नारंगियां। लेकिन इन्हें एक बार में ही ख़त्म न कर डालना!"

स्टीम-बोट घाट से आ लगा। एक झटका। लोग डगमगा गए। स्त्री ने अपने दोनों बच्चों को समेटकर अपने से चिपका लिया और चौकन्नी आंखों से इधर-उधर देखा। ख़तरे का कोई चिन्ह न देख वह हंसी। बच्चे भी हंसे। स्टीम-बोट पर चढ़ने की सीढ़ी लटका दी गई और लोगों की धारा बोट की ओर बढ़ चली।

"ऐ धीरे-धीरे! धक्का न दो!" पोदशिबलो भीड़ पर चिल्लाया।

"एइयू बेवकूफ़!" वह एक बढ़ई पर गरजा जो हथौड़ियों, आरियों, बरमों, रेतियों और अन्य औज़ारों से लदा-फंदा था — "यह क्या कबाड़ उठा लाया है? एक तरफ़ हट और स्त्री को रास्ता दे जो

बच्चों को अपने साथ लिए है। ओह, कितना मूर्ख आदमी है।" कहते-कहते उसका स्वर एकदम मुलायम पड़ गया जब वह स्त्री – नीली आंखों वाली उसकी परिचिता – गुज़रते समय उसकी ओर देखकर मुसकराई और बोट पर पहुंच जाने के बाद सिर झुकाकर उसने अभिवादन किया।

तीसरी सीटी।

"रस्से खोल डालो!" कप्तान के मंच से कमान की आवाज़ आई।

बोट कांपा और हरकत करने लगा।

पोदशिबलो डेक पर खड़े लोगों में अपनी परिचिता को टोह रहा था और जब वह दिखाई पड़ी तो उसने अपनी टोपी उतार ली और सिर झुकाकर अभिवादन किया।

जवाब में, रूसी ढंग से, वह झुकी और क्रास का चिन्ह बनाया।

और इस प्रकार वह तथा उसके बच्चे कोस्त्रोमा लौट गए।

उन्हें विदा करने के बाद सहायक पुलिस-अफ़सर पोदशिबलो ने एक गहरी उसांस छोड़ी और अपनी ड्यूटी पर लौट आया, – भारी उदासी और दुख का अनुभव करते हुए।

१८९५



सेमागा कैसे पकड़ा गया

सेमागा एकदम एकाकी क़हवाख़ाने में एक मेज़ पर बैठा था। वोडका का एक पौवा और पन्द्रह कोपेक मूल्य का साग वाला मांस उसके सामने रखा था।

निचले तल्ले का कमरा था। उसकी मेहराबदार छत धुंवें से काली पड़ी थी। तीन लैम्प उसमें टिमटिमा रहे थे। एक उस जगह, जहां कलवार बैठा था, और दो कमरे के बीच में। हवा धुंवें से अटी थी। धुंवें के भंवरों में धुंधली काली शक्लें तैर रही थीं–बोलती और गाती, और उन्मत्त होकर गालियां उछालती। वे जानती थीं कि यहां क़ानून उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता, यहां वे ख़ुद अपनी बादशाह हैं।

बाहर उन भयानक तूफ़ानों में से एक–जो शरद् के आखिर में मनमाना सिर उठाते हैं–सनसना रहा था और बड़े-बड़े चिपचिपे हिम-कण मरमराकर गिर रहे थे। लेकिन भीतर गरमाई, चहल-पहल और चिरपरिचित सुहावनी महक ने समा बांध रखा था।

सेमागा, वहां बैठा, धुंवें के बीच से एकटक दरवाज़े की ओर देख रहा था। हर बार, जब भी किसीको भीतर आने देने के लिए दरवाज़ा खुलता, उसकी आंखें पैनी हो उठतीं। वह आगे की ओर थोड़ा-सा झुक जाता–यहां तक कि अपने चेहरे को ओट में करने के लिए अपना एक हाथ तक उठा लेता–और भीतर आनेवाले की आकृति को बारीकी से परखता। और एक बहुत ही वाजिब कारण से वह ऐसा करता था।

जब वह नये आनेवाले का बारीकी से – विस्तार के साथ–अध्ययन कर चुकता और उस बात की दिलजमई कर लेता, जिसकी दिलजमई वह करना चाहता था, तब वह अपने गिलास में वोडका उंडेलता, उसे गले के नीचे उतारता, मांस और आलू के आधा एक दरजन टुकड़ों को मुंह में भर लेता और बैठकर धीरे-धीरे उन्हें चबाता रहता,–होंठों से चटखारे लेते और अपनी बांकी सैनिकशाही मूंछों को जीभ से चाटते हुए।

सीली हुई भूरी दीवार पर एक अजीब ऐंड़ी-बैंड़ी परछाई पड़ रही थी। यह उसके बाल-बिखरे बड़े सिर की परछाई थी और जब

वह मुंह चलाता था तो ऊपर-नीचे होती रहती थी, मानों वह सिर हिला-हिलाकर बराबर किसीको बुला रही थी और जिसे बुलाया जा रहा था वह कोई ध्यान नहीं दे रहा था।

सेमागा का चेहरा चौड़ा, गालों की हड्डियां उभरी हुई और दाढ़ी से मुक्त थीं। उसकी आंखें बड़ी और भूरी थीं और उन्हें सिकोड़े रखने की उसे एक आदत-सी पड़ गई थी। काली घनी भौंहें उसकी आंखों पर छाया किए थीं और घुंघराले बालों की एक लट – जिसका रंग कोई रंग नहीं था – उसकी बाईं भौंह के ऊपर, क़रीब-क़रीब उसे छूती हुई, झूल रही थी।

कुल मिलाकर, सेमागा का चेहरा उन चेहरों में से नहीं था जिन्हें देखकर उनका विश्वास करने को जी चाहता है। उसके चेहरे पर कसाव का वह भाव, – जैसे कि किसी समय भी उठकर भाग जाने के लिए वह तैयार बैठा हो, – एक ऐसा भाव, जो इन लोगों के बीच और इस जगह तक में बे-मौंजूं मालूम होता था, हृदय में उसके प्रति किसी भी विश्वास को जमने नहीं देता था।

वह एक खुरदरा ऊनी कोट पहने था जो कमर में एक डोरी से बंधा था। बग़ल में उसकी टोपी और दस्ताने पड़े थे और कुर्सी की पीठ के सहारे रोबदार आकार-प्रकार का एक डंडा टिका था जिसके एक छोर पर मूठ-सी उभरी थी। यह जड़वाला सिरा था।

हां तो वह इस प्रकार बैठा खाने-पीने में मगन था और कुछ और वोडका के लिए आर्डर देने ही जा रहा था कि तभी फटाक से दरवाज़ा खुला और क़हवाख़ाने में एक गोल-मटोल और खुरदरी-सी चीज़ लुढ़क आई जो, दुनिया साक्षी है, नाव खींचने के रस्से का एक बड़ा गोला मालूम होती थी जिसे खोलने के लिए लुढ़का दिया गया हो।

ठीक इस खुलते हुए गोले की भांति लुढ़कते हुए उसने क़हवाख़ाने में प्रवेश किया।

"ऐ, चौकस हो जाओ, लोगो! पुलिस धावा कर रही है!" ऊंची विचलित बचकाना आवाज़ में वह चिल्ला उठी।

लोग तुरत कमर सीधी करके बैठ गए, शोर बन्द हो गया और वे, चिन्तित मुद्रा में, सलाह करने लगे। उनके बीच से, मरमराई-सी बेचैन आवाज़ों में, कुछ सवाल प्रकट हुए—

"क्या सच कहते हो?"

"मुझे मार डालना अगर ग़लत निकले तो! वे दोनों ओर से आ रहे हैं। घोड़ों पर भी और पैदल भी। दो अफ़सर और ढेर सारे पुलिसमैन!"

"वे किसकी खोज में हैं? कुछ मालूम हुआ?"

"सेमागा की, मेरा अन्दाज़ है। निकिफ़ोरिच से वे उसके बारे में पूछताछ कर रहे थे," बचकाना आवाज़ ने सुर में जवाब दिया और वह गुदड़ीनुमा आकृति, जिसकी कि यह आवाज़ थी, कलवार की दिशा में लुढ़क गई।

"क्यों, क्या निकिफ़ोरिच पकड़ा गया?" टोपी को अपने उलझे हुए बालों पर जमाते और बिना किसी उतावली के उठते हुए सेमागा ने पूछा।

"हां, उन्होंने उसे अभी-अभी पकड़ा है।"

"कहां?"

"चची मारिया के घर पर,—'स्टेन्का' शराब-घर।"

"क्या तुम सीधे वहीं से आ रहे हो?"

"ओ-हो-हो! बाग़ के बाड़ों को फांदता-लांघता भागा हुआ मैं यहां आया और अब मैं सीधे 'बरजा' शराब-घर जा रहा हूं। उन्हें सूचित करना भी ज़रूरी है, मेरी समझ में।"

"लपक जाओ!"

लड़का पलक झपकते क़हवाख़ाने से बाहर हो गया। लेकिन उसके निकलने पर दरवाज़ा अभी बन्द हुआ ही था कि क़हवाख़ाने का पक्के बालों वाला वृद्ध मालिक ईओना पेत्रोविच, जो कि एक धर्म-भीरु आदमी था, आंखों पर बड़ा-सा चश्मा चढ़ाए और खोपड़ी पर गोल टोपी चिपकाए, उसके पीछे लपका—

"ऐ छछूंदर, शैतान के बच्चे! यह तूने क्या किया, सुअर की नापाक औलाद! पूरी रकाबी डकार गया!"

"किस चीज़ की?" सेमागा ने, जो अब दरवाज़े की ओर बढ़ रहा था, पूछा।

"कलेजी की। एकदम चटकर गया। मेरी तो यही समझ में नहीं आता कि इतनी-सी देर में उसने यह किया कैसे? क्या एक ही बार में पूरी रकाबी गले में उंडेल ली? हरामी कहीं का!"

"तो यह कहो कि तुम्हें वह भिखारी बना गया,– क्यों?" दरवाज़े से बाहर होते हुए सेमागा ने रूखी आवाज़ में कहा।

नम और थपेड़े मारती हवा के बगूले—छोटी-मोटी आवाज़ें करते—इस-उसको खड़खड़ाते—ऊपर और सड़क की सीध में सपाटे भर रहे थे और वायु उबलते हुए दलिये की भांति मालूम होती थी—इतनी घनता के साथ भीगे हुए हिम-कण गिर रहे थे।

सेमागा ने, एक क्षण के लिए रुककर, कानों से टोह ली। लेकिन हवा के सनसनाने और हिम-कणों की सरसराहट के सिवा, जो घरों की दीवारों-छतों पर गिर रहे थे, और कोई आवाज़ नहीं सुनाई दी।

वह चल दिया और दसेक डग भरने के बाद ही एक बाड़े को उसने लांघा और किसी घर के पिछले बाग़ में पहुंच गया।

तभी एक कुत्ता भौंका और उसके जवाब में घोड़े ने हिनहिनाकर ज़मीन पर अपना पांव पटका। सेमागा जल्दी से बाड़ा लांघकर फिर सड़क पर आ गया और नगर के मध्य भाग की ओर चल दिया। अब उसके डग, पहले की निस्बत, अधिक तेज़ी से उठ रहे थे।

कुछ मिनट बाद उसे अपने सामने एक आवाज़ सुनाई दी जिसने उसे एक अन्य बाड़ा लांघने के लिए बाध्य कर दिया। इस बार, बिना किसी दुर्घटना के, वह आगे का सहन पार कर गया, खुले दरवाज़े में से होकर बाग़ में दाखिल हुआ, अन्य बाड़ों को लांघा और अन्य बाग़ों को पार किया और अन्त एक सड़क पर पहुंच गया जो उसी सड़क के समानान्तर चली गई थी जिसपर कि ईश्रोना पेत्रोविच का क़हवाखाना था।

चलते-चलते उसने छिपने के लिए किसी सुरक्षित स्थान के बारे में सोचने की कोशिश की, लेकिन ऐसा कोई स्थान दिमाग़ में नहीं आया।

जितने भी सुरक्षित स्थान थे वे सब अब अरक्षित हो गए थे, क्योंकि पुलिस धावा मारने पर उतर आई थी। और धावा करनेवालों या रात के चौकीदार द्वारा पकड़े जाने के ख़तरे के रहते ऐसी आँधी में बाहर रात बिताने की कल्पना भी कोई ख़ास आह्लादपूर्ण नहीं थी।

वह अब धीरे-धीरे चल रहा था,—सामने तूफ़ान के सफ़ेद अंधेरे पर आंखें जमाए जिसमें से नर्म बर्फ़ के गालों से ढके घर, घोड़े बांधने के अड्डे, सड़क की रोशनी के खम्बे और पेड़ एकाएक बिना आवाज़ किए निकल आते थे।

तूफ़ान की आवाज़ से अलग एक विचित्र आवाज़ सुनकर उसके कान खड़े हो गए। यह आवाज़ उसके सामने किसी जगह से आ रही

थी। यह किसी बच्चे के रोने की नर्म आवाज़ से मिलती थी। वह रुक गया और ख़तरे की गंध से आशंकित वन्य जीव की भांति उसकी गर्दन आगे की ओर तन गई।

आवाज़ आनी बन्द हो गई।

सेमागा ने अपनी गरदन हिलाई और फिर आगे बढ़ चला। टोपी को और भी अधिक नीचे खींचकर उसने अपनी आंखों को ढक लिया और हिम-कणों से अपनी गरदन को बचाने के लिए कंधों को उचकाकर एक कूब-सा निकाल लिया।

उसे फिर रोने की आवाज़ सुनाई दी और इस बार यह ठीक उसके पांव के नीचे से आ रही थी। वह चौंका, रुका, नीचे झुका, अपने हाथों से ज़मीन को टटोला, सीधा खड़ा हो गया और उस बंडल से बर्फ़ अलग करने लगा जो कि उसे मिला था।

"वाह, क्या साथी मिला है राह चलते! एक बच्चा! बोलो, क्या कहते हो अब तुम?" शिशु को देखते हुए वह अपने आप बुदबुदाया।

उसमें गरमाई थी। वह किलबिला रहा था। पिघली हुई बर्फ़ से वह एकदम गीला हो गया था। उसका चेहरा, जो सेमागा की मुट्ठी जितना भी बड़ा नहीं था, लाल और झुर्रियां-पड़ा था, उसकी आंखें बन्द थीं और उसका छोटा-सा मुंह रह रहकर खुल और छोटी-छोटी चुसकियां-सी भर रहा था। उसके चेहरे के इर्द-गिर्द लिपटे चिथड़े में से पानी चूकर उसके नन्हे दांतविहीन मुंह में पहुंच रहा था।

स्तब्ध हो जाने पर भी सेमागा में इस बात का चेत था कि इन चिथड़ों से चुआ पानी बच्चे के पेट में नहीं जाना चाहिए, सो उसने बंडल को उलटकर उसे हिलाया।

लेकिन बच्चे को शायद यह रुचा नहीं और इसके विरोध में वह ज़ोरों से चीख़ उठा।

"तक-तक!" सेमागा ने कड़ी आवाज़ में कहा – "तक-तक! मुंह से जरा भी आवाज़ न निकले, – समझे! नहीं तो कान खींच लूंगा। बोलो, मुझे ऐसी क्या पड़ी थी जो मैं तुमसे उलझ गया? गोया मुझे बस तुम्हारी ही ज़रूरत थी। लेकिन तुम हो कि रोना शुरू कर दिया। बोलो, नन्हे बुद्धू और कैसे होते हैं?"

लेकिन सेमागा के शब्दों का बच्चे पर ज़रा भी असर नहीं हुआ, धीमी और रुआंसी आवाज़ में उसने चिचियाना जारी रखा। सेमागा इससे अत्यधिक विचलित हो उठा –

"भई वाह, तुम भी कैसे दोस्त हो? देखो, यह अच्छी बात नहीं है। यह मैं जानता हूं कि तुम गीले हो गए हो और तुम्हें ठंड सता रही है – और यह कि तुम एकदम छिपकली हो, लेकिन मैं कर भी क्या सकता हूं? बोलो, तुम्हीं बताओ।"

लेकिन बच्चा अभी भी चिचिया रहा था।

"नहीं मानते तो यह लो," सेमागा ने निर्णयात्मक स्वर में कहा, चिथड़े को बच्चे के चारों ओर और कसकर लपेटा और उसे फिर ज़मीन पर रख दिया।

"और कोई चारा नहीं। तुम खुद देख सकते हो कि मैं तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता। मैं खुद भी एक तरह से परित्यक्त ही हूं। अच्छा तो अब राम-राम और बस।"

सेमागा ने हवा में हाथ हिलाया और चल दिया, बुदबुदाता हुआ –

"अगर पुलिस छापा न मारती तो शायद तुम्हारे लिए कोई न कोई घोंसला खोज निकालता। लेकिन पुलिस छापा मार रही है। इसके लिए मैं क्या कर सकता हूं? नहीं दोस्त, कुछ नहीं कर सकता।

मुझे माफ़ करना,–सच, तुम्हें माफ़ करना ही पड़ेगा। तुमने किसीका कुछ नहीं बिगाड़ा, तुम एकदम निर्दोष हो और तुम्हारी मां एक डायन है–पूरी डायन। छिनाल कहीं की! अगर कभी मेरे पाले पड़ गई तो, कम्बख़्त एक भी पसली बाक़ी न रहने दूं, भुरकस निकाल दूं। होश ठिकाने आ जाए और फिर कभी ऐसा करने का साहस न हो। मालूम हो जाए कि बस, यहां तक बढ़ना चाहिए, इस से आगे नहीं। ओइयू, स्त्री के चोले में शैतान, हृदयहीन गाय! दुखों की आग में तू जलेगी, धरती में समाना चाहेगी तो वह भी तुझे उगल देगी। तू समझती क्या है? यह भी कोई खेल है कि जहां-तहां मुंह मारा, जब बच्चे हुए तो उन्हें इधर-उधर फेंक दिया? क्यों, यही न? अगर मैं तेरा झोंटा पकड़कर तुझे बाज़ार में से घसीटता हुआ ले चलूं तो? तेरा यही इलाज है, कुतिया! क्या तू इतना भी नहीं जानती कि ऐसे आंधी तूफ़ान में बच्चों को जहां-तहां नहीं फेंका जा सकता? वे कमज़ोर और बरबस होते हैं और इस बर्फ़ को निगलकर मर सकते हैं। बेवकूफ़ कहीं की! बच्चे को फेंकना ही था तो यह आंधी-पानी निकल जाने देती,–कोई बढ़िया सूखी रात इसके लिए चुनती। मेंह-पानी से मुक्त रात में उनके जीवित रहने की सम्भावना ज्यादा हो सकती है और उनपर अधिक लोगों की नज़र पड़ सकती है। लेकिन ऐसी रात में भी क्या कोई घर से निकलता है?"

और यही सब सोचते-सोचते न जाने कब सेमागा फिर उस बच्चे के पास पहुंच गया और अपनी गोदी में उसने उसे उठा लिया। उसकी मां को सम्बोधित करने में वह इतना डूबा था कि उसे ख़ुद पता नहीं चला कि कब और कैसे यह सब हो गया। लेकिन उसने बच्चे को उठा अपने कोट के भीतर छिपा लिया। और उसकी मां को आख़िरी और सब से तेज़ डांट पिलाने के बाद वह फिर अपने

रास्ते पर चल दिया। उसका हृदय भारी था और उतना ही दयनीय, जितना दयनीय कि वह बच्चा, जिसके लिए उसका हृदय इतना उमड़-घुमड़ रहा था।

बच्चा क्षीण भाव से किलबिला और चूं-चूं की धीमी आवाज़ कर रहा था जो भारी ऊनी कोट और सेमागा के भारी पंजे से दबी वहीं खो जाती थी। कोट के नीचे फटी कमीज़ के सिवा सेमागा और कुछ नहीं पहने था, सो उसे बच्चे के नन्हे बदन की गरमाई अनुभव करने में देर नहीं लगी।

"एइयू, नन्हे बरखुरदार!" बर्फ़ के बीच बढ़ते हुए वह बुदबुदाया—"राह में मिले मेरे साथी, तेरा मामला सचमुच में गड़बड़ है। आसार अच्छे नज़र नहीं आते। भला बता तो सही, तेरा मैं क्या करूंगा? और तेरी वह मां... बस... बस, चुपचाप पड़ा रह। कहीं नीचे न गिर पड़ना!"

लेकिन बच्चा किलबिलाता रहा और अपनी कमीज़ के छेद में से उसके होंठों के गर्म स्पर्श का उसने अनुभव किया। उसके होंठ उसकी छाती पर कसमसा रहे थे।

सेमागा सहसा रुककर एकदम निश्चल खड़ा हो गया और चकित आवाज़ में ज़ोरों से कह उठा—

"अरे, यह स्तन की टोह में है। अपनी मां के स्तन की! ओ भगवान्! अपनी मां के स्तन की!"

और, जाने क्यों, सेमागा का समूचा बदन थरथरा उठा—शायद लज्जा से, शायद भय से—किसी ऐसे भाव से, जो विचित्र था,—बहुत ही प्रबल, दुखद और हृदयविदारक।

"मुझे अपनी मां समझता है,—जंगली कहीं का, इतनी भी अक़ल नहीं! आखिर तेरा इरादा क्या है? और तू मुझसे चाहता क्या है?

भाई मेरे, मैं एक फ़ौजी आदमी हूं, और एक चोर, — अगर तू जानना ही चाहता है तो!"

हवा की सांय-सांय में एक अजब वीरानगी महसूस हो रही थी।

"तुम्हें अब सो जाना चाहिए। समझे, अब चुपचाप सो जाओ। ऊं-हुक, चीं-चीं न करो, सो जाओ। होंठों को क्या कसमसाते हो, एक बूंद पल्ले नहीं पड़ेगी। बस, सो जाओ। यह देखो, मैं तुम्हें एक लोरी सुनाता हूं, हालांकि यह काम मेरा नहीं, तुम्हारी मां का है। हां तो, सो जा रे लल्ला, सो जा रे। बस, बस, अब सो जा, मैं कोई आया थोड़े ही हूं!"

और सहसा सेमागा, अपने सिर को बच्चे की ओर ख़ूब नीचे झुकाए, धीमे और विलम्बित स्वरों में, हृदय की समूची कोमलता बटोरकर, गाने लगा —

तू हरजाई ज़रा न माई
करे क्यों कोई तुझसे प्यार

और इन बोलों को उसने ऐसे गाना शुरू किया जैसे लोरी गा रहा हो।

सफ़ेद अंधेरा अभी भी चारों ओर उमड़-घुमड़ रहा था और सेमागा बच्चे को अपने कोट में छिपाए पटरी पर बढ़ता जा रहा था। बच्चे का चिचियाना जारी था और चोर सेमागा कोमल स्वरों में गा रहा था —

जब होगी सुहानी रात,
करूंगा तुझसे दो-दो बात,
फिर खाकर तगड़ी लात
कांपेगा थरथर गात!

और उसके गालों पर से बूंदें लुढ़ककर नीचे तिरती आ रही थीं। हो न हो, यह पिघलती बर्फ़ की बूंदें थीं। रह-रहकर उसके बदन में एक कंपकंपी-सी उठती, गला रुंधा-सा और छाती पर एक बोझ-सा मालूम होता। इतनी वीरानगी का उसने पहले कभी अनुभव नहीं किया था जितनी कि वह अब – इस सूनी सड़क पर, तूफ़ान के बीच, कोट के भीतर चूं-चूं करते बच्चे को छिपाए – चलते समय अनुभव कर रहा था।

लेकिन वह, फिर भी, बढ़ता ही गया।

पीछे से टापों की धुंधली आवाज़ सुनाई दी। घोड़सवार पुलिसमैनों की छाया-आकृतियां अंधेरे में उभरीं और देखते न देखते उसके बराबर में आ पहुंचीं।

एक साथ दो आवाज़ों ने पूछा –

"ऐ, कौन जा रहा है?"

"तेरा नाम क्या है?"

"और यह भीतर क्या छिपाए है? इसे बाहर निकाल, – जल्दी!" अपने घोड़े को एकदम पटरी से सटाते हुए एक पुलिसमैन ने आदेश दिया।

"यह क्या? – अरे, यह तो बच्चा है!"

"तेरा नाम?"

"सेमागा... आल्तीर-निवासी।"

"ओ-हो! वही जिसकी हमें टोह थी। सीधे, मेरे घोड़े के आगे-आगे चले चलो!"

"मैं और बच्चा, – घरों की ओट में ही चलें तो अच्छा हो। वहां सड़क पर हवा बहुत तेज़ है। बीच सड़क हमारे लिए ज़रा भी ठीक जगह नहीं है, – हम तो ऐसे ही जाम हो रहे हैं।"

पुलिसमैनों के कुछ पल्ले नहीं पड़ा कि वह क्या कह रहा है, लेकिन उन्होंने उसे घरों की ओट में ही चलने दिया जब कि वे खुद, जहां तक बन सकता था, निकट रहते हुए अपने घोड़ों पर उसके साथ-साथ चलने लगे।

इस प्रकार उनकी निगरानी में सेमागा ने पुलिस-स्टेशन तक समूचा रास्ता पार किया।

"सो तुम लोगों ने उसे गिरफ़्तार कर लिया, -कर लिया न? यह बहुत अच्छा हुआ," दफ़्तर प्रवेश करने पर पुलिस-चीफ़ ने उनसे कहा।

"और यह बच्चा? इसका मैं क्या करूं?" अपने सिर को झटकाते हुए सेमागा ने पूछा।

"यह क्या? कैसा बच्चा?"

"यह है। सड़क पर पड़ा था। यह देखिए।"

और सेमागा ने कोट के भीतर से उसे बाहर निकाल लिया। बच्चा उसके हाथों में लिंजबिज पड़ा था।

"लेकिन यह मरा है!" पुलिस-चीफ़ चिल्ला उठा।

"मरा है?" सेमागा ने दोहराया। झुककर उसने नन्हे बंडल की ओर देखा और फिर उसे मेज़ पर रख दिया।

"'क्या तमाशा है," उसांस भरते हुए उसने कहा-"और मैं भी इसे एकदम सीधे उठा लाया। कौन जाने, अगर मैं इसे वहीं ... लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने इसे उठाया और इसके बाद फिर नीचे रख दिया।"

"यह क्या बड़बड़ा रहे हो?" पुलिस-चीफ़ ने पूछा।

सेमागा ने अपने इधर-उधर खोई हुई नज़र से देखा।

बच्चे के मरने के साथ-साथ वे सब भाव भी ज्यादातर मर चुके थे जिनका कि सड़क पर चलते समय उसने अनुभव किया था।

यहां वह सर्द अफ़सरशाही से घिरा था, जेल और अदालत के सिवा उसे और कुछ नज़र नहीं आता था। आहत होने की चेतना ने उसके हृदय को उमेठा। बच्चे के मृत शरीर की ओर उसने देखा। उसकी नज़र में विक्षोभ था। एक आह भरते हुए बोला –

"तुम भी एक ही रहे! तुम्हारी ख़ातिर मैं पकड़ा गया और नतीजा कुछ नहीं। मैं था कि सोच रहा था ... लेकिन तुम अपनी करनी से बाज़ न आए और मेरे शरीर पर ही मर गए। वाह!"

और सेमागा ज़ोरों से अपनी कनपटी खुजलाने लगा।

"इसे ले जाओ!" सेमागा की ओर गरदन से इशारा करते हुए चीफ़ ने कहा।

सो वे उसे ले गए।

और बस।

१८९५



एक पाठक

रात काफ़ी हो गई थी जब मैं उस घर से विदा हुआ जहां मित्रों की एक गोष्टी के सम्मुख अपनी प्रकाशित कहानियों में से एक का मैंने अभी पाठ किया था। उन्होंने तारीफ़ के पुल बांधने

में कोई कसर नहीं छोड़ी थी और मैं धीरे-धीरे मगन भाव से सड़क पर चल रहा था। मेरा हृदय आनन्द से छलछला रहा था और जीवन के सुख का एक ऐसा अनुभव मैं कर रहा था जैसा कि पहले कभी नहीं किया था।

फ़रवरी का महीना था, रात साफ़ थी और खूब तारों से जड़ा बादलरहित आकाश धरती पर स्फूर्तिदायक शीतलता का संचार कर रहा था जो नई गिरी बर्फ़ से सोलहों सिंगार किए थी। बाड़ों के ऊपर से पेड़ों की टहनियां झूल आई थीं और मेरे पथ पर छायादार बेलबूटों के अजीब व गरीब नमूने डाल रही थीं। चांद की कोमल नीली रोशनी में हिम-कण आनन्द से चमचमा रहे थे। आस-पास कोई भी जीव नज़र नहीं आ रहा था और मेरे जूतों के नीचे बर्फ़ के कचरने की आवाज़ के सिवा अन्य कोई आवाज़ उस स्वच्छ और स्मरणीय रात की निस्तब्धता को भंग नहीं कर रही थी।

"इस धरती पर, लोगों की नज़रों में, कुछ होना कितना अच्छा लगता है," मैंने सोचा।

और अपने भविष्य के चित्र में उजले रंग भरने में मेरी कल्पना ने कोई कोताही नहीं की।

"हां, तुमने बहुत ही बढ़िया एक नन्ही प्यारी-सी चीज़ लिखी है, इसमें कोई शक नहीं," मेरे पीछे कोई गुनगुना उठा।

मैं अचरज से चौंका और घूमकर देखा।

काले कपड़े पहने एक छोटे क़द का आदमी आगे बढ़कर निकट आ गया और पैनी लघु मुसकान के साथ मेरे चेहरे पर उसने अपनी आंखें जमा दीं। उसकी हर चीज़ पैनी मालूम होती थी— उसकी नज़र, उसकी गालों की हड्डियां, उसकी दाढ़ी, जो बकरी की भांति नोकदार थी, उसका समूचा छोटा और मुरझाया-सा ढांचा, जो कुछ इतना विचित्र

नोक-नुकीलापन लिये था कि आंखों में गड़ता था। उसकी चाल हल्की और निःशब्द थी, —ऐसा मालूम होता था जैसे बर्फ़ पर तिर रहा हो। गोष्टी में जो लोग मौजूद थे, उनमें वह मुझे नजर नहीं आया था और इसीलिए उसकी टिप्पणी ने मुझे चकित कर दिया था। वह कौन था? और कहां से आया था?

"क्या आपने... मतलब ... मेरी कहानी सुनी थी?" मैंने पूछा।

"हां, मुझे उसे सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।"

उसकी आवाज़ तेज़ थी। उसके पतले होंठ और छोटी काली मूंछें थीं जो उसकी मुसकराहट को नहीं छिपा पाती थीं। मुसकराहट उसके होंठों से विदा होने का नाम नहीं लेती थी और यह मुझे बड़ा अटपटा मालूम हो रहा था। ऐसा लगता था जैसे वह मुसकान मेरे बारे में उसके आलोचनात्मक मूल्यांकन पर—जो कि एकदम तीखा और अप्रिय था—पर्दा डाल रही हो। लेकिन उस समय मेरा चित कुछ इतना प्रसन्न था कि अपने साथी की इस विशिष्टता से मैं अधिक देर तक उलझा नहीं रह सका। एक छाया की भांति वह मेरी आंखों के सामने उभरी और मेरी आत्मश्लाघा के उजले प्रकाश में तेज़ी के साथ विलीन हो गई। मैं उसके साथ-साथ चल रहा था और अचरज कर रहा था कि जाने क्या वह कहेगा, —साथ ही अपने हृदय में यह गुप्त आशा भी संजोए था कि वह उन सुखद क्षणों में और अधिक वृद्धि ही करेगा जिनका कि उस सांझ में मैंने उपभोग किया था। ऐसे सुखद क्षणों का किसे लालच नहीं?

"अपने आपको अन्य सबसे अनोखा अनुभव करना बड़ा सुखद मालूम होता है। क्यों, ठीक है न?" मेरे साथी ने पूछा।

मुझे इस प्रश्न में ऐसी कोई बात नहीं मालूम हुई जो साधारण

से बाहर या अलग हो। सो मुझे सहमति प्रकट करने में देर नहीं लगी।

"हो-हो-हो !" वह तीखी हंसी हंसा, पंजेनुमा पतली उंगलियों से अपने छोटे हाथों को खुजलाते हुए।

"तुम बड़े हंसमुख जीव मालूम होते हो," मैंने रूखी आवाज़ में कहा। कारण, उसकी हंसी ने मुझे अपमानित कर दिया था।

"अरे हां, बहुत," मुसकराते और सिर हिलाते हुए उसने पुष्टि की—"साथ ही मैं बाल की खाल निकालनेवाला भी हूं क्योंकि मैं हमेशा चीज़ों को जानना चाहता हूं,—हर चीज़ को जानना चाहता हूं। मेरी यह जिज्ञासा भी मेरा साथ नहीं छोड़ती और वही मुझे इतना अधिक मगन रखती है। फ़िलहाल, मिसाल के लिए, मैं जानना चाहूंगा कि क्या मूल्य चुकाकर तुमने अपनी यह सफलता प्राप्त की है?"

मैंने सिर झुकाकर उसके छोटे क़द पर एक नज़र डाली और बिना किसी उछाह के जवाब दिया—

"क़रीब एक मास की मेहनत। शायद इससे कुछ अधिक।"

पंजे फैलाकर वह मेरे शब्दों पर झपटा—

"ओह, ज़रा-सी मेहनत और ज़रा-सा जीवन का अनुभव, जिसके लिए हमेशा थोड़ा बहुत मूल्य चुकाना पड़ता है। लेकिन उस कृति का यह कोई भारी मूल्य नहीं है जिसे पढ़कर हज़ारों हज़ार लोग आज तुम्हारे विचारों को अपने मस्तिष्क में उतार रहे हैं। तिसपर तुर्रा यह कि तुम अपने मन में इस आशा के भी पुल बांध रहे हो कि आगे चलकर—हो-हो-हो!—शायद उस समय, जब तुम मर जाओगे—हो-हो-हो! आशा की जा सकती थी कि ऐसी कृतियों की उपलब्धि के एवज़ में तुम अधिक दोगे—अधिक, यानी उससे अधिक, जो कि अब तक तुमने दिया है। क्यों, क्या तुम ऐसा नहीं सोचते?"

श्रौर वह फिर अपनी तीखी हंसी हंसा और बींध डालनेवाली अपनी काली आंखों से मेरी ओर देखता रहा। मैंने, अपने क़द की ऊंचाई से, एक नज़र उसपर डाली और ठंडी आवाज़ में पूछा—

"माफ़ करना, लेकिन क्या मैं जान सकता हूं कि मुझे यह किससे बातें करने का सौभाग्य..."

"मैं कौन हूं? क्या तुम अनुमान नहीं लगा सकते ? जो हो, मैं फ़िलहाल तुम्हें नहीं बताऊंगा। क्या तुम्हें आदमी का नाम उस बात से ज़्यादा महत्वपूर्ण मालूम होता है जो कि वह कहने जा रहा है?"

"निश्चय ही नहीं, लेकिन यह कुछ... बहुत ही अजीब है," मैंने जवाब दिया।

उसने मेरी आस्तीन पकड़ उसे एक हल्का-सा झटका दिया।

"होने दो अजीब," शांत हंसी के साथ उसने कहा—"निश्चय ही आदमी कभी कदांस जीवन की साधारण और आम सीमाओं को लांघने में आनाकानी नहीं करता। अगर तुम्हें आपत्ति न हो तो आओ, दोनों एक दूसरे से खुलकर बातें करें। समझ लो कि मैं तुम्हारा एक पाठक हूं—एक विचित्र प्रकार का पाठक, जो यह जानना चाहता है कि कैसे और किस उद्देश्य के लिए कोई पुस्तक लिखी गई है,—मिसाल के लिए जैसे तुम्हारी अपनी लिखी हुई पुस्तक। बोलो, इस तरह की बातचीत पसन्द करोगे?"

"ओह, ज़रूर," मैंने कहा—"मुझे ख़ुशी होगी। ऐसे आदमी से बात करने का अवसर रोज़-रोज़ नहीं मिलता।" लेकिन मैंने यह झूठ कहा। कारण कि मुझे यह सब अत्यन्त नागवार मालूम हो रहा था। "आख़िर उसकी मन्शा क्या है?" मैंने सोचा—"फिर इसमे क्या तुक है कि पूर्णतया अजनबी आदमी के साथ अपनी इस आकस्मिक भेंट को लेकर एक वाद-विवाद को जन्म दिया जाए?"

फिर भी मैं उसके साथ-साथ चलता रहा—धीमे डगों से, शिष्टाचार के नाते ऐसी मुद्रा बनाए मानो मैं उसकी बात ध्यान से सुन रहा हूं, और यह—मुझे याद है—एक कठिन काम था। लेकिन चूंकि मेरा वह प्रसन्न मूड अभी तक बना हुआ था और बातचीत से इन्कार करके उस भले आदमी को मैं आहत नहीं करना चाहता था, इसलिए मैं किसी तरह अपने आपको संभाले रहा।

चांद हमारे पीछे—पीठ की ओर—चमक रहा था और हमारी परछाइयों को सामने—आगे की ओर—फेंक रहा था। वे मिलकर एकाकार हो गई थीं—एक काला धब्बा, जो हमारे आगे-आगे बर्फ़ पर खिसल रहा था। उसे देखते समय मुझे लगा जैसे मेरे हृदय में कोई ऐसी चीज़ उभर और उमड़-घुमड़ रही है जो हमारी परछाइयों की भांति अस्पष्ट तथा पकड़ में न आनेवाली थी—एक ऐसी चीज़, जो, उन्हींकी भांति, सप्रयास सदा आगे बढ़ती मालूम होती थी।

मेरा साथी क्षण भर के लिए चुप हो गया और फिर, उस आदमी के विश्वास के साथ, जो अपने विचारों का पूर्ण स्वामी होता है, उसने कहा—

"मानवीय व्यवहार में निहित उद्देश्यों-इरादों से अधिक विचित्र और महत्वपूर्ण चीज़ इस दुनिया में और कोई नहीं है। तुम यह मानते हो न?"

मैंने सिर हिलाकर हामी भरी।

"ठीक। तब आओ, ज़रा खुलकर बातें करें,—और तुम्हें—अपनी इस किशोरावस्था के रहते—खुलकर बात कहने का एक भी अवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहिए।"

"अजीब पंछी है," मैंने सोचा, लेकिन उसके शब्दों ने मुझे उलझा लिया था।

"सो तो ठीक," मैंने मुसकराते हुए कहा – "लेकिन हम बातें किस चीज़ के बारे में करेंगे?"

पुराने परिचित की भांति उसने घनिष्ठता से मेरी आंखों में देखा। "साहित्य के उद्देश्यों के बारे में, – क्यों, ठीक है न?"

"अच्छी बात है। डर केवल यही है कि देर काफ़ी हो गई है..."

"ओह, तुम्हारे लिए अभी देर नहीं हुई।"

मैं ठिठक गया। उसके शब्दों ने मुझे स्तब्ध कर दिया था। इतनी गम्भीरता के साथ उसने इन शब्दों का उच्चारण किया था कि वे भविष्य का उद्घोष मालूम होते थे। मैं ठिठक गया, अपने होंठों पर एक प्रश्न लिए, लेकिन उसने मेरी बांह पकड़ी और चुपचाप किन्तु दृढ़ता से आगे बढ़ चला।

"रुको नहीं। मेरे साथ तुम सही रास्ते पर हो," उसने कहा – "काफ़ी भूमिका बांध चुके, मुझे अब यह बताओ – साहित्य का उद्देश्य क्या है? तुम उस लक्ष्य को साधते हो, सो तुम्हें मालूम होना चाहिए।"

मेरा अचरज बढ़ता और अपने आपको संभाले रखने का मेरा प्रयत्न खटाई में पड़ता जा रहा था। आखिर यह आदमी मुझसे चाहता क्या है? और वह है कौन?

"देखो," मैंने कहा – "तुम उससे इन्कार नहीं कर सकते जो कि हम दोनों के बीच घट रहा है..."

"मेरा विश्वास करो, यह अकारण ही नहीं है। सच तो यह है कि बिना कारण इस दुनिया में कोई भी चीज़ नहीं घटती। लेकिन छोड़ो, अब ज़रा जल्दी करें – आगे की ओर बढ़ने की नहीं, बल्कि गहराई में उतरने की।"

बिलाशक वह एक दिलचस्प नमूना था, लेकिन मैं उससे खीज

उठा। धीरज का बांध तोड़ मैं फिर आगे की ओर लपका। लेकिन वह भी पीछे न रहा। साथ आते हुए शांत भाव से बोला—

"मैं समझता हूं। एकाएक साहित्य के उद्देश्य की व्याख्या करना तुम्हारे लिए कठिन है। सो मैं ही इसकी कोशिश कर दूंगा।"

उसने एक गहरी सांस ली और मुसकराते हुए आंखें ऊंची कर मेरी ओर देखा।

"शायद मेरी बात से तुम सहमत होगे अगर मैं कहूं कि साहित्य का उद्देश्य है—खुद अपने को जानने में मानव की मदद करना, उसके आत्मविश्वास को दृढ़ बनाना और सत्य का पता लगाने की उसकी कोशिशों का समर्थन करना, लोगों में जो अच्छाई है उसका उद्घाटन करना और बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकना, लोगों के हृदयों में शर्म, गुस्से और साहस की चिंगारी जगाना, ऊंचे उद्देश्यों के लिए शक्ति बटोरने में उनकी मदद करना और सौन्दर्य की पवित्र भावना से उनके जीवन को शुभ्र बनाना। तो यह है मेरी व्याख्या। स्पष्ट ही यह एक खाका-मात्र और अधूरी है, तुम इसमें जीवन को परिष्कृत करनेवाली अन्य चीज़ें भी जोड़ सकते हो, लेकिन मुझे यह बताओ—क्या तुम इसे मानते हो?"

"हां," मैंने कहा—"कम व बेश यह सही है। यह सभी मानते हैं कि साहित्य का उद्देश्य लोगों को और अच्छा बनाना है।"

"देखो न, कितने ऊंचे लक्ष्य को तुम साधते हो?" मेरे साथी ने गम्भीरता के साथ बल देते हुए कहा और फिर अपनी वही तेजांबी हंसी हंसने लगा—"हो-हो-हो!"

"लेकिन मुझे यह सब बताने का तुम्हारा मतलब क्या है?" उसकी हंसी के प्रति उपेक्षा जताते हुए मैंने पूछा।

"तुम खुद क्या समझते हो?"

"एकदम साफ़ बात सुनना चाहते हो तो," मैंने कहना शुरू किया और कोई ऐसी बात मैं सोचने लगा जो उसे झुलसाकर रख दे, लेकिन ऐसी बात मुझे मिली नहीं। लेकिन एकदम साफ़ बात कहते किसे हैं? यह आदमी मूर्ख तो था नहीं। उससे क्या यह छिपा होगा कि एक आदमी कितनी तेज़ी से साफ़ बात की सीमा-रेखा पर पहुंच जाता है और कितनी ईर्ष्या के साथ व्यक्ति के गर्व की भावना इस सीमा-रेखा की रक्षा करती है? मैंने अपने साथी की आंखों में झांककर देखा और उसकी मुसकराहट से घायल हो मुंह फेर लिया। कितना व्यंग और घृणा भरी थी उसमें। मुझे लगा जैसे भय ने मेरे हृदय में सिर उठाना शुरू कर दिया हो, और इस भय के कारण मैं वहां से खिसकना चाहने लगा।

"अच्छा तो बिदा," मैंने थोड़े में कहा और अपना हैट उठा लिया।

"लेकिन क्यों?" वह चकित भाव से बोला।

"व्यवहारिक मज़ाक़ मुझे एक सीमा तक ही अच्छे लगते हैं।

"और इसलिए तुम जा रहे हो? अच्छी बात है, तुम्हारी मर्ज़ी। लेकिन अगर तुम इस वक़्त मुझे छोड़कर चले गए तो तुम और मैं फिर कभी नहीं मिल सकेंगे।"

उसने 'कभी नहीं' शब्दों पर ख़ास तौर से बल दिया, इस हद तक कि वे मातमी घंटे की ध्वनि की भांति मेरे कानों में गूंज उठे। मैं इन शब्दों से घिन्नाता और डरता हूं, मुझे वे सर्द और बोझिल मालूम होते हैं, लोगों की आशाओं को चकनाचूर करनेवाले हथौड़े की भांति। सो मेरे पांवों में उसने बेड़ियां-सी डाल दीं और मैं रुक गया।

"आखिर तुम मुझसे चाहते क्या हो?" मैं दुख और खीज से चीख उठा।

"बैठ जाओ," उसने फिर एक लघु हंसी हंसते और मेरा हाथ पकड़कर मुझे नीचे की ओर खींचते हुए कहा।

तब हम नगर-बाग़ की एक वीथिका में थे। चारों ओर बबूल और लिलक की नंगी बर्फ़ की परत चढ़ी टहनियां दिखाई पड़ रही थीं। वे चांद की रोशनी में चमचमाती मेरे सिर के ऊपर भी छाई थीं और ऐसा मालूम होता था जैसे ये कड़कीली टहनियां, बर्फ़ का कवच पहने, मेरे सीने को बेध सीधे हृदय तक पहुंच गई हों।

मैंने बिना एक शब्द कहे अपने साथी की ओर देखा। उसके व्यवहार ने मुझे उलझन और चक्कर में डाल दिया था।

"इसके दिमाग़ का कोई पुर्ज़ा ढीला मालूम होता है," मैंने सोचा और उसके व्यवहार की इस व्याख्या से अपने मन को सन्तोष देने की कोशिश की।

"शायद तुम सोचते हो कि मेरा दिमाग़ कुछ चल गया है," उसने जैसे मेरे भावों को ताड़ते हुए कहा—"लेकिन ऐसे ख़्याल को अपने दिमाग़ से निकाल दो। यह नुक्सानदेह और तुम्हारे योग्य नहीं है। बजाय इसके कि हम उस आदमी को समझने की कोशिश करें जो हमसे भिन्न है, इस बहाने की ओट लेकर हम कितनी जल्दी छुट्टी पा जाना चाहते हैं। मानव के प्रति मानव की दुखद उदासीनता का यह एक बहुत ही पुष्ट प्रमाण है।"

"ओह, ठीक है," मैंने कहा। मेरी खीज बराबर बढ़ती ही जा रही थी—"लेकिन माफ़ करना, मैं अब चलूंगा। काफ़ी समय हो गया।"

"जाओ," अपने कंधों को बिचकाते हुए उसने कहा—"जाओ, लेकिन यह जान लो कि तुम ख़ुद अपने से भाग रहे हो।" उसने मेरा हाथ छोड़ दिया और मैं वहां से चल दिया।

वह बाग़ में ही टीले पर रुक गया। वहां से वोल्गा नज़र आती थी जो अब बर्फ़ की चादर ताने थी और ऐसा मालूम होता था जैसे बर्फ़ की उस चादर पर सड़कों के काले फ़ीते टंके हों। सामने दूर तट के निस्तब्ध और उदासी में डूबे विस्तृत मैदान फैले थे। वह नहीं हिला और वहां पड़े बेंचों में से एक पर बैठा सूने मैदानों की ओर ताकता रहा। लेकिन मैं – अपने हृदय की इस पूर्व चेतना के बावजूद कि मैं उसे छोड़ नहीं सकता – वहां से चल दिया। और मैंने, बाग़ के गलियारे में चलते-चलते, सोचा – "अपने डगों को तेज़ करना ज़्यादा अच्छा होगा अथवा धीमा करना जिससे कि उसे – उस आदमी को, जो वहां बेंच पर बैठा है, – यह मालूम हो जाए कि मुझे उसकी रत्ती भर भी पर्वाह नहीं है?"

सीटी की आवाज़ में, धीमे-धीमे वह एक परिचित गीत की धुन गुनगुना रहा था। वह एक उदास और मज़ेदार गीत था जिसमें एक अंधा दूसरे अंधे को रास्ता दिखाने का काम करता है। मुझे यह बड़ा अजीब मालूम हुआ कि उसने ठीक इसी गीत को क्यों चुना।

और तब, अचानक, मैंने अनुभव किया कि उसी क्षण से, जब इस छोटे-से आदमी से मेरी भेंट हुई, मैं विचित्र और असाधारण अनुभूतियों की एक अंधेरी भूल-भुलैयां में भटक रहा हूं। वह शांत आनन्द, जिसका अभी कुछ देर पहले तक मेरा मन उपभोग कर रहा था, अब आशंकाओं के कुहरे में लिपट गया। ऐसा मालूम होता था जैसे कोई दुखद और बहुत भारी घटना घटनेवाली हो।

मुझे उस गीत के बोल याद हो आए जिसे वह सीटी की आवाज़ में गुनगुना रहा था –

हमें क्या राह दिखाओगे
भटक जाते हो जब तुम खुद?

मैंने घूमकर उसकी ओर देखा। अपनी कोहनी को घुटने पर और ठोड़ी को हथेली पर टिकाए, सीटी की आवाज़ में गुनगुनाता, वह मेरी ओर ही नज़र जमाए था और चांदनी से चमकते उसके चेहरे पर उसकी नन्ही काली मूंछें फड़क रही थीं। मुझे लगा जैसे यह होनहार है, और मैंने उसके पास लौटने का निश्चय कर लिया। तेज़ डगों से मैं वहां पहुंचा और उसके बराबर में बैठ गया।

"देखो, अगर हमें बात करनी है तो सीधे-सादे ढंग से करनी चाहिए," मैंने आवेश से लेकिन अपने को संभाले हुए कहा।

"लोगों को हमेशा सीधे-सादे ढंग से बातें करनी चाहिएं," उसने सिर हिलाते हुए स्वीकार किया।

"यह मैं जानता हूं कि मुझे प्रभावित करने की एक विचित्र शक्ति तुममें मौजूद है, और यह भी साफ़ है कि तुम मुझसे कुछ कहना चाहते हो। क्यों, मैं ठीक कहता हूं न?"

"आख़िर तुमने मेरी बात सुनने का साहस तो प्रकट किया," उसने हंसते हुए कहा। लेकिन इस बार उसकी हंसी कर्कश नहीं थी और मुझे तो उसमें आह्लाद तक का आभास का अनुभव हुआ।

"हां तो अब अपनी बात शुरू करो," मैंने कहा—"और अगर हो सके तो अपने विचित्र रंग-ढंग को ज़रा दूर ही रखना।"

"ओह, बड़ी ख़ुशी से!" उसने कहा—"लेकिन यह तुम्हें भी मानना पड़ेगा कि अपने उस ढंग से काम लिए बिना मैं तुम्हारा ध्यान आकर्षित नहीं कर सकता था। आजकल सीधी-सादी और साफ़ बातों को अति नीरस और रूखी कहकर नज़रन्दाज़ कर दिया जाता है, लेकिन असल बात यह है कि हम ख़ुद ठंडे और कठोर हो गए हैं और इसीलिए हम किसी भी चीज़ में गरमाई या कोमलता लाने में असमर्थ रहते हैं। हम तुच्छ कल्पनाओं और दिवा-स्वप्नों में रमना तथा अपने

आपको कुछ विचित्र और अनोखा जताना चाहते हैं। कारण कि जिस जीवन की हमने रचना की है, वह नीरस, बेरंग और उबा देनेवाला है। जिस जीवन को हम कभी इतनी लगन और आवेश के साथ बदलने चले थे, उसने हमें कुचल और तोड़ डाला है। ऐसी हालत जब सामने हो तब हम क्या करें? यही हमें देखना है। हो सकता है कि कल्पना, केवल संक्षिप्त काल के लिए ही सही, मानव को इस दुनिया से ऊपर उठने और उसमें अपनी खोई हुई जगह की थाह लेने में मदद दे। वह अब धरती का स्वामी नहीं रहा, बल्कि उसका एक दास-मात्र रह गया है। वह खुद अपने सिरजे तथ्यों की पूजा करता है, उनसे नतीजे निकालता है और इसके बाद अपने आपसे कहता है– 'देखो, यह है अपरिवर्तनीय क़ानून।' और इस क़ानून के आगे सिर झुकाते समय वह नहीं जानता कि ऐसा करके उसने अपने रास्ते में एक दीवार खड़ी कर ली है जो उसे आज़ादी के साथ जीवन को बदलने से रोकेगी, उसके उस संघर्ष में बाधक होगी जो कि वह दीवारों को गिराने के अपने अधिकार के लिए करना चाहता है ताकि नये का निर्माण किया जा सके, और सच तो यह है कि वह अब संघर्ष का नाम तक नहीं लेता, बल्कि केवल परिस्थितियों के साथ अपनी पटरी बैठाने की–उनके अनुसार अपने आपको ढालने की– कोशिश करता है। वह संघर्ष क्यों करे? वे आदर्श कहां हैं जो उसे वीरतापूर्ण कृत्यों की प्रेरणा दें? सो जीवन नीरस और अनाकर्षक बन गया है। और कुछ लोग हैं जो आंखें बन्द कर किसी ऐसी चीज़ को टोहते हैं जो उनके दिमाग़ों में पर लगाकर उन्हें आकाश में उड़ने योग्य बना दे और इस प्रकार उनके अपने आत्मविश्वास को फिर से जमा दे। लेकिन होता अक्सर यह है कि ऐसे लोग उस जगह से दूर भटक जाते हैं जहां खुदा निवास करता है और जहां समूची मानव-जाति

को एकजुट करनेवाले चिरन्तन सत्यों की खान मौजूद है। सचाई के पथ से जो भटके सो गए। उनका विनाश निश्चित है। मरने दो उन्हें। उनके बीच में न कोई दखल देने की ज़रूरत है, न उनपर व्यर्थ अपनी दया दिखाने की। यही करना हो तो अन्य लोग मौजूद हैं, सारी दुनिया उनसे भरी है। लेकिन महत्वपूर्ण चीज़ है ख़ुदा को खोजने-पाने की आकांक्षा, और जब तक ख़ुदा से लौ लगानेवाली आत्माएं मौजूद हैं, वह उन्हें अपना अंश प्रदान करेगा और उनका साथ देगा, कारण कि वह पूर्णता के लिए किए जा रहे चिरन्तन प्रयास के सिवा और कुछ नहीं है। क्यों, मैं ठीक कहता हूं न?"

"हां," मैंने कहा—"तुम्हारा कहना ठीक है।"

"तुम बड़ी जल्दी घुटने टेक देते हो," तीखी हंसी हंसते हुए मेरे प्रतिवादी ने रिमार्क कसा। इसके बाद वह चुप हो गया और उसकी दृष्टि शून्य विस्तारों में खो गई। वह इतनी देर तक चुप रहा कि मैंने उकताकर एक लम्बी उसांस छोड़ी। इसपर—उसकी आंखें अभी भी शून्य में भटक रही थीं—उसने कहा—

"तुम्हारा ख़ुदा कौन है?"

अब तक वह मृदु और कोमल अन्दाज़ में बोल रहा था और उसे सुनना अच्छा मालूम हो रहा था। सोच-विचार के आदी सभी लोगों की भांति वह भी कुछ उदासी में डूबा था। मैं उसकी ओर आकर्षित हुआ, मैंने उसे समझा और मेरी वह खीज ग़ायब हो गई। लेकिन उसने एक ऐसे घातक सवाल को निकालकर बाहर क्यों रखा जिसका जवाब देने में हमारे समय का कोई भी आदमी, जो अपने प्रति ईमानदारी बरतना चाहता है, कठिनाई का अनुभव करेगा? मेरा ख़ुदा कौन है? ओह, अगर मैं यह जानता होता!

मैं पस्त हो गया, और सच तो यह है—मेरी जगह अगर कोई

ग्रन्य होता तो क्या वह ग्रपने को संभाले रखता? ग्रब उसने ग्रपनी पैनी नज़र मुझपर जमा दी ग्रौर मुसकराता हुग्रा मेरे उत्तर का इन्तज़ार करने लगा।

"ग्रगर तुम्हारे पास इस सवाल का जवाब होता तो तुम इतनी देर न करते। ग्रपने सवाल को ग्रगर मैं इस तरह से रखूं तो शायद तुम कुछ जवाब दे सको–तुम लेखक हो, ग्रौर तुम जो लिखते हो उसे हज़ारों लोग पढ़ते हैं। तुम किस चीज़ का प्रचार करते हो? ग्रौर क्या तुमने कभी ग्रपने से यह पूछा है कि दूसरों को सीख देने का तुम्हें क्या ग्रधिकार है?"

जीवन में पहली बार मैंने ग्रपनी ग्रात्मा को टटोला, उसे जांचा-परखा। इससे कोई यह न सोचे कि लोगों का ध्यान ग्राकर्षित करने के लिए मैं ग्रपने ग्रापको बड़ा या गिरा हुग्रा दिखाने का प्रयत्न कर रहा हूं,–नहीं, भिखारियों से भीख नहीं मांगी जाती। ग्रौर मैंने देखा कि उदार भावनाग्रों ग्रौर ग्राकांक्षाग्रों का मुझमें ग्रभाव हो, ऐसा नहीं है, मुझमें भी ग्रपने हिस्से के वे गुण मौजूद हैं जो ग्राम तौर से ग्रच्छे गुण कहे जाते हैं, लेकिन वे बिखरे हुए थे, किसी सर्वप्रभावशाली भावना के साथ – किसी ऐसी सुस्पष्ट ग्रौर संगतिपूर्ण कल्पना के साथ, जो जीवन को उसके सम्पूर्ण रूप में देखती हो,–एकजुट नहीं थे। घृणा का मेरे हृदय में बाहुल्य था, वह हर घड़ी धुंवां देती रहती थी ग्रौर कभी-कभी गुस्से की तेज़ लपटों में भड़क उठती थी। लेकिन इससे भी ग्रधिक प्राधान्य था सन्देह का, जो कभी-कभी मेरे मस्तिष्क को इस हद तक बेकार कर देता था, मेरी ग्रात्मा को इस हद तक कचोए डालता था कि मेरा जीवन, लम्बी ग्रवधियों के लिए, शून्य बनकर रह जाता था। कोई चीज़ ऐसी नहीं थी जो जीवन में मेरी दिलचस्पी को जगा सकती। मेरा हृदय मौत की भांति सर्द ग्रौर मेरा मस्तिष्क जड़

हो जाता, मेरी कल्पना दुःस्वप्नों के चंगुल में फंस जाती। इस प्रकार लम्बे दिन और लम्बी रातें मैं बिताता—गूंगा, बहरा और अंधा, इच्छाओं से शून्य, समझने की शक्ति से शून्य। मुझे ऐसा मालूम होता जैसे मेरा यह शरीर लोथ बन चुका है और केवल किसी अनबूझ ग़लतफ़हमी के कारण दफ़नाने से बचा हुआ है। और यह चेतना कि मुझे जीवित रहना है—क्योंकि मौत और भी ज्यादा अंधकारपूर्ण, और भी ज्यादा निरर्थक थी—जीवन की उस भयानकता को और भी विकट बना देती। जीवन की वह एक ऐसी स्थिति थी जो, बिला शक, मानव को घृणा करने के सुख से भी वंचित कर देती है।

हां, तो मैं—जैसा और जो कुछ भी मैं था—किस चीज़ का प्रचार करता था? लोगों से कहने के लिए मेरे पास क्या था? क्या वे ही सब चीज़ें, जिन्हें युगों-युगों तक कहा गया और हमेशा कहा जाता तथा हमेशा सुना जाता है,—लेकिन आदमी को बदले और अच्छा बनाए बिना? और इन विचारों तथा नीति-वचनों का प्रचार करने का मुझे क्या हक़ है जब कि मैं खुद—घुट्टी के साथ उन्हें पेट में उतारने के बाद भी—अक्सर उनकी सीखों के अनुसार अमल नहीं कर पाता? और जब ख़ुद मैंने उनके ख़िलाफ़ आचरण किया, तब क्या यह सिद्ध नहीं होता कि उनकी सचाई में मेरा विश्वास एक सच्चा विश्वास नहीं है, उसकी जड़ें सीधे मेरे अहम की नींव में गहरी नहीं जमी हैं? इस आदमी को मैं क्या जवाब दूं जो मेरी बग़ल में बैठा है?

लेकिन उसने, मेरे जवाब की प्रतीक्षा से ऊबकर, अब फिर बोलना शुरू कर दिया था—

"मैं तुमसे ये सवाल न करता अगर मैं यह न देखता होता कि महत्वाकांक्षा ने आत्मसम्मान की तुम्हारी भावना को अभी तक नष्ट नहीं किया है। तुममें मेरी बात सुनने का साहस है, और इससे मैं

यह नतीजा निकालता हूं कि तुम्हारा अहं-प्रेम संगत है। कारण कि उसमें वृद्धि करने की तुममें इतनी गहरी लगन है कि तुम यंत्रणा तक से बचकर नहीं भागते। इसलिए तुमपर जो अभियोग मैंने लगाए थे, उन्हें मैं मुलायम कर दूंगा और तुम्हें अब एक ऐसा आदमी मानकर सम्बोधित करूंगा जो निर्दोष तो नहीं है, लेकिन फिर भी जिसे अपराधी नहीं कहा जा सकता।

"एक समय था जब यह धरती लेखन-कला-विशारदों, जीवन और मानव-हृदय के अध्येताओं और ऐसे लोगों से आबाद थी जो दुनिया को अच्छा बनाने की सर्वप्रबल आकांक्षा से अनुप्राणित और मानव-प्रकृति में गहरा विश्वास रखते थे। उन्होंने पुस्तकें लिखीं जो कभी विस्मृति के गर्भ में विलीन नहीं होंगी। कारण, वे अमर सचाइयों को अंकित करती हैं और उनके पन्नों से कभी न मलिन होनेवाला सौन्दर्य प्रस्फुटित होता है। उनमें चित्रित पात्र जीवन के सच्चे पात्र हैं, कारण कि प्रेरणा ने उनमें जान फूंकी है। इन पुस्तकों में साहस है, दहकता हुआ ग़ुस्सा और उन्मुक्त तथा सच्चा प्रेम है, और उनमें एक भी शब्द भर्ती का नहीं है। तुमने, मैं जानता हूं, ऐसी ही पुस्तकों से अपनी आत्मा के लिए पोषण ग्रहण किया है। लेकिन फिर भी तुम्हारी आत्मा उसे पचा नहीं सकी। कारण कि सत्य और प्रेम के बारे तुम जो लिखते हो, वह झूठा और अनुभूतिशून्य ध्वनित होता है। लगता है जैसे शब्द ज़बर्दस्ती मुंह से निकल रहे हों। चांद की भांति तुम दूसरे की रोशनी से चमकते हो, और यह रोशनी भी बुरी तरह मलिन है — वह परछाइयां ख़ूब डालती है, लेकिन आलोक कम देती है और गरमाई तो उसमें ज़रा भी नहीं है। तुम ख़ुद इतने ग़रीब हो कि दूसरों को ऐसी कोई चीज़ नहीं दे सकते जो वस्तुत: मूल्यवान् हो और जब तुम देते भी हो तो सर्वोच्च सन्तोष की इस

सजग अनुभूति के साथ नहीं कि तुमने सुन्दर विचारों और शब्दों की निधि में वृद्धि करके जीवन को सम्पन्न बनाया है, बल्कि अपनी सत्ता के सांयोगिक तथ्य को अत्यन्त आवश्यक घटना मानकर उसे ऊंचे सिंहासन पर बैठाने के लिए। तुम केवल इसलिए देते हो कि जीवन और लोगों से अधिकाधिक ले सको। तुम इतने ग़रीब हो कि उपहार भेंट नहीं कर सकते,— तुम सूदख़ोर हो और अनुभव के टुकड़ों का लेन-देन करते हो — इसलिए कि तुम ख्याति के रूप में सूद बटोर सको। तुम्हारी लेखनी चीज़ों की सतह को ही खरोंचती है, जीवन की तुच्छ परिस्थितियों को तुम बेकार में ही कुरेदते-कोंचते हो, और चूंकि तुम साधारण लोगों के साधारण भावों का वर्णन करते हो, इसलिए हो सकता है कि अनेक साधारण — महत्वहीन — सचाइयों से उनकी झोली भर जाती हो। लेकिन क्या तुम, नाम-मात्र को ही सही, ऐसे भरम की भी रचना कर सकते हो जो मानव की आत्मा को ऊंचा उठाने की क्षमता रखता हो? नहीं! तो क्या तुम सचमुच इसे इतना महत्वपूर्ण समझते हो — इस बात को कि सभी जगह छितरे कूड़े के ढेरों को कुरेदा जाए, जहां सत्य के काले टुकड़ों के सिवा और कुछ नहीं मिलता, और सिद्ध किया जाए कि मानव बुरा, मूर्ख और सम्मान की भावना से बेख़बर है, यह कि वह पूर्णतया और हमेशा के लिए बाह्य परिस्थितियों का ग़ुलाम है और यह कि वह कमज़ोर, दयनीय और एकदम अकेला है? अगर तुम मुझसे पूछो तो वे मानव के हृदय में यह विश्वास जमाने में सफल भी हो चुके हैं कि वास्तव में ऐसा ही है। तुम्हीं देखो कि मानव का मस्तिष्क आज कितना ठस और उसकी आत्मा के तार कितने बे-आवाज़ हो गए हैं। और यह कोई अचरज की बात नहीं है। वह अपने आपको उसी रूप में देखता है जैसा कि वह पुस्तकों में पेश किया जाता है... और पुस्तकें — ख़ास तौर से प्रतिभा का भ्रम पैदा

करनेवाली वाक्-चपलता से लिखी हुई—पाठकों को हतबुद्धि कर एक हद तक उन्हें अपने वश में कर लेती हैं। पुस्तक में अपने को देखते समय—जैसा कि तुम उसे पेश करते हो—उसे अपना भोंड़ापन तो नज़र आता है, लेकिन यह नज़र नहीं आता कि उसके सुधार की भी कोई सम्भावना हो सकती है। क्या तुम में इस सम्भावना को उभारकर रखने की क्षमता है? लेकिन यह तुम कैसे रख सकते हो जब कि खुद तुम... जाने दो, मैं तुम्हारी भावनाओं को चोट नहीं पहुंचाऊंगा। यह इसलिए कि मेरी बात को काटने या अपने आपको सही ठहराने की कोशिश किए बिना तुम मेरी बात सुन रहे हो। यह अच्छा है एक शिक्षक के लिए, अगर उसमें ईमानदारी है तो वह हमेशा एक अच्छा—ध्यान से सुननेवाला—छात्र होगा। आजकल तुम सब शिक्षक (सीख देनेवाले) लोग जनता को उतना देते नहीं जितना कि उससे लेते हो। कारण कि तुम केवल उनकी कमज़ोरियों का ही ज़िक्र करते हो, सिवा उनके और कुछ उनमें नहीं देखते। लेकिन निश्चय ही आदमी में गुण भी होते हैं,—खुद तुम में क्या नहीं हैं? तुम? सच पूछो तो तुम क्या उन बेरंग लोगों से किसी मानी में भी भिन्न हो जिनका कि तुम इतना कुरेद-कुरेदकर और इतनी निर्ममता से चित्रण करते हो? तुम अपने आपको मसीहा के रूप में देखते हो। समझते हो कि बुराइयों को खोलकर रखने के लिए खुद ईश्वर ने तुम्हें इस दुनिया में भेजा है ताकि अच्छाइयों की विजय हो। लेकिन बुराइयों को अच्छाइयों से छांटते समय क्या तुमने यह नहीं देखा कि ये दोनों, धागे के दो गेंदों की भांति, एक दूसरे से उलझी हैं? एक गेंद का धागा काला है और दूसरे का सफ़ेद, और चूंकि वे उलझे हैं इसलिए वे भूरे बन गए हैं—दोनों ने एक दूसरे के रंग पर अपने रंग का असर डाला है। और मुझे तो इसमें भी भारी सन्देह है कि खुदा ने तुम्हें अपना मसीहा बनाकर भेजा है। अगर वह भेजता तो इसके लिए तुमसे कहीं

ज़्यादा मज़बूत इन्सानों को चुनता। और उनके हृदयों में जीवन, सत्य और लोगों के प्रति गहरे प्रेम की जोत जगाता ताकि वे अंधकार में उसके गौरव और शक्ति का उद्घोष करनेवाली मशालों की भांति आलोक फैलाएं। तुम लोग तो शैतान की मोहर दाग़नेवाली छड़ की भांति धुंवां देते हो। और यह धुंवां लोगों के मस्तिष्क और हृदयों में सरसराता हुआ आत्मविश्वासहीनता के भावों से उन्हें भर देता है। मुझे यह बताओ—तुम क्या सीख देते हो?"

मैंने अपने गाल पर उसकी गर्म सांस का स्पर्श अनुभव किया और उसकी आंखों का सामना करने से बचने के लिए मैंने अपना मुंह मोड़ लिया। उसके शब्दों ने अंगारों की भांति मेरे मस्तिष्क को झुलसा दिया। मैं आतंकित हो उठा—यह सोचकर कि उसके सीधे-सादे सवालों का जवाब देना कितना कठिन है। और मैंने उनका जवाब नहीं दिया।

"और इसलिए मैं—तुमने और तुम्हारी जाति के अन्य लोगों ने जो कुछ भी लिखा है उस सब का एक सचेत पाठक—तुमसे पूछता हूं—तुम क्यों लिखते हो? संयोगवश तुमने काफ़ी लिखा है। क्या इसलिए कि लोगों के हृदयों में शुभ भावनाएं जाग्रत हों? लेकिन अपने ठंडे और थोथे शब्दों से तुम कभी ऐसा नहीं कर सकोगे। केवल इतना ही नहीं कि तुम जीवन में कोई नयी वृद्धि करने में असमर्थ हो, बल्कि पुराने को भी तुम इतनी चुड़ी-मुड़ी शक्ल में पेश करते हो कि सुस्पष्ट चित्र कहीं उभरकर नहीं आते। तुम्हारी कृतिया कुछ नहीं सिखातीं और पाठक सिवा तुम्हारे अन्य किसी चीज़ पर लज्जा का अनुभव नहीं करता। उनकी हर चीज़ आम-साधारण है—आम-साधारण लोग, आम-साधारण विचार, आम-साधारण घटनाएं। आत्मा के विद्रोह और आत्मा के पुनर्जागरण की आवश्यकता के बारे

में लोग कब बोलना शुरू करेंगे? रचनात्मक जीवन की वह ललकार कहां है, वीरत्व के दृष्टान्त और प्रोत्साहन के वे शब्द कहां हैं जिन्हें सुनकर आत्मा आकाश की ऊंचाइयों को छूती है?

"शायद तुम कहो – 'जो कुछ हम पेश करते हैं, उसके सिवा जीवन में अन्य नमूने मिलते कहां हैं?' न, ऐसी बात मुंह से न निकालना। यह लज्जा और अपमान की बात है कि वह, जिसे भगवान ने लिखने की शक्ति प्रदान की है, जीवन के सम्मुख अपनी पंगुता और उससे ऊपर उठने में अपनी असमर्थता को स्वीकार करे। अगर तुम्हारा स्तर भी वही है जो कि जीवन का, अगर तुम्हारी कल्पना ऐसे नमूनों की रचना नहीं कर सकती जो जीवन में मौजूद न रहते हुए भी उसे सुधारने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं, तब तुम्हारा कृतित्व किस मर्ज़ की दवा है और तुम्हारे धंधे की क्या सार्थकता रह जाती है? लोगों के दिमाग़ों को उनके घटनाविहीन जीवन के फ़ोटोग्राफ़िक चित्रों का गोदाम बनाते समय अपने हृदय पर हाथ रखकर पूछो कि ऐसा करके क्या तुम नुक़सान नहीं पहुंचा रहे हो? कारण – और तुम्हें अब यह तुरत स्वीकार कर लेना चाहिए – कि तुम जीवन का ऐसा चित्र पेश करने का ढंग नहीं जानते जो लज्जा की एक प्रतिशोधपूर्ण चेतना को जन्म दे, जीवन के नये रूपों की रचना करने की प्रज्वलित आकांक्षा को उजागर करे। क्या तुम जीवन की नब्ज़ को तेज़ और उसमें स्फूर्ति का संचार करना जानते हो, जैसा कि अन्य लोग कर चुके हैं?"

मेरा विचित्र सम्भाषणकर्त्ता रुक गया और मैं, बिना कुछ बोले, उसके शब्दों पर सोचता रहा।

"अपने चारों ओर ऐसे लोग तो मुझे काफ़ी नज़र आते हैं जो चतुर हैं, लेकिन नेक बहुत कम नज़र आते हैं, और ये कम भी ऐसे हैं

जिनकी आत्मा खंडित और रुग्न है। और, जाने क्यों, मेरा निरीक्षण मुझे हमेशा एक उसी नतीजे पर पहुंचाता है–एक आदमी जितना अच्छा और उसकी आत्मा जितनी अधिक ईमानदार तथा बेदाग़ होती है, उसकी शक्ति का भंडार उतना ही अधिक क्षीण, उसकी आत्मा उतनी ही अधिक रुग्न और उसका जीवन उतना ही अधिक कठिनाइयों में फंसा नज़र आता है। ऐसे लोग अदबदाकर एकाकी और दयनीय होते हैं। अपने समूचे हृदय से किसी अच्छे जीवन की आकांक्षा करने के बावजूद उनमें यह शक्ति नहीं होती कि वे उसकी रचना कर सकें। क्या यह सम्भव नहीं है कि उनके इस हद तक पस्त और पंगु होने का कारण केवल यह हो कि ठीक उस समय, जब कि उन्हें बढ़ावा मिलना चाहिए था, आवश्यक शब्द का किसीने उच्चारण नहीं किया? . .

"एक बात और," मेरा विचित्र साथी कहता गया–"क्या तुम ऐसी आह्लादपूर्ण हास्य की रचना कर सकते हो जो आत्मा का सारा मैल धो डाले? देखो न, लोग एकदम भूल गए हैं कि ठीक ढंग से कैसे हंसा जाता है? वे कुत्सा से हंसते हैं, वे कमीनेपन से हंसते हैं, वे अकसर अपने आंसुओं को बेधकर हंसते हैं, लेकिन वे हृदय के उस समूचे उल्लास से कभी नहीं हंसते जिससे बड़े लोगों के पेट में बल पड़ जाते हैं, पसलियां बोलने लगती हैं। अच्छी हंसी एक स्वास्थ्यप्रद चीज़ है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि लोग हंसें,–आख़िर यह क्षमता उन गिनी-चुनी चीज़ों में से एक है जो मानव को पशु से अलग करती हैं। क्या तुम सिवा फटकार के अन्य किसी प्रकार की हंसी को भी जन्म दे सकते हो–उस बाज़ारू हंसी के, जो मानव जीवधारियों को अपना शिकार बनाती है, और वे केवल इसीलिए हंसी के पत्र बनते हैं कि उनकी स्थिति दयनीय है? यह समझने की

कोशिश करो कि सीख देने का तुम्हारा अधिकार उन सच्चे भावों को जाग्रत करने की तुम्हारी क्षमता पर निर्भर करता है जो, हथौड़े की चोटों की भांति, जीवन को सीमित करनेवाले पुराने रूपों को चकनाचूर और नष्ट कर दें ताकि अधिक प्रशस्त रूपों का निर्माण किया जा सके। गुस्सा, घृणा, साहस, शर्म उकताना और, सबसे अन्त में, विक्षुब्ध झनझनाती निराशा—ये ऐसे अस्त्र हैं जिनके द्वारा इस धरती पर कोई भी चीज़ नष्ट की जा सकती है। क्या तुम ऐसे अस्त्रों की रचना कर सकते हो? और क्या तुम उनसे काम लेना जानते हो? तुम्हें अपने हृदय में मानव की कमज़ोरियों के लिए महान् घृणा का या साधारण मानव के लिए महान् प्रेम का—उसके दुखों की आग में जन्मे प्रेम का—पोषण करना चाहिए। तभी तुम लोगों को सम्बोधित करने के अधिकारी बन सकोगे। अगर तुम इन दोनों में से न इसका अनुभव करते हो और न उसका, तो सिर नीचा रखो और कुछ कहने से पहले सौ बार सोचो।"

सुबह की सफ़ेदी अब फूट चली थी। लेकिन मेरे हृदय में अंधेरा गहरा हो गया था। और यह आदमी, जो मेरे अन्तर के सभी भेदों से वाक़िफ़ था, अभी भी बोल रहा था। रह-रहकर मुझे ख़याल होता कि कहीं यह छलावा तो नहीं है?

लेकिन उसकी बातों ने मुझे इतना उलझा लिया था कि इस सवाल पर मैं अधिक ध्यान नहीं दे सका। उसके शब्द अब फिर सुइयों की भांति मेरे कानों को बींध रहे थे—

"इस सबके बावजूद जीवन पहले से प्रशस्त और गहरा होता जा रहा है, लेकिन यह बढ़ती धीमी गति से हो रही है। कारण कि इस गति को तेज़ बनाने योग्य न तो तुम्हारे पास शक्ति है, न ज्ञान है। जीवन बढ़ रहा है और लोग दिन प्रति दिन अधिक और अधिक जानना और

पूछताछ करना चाहते हैं। उनके सवालों का जवाब कौन दे? यह तुम्हारा– तुम्हारे जैसे लोगों का, जो अपने आप मसीहा बन बैठे हैं,– काम है। लेकिन क्या तुम जीवन में इतने गहरे पैठे हो कि उसे दूसरों के सामने खोलकर रख सको? क्या तुम जानते हो कि समय की मांग क्या है, क्या तुम्हें भविष्य की जानकारी है और क्या तुम अपने शब्दों से उस आदमी में नयी जान फूंक सकते हो जिसे जीवन की नीचता ने भ्रष्ट और निराश कर दिया है? उसका हृदय पस्त है, जीवन की कोई उमंग उसमें नहीं है,– भला जीवन बिताने की आकांक्षा तक को उसने विदा कर दिया है और केवल सुअर की भांति वह अब जीवन बिताना चाहता है, और– सुन रहे हो न– उपहास से भरी मुसकराहट उसके होंठों पर खेल जाती है जब 'आदर्श' शब्द का कोई उसके सामने उच्चारण करता है। ह्रास-ग्रस्त वह हड्डियों का एक पुंज बन गया है जो मांस और मोटी चमड़ी से ढंका है, और हड्डियों का यह पुंज आत्मा से नहीं बल्कि लालसा से– वासना से– हिलता-डोलता और हरकत करता है। उसे तुम्हारी बेहद ज़रूरत है। जल्दी करो और इससे पहले कि उसका मानवीय रूप अन्तिम रूप से उससे विदा हो उसे जीने का ढंग बताओ। लेकिन तुम किस प्रकार उसमें जीवन की चाह जगा सकते हो जब कि तुम बुदबुदाने और भुनभुनाने और रोने-झींकने या उसके पतन की एक निष्क्रिय तसवीर खींचने के सिवा और कुछ नहीं करते? ह्रास की गंध धरती को घेरे है, लोगों के हृदयों में कायरता और दासता समा गई है, काहिली की नरम ज़ंजीरों ने उनके दिमाग़ों और हाथों को जकड़ लिया है,– और इस घिनौने जंजाल को तोड़ने के लिए तुम क्या करते हो? तुम कितने छिछले और कितने नगण्य हो, और कितनी बड़ी संख्या है तुम जैसे लोगों की! ओह, अगर एक भी ऐसी आत्मा का उदय

हुआ होता – कठोर और प्रेम में पगी, मशाल की भांति प्रकाश देनेवाले हृदय और सर्वव्यापी महान् मस्तिष्क से सज्जित! तब भविष्य-गर्भित शब्द घंटे की ध्वनि की भांति इस शर्मनाक खामोशी में गूंज उठते और शायद इन जीवित मुर्दों की घिनौनी आत्माओं में भी कुछ सरसराहट दौड़ती..."

यह कह वह फिर चुप हो गया। मैंने उसकी ओर नहीं देखा। याद नहीं पड़ता कि कौनसा भाव मेरे हृदय में तब छाया था – शर्म का अथवा डर का।

"बोलो, तुम्हें मुझसे कुछ कहना है?" उसने असंलग्न भाव से पूछा।

"कुछ नहीं," मैंने जवाब दिया।

इसके बाद फिर खामोशी छा गई।

"तुम्हारे जीवन का अब क्या कार्यक्रम है?"

"मैं नहीं जानता," मैंने जवाब दिया।

"तुम क्या लिखोगे?"

मैं चुप रहा।

"मौन उच्चतम बुद्धिमानी का मंत्र है।"

उसके इन शब्दों और उनके बाद में प्रकट होनेवाली उसकी हंसी के बीच जो शून्य बीता उसने मेरे मस्तिष्क की तमाम शिराओं को झंझोड़कर रख दिया। और जब वह हंसा तो आह्लाद से छलछलाता हुआ – उस आदमी की हंसी की भांति, जो इतने सहज भाव और आनन्द के साथ हंसने के अवसर की प्रतीक्षा में जाने कब से अपने आपको रोके हुए था। उसकी यह मारू हंसी सुनकर मेरा हृदय खून के आंसू रो उठा।

"हो-हो-हो! और तुम्हारा यह हाल है – तुम्हारा, जिसे

दूसरों को जीने का ढंग सिखाना है? तुम्हारा, जो इतनी जल्दी सकपका जाते हो? लेकिन यह मैं अब दावे के साथ कहता हूं कि तुम मन ही मन जान गए हो कि मैं कौन हूं? हो-हो-हो! और अन्य तमाम युवक भी, जो मां के पेट से ही बुढ़ापा लेकर आते हैं, मुझसे वास्ता पड़ने पर इसी प्रकार सकपका उठेंगे। केवल वही, जो झूठ, उद्धतपन और बेशर्मी का कवच धारण किए हैं, अपनी आत्मा के फ़ैसले की आवाज़ सुनकर नहीं मसकते। सो यही है तुम्हारी दृढ़ता – एक धक्का खाया और तुम उलटे हो गए। बोलो अपने बचाव में एक शब्द, – केवल एक ही शब्द कहो, मैंने जो कुछ कहा है उसकी सचाई से इनकार करो, अपने हृदय से दुख और लज्जा का बोझ उतार फेंको, एक क्षण के लिए ही सही मज़बूती और आत्मविश्वास का परिचय दो, – तब मैं वह सब कुछ वापिस ले लूंगा जो कि मैंने कहा है। मैं तुम्हारे आगे माथा झुका दूंगा। अपनी आत्मा के उस गुण का कम से कम कुछ तो परिचय दो जिसने तुम्हें शिक्षक बनने का अधिकार दिया है। मैं ख़ुद सीख लेना चाहता हूं। आख़िर मैं भी एक आदमी ही हूं। मैं जीवन की इस अंधी भूल-भुलैयां में खो गया हूं और ऐसे पथ की खोज में हूं जो मुझे प्रकाश, सचाई, सौन्दर्य और जीवन के एक नये रूप की ओर ले जाए। मुझे वह रास्ता दिखाओ। मैं आदमी हूं। मुझसे घृणा करो, कोड़ों की मार मुझे दो, लेकिन उदासीनता के इस गर्त से मुझे उबारो। मैं जो कुछ हूं उससे अच्छा बनना चाहता हूं, – लेकिन कैसे? मुझे सिखाओ कि ऐसा किस प्रकार हो सकता है?"

और मैंने सोचा – "क्या मैं यह कर सकता हूं? क्या मैं उन मांगों को तुष्ट कर सकता हूं जिन्हें इस आदमी ने वाजिबी तौर से मेरे सामने रखा है? जीवन की चिंगारियां बुझ रही हैं, सन्देह की काली छायाएं

अधिकाधिक घनी होकर लोगों के दिमाग़ों को घेर रही हैं, बाहर निकलने का कोई न कोई रास्ता खोजना होगा,—यह रास्ता कौनसा हो सकता है? एक बात मैं जानता हूं कि सुख-समृद्धि का मूल्य क्या है। जीवन की समर्थकता सुख-समृद्धि में नहीं है,— अपने में भरमाए रहना भी मानव को अधिक देर तक सन्तुष्ट नहीं रख सकता—सब कुछ होते हुए भी, आख़िर, वह उससे ऊपर है। जीवन की सार्थकता किसी लक्ष्य के लिए मानव की कोशिशों के सौन्दर्य और शक्ति में निहित है, और यह आवश्यक है कि उसके अस्तित्व का प्रत्येक क्षण अपने ऊंचे उद्देश्य से अनुप्राणित हो। और ऐसा होना सम्भव है। लेकिन जीवन के पुराने ढांचे के रहते नहीं, जो आत्मा को कुण्ठित-सीमित और उसे उसकी आज़ादी से वंचित कर देता है।"

एक बार फिर मेरा साथी हंसा, लेकिन इस बार शांति के साथ—उस आदमी की हंसी की भांति, जिसके हृदय में विचारों का धुन लगा हो।

"इस धरती पर जाने कितने आदमी जन्म लेते हैं, फिर भी अपने पद-चिन्ह छोड़ जानेवाले महान् आदमियों की संख्या कितनी कम है! ऐसा क्यों है? अतीत में,—जहन्नुम में जाए वह अतीत! उसकी याद हृदय में केवल ईर्ष्या का संचार करती है, कारण कि वर्तमान में ऐसा कोई नहीं है जिससे यह आशा हो कि अपने मरने के बाद इस धरती पर वह अपना ज़रा-सा भी चिन्ह छोड़ जाएगा। मानव ऊंघ रहा है और उसे जगानेवाला कोई नहीं है। वह ऊंघ रहा है और पलटकर जंगली जीव बनता जा रहा है। उसे कोड़ों की मार की—एक के बाद एक कोड़ों की वर्षा की—और प्रेम में पगे दुलार की ज़रूरत है। इस बात की चिन्ता न करो कि उसे चोट लगेगी। अगर, प्रेम करते हुए, तुम उसे कोड़ों की मार देते हो तो वह बुरा न मानेगा और कोड़ों

की मार को सुअर्जित पुरस्कार समझ स्वीकार करेगा। और जब वह यातना तथा लज्जा भुगत चुके, तब उन्मुक्त होकर अपने दुलार से उसे छा दो,–वह एक नया आदमी बन जाएगा। लोग निरे बच्चे होते हैं, बावजूद इसके कि कभी-कभी उनके कृत्यों की कुटिलता और उनके मस्तिष्क की विकृति हमें स्तब्ध कर देती हैं। प्रेम और ताज़े तथा स्वस्थ आध्यात्मिक भोजन की उनकी भूख कभी कम नहीं होती। क्या तुम लोगों से प्रेम करने की क्षमता रखते हो?"

"लोगों से प्रेम करना?" मैंने दुविधा से दोहराया। कारण, मुझे बेशक पता नहीं था कि मैं लोगों से प्रेम करता हूं अथवा नहीं। सचमुच, मुझे यह पता नहीं था। कौन है जो अपने बारे में कह सके– "देखो, तुम्हारे सामने एक ऐसा आदमी हाज़िर है जो लोगों से प्रेम करता है!" अपने व्यवहार की सावधानी से परख करनेवाला आदमी, काफ़ी सोचने के बाद भी, शायद यह कहने का साहस नहीं करेगा कि "मैं प्यार करता हूं।" हम सभी जानते हैं कि हर आदमी के और उसके पड़ोसी के बीच कितनी बड़ी खाई खुदी है।

"तुम कुछ जवाब नहीं देते? लेकिन इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। तुम्हें मैं समझता हूं। अच्छा, तो मैं अब चला।"

"इतनी जल्दी!" मैंने धीमी आवाज़ में कहा। कारण, मैं उससे चाहे जितना भी भयभीत था, लेकिन उससे भी अधिक मैं खुद अपने से डरता था।

"हां, मैं जा रहा हूं। लेकिन मैं फिर लौटकर आऊंगा। मेरी प्रतीक्षा करना!"

और वह चला गया।

लेकिन क्या वह सचमुच चला गया? मैंने उसे जाता हुआ नहीं देखा। वह इतनी तेज़ी और खामोशी से ग़ायब हो गया जैसे छाया।

मैं वहीं बाग़ में बैठा रहा – जाने कितनी देर तक, – न मुझे ठंड का पता था, न इस बात का कि सूरज उग आया है और पेड़ों की बर्फ़ से ढकी टहनियों पर चमक रहा है। और जब मैंने इधर ध्यान दिया तो बड़ा अजीब-सा मालूम हुआ वह उजला दिन, – सूरज सदा की भांति उसी असंलग्न भाव से चमक रहा था और पुरानी धरती, युग-युग के दुःखों को अपने हृदय में समेटे, बर्फ़ की चादर ओढ़े पड़ी थी। सूरज की किरनें उस चादर पर पड़ रही थीं और वह इतनी तेज़ी से चमचमा रही थी कि आंखें चौंधिया जाती थीं...

१८९५ – १८९८



कवि

एक रेखा-चित्र

शूरा स्कूल से घर आई, अपना कोट उतारा और भोजन के कमरे में चली गई। उसकी मां पहले से ही वहां मेज़ पर बैठी थी। शूरा को देखकर वह मुसकराई। शूरा को लगा कि मां आज कुछ अजीब ढंग से मुसकरा रही है, और इससे उसकी उत्सुकता तुरत जाग्रत हो गई। लेकिन वह बड़ी

हो गई थी और सवालों की झड़ी लगाकर अपनी उत्सुकता का प्रदर्शन करना अशोभनीय समझती थी। उसने मां के पास पहुंच उसका माथा चूमा और आईने में अपने ऊपर एक नज़र डाल अपनी जगह पर बैठ गई। तभी एक बार फिर उसे वहां कुछ असाधारणता का अनुभव हुआ, – मेज़ पूरी सजी थी और पांच आदमियों का उसपर इन्तज़ाम था। मतलब यह कि कोई ख़ास बात नहीं थी, सिवा इसके कि किसीको खाने पर बुलाया गया था। शूरा ने निराशा से सांस भरी। वह पापा, मां और चची ज़ीना की जान-पहचान के सभी लोगों से परिचित थी। उनमें एक भी ऐसा नहीं था जो कुछ दिलचस्प हो। हे भगवान्, कितने उबा देनेवाले थे वे सब, और कितनी उबा देनेवाली थी हर चीज़!

"यह किसके लिए है?" मेज़ पर लगे हुए अतिरिक्त सामान की ओर गरदन से इशारा करते हुए उसने उदासीनता से पूछा।

जवाब देने से पहले मां ने अपनी घड़ी पर नज़र डाली, फिर घंटे की ओर देखा, इसके बाद खिड़की की ओर घूमकर कुछ आहट-सी ली और अन्त में मुसकराते हुए बोली – "अन्दाज़ लगाओ।"

"मेरा मन नहीं करता," शूरा ने कहा और उसे लगा कि उसकी उत्सुकता फिर ज़ोर पकड़ रही है। उसे याद आया कि लूबा ने भी – जो घर की नौकरानी थी – उसके लिए दरवाज़ा खोलते हुए कुछ असाधारण अन्दाज़ में कहा था –

"ओह, बड़ा अच्छा हुआ जो तुम आ गईं!"

लूबा उसके आने पर बिरले ही इस तरह उछाह प्रकट करती थी, और उसके उछाह में इतना ज़ोर तो कभी भी नहीं होता था। शूरा यह अच्छी तरह जानती थी कि पारिवारिक जीवन की नीरस दिन-चर्या में अगर कोई हल्के से हल्का नया तत्व भी आ मिलता था तो उसकी शान्त सतह पर सुस्पष्ट लहरियां पड़े बिना नहीं रहती थीं, और शूरा का छोटा-सा

मस्तिष्क, जो नये अनुभवों का इतना प्यासा था, दृढ़ता से उनकी छाप ग्रहण किए बिना नहीं रहता था।

"कोशिश तो करो," उसकी मां ने फिर जोर दिया—"फिर कहना, मन करता है या नहीं।"

लूबा के उछाह और लहजे पर विचार करने के बाद शूरा को विश्वास हो गया कि निश्चय ही कोई मज़ेदार—बहुत ही मज़ेदार—बात होनेवाली है। लेकिन सीधे पूछते उसे कुछ हिचक मालूम होती थी।

"कहीं न कहीं से कोई न कोई आनेवाला है," उदासीनता का अभिनय करते हुए उसने कहा।

"बेशक," मां ने सिर हिलाया—"लेकिन कौन?"

"चचा जेन्या," शूरा ने अंधेरे में तीर छोड़ा और उसे लगा जैसे उसके गालों में लाली दौड़ रही है।

"नहीं, सम्बन्धी कोई नहीं। लेकिन कोई ऐसा आदमी आ रहा है जिसे तुम बेहद चाहती हो!"

शूरा की आंखें फैल गईं। इसके बाद वह सहसा उछलकर खड़ी हो गई और मां के गले से लिपट गई।

"ममी, क्या सचमुच?"

"बस, बस!" मां हंस रही थी और उसे धकेलकर अलग कर रही थी—"बड़ी पागल लड़की है। उसे आने दे, तेरी सारी हरकत मैं उससे कह दूंगी।"

"ममी! क्रिम्स्की तो नहीं? क्या वह आ गया है? और क्या पापा उसीको लिवाने गए हैं? और चची ज़ीना? ओह, अब वे आते ही होंगे... ममी, मैं अपने सुरमई कपड़े पहन आऊं। ओह, वे आ रहे हैं! वे यहां आ रहे हैं!"

विह्वल और प्रसन्न, उछलते-कूदते मां की कुर्सी का उसने चक्कर

लगाया । उसके गाल लाल हो गये थे। फिर वह आईने की ओर लपकी और अब कपड़े बदलने के लिए भाग ही रही थी कि तभी नीचे ड्योढ़ी के फाटक के खुलने की आहट सुनाई दी। वह फिर आईने के सामने लौट आई, अपने बालों को थपथपाकर ठीक किया, सीधी सयानी बनकर मेज़ पर बैठ गई और विह्वलता को छिपाने के लिए उसने अपनी आंखें मूंद लीं। जब वह उन्हें खोलेगी तो क्रिम्स्की कमरे में होगा, उसके निकट, उससे केवल एक ही कुर्सी दूर। वह एक कवि था जिसकी कविताएं बार-बार पढ़कर भी वह नहीं अघाती थी और जिसे समूचा स्कूल आधुनिकों में सबसे अच्छा कवि मानता था! कितनी कोमल, कितनी दुलार-भरी, कितनी मधुर और कितनी उदास पंक्तियां लिखता है वह! ओह, एकदम अलौकिक! वही अब यहां होगा,— हाड़-मांस में, सशरीर, उसके निकट, उससे बातें करता और कविताएं सुनाता, जिन्हें कालेज की लड़कियों ने शायद कभी नहीं सुना होगा। कल जब वह कालेज जाएगी तो उनसे कहेगी—"काश कि तुम क्रिम्स्की की वे रचनाएं सुन पातीं!" वे पूछेंगी—"कौनसी?" और वह उन्हें नयी कविता सुना देगी और जब वे पूछेंगी कि यह कहां मिली तो वह गर्व के साथ—ओह, भारी गर्व के साथ—उन्हें बताएगी कि अभी यह कहीं प्रकाशित नहीं हुई, और यह कि कल क्रिम्स्की उनके घर आया था और खाने की मेज़ पर वह उसके पास ही बैठा था। तभी उसने यह रचना सुनाई थी।

आश्चर्य से उनकी आंखें फटी रह जाएंगी, ईर्ष्या से उनके हृदय कुड़मुड़ा उठेंगे। और वह छछूंदर की बच्ची कीकिना,—उसे तो ग़श ही आ जाएगा। तब उसे मालूम होगा कि कौन अधिक अच्छा है—बहिन के रूप में एक गायिका अथवा परिचित के रूप में एक कवि। और अन्य सब,—वे उसके पीछे पड़ जाएंगी। बार-बार उससे कहेंगी—"शूरा, हमें भी उसे दिखा दो।" और... और अगर वह सहसा उससे प्रेम करने लगा तो? यह बिल्कुल सम्भव है। वह कवि है न? और कवि हमेशा एकाएक

प्रेम करने लगते हैं। ओ मेरे भगवान्!.. और उसकी मूंछें, – किस काट की होंगी वे? और उसकी आंखें? बड़ी-बड़ी और उदास – इसमें शक नहीं – और उनके नीचे काले घेरे पड़े हुए। और तोते ऐसी नाक। मूंछें काले रंग की। "शूरा," अपने हाथों को मरोड़ते और घुटनों के बल उसके सामने गिरते हुए वह उससे कहेगा – "शूरा! तुम्हें देखते ही मुझे ऐसा मालूम हुआ जैसे 'नये जीवन का सूरज निकल आया, और मेरा हृदय आशा से थरथरा उठा... तुम्हीं हो वह, यह मैं अपनी समूची शक्ति से कहता हूं, – कारण, मेरी आत्मा ने तुम्हें पहचान लिया है।'" ओह, लेकिन ये पंक्तियां तो उसकी बहुत पहले की लिखी हुई हैं। तब...

"दमघोट ऊमस, धूल, वीभत्स गंध, – सारी रात मेरी आंख नहीं लगी!"

कविता और कल्पना के स्वप्न-जगत् से खींचकर वास्तव जगत् में शूरा को ले आनेवाली आवाज़ बहुत ही मुलायम और आकर्षक थी, हालांकि उसमें भाग्य के सिर-चढ़े आदमी के रूखे तथा चिड़चिड़े स्वरों की ध्वनि भी मौजूद थी। शूरा ने अपनी आंखें खोलीं और खड़ी हो गई। एक लम्बा, दुबला-पतला आदमी मखमल की काली जाकेट और चौड़ी मोहरी की भूरी पतलून पहने उसकी ओर आ रहा था।

"अच्छी तो हो, युवती रानी। तुम मुझे भूल गईं, – क्यों, ठीक है न? बेशक, बिल्कुल भूल गईं!"

"मैं..." शूरा सकपका गई – "मैं आपकी कविताएं तो हमेशा पढ़ती हूं, लेकिन पिछली बार जब आप यहां आए थे तब मैं एक छोटी लड़की ही तो थी।"

"और अब तुम बड़ी लड़की हो गई हो," कवि ने मुसकराते और उसे अपनी नज़र से नापते हुए कहा। वह कुछ और भी कहना चाहता था,

लेकिन केवल अपने होंठों को भीतर की ओर खींचकर रह गया और एक कुर्सी पर बैठते हुए उसके पिता से बोला—

"मिख़ाईल, यहां तुम्हें जगह तो बहुत बढ़िया मिल गई है!"

शूरा ने अपना सिर झुका लिया था और उसकी आंखें प्लेट पर टिकी थीं। प्लेट की चिकनी सतह पर उसे कवि के चेहरे का अक्स दिखाई दे रहा था। उसकी भूरी पतलून, बाल-छंटा सिर और पतली लाल मूंछें उसे अच्छी नहीं लगी थीं,—ओह, कविता से एकदम शून्य, एकदम नीरस!

और उसके हजामत-बने गाल—नीलापन लिए, और उसकी ठोड़ी, और अपने होंठों को भीतर खींचने की उसकी आदत! उसकी आंखें बहुत हल्की थीं—क़रीब-क़रीब बेरंग, उनके नीचे थैलियां-सी लटकी हुई और उसके माथे पर झुर्रियां पड़ी थीं। सच पूछो तो वह ठीक उस क्लर्क जैसा लग रहा था जिसे उसने डाकख़ाने में देखा था। उसकी चेष्टा में कुछ भी, ज़रा-सी भी, कविता नहीं थी। और उसके हाथ? शूरा ने कनखियों से उन्हें देखा। वे थलथल थे, उंगलियां छोटी और मोटी-झोटी। एक उंगली में वह अंगूठी पहने था जिसमें सुलैमानी नग जड़ा था। शूरा ने भारी दुख से एक गहरी सांस ली।

"सो तुम मेरी कविताओं का पाठ करती हो?"

यह वह उससे कह रहा था। उसने सिर हिलाया और उसके गाल लाल हो आए।

"हां तो—क्या मैं पूछ सकता हूं?—तुम्हें पसन्द आई?"

"ओह, तुम्हारी कविताओं पर तो ये सब पागलों की भांति टूटती हैं," मां ने कहा।

"आह, भाग्य से ही इतनी प्रशंसा मिलती है।"

"बिल्कुल नहीं, यह झूठ है," शूरा ने अपनी मां की बात काटी, लेकिन उसके शब्द देर से प्रकट हुए, कवि के बाद।

शूरा अचकचा गई, – यह क्या मूर्खता की उसने! मां, पापा, चची और वह – सब हंस रहे थे। उसने, जाने क्यों, अपनी भौंहें तक चढ़ा लीं और उसका चेहरा जोकरों ऐसा दिखने लगा। उसने अपनी भौंहें क्यों चढ़ाईं? और अन्य सबके साथ वह भी क्यों हंसा? वह कवि था और उसे अधिक संवेदनशील तथा व्यवहार-कुशल होना चाहिए था। क्या उसकी अचकचाहट उसे भी हास्यप्रद मालूम हुई, जैसी कि औरों को मालूम हुई थी? क्या वह भी अन्य सबकी भांति ही था? हो सकता है कि उसने केवल साथ देने के लिए ही ऐसा किया हो और बाद में वह फिर अपने प्रकृत रूप में आ जाएगा।

"तुम किस दर्जे में पढ़ती हो, शूरा?"

"छठी में।"

यह जानने की भला क्या ज़रूरत थी? और उसने उसे शूरा नाम लेकर क्यों सम्बोधित किया?

"और तुम्हें कौनसा टीचर सबसे अच्छा लगता है? ड्राइंग-टीचर, अगर मैं ग़लत नहीं समझता तो?"

"नहीं, साहित्य का।"

"अरे हां, साहित्य का टीचर," कह वह इतने ज़ोरों से हंसा कि कान बहरे हो जाएं।

शूरा को ऐसा मालूम हुआ जैसे उसकी एक-एक बोटी अलग की जा रही हो, उसके चिकोटियां काटी जा रही हों और उसके बदन में हज़ारों पिनें चुभाई जा रही हों। वह मेज़ से उठकर जान बचाना चाहती थी। उसे कंपकंपी चढ़ रही थी और उसे डर था कि वह अपने आंसुओं को उमड़कर बाहर आने से नहीं रोक सकेगी। उसने क्यों अपने आपको इतनी आसानी से पकड़ में आने दिया? विक्षोभ से कांपते हुए उसने कवि के चेहरे की ओर देखा, आंखों में झुंझलाहट और उत्तेजना की चमक लिए।

उसे डर लग रहा था कि अगर उसका साहस जवाब दे गया तो वह उन सब बातों को न कह सकेगी जो उसके मस्तिष्क में उमड़-घुमड़ रही थीं। इसलिए उसने, अपनी उंगलियों को मेज़ की ओट में उमेठते हुए एक सांस में कहना शुरू किया—

"क्या तुम्हें यह हंसी की बात मालूम होती है? लेकिन नहीं, यह हंसने की बात ज़रा भी नहीं है। हमारे टीचरों में वह सबसे अच्छा है और हम उसे अत्यधिक पसन्द करती हैं। वह इतने दिलचस्प ढंग से बोलता है—हमें पढ़कर सुनाता है—सभी तरह की पुस्तकें—साहित्य की दुनिया में जो भी नयी बात होती है, उसके बारे में बताता है और, कुल मिलाकर, वह एक बहुत ही अच्छा आदमी है। न हो तो चाहे जिससे पूछ देखो,—हमारे अपने दर्जे में या सातवें दर्जे में सब यही कहेंगे। तुम हंस रहे हो—आखिर क्यों? निश्चय ही मैं..."

"शूरा! तुम्हें यह हो क्या गया है?" उसके पिता ने चिल्लाकर कहा।

"हमने युवती रानी को नाराज़ कर दिया है," क्रिम्स्की ने कोमल आवाज़ में कहा—"मैं माफ़ी चाहता हूं।"

उसकी यह माफ़ी शूरा के कानों में ऐसी मालूम हुई जैसे कोई मूंग दल रहा हो। उसे उसमें सचाई का अभाव दिखाई दिया और उसे लगा जैसे उसके शब्द उपेक्षा में डूबे हों,—मानो इस बात में उसे ज़रा भी दिलचस्पी नहीं है कि वह उन्हें स्वीकार करती है अथवा नहीं। उसकी बला से! इसके अलावा उसे लगा जैसे वह यहां अजनबी की भांति बैठी हो, और यह कि इनमें से किसीको भी उसकी ज़रूरत नहीं है। उसे अपने पर दया आई और भोजन के समूचे दौरान में इस तरह बैठी रही जैसे उसे धुंध ने लपेट लिया हो,—अपने हृदय में उमड़ती उदासी पर—एक ख़ामोश और भीतर ही भीतर कचोटनेवाली उदासी पर—ध्यान जमाए।

"सो यह है वह कवि! अन्य सबकी भांति उसी एक ठप्पे में ढला हुआ।" उसका मस्तिष्क भोजन के बाद भी रह-रहकर यही सोच रहा था। अपने कमरे में खिड़की के पास वह बैठी थी और बग़ीचे में अपनी प्रिय लिलक की झाड़ियों की ओर देख रही थी—बड़े ध्यान से और एकटक, जैसे पहली बार ही उन्हें देख रही हो।

"जैसे अन्य सब, वैसा ही वह भी। लेकिन तब पापा कविता क्यों नहीं लिखते? इस कवि से क्या वह किसी बात में कम हैं?" कवि की कुछ पंक्तियां उसके दिमाग़ में घूम गईं—कितनी आवेगमयी, हृदय को मथ देनेवाली!—गीत की लड़ियों में पिरोए हुए शब्द, उदासी में पगी कोमलता मे ओत-प्रोत! भोजन के समूचे दौरान में एक बार भी उन शब्दों की झलक नहीं मिली—उसके मुंह से वे प्रकट नहीं हुए,—निश्चय ही उसे उन्हें लिखने का एक अभ्यास-सा पड़ गया है, जैसे सोन्या साज़ीकोवा काग़ज़ के अपने अद्भुत फूल बनाने की अभ्यस्त हो गई है। सब उसे देखकर ईर्ष्या करते हैं, लेकिन वह केवल हंस देती है और कहती है—"ओह, इन्हें बनाना बड़ा सहज है।"

बग़ीचे में से बोलने की आवाज़ सुनाई दी। ये पापा और क्रिम्स्की थे। अगर वे वहां, लिलक की झाड़ियों के पीछे, बेंच पर बैठ गए तो उनके मुंह से निकला प्रत्येक शब्द वह सुन सकेगी। शूरा की गरदन लम्बी होकर खिड़की से बाहर निकल आई, और वह देखने लगी कि उनके डग किस ओर बढ़ते हैं।

"तुम्हारी नवीनतम पुस्तक की बिक्री कैसी है?" पिता उससे पूछ रहे थे।

"बुरी नहीं। मैं उसका दूसरा संस्करण निकालने की सोच रहा हूं। लेकिन लोग उसे जितना अधिक कौतुकवश खरीद रहे हैं, उतना इस कारण नहीं कि उन्हें कविता से प्रेम है। पुस्तक के निकलते देर नहीं हुई कि कम्बख़्त

आलोचकों ने शोर मचा दिया – ह्रासोन्मुखी! लोग जानना चाहते हैं कि यह ह्रासोन्मुखी क्या बला है, जिसके बारे में इतना कुछ कहा जा रहा है और जो एक सिरे से ऐसा है कि क़तई समझ में नहीं आता। इस सबसे मुझे लाभ होता है। वे पुस्तक ख़रीदते हैं, केवल यह देखने के लिए कि ह्रासोन्मुखी किसे कहते हैं।"

क्रिम्स्की की आवाज़ क्षीण उपहास से भरी थी, लेकिन उसम विक्षोभ का स्वर भी साफ़ झलक रहा था, और इस स्वर ने खिड़की पर बैठी लड़की के हृदय के तारों को झनझना दिया।

"हां," पापा ने कहा – "आलोचक तुम लेखकों के साथ काफ़ी कठोरता बरतते हैं।"

"वे मांग करते हैं कि कवि नागरिकों के प्रतिशोध और विलाप को वाणी प्रदान करे। अपने घोंसलों में आराम से बैठे वे कल्पना करते हैं कि लोग प्रतिशोध और विलाप चाहते हैं। बेहूदा बकवास! हमारे आज के जीवन में नागरिक जैसी कोई चीज़ नहीं है। केवल लोग हैं – एक ओर तो मूर्ख और अपने आप में सन्तुष्ट और दूसरी ओर थके-हारे तथा असन्तुष्ट। बस, इससे अधिक कुछ नहीं। लेकिन हमारे ये आलोचक नामधारी भद्रजन इस दुखद स्थिति से अपरिचित हैं। वे केवल किताबों से वास्ता रखते हैं, जीवन से नहीं, – पुरानी परम्पराओं से उनका नाता है, नये विचारों से नहीं। और नयी पीढ़ी के युवक? 'युवक लोग, मेरे मित्र, आजकल मां के पेट से ही बूढ़े जन्म लेते हैं...' किसीने बहुत ही सही कहा है। कविता से वे कोई वास्ता नहीं रखते, वे किसी भी ऐसी चीज़ से वास्ता नहीं रखते जो आत्मा को निखारनेवाली हो। उनके लिए यह सब बेकार है। लेकिन जाने दो, छोड़ो इस मनहूस विषय को... ओह, कितनी सुन्दर लड़की के पिता हो तुम!"

"आख़िर कवि हो न! सौन्दर्य पर सबसे पहले नज़र जाती है!"

"देखो कम्बख़्त को!" शूरा फुसफुसाई और ख़ुशी से उसके गाल लाल

हो उठे। उसके शब्दों से उसने जो नतीजा निकाला था वह यह कि लोग उसकी रचनाओं को नहीं समझते और इसका विक्षोभ उसके शब्दों में प्रकट हो रहा था। उसकी आंखों में वह एक बार फिर कवि बनकर तैरने लगा। और इसके बाद ही यह अप्रत्याशित प्रशंसा!

"और हां, यह तो बताओ—बात कुछ अटपटी है—लेकिन..."

"मेरी उस पत्नी का क्या हाल है? मुझे यह तक नहीं मालूम कि वह कहां है। दो साल हुए सुना था कि वह काकेशस के किसी स्कूल में पढ़ाती है। उफ़, कम्बख़्त की याद आते ही एक कंपकंपी-सी चढ़ जाती है। कुछ स्त्रियां होती हैं जिनकी पवित्रता और बुद्धूपन से मैं इतना आतंकित हो उठता हूं कि इसे छिपाकर नहीं रख सकता। मेरी पत्नी भी ठीक उसी कँड़े की स्त्री है। अपने ऊपर इतना तरस मुझे कभी नहीं आया जितना कि उस समय जब मैंने उसे पहचाना कि वह क्या है। ईसा की पक्की चेली, अदबदाकर दुःख सहने में ही रस लेनेवाली है। एकदम असह्य! लेकिन छोड़ो, तुम्हारी चाय में अब क्या देर-वेर है!"

"कोई देर नहीं, आती ही होगी। लेकिन यह तो बताओ कि अब तुम क्या हो—अकेले या दुकेले?"

"फ़क़त दम। मई से। समूचे जाड़े एक फ़रिश्ते के साथ बीते। वह भी एक असाधारण मामला था, मेरे पुराने मित्र! वह मेरी प्रतिभा पर लट्टू थी। एक नन्ही चिंगारी और पढ़ी-लिखी भी, लेकिन दिमाग़ की पूरी हेच। जब दिमाग़ करवट लेता तो सारी पढ़ाई उलट जाती। पर छोड़ो उसके दिमाग़ को। उसका तो मैंने ऐसे ही ज़िक्र कर दिया। हम दोनों एकदम आकस्मिक ढंग से मिले—कम से कम अपनी ओर से मैंने कोई बंधान नहीं बांधा। एक पिकनिक में यह घटना घटी,—कुछ रंग-पानी भी हुआ। शैतान ही जानता है कि वह कैसे मेरे कमरे में हिलगी चली आई। सुबह जब मैं उठा और आंखें मलकर मैंने देखा तो बग़ल में श्रीमती जी मौजूद! मैंने

अपने को बधाई दी, कपड़े पहने और प्रतीक्षा करने लगा कि आगे क्या होता है।"

पापा ज़ोरों से हंस रहे थे। शूरा को ऐसा मालूम हुआ जैसे उनकी हंसी की आवाज़ उसके भीतर किसी चीज़ को चकनाचूर कर रही हो। उसका हृदय बुरी तरह कराह उठा।

"तुम भी खूब हो! हां तो फिर क्या हुआ?"

"हां तो वह उठी। आंसू बरसे। लाखों चुम्बनों और उतनी ही शपथ-दोहाइयों का अम्बार लग गया। दीन दुनिया को भूलकर एक सप्ताह तक खूब भोग में डूबे-उतराये। मैं तो जैसे निःसत्व ही हो यगा।"

"क्या उसके माता-पिता नहीं थे?"

"उन्हें उसने खबर तक नहीं होने दी। फिर धीरे-धीरे जीवन ने कान खींचना और अपना दख़ल जमाना शुरू किया, और वह बखेड़ा खड़ा हुआ कि जिसका सिर-पैर कुछ समझ में नहीं आता। सबसे पहले तो उसने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि मेरा चोगा—जिसपर और भी कुछ नहीं तो मैंने पैंसठ रूबल ख़र्च किए थे—मेरी कोमल, अद्भुत और मनोहर कविताओं से क़तई मेल नहीं खाता। मैंने झिड़का, उसने आंसू बहाए। अच्छा-खासा तमाशा हो गया। और इसके बाद पता चला कि अपनी कल्पना में कवि को वह एक ऐसा दैवी जीव समझती है जिसे या तो आकाश में विचरना चाहिए अथवा उसके हृदय में बन्द रहना चाहिए। उसने बाहर पांव रखा कि गड़बड़ हुआ। ओह, बुरा हो उस शैतानी शिक्षा-दीक्षा का, जो हमारी स्त्रियों के दिमाग़ों में यह सब खुराफ़ात भरती है। झगड़े, आंसू, मां बनने के संकेत, यह मांग कि हर बात सिर झुकाकर मानी जाए। मैं जान बचाकर भागा और गद्य में उसे लिखा—'कवि सब कुछ छोड़ सकता है, लेकिन अपनी आज़ादी नहीं छोड़ सकता।'"

"हां तो फिर?" पिता ने धीमी आवाज़ में पूछा।

"मैं उसे पच्चीस रूबल प्रतिमास दे रहा हूं।"

शूरा को ठंड महसूस हुई और उसके रोम-रोम में शीत की कंपकंपी-सी दौड़ गई। लेकिन वह आंखों को पूरी तरह फैलाए खिड़की से बाहर ताकती रही।

"तो यह वजह है जो इधर की तुम्हारी कविताएं निराशा में इतनी अधिक डूबी नजर आती हैं!"

"क्या तुमने मेरी वह रचना पढ़ी है – 'स्मृतियों की विचित्र भीड़ नहीं लेने देती चैन रात के अंधेरे में!'?"

"हां, तो फिर?"

"उसमें मैंने अपनी सनसनाहटों का – उस मूर्खतापूर्ण कहानी के छायावशेषों का – वर्णन किया है।"

"वर्णन बहुत अच्छा हुआ है," पिता ने आह भरते हुए कहा – "इस क्षेत्र के – 'हृदय के भावों की धुंधली क़सीदाकारी' का चित्रण करने के – तुम शुरू से ही मास्टर हो।"

"इससे पता चलता है कि तुम मेरी रचनाएं सचमुच पढ़ते हो।"

"हां, बहुत कुछ। खुशामद की बात नहीं, तुम्हारी कविता अह्लादपूर्ण होती है।"

"धन्यवाद। बहुत कम लोग ऐसा कहते हैं, हालांकि – अगर सच पूछो तो – मैं जानता हूं कि मैं इस प्रशंसा का अधिकारी हूं।"

"बेशक, मेरे पुराने साथी। चलो, अब चाय पर चलें।"

"देखो न, आजकल कौन और कैसे लोग लिख रहे हैं और क्या लिख रहे हैं! कवि नहीं, वे गिद्ध हैं। वे भाषा की जान निकाल लेते हैं, उसे अंग-भंग कर डालते हैं। मैं उसे हृदय में संजोकर रखता हूं और कोशिश करता हूं..."

शूरा ने उन दोनों को बाग़ में से साथ-साथ जाते हुए देखा। पिता

अपनी बांह कवि की कमर में डाले थे। उनकी आवाजें अस्पष्ट होती हुई विलीन हो गईं।

शूरा ने धीरे-धीरे अपने बदन को सीधा किया, जैसे कोई भारी चीज़ उसे नीचे की ओर दबाए हो और उसके लिए हरकत करना मुश्किल हो गया हो।

"शूरा, आओ। चाय तैयार है," मां ने आवाज़ दी।

वह उठकर खड़ी हो गई और दरवाज़े की ओर चल दी। आईने के पास से गुज़रते हुए उसने देखा कि उसका चेहरा पीला, खिंचा हुआ और भयभीत-सा हो गया है। उसकी आंखों पर जैसे कुहरे की एक चादर पड़ी थी। जब उसने भोजन के कमरे में प्रवेश किया तो परिचित चेहरे उसे आकारहीन सफ़ेद धब्बों की भांति दिखाई दिए।

"मैं आशा करता हूं कि युवती रानी अब मुझसे नाराज़ न होंगी," कवि की आवाज़ आई।

उसने कुछ नहीं कहा। वह उसके बाल-छंटे सिर पर नज़र जमाए यह याद करने की कोशिश करती रही कि वह—यह आदमी—उस समय उसे कैसा मालूम होता था जब कि वह उसकी रचनाएं पढ़ती थी और उसे देखा नहीं था।

"शूरा, तुम जवाब क्यों नहीं देती? ओह, कितनी भारी अशिष्टता है!" पिता ने चिल्लाकर कहा।

"आप लोग मुझसे क्या चाहते हैं?" यह चिल्ला उठी और उछलकर खड़ी हो गई—"मेरी जान बख़्शो! ढोंगी!"

सुबकती हुई वह भोजन के कमरे से बाहर भाग गई।

"ढोंगी!" बेक़ाबू हो वह फिर चीख उठी।

कई मिनट तक चारों जो मेज़ पर चुपचाप बैठे एक दूसरे के मुंह

की ओर अचरज से देखते रहे। तब मां और चची उठकर बाहर चली गईं।

"क्या ऐसा हो सकता है कि उसने हमारी बातें सुन ली हों?" पिता ने कवि से पूछा।

"छोड़ो, जहन्नुम में जाए यह सब!" उसने सकपकाकर कहा और बेचैनी से अपनी कुर्सी में कसमसाने लगा।

मां वापिस लौट आई।

"वह रो रही है," उनकी प्रश्नसूचक नज़रों का जवाब देते हुए उसने कहा और अपने कंधों को बिचकाकर रह गयी।

१८९६



कोनोवालोव

मैं समाचारपत्र पर नज़र डाल रहा था कि कोनोवालोव का नाम दिखाई पड़ा। उसने तुरन्त मेरा ध्यान खींचा। पत्र में छपा था—

"पिछली रात स्थानिक जेल के तीन नम्बर के सैल में मुरोम-निवासी एक आदमी ने, जिसका नाम अलेक्सान्दर कोनोवालोव था और

ग्रायु चालीस वर्ष, चिमनी की छतरी से फांसी लगाकर जान दे दी। ग्रात्महत्या करनेवाला प्स्कोव में ग्रावारागर्दी करते पकड़ा गया था ग्रौर उसे उसके नगर भेजने का निश्चय किया गया था। जेल-ग्रधिकारियों ने पुष्टि की है कि वह एक ख़ामोश, शांतिप्रिय ग्रौर चिन्ताशील ग्रादमी था। जेल के डाक्टर की रिपोर्ट के मुताबिक़ उसकी ग्रात्महत्या का कारण मैलन्कोलिया के — उदासी ग्रौर खिन्नता के — दौरे ग्राना है।"

इस संक्षिप्त-सी सूचना को पढ़कर मुझे लगा कि इस शांत चिन्ताशील व्यक्ति की हत्या के कारणों पर — उन कारणों पर, जिनकी वजह से उसने ग्रपने जीवन का ग्रन्त किया, — मैं ग्रधिक प्रकाश डाल सकता हूं। मैं उसे जानता था ग्रौर यह शायद मेरा कर्त्तव्य था कि मैं घोषित करूं — वह एक शानदार जीव था ग्रौर यह कि ऐसे लोग इस दुनिया में बहुत कम नज़र ग्राते हैं।

...मैं ग्रठारह वर्ष का था जब कोनोवालोव से मेरा परिचय हुग्रा। उस समय मैं एक बेकरी में — बिस्कुट, पाव-रोटी ग्रादि बनाने के कारख़ाने में — बेकर के सहायक के रूप में काम करता था। बेकर एक सैनिक था, — फ़ौज के बाजा बजानेवाले जत्थे में रह चुका था। वह जन्मजात पियक्कड़ था ग्रौर ख़मीर को ग्रक्सर ख़राब कर देता था। जब वह नशे में धुत्त होता तो ग्रपने होंठों से या जो भी चीज़ सामने होती उसीपर ग्रपनी उंगलियों से धुन बजाया करता। पाव-रोटियों को ख़राब करने या सुबह होने तक उनके तैयार न होने पर जब बेकरी का मालिक उसे झिड़कता तो वह ग्राग बगूला हो जाता, मालिक को जी भरकर कोसता ग्रौर उसे यह जताने की कोशिश करता कि वह कोई ऐरा-ग़ैरा नहीं, बल्कि एक संगीतज्ञ है। इसलिए उसके साथ चाहे जैसा बरताव नहीं किया जा सकता।

"ख़मीर का सत्यानास कर दिया!" वह चिल्लाता, ग्रपनी लम्बी

लाल मूंछों को फरफराता और अपने मांसल होंठ ज़ोर की आवाज़ के साथ फटाक से बन्द करता – "रोटी जला डाली। समन्दरसोख! शैतान उठा ले जाए तुझे! ऐंचाताना लकड़बग्घा! क्या तू समझता है कि मैं यह काम करने के लिए पैदा हुआ था? जहन्नुम में जाए तू और तेरा काम! तू नहीं जानता कि मैं संगीतज्ञ हूं। सब जता दूंगा। अगर वायोला-वादक नशे में गोल हो जाता तो मैं वायोला बजाता, अगर ओबो-वादक गिरफ़्तार हो जाता तो मैं ओबो बजाता, अगर कोरनैट-वादक बीमार पड़ जाता तो मैं उसकी जगह लेता। तूम-तारा-ए-तूम-तूम! वाह, तू मनहूस मेरी क्या क़द्र करेगा? कत्साप – रूमी छछून्दर! उठा अपना यह टंडीरा, मैं चला!"

और मोटा गावदुम मालिक, – एक अधकचरा-सा आदमी, छोटी मोटी टांगें, औरतों जैसा चेहरा, भिन्न रंगों की आखें, – फ़र्श पर इस हद तक पांव पटकता कि उसकी तोंद हिलने लगती, और चीख़ता –

"चोर! हत्यारा! ईमान-फ़रोश!" और ठूंठनुमा अपनी उंगलियों को चौड़ी फैलाकर अपने हाथों को वह सिर से ऊंचा उठा लेता और गला फाड़कर और भी ज़ोरों से चीख़ता – "और अगर मैं बाग़ी क़रार देकर तुझे पुलिस के हवाले कर दूं तो!"

"मुझे तू पुलिस के हवाले करेगा, – मुझे, जो ज़ार और देश का चाकर रहा है?!" सैनिक पलटकर चिल्लाता और इसके बाद, अपनी मुट्ठियों को ताने, थिर डगों से मालिक की ओर बढ़ता। मालिक नाक से फुंकार छोड़ता और ग़ुस्से में थूकता पीछे हट जाता, – सिवा इसके वह और कर भी क्या सकता था? वोल्गा तट के उस नगर में गर्मियों के दिनों में अच्छे बेकर मिलते नहीं थे।

इस तरह के दृश्य क़रीब-क़रीब आए दिन की घटना बन गए थे। सैनिक पीकर आता, ख़मीर को ख़राब कर देता और अभियान तथा

नृत्य की धुनों को—जिन्हें वह 'नम्बर' कहता था—बजाया करता। मालिक अपने दांत पीसता और मुझे इस सबके परिणामस्वरूप दो आदमियों का काम करना पड़ता।

सो मुझे बड़ी ख़ुशी हुई जब मालिक और सैनिक के बीच निम्न दृश्य घटित हुआ—

"हां तो सैनिक," बेकरी में प्रवेश करते हुए मालिक ने कहा—"हां तो सैनिक, ज़रा अपने होंठों को पटपटाकर कोई अभियान-धुन तो सुनाओ।"

मालिक का चेहरा ख़ुशी से छलछला रहा था और उसकी आंखें विजय से चमक रही थीं।

"क्या-आ-आ?" सैनिक ने मुंह फुलाकर वहीं से कहा जहां कि वह एक बेंच पर सदा की भांति नशे की तरंग में पड़ा था।

"यह कि अभियान के लिए तैयार हो जाओ!" मालिक ख़ुशी से छलछलाता बोला।

"कहां के लिए?" बेंच के कगार पर से अपनी टांगें नीचे गिराते हुए सैनिक ने पूछा। उसके हृदय में खटक गया था कि आज कुछ गड़बड़ है।

"जहां तुम्हारे सींग समाएं!"

"क्या मतलब?" सैनिक गुर्राया।

"मतलब यह कि अब मैं तुम्हें यहां नहीं रख सकता। अपनी पगार लो और—फ़ारवर्ड, मार्च! धरती की चार खूंटों की ओर!"

सैनिक को—जिसे मालिक को धकियाने की आदत पड़ गई थी क्योंकि उसे यक़ीन था कि उसके बिना मालिक का काम नहीं चलेगा—इस घोषणा ने ठंडा कर दिया। वह ख़ूब जानता था कि इस धंधे में अधिक

दख़ल न होने के कारण उसके लिए किसी दूसरी जगह काम पाना कठिन है।

"बस रहने दो, मज़ाक न करो," अपने लड़खड़ाते पांवों से जूझते हुए उसने घबराकर कहा।

"जल्दी करो, अपना रास्ता नापो!"

"रास्ता नापो?"

"निकल जाओ!"

"काम से ख़ारिज,–क्यों?" अपने सिर को तीखेपन से झटकते हुए सैनिक ने कहा– "तूने मेरा ख़ून चूसा है–एकदम सोख लिया है–और अब कूड़ा समझ बाहर फेंक रहा है। बड़ा चतुर है तू,–मक्कड़!"

"मैं,–मुझे तू मक्कड़ कहता है?" मालिक ने उबाल खाया।

"हां, तू मक्कड़ है,–ख़ून चूसनेवाला मक्कड़!" सैनिक ने निश्चयात्मक दृढ़ता से कहा और लड़खड़ाता हुआ दरवाज़े की ओर चल दिया।

उसे जाता हुआ देख मालिक के चेहरे पर एक मनहूस हंसी दौड़ गई और उसकी आंखें ख़ुशी से चमक उठीं।

"मुझे भी देखना है कि अब कहां तुझे काम मिलता है। कोई भी तुझे तोहफ़ा समझकर रखने के लिए तैयार नहीं होगा, जब उन्हें तेरा सारा हाल मुझसे मालूम हो जाएगा। नहीं, एक भी जीव तुझे ऐसा नहीं मिलेगा!"

"क्या तुमने नया बेकर खोज लिया है?" मैंने पूछा।

"नया बेकर ऐसा कुछ नया नहीं, पुराना पंछी है। वह पहले भी मेरा सहायक रह चुका है। क्या आदमी है! सोने से तौलने लायक! लेकिन पियक्कड़ वह भी है,–तक-तक! वह रोज़ नहीं पीता,

लेकिन जब दौर चलता है तो कई-कई दिन तक नशे में डूबा रहता है। तीन-चार महीने तक बैल की भांति वह काम में जुता रहेगा,—न सोएगा, न सुस्ताएगा, न पगार की पर्वाह करेगा। बस, काम श्रौर गाना। श्रौर जब वह गाता है तो हृदय के तार एकदम झनझना उठते हैं। जब गाने से उसका पेट भर जाता है तो नशे की धुन सवार होती है।"

मालिक ने एक गहरी सांस ली श्रौर निराश भाव से श्रपने हाथ को हवा में हिलाया।

"श्रौर एक बार धुन सवार होने पर जंगली घोड़े भी उसे नहीं रोक सकते। वह बस पीता जाता है, जब तक कि उसकी तबीयत ख़राब नहीं हो जाती या वह मादरज़ात नंगा नहीं हो जाता, श्रौर तब, शायद शरम से, वह किसी कोने में जा छिपता है,—ठीक वैसे ही जैसे धूनी से डरकर भूत-प्रेत कहीं जा छिपते हैं। यह लो, वह श्रा गया। क्यों, साशा, निश्चिन्त होकर ही श्राए हो न?"

"बिल्कुल!" दरवाज़े में से गहरी भरी श्रावाज़ श्राई।

श्रौर वह वहां, दरवाज़े की चौखट से कंधा श्रड़ाए, खड़ा था—लम्बा क़द, चौड़े कंधे, श्रायु क़रीब तीस वर्ष। उसके कपड़े ठीक वैसे ही थे जैसे कि श्रावारा लोगों के होते हैं, श्रौर उसका चेहरा एक सच्चा स्लाव चेहरा था। वह लाल कैलिको की फटी हुई श्रौर बेहिसाब गंदी कमीज़, मोटी लिनेन की चौड़ी मोहरी की पतलून, एक पांव में रबड़ के गैलोश (खोलनुमा जूते) का जो कुछ भी बाक़ी बच रहा था वह श्रौर दूसरे पांव में लीथरा हुश्रा चपड़े का एक जूता पहने था। उसके सुनहरे बाल बिखरे हुए थे श्रौर उनमें भूसे के तिनके उलझे थे। उसकी सुनहरी दाढ़ी भी, जो उसकी छाती पर पंखे की भांति फैली थी, तिनकों से सूनी नहीं थी। उसका पीला, जर्जर श्रौर

लम्बोतरा चेहरा दो बड़ी-बड़ी नीली आंखों से आलोकित था। उसकी आंखों में कोमलता की झलक थी। उसके होंठ—महीन, लेकिन बेरंग—सुनहरी मूंछों की छाया में मुसकरा रहे थे। उसकी मुसकराहट ऐसी थी मानो वह दीन भाव से कह रहा हो—

"जसा भी मैं हूं, तुम्हारे सामने हूं। देखो, मेरे साथ ज़्यादा सख़्ती न बरतना।"

"चले आओ, साशा, भीतर आ जाओ,—देखो यह तुम्हारा सहायक है," मालिक ने कहा, अपने हाथों को एक दूसरे से मलते और नये बेकर की सशक्त काठी की ओर मुग्ध भाव से देखते हुए। चुपचाप—बिना मुंह से एक शब्द कहे—वह भीतर चला आया और उसने अपना भीमाकार हाथ बढ़ा दिया। हमने एक दूसरे से हाथ मिलाए। दुआ-सलाम के बाद वह एक बेंच पर बैठ गया, अपनी टांगों को उसने चौड़ा लिया, पैरों की ओर उसने ताक कर देखा और फिर मालिक से बोला—

"वासिली सेम्योनोविच, मेरे लिए दो कमीज़ें और एक दो जोड़ी जूते ख़रीद दो। और टोपी के लिए कुछ लिनेन भी।"

"चिन्ता न करो, सब मिल जाएगा। टोपियां मेरे पास हैं, कमीज़ें और पतलून आज सांझ को ही ले आऊंगा। इस बीच अपने काम में जुट जाओ। मैं जानता हूं कि तुम कितने अच्छे आदमी हो, और तुम्हें मेरी शिकायत करने का कोई मौक़ा नहीं मिलेगा। कोनोवालोव से कोई बुरा बरताव नहीं करेगा क्योंकि वह ख़ुद किसीसे बुरा बरताव नहीं करता। मैं तुम्हारा मालिक हूं तो क्या,—मेरे भी हृदय है। एक दिन था जब मैं भी ख़ुद काम करता था, और मैं जानता हूं कि हौर्स-रेडिश ईन्धन का धूंवां कितना कड़ुवा होता है,—

वह आंखों में आंसू खींच लाता है। हां तो साथियो, अब अपना काम करो, मैं चला।"

और वह हमारे पास से चला गया।

कोनोवालोव, चुपचाप बैठा हुआ, अपने इधर-उधर देख रहा था और उसका चेहरा मुसकराहट से खिला था।

बेकरी निचले तल्ले में थी। उसकी छत डाटदार थी और उसकी तीन खिड़कियां सड़क की सतह से भी नीची थीं। रोशनी और हवा का बस नाम ही नाम था और धूल, सीलन और आटे की गर्द की भरमार थी। दीवार से सटे तीन बड़े पीपे रखे थे—एक खाली था, दूसरे में तैयार हुआ ख़मीर था और तीसरे में ख़मीर उठाया जा रहा था। रोशनी की एक पीली रेखा खिड़की में से उन तीनों पर आर-पार पड़ रही थी। तन्दूर की बग़ल में, जो कमरे का क़रीब एक तिहाई हिस्सा घेरे था, गंदे फ़र्श पर आटे के बोरे पड़े हुए थे। लकड़ी के बड़े-बड़े कुन्दे तन्दूर में फनफनाते हुए जल रहे थे और उनकी लपटों की छायाएं भूरी दीवार पर थिरक रही थीं,—ऐसा मालूम होता था जैसे वे सबकी सब एक साथ निःशब्द बतिया रही हों।

कारिख-जमी डाटदार छत हमारे सिरों पर लटकी जैसे हमें कुचल देना चाहती थी। दिन की रोशनी तन्दूर की रोशनी से मिलकर एक ऐसे धुंधले आलोक की रचना करती थी जिससे आंखें कड़ुवाने लगती थीं। धूल और सड़क की आवाज़ों की एक अडिग धारा खिड़कियों में से बराबर भीतर आती रहती थी। कोनोवालोव ने जैसे इस सबका जायज़ा लिया, एक आह भरी और भावहीन आवाज़ में बोला—

"क्या तुम बहुत दिनों से यहां काम कर रहे हो?"

मैंने उसे बता दिया। इसके बाद हम दोनों चुप हो गए और झुकी हुई भौंहों के नीचे से एक दूसरे को देखते रहे।

"यह तो पूरा जेलख़ाना है," उसने कहा—"चलो, ज़रा बाहर चलें और दरवाज़े के पास बेंच पर कुछ देर बैठें। क्यों, चल रहे हो न?"

हम बेंच पर पहुंच गए।

"यहां आदमी कुछ सांस तो ले सकता है। इस दरबे का आदी होने में मुझे कुछ समय लगेगा। समुद्र का किनारा छोड़कर मैं सीधे यहां चला आ रहा हूं। सो तुम ख़ुद सोच सकते हो। कास्पियन सागर पर मैं काम करता था। और अब, एकाएक, धरती के भीतर इस खोह में धकेल दिया गया हूं!"

उदास भाव से वह मेरी ओर मुसकराया और बोलना बन्द कर दिया। सड़क पर आते-जाते लोगों और सवारियों को वह घूरकर देख रहा था। उसकी स्वच्छ नीली आंखों में उदासी की झलक थी। सांझ घिर आई थी। सड़क शोर-गुल, ऊमस और गर्द से घिरी थी, घरों की परछाइयां सड़क के आर-पार रेंग रही थीं। कोनोवालोव दीवार के सहारे टिका था, उसकी बांहें उसके सीने पर क्रास का चिन्ह बनाए थीं और उसकी उंगलियां उसकी रेशमी दाढ़ी से खेल रही थीं। उसके पीले अंडेनुमा चेहरे पर मैंने कनखियों से देखा और मन ही मन सोचा—"कैसा आदमी है यह?" लेकिन मैं उससे बोलने का साहस नहीं कर सका,—एक तो इसलिए कि वह मेरा चीफ़ था, और इसलिए भी कि उसने मुझमें श्रद्धा के भाव जगा दिए थे।

उसके माथे में तीन महीन रेखाएं पड़ी थीं, लेकिन वे रह-रहकर मिट जाती थीं, और मैं यह जानने के लिए ललक रहा था कि इस आदमी के दिमाग़ में क्या कुछ उमड़-घुमड़ रहा है।

"चलो, वक्त हो गया। तुम दूसरा घान ओसनना और मैं तीसरे को तैयार करता हूं।"

एक घान के लायक ख़मीर को तौलने और दूसरे को ओसनने के बाद हम चाय पीने बैठ गए। कोनोवालोव ने अपनी कमीज़ के भीतर हाथ डाला और मुझसे बोला –

"क्या तुम पढ़ना जानते हो? यह लो, इसे पढ़ो," और उसने मेरे हाथ में एक मैला और चुरा-मुरा कागज़ थमा दिया।

मैंने पढ़ा –

"प्रिय साशा,

"पत्र द्वारा अभिवादन और चुम्बन। मैं अकेली और दुखी हूं और उस दिन की प्रतीक्षा में बैठी नहीं रह सकती जब कि तुम्हारे साथ यहां से चलना होगा या मैं तुम्हारे साथ रहना शुरू करूंगी। मैं इस गंदे जीवन से तंग और उकता गई हूं, भले ही शुरू-शुरू में यह मुझे अच्छा लगा हो। तुम जानते ही हो कि क्यों, और मैं भी तुमसे मिलने के बाद इसे समझने लगी हूं। जल्दी ही मुझे खत लिखना, तुम्हारे मुंह से दो शब्द सुनने के लिए मैं बेहद बेचैन हूं। अच्छा तो अब विदा, लेकिन हमेशा के लिए नहीं, – मेरे हृदय में बसनेवाले प्यारे दढ़ियल मित्र! तुमसे निराश होने पर भी – क्योंकि तुम पूरे सूअर हो – मैं तुम्हें खरी खोटी नहीं सुनाऊंगी। तुम मुझसे मिले तक नहीं और यहां से चले गए। लेकिन यह सब होने पर भी तुम्हारे साथ मैं सदा इतनी सुखी रही जितनी कि अन्य किसीके साथ नहीं, और यह मैं कभी नहीं भूल सकती। क्यों, साशा, क्या यह सम्भव नहीं था कि तुम लिस्ट से मेरा नाम हटवा लेते? लड़कियों ने तुम्हारे कान भर दिये कि अगर तुमने मेरा नाम हटवा दिया तो मैं तुम्हें ठुकरा दूंगी। लेकिन यह सब निरी बकवास और झूठ है। अगर तुम मुझे अच्छी तरह से रखते तो, एक बार लिस्ट से मुक्त होने पर, कुत्ते की भांति मैं कभी तुम्हारा साथ न छोड़ती। तुम आसानी से नाम

हटवा लेते, लेकिन मेरे लिए यह कठिन है। जब तुम मुझसे मिलने आए थे तो मैं इसीलिए रोने लगी थी कि मुझे ऐसा जीवन बिताना पड़ रहा है। लेकिन यह बात मैंने तुमसे खोलकर नहीं कही। अच्छा तो अब विदा।

तुम्हारी

कापीटोलिना।"

कोनोवालोव ने पत्र मुझसे ले लिया और खोया हुआ-सा अपने एक हाथ में उसे उलटने-पुलटने तथा दूसरे हाथ से अपनी दाढ़ी में बल डालने लगा।

"क्या तुम लिखना जानते हो?"

"हां, जानता हूं।"

"और क्या तुम्हारे पास दावात है?"

"हां, है।"

"तो उसे एक पत्र लिखो,—लिखोगे न? वह शायद मुझे टुकड़हा समझती है,—यह कि मैंने उसे एकदम भुला दिया है। सो उसे लिखो।"

"ज़रूर लिखूंगा, लेकिन वह है कौन?"

"एक वेश्या है। देखो, उसने लिखा है कि मैं उसका नाम लिस्ट से हटवा लूं। इसका मतलब यह कि मुझे पुलिस को वचन देना पड़ेगा कि मैं उससे विवाह करूंगा। तब वे उसका पासपोर्ट लौटा देंगे, उसका कार्ड वापिस कर लेंगे और वह मुक्त हो जाएगी,—समझ गए न?"

आध घंटे के भीतर ही हृदय को छूनेवाला एक पत्र तैयार हो गया।

"हां तो इसे पढ़कर सुनाओ। देखें, कैसा लगता है," कोनोवालोव ने उतावली से कहा।

मैंने पत्र पढ़कर सुनाया—

"प्रिय कापी,

"मुझे इतना गिरा हुआ न समझो कि मैं तुम्हें एकदम भूल गया। मैं भूला नहीं, लेकिन मुझे पीने की धुन सवार हुई और जो कुछ मेरे पास था सब पी गया। लेकिन मैंने अब फिर काम शुरू कर दिया है। कल मैं अपने मालिक से कुछ पेशगी लेकर फ़िलिप के पास भेज दूंगा और वह तुम्हारा नाम लिस्ट पर से हटवा देगा। यहां आने के खर्च के लिए भी मैं तुम्हें काफ़ी पैसा भेज दूंगा। बस, अभी इतना ही।

तुम्हारा
अलेक्सान्दर।"

"ऊंहुक," अपना सिर खुजलाते हुए कोनोवालोव ने कहा—"तुम्हें कुछ लिखना नहीं आता,—नहीं, तुम लिखना नहीं जानते। तुम्हारे इस खत में हृदय नहीं है, आंसू-वांसू कुछ भी नहीं हैं और इसके अलावा, मैंने तुमसे कहा था कि मुझे खूब ज़ोरों से लताड़ना, सो वह भी तुमने नहीं किया!"

"क्यों, मैं ऐसा क्यों करता?"

"उसे यह बताने के लिए कि मैं अपने से कितना लज्जित हूं और वह यह महसूस करे कि कितना बुरा सलूक मैंने उसके साथ किया है। अब समझे कि किसलिए? तुम्हारा यह पत्र तो एकदम भुरभुरा है,—घुनी हुई मटर की भांति। एक या दो आंसू तो चुआ दो।"

उसकी बात मानने के सिवा और कोई चारा नहीं था। सो मैंने, कारगर ढंग से, एक या दो आंसू चुआ दिए। कोनोवालोव

सन्तुष्ट हो गया। उसने मेरे कंधे पर हाथ रखा और उछाह में भरकर बोला –

"अब बढ़िया हो गया। धन्यवाद! तुम अच्छे आदमी नज़र आते हो। तुम्हारे साथ मज़े में निभ जाएगी।"

मुझे भी इसमें सन्देह नहीं था और मैंने उससे कापीटोलिना के बारे में बताने का अनुरोध किया।

"कापीटोलिना? वह युवती है,–निरी बच्ची। व्यात्का की रहनेवाली। किसी सौदागर की लड़की। लगी-बंधी लीक से भटक वह आगे बढ़ती गई,–जितना ही आगे बढ़ी, उतनी ही ठोकरें खाईं और अन्त में एक वेश्यालय में पहुंच गई। पहली बार जब मैंने उसे देखा तो धक रह गया–हाय भगवान्, यह सब कैसे हुआ! अभी तो यह निरी बच्ची है! हम दोनों में खूब मेल-जोल हो गया। वह रोती। मैं कहता–'चिन्ता न करो, धीरज रखो, मैं तुम्हें यहां से निकाल लूंगा। अभी ज़रा रुक जाओ।' और मैंने पूरी तैयारी कर ली–धन और अन्य सभी चीज़ों की–और इसके बाद एकाएक नशे का भूत सवार हुआ और मैं अस्त्राखान पहुंच गया। और वहां से यहां। किसीसे उसे पता चला कि मैं यहां हूं, सो उसने मुझे यह पत्र लिख भेजा।"

"अब तुम क्या करने की सोच रहे हो,–क्या उससे विवाह करोगे?" मैंने पूछा।

"मैं, और विवाह? एक पियक्कड़ भला कैसे विवाह कर सकता है? ओह नहीं, मैं तो केवल लिस्ट पर से उसका नाम हटवा दूंगा और तब वह–जहां उसका जी चाहे–आज़ादी से चली जाएगी। अपने लिए कोई न कोई माक़ूल घोंसला खोज लेगी और हो सकता है कि वह एक भली स्त्री सिद्ध हो।"

"लेकिन वह तो तुम्हारे साथ रहना चाहती है।"

"यह तो वह ख़ाली इतरा रही है। ये सभी ऐसी होती हैं। स्त्रियों की यह ख़ासियत है। मैं उनकी रग-रग पहचानता हूं। बहुतों से मेरा वास्ता पड़ा है। सौदागर की बीवी तक एक बार मेरे हत्थे चढ़ चुकी है। उन दिनों मैं एक सरकस में साईस का काम करता था। तभी उसकी नज़र मुझपर पड़ी। कहने लगी–'चलो, हमारे यहां कोचवान का काम करना।' सरकस से मैं तंग ग्रा गया था। सो मैं उसके साथ चल दिया। हां, तो इस तरह उंगली-उंगली पकड़ते-पकड़ते पोंहचे का भी नम्बर ग्रा गया। उनका घर खूब बड़ा था। घोड़े थे, नौकर-चाकर थे ग्रौर भी सब कुछ था। नवाबों की तरह रहते थे। उसका पति नाटा ग्रौर गावदुम था, हमारे मालिक की भांति, लेकिन वह दुबली-पतली, बिल्ली की भांति सुन्दर-सलोनी ग्रौर ग्रंगीठी की भांति धधकती हुई। वह मुझे कसकर भींच लेती, मेरे होंठों को चूमती ग्रौर उसके चुम्बन ग्रंगारों की भांति गरम मालूम होते। मेरा सारा बदन थरथरा जाता ग्रौर मैं उससे भयभीत हो उठता। चूमते-चूमते वह सुबकने लगती, – इतने ज़ोरों से सुबकती कि उसके कंधे हिलने लगते। 'क्या हुग्रा, वेरा?' मैं उससे कहता। 'तुम बिल्कुल बच्चे हो, साशा, तुम कुछ नहीं समझते,' वह जवाब देती। वह बड़ी प्यारी स्त्री थी ग्रौर उसने जो कहा वह सच था। मैं सचमुच कुछ नहीं समझता। मेरा दिमाग़ क्या है, – लकड़ी का कुन्दा है। यह मैं जानता हूं। मेरी समझ में नहीं ग्राता कि जो कुछ मैं करता हूं वह क्यों करता हूं, ग्रौर मैं भूलकर भी कभी ग्रपने जीवन के बारे में कुछ नहीं सोचता।"

उसने बोलना बन्द कर दिया ग्रौर पूरी फटी हुई ग्रांखों से मेरी ग्रोर देखने लगा। उसकी ग्रांखों में ग्राधे भय ग्रौर ग्राधे ग्रचरज का भाव

था, – आशंका की एक ऐसी भावना, जिसने उसके सुन्दर चेहरे की उदासी में तनाव लाकर उसे और भी सुन्दर बना दिया था।

"हां, तो सौदागर की स्त्री के साथ तुम्हारे लाग-लगाव का कैसे अन्त हुआ?" मैंने पूछा।

"देखो न, कई बार ऐसा होता है कि दुख मुझे बुरी तरह दबोच लेता है और जीवित रहना दूभर हो उठता है। ऐसा मालूम होता है जैसे इस लम्बी-चौड़ी समूची दुनिया में मैं ही एक अकेला प्राणी रह गया हूं, जैसे मेरे सिवा धरती पर और कोई जीवित वस्तु नहीं है। और ऐसे समयों में मैं हर आदमी से घृणा करने लगता हूं – खुद अपने से और अन्य सबसे। अगर सबके सब मौत के मुंह में भी चले जाएं तो मेरी बला से। ज़रूर यह कोई रोग है जो मेरे भीतर घुसकर बैठा है। उसी की वजह से मुझे पीने की लत पड़ी। सो मैं उसके पास गया और उससे कहा – 'मुझे छुट्टी दो, वेरा मिखाइलोवना, मैं अब यह सहन नहीं कर सकता।' 'क्यों, क्या तुम मुझसे उकता गए हो?' उसने पूछा और ग़ैर-सुहाने ढंग से हंसी। 'नहीं, तुमसे नहीं, मैं खुद अपने से उकता गया हूं,' मैंने कहा। पहले वह समझी नहीं और उसने चीखना-चिल्लाना तथा मुझे झिड़कना शुरू कर दिया। लेकिन जब समझ में आया तो उसने बस अपना सिर लटका लिया और बोली – 'अच्छा तो जाओ।' और वह रोने लगी। उसकी आंखें काली थीं और उसके बाल भी काले तथा घुंघराले थे। वह क्लर्कों के परिवार में जन्मी थी, सौदागरों के नहीं। मुझे उसपर तरस आया और अपने से घृणा मालूम हुई। ऐसे पति के साथ रहना उसके लिए सचमुच कठिन था। वह आटे की बोरी मालूम होता था। वह बहुत देर तक रोती रही। वह मेरे साथ खूब घुल-मिल गई थी। मैं उसके साथ बहुत ही कोमल बरताव करता था, कभी-कभी उसे अपनी बांहों में लेकर छोटे बच्चों की भांति झूला झुलाता था। वह मेरी बांहों में ही सो जाती और मैं बैठा हुआ उसे देखता रहता। सोया हुआ

आदमी भी कितना सुन्दर हो सकता है – बहुत ही मधुर और निश्छल, बस सांस लेता और मुसकराता हुआ – और कुछ नहीं। कभी-कभी, गर्मी के दिनों में जब कि हम देहात में होते, गाड़ी में घूमने जाते। जब तक गाड़ी हवा से बातें न करने लगती, उसका मन न भरता। जंगल में पहुंचकर हम घोड़े को एक पेड़ से बांध देते और ठंडी घास पर लेट जाते। वह मेरा सिर अपनी गोदी में रख लेती और मुझे पुस्तक पढ़कर सुनाती। सुनते-सुनते मेरी आंखें झपक जातीं। वह बहुत अच्छी कहानियां पढ़कर सुनाती थी, – बहुत ही अच्छी। उनमें से एक तो मैं कभी नहीं भूलूंगा। वह गिरासिम नाम के एक गूंगे आदमी और उसके कुत्ते के बारे में थी। गिरासिम का जीवन एकाकी था। कुत्ते को छोड़कर शायद ही कोई उससे प्यार करता हो। जब लोग उसे चिढ़ाते तो वह उठता और अपने कुत्ते की टोह में चल देता। बहुत ही उदास कहानी थी। एक बन्धक दास था – वह गिरासिम। एक दिन उसकी मालकिन ने उससे कहा – 'जाओ और अपने इस कुत्ते को डुबा आओ। यह हमेशा चीख़ता-गुर्राता रहता है।' सो वह चल दिया। उसने एक नाव ली, कुत्ते को उसमें रखा और धक्का दे दिया। जब वह उस जगह पहुंचती, मुझे कंपकंपी-सी चढ़ने लगती। हे भगवान्, एक आदमी से उस जीव की हत्या कराना जो कि उसके जीवन की ख़ुशी का एकमात्र आधार था! भला, इस तरह की हरकत को अब तुम क्या कहोगे? अद्भुत कहानी थी वह, जीवन के प्रति एकदम सच्ची, – और इसीलिए वह इतनी अच्छी थी। ऐसे लोग जीवन में मिलते हैं जिनके लिए कोई एक चीज़ उनकी समूची दुनिया बन जाती है। मिसाल के लिए जैसे वह कुत्ता। कुत्ता ही क्यों? इसलिए कि अन्य कोई उससे प्यार नहीं करता था, लेकिन कुत्ता करता था, और मानव बिना प्रेम के – चाहे वह किसी तरह का हो – जीवित नहीं रह सकता। अगर ऐसा नहीं है तो फिर हृदय जैसी प्रेम करनेवाली चीज़ उसे क्यों मिली है? उसने मुझे ढेर सारी कहानियां पढ़कर सुनाईं। बहुत ही प्यारी गुड़िया-सी

स्त्री थी वह, और आज दिन तक मेरा हृदय उसके लिए भारी हो जाता है। अगर मेरे जन्म के ग्रहों ने मुझे मजबूर न कर दिया होता तो मैं उससे तब तक विदा न होता जब तक कि वह स्वयं मुझसे न कहती या जब तक कि उसके पति के सामने हमारा भेद न खुल जाता। सबसे बड़ी बात यह थी कि वह प्रेम करना जानती थी, और उसके इस प्रेम का परिचय उस दुलार में ही नहीं मिलता था जो कि वह मुझपर न्योछावर करती थी, बल्कि उसका समूचा हृदय प्रेम में पगा हुआ था। वह मुझे चूमती थी और किसी भी दूसरी स्त्री की भांति अन्य सब बातें करती थी, लेकिन कभी-कभी उसके रोम-रोम में एक महान् नीरवता छा जाती और तब वह बहुत ही अद्भुत मालूम होती। उसकी आंखें सीधे मेरी आत्मा को छूतीं, मां के समान वह बातें करती, और मैं जैसे पांच साल का बच्चा बन जाता। फिर भी मैं उसे छोड़ आया। दुर्भाग्य! मेरा दुर्भाग्य, जो मुझे दूर – जाने कहां – खींच ले जाना चाहता है। 'अच्छा तो अब विदा, वेरा मिखाइलोवना, मुझे माफ़ करना,' मैंने कहा। 'विदा, साशा, विदा!' उसने कहा और इसके बाद, पागल स्त्री, उसने मेरी आस्तीन उठाई और मेरी खाल में अपने दांत गड़ा दिए। मेरे मुंह से चीख निकलते-निकलते रह गयी। उसने मेरी बांह में और भी कुछ नहीं तो मांस का एक अच्छा-खासा निवाला काट लिया था, – घाव के भरने में तीन सप्ताह खिंच गए। उसका निशान अभी तक मेरी बांह में मौजूद है।"

उसने अपनी बांह उघाड़ी – पुष्ट, बहुत ही गोरी-चिट्टी और सुडौल बांह – और उदास तथा भली मुसकराहट के साथ उसे मेरी ओर बढ़ा दिया। कोहनी के जोड़ के पास निशान साफ़ दिखाई दे रहा था – दो अर्द्धवृत्त, जिनके छोर करीब-करीब एक दूसरे से सटे थे। उनकी ओर देखकर मुसकराते हुए कोनोवालोव ने सिर हिलाया –

"पागल स्त्री। अपनी यादगार के रूप में उसने भी मुझ क्या निशानी दी है!"

इस तरह की कहानियां मैं पहले भी सुन चुका था। क़रीब-क़रीब हर आवारा व्यक्ति के मुंह से किसी 'सौदागर की पत्नी' या किसी 'बड़े घर की स्त्री' के बारे में ऐसा ही कोई क़िस्सा सुनने को मिल जाएगा जिसके साथ वह प्रेम कर चुका होता है। और बड़े घर की यह स्त्री या सौदागर की पत्नी उन अनगिनत कहानियों में, जो कि उसके बारे में प्रचलित है, इतने रूपों में प्रकट हो चुकी है कि समूचे आवारा सम्प्रदाय के लिए वह एक अद्भुत काल्पनिक सृष्टि का स्थान रखती है जिसमें अत्यन्त विरोधी भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक विशेषताओं का समावेश नज़र आता है। अगर आज वह प्रफुल्ल, तेज़ मिज़ाज और नीली आंखों वाली है तो अगले सप्ताह वह भली, भावुक और काली आंखों वाली बन जाती है। आम तौर से कुटिलता की चाशनी चढ़ाकर—उस स्त्री को लथेड़ने और अपमानित करनेवाले अनगिनत विवरणों के साथ—उसकी यह कहानी पेश की जाती है।

लेकिन कोनोवालोव के विवरण में मुझे सचाई की ध्वनि मालूम हुई। उसमें कुछ ऐसे तत्व थे जिन्हें मैंने पहले कभी नहीं सुना था,—जैसे पुस्तकों का पढ़ना और अपनी—एक मज़बूत और सशक्त आदमी की—एक बच्चे से तुलना करना।

मेरी कल्पना में उस दुबली-पतली स्त्री का चित्र मूर्त्त हो उठा,—वह उसकी बांहों में सोई है, उसका सिर उसकी चौड़ी छाती पर टिका है। इस चित्र में कुछ था जो सुन्दर था, और इसने मुझे उसकी सचाई पर विश्वास करने में मदद दी। और अन्त में उसका वह उदास तथा कोमल लहजा,—एक बहुत ही ख़ास लहजा, जिसमें 'सौदागर की पत्नी' के बारे में उसने अपने संस्मरण सुनाए थे। एक सच्चा आवारा स्त्रियों के या अन्य किसी भी चीज़ के बारे में कभी ऐसे लहजे या स्वर में बात नहीं करता, इसके प्रतिकूल वह डींग मारता है कि इस धरती पर वह किसी भी चीज़ को पवित्र या वन्दनीय नहीं मानता।

"तुम एकदम चुप क्यों हो? क्या तुम समझते हो कि मैं झूठ बोल रहा हूं?" कोनोवालोव ने पूछा और उसकी आवाज़ में चिन्ता का पुट था। वह आटे की एक बोरी पर बैठा था। एक हाथ में वह चाय का गिलास थामे था और दूसरे से अपनी दाढ़ी को थपथपा रहा था। उसकी नीली आंखें–उत्तर पाने के लिए उत्सुक–मुझे बींध रही थीं और उसके माथे की रेखाएं खूब उभर आई थीं।

"इसकी एक-एक बात सच है। मैं झूठ क्यों बोलूंगा? ओह, मैं जानता हूं कि हम–तलछटिया लोग–कहानियां पूरना पसन्द करते हैं। और क्यों न करें? अगर किसीको जीवन में ढंग की एक भी चीज़ नहीं मिलती तो क्यों न वह परी-लोक की कोई एक कहानी रचे और सच्ची घटना के रूप में उसे पेश करे? इससे किसीका कुछ नहीं बिगड़ता। उसे कहते-कहते वह खुद उसमें विश्वास करने लगता है,–ऐसा मालूम होता है कि वह सचमुच ठीक उसी रूप में घटी थी। वह उसपर विश्वास करता है और ऐसा करने से उसे सुख मिलता है। ढेरों लोग ऐसा करते हैं इसके सिवा और चारा भी क्या है? लेकिन मैंने जो तुमसे कहा है, वह एकदम सच है-ठीक वैसा ही जैसा कि घटा। क्या उसमें ऐसी कोई चीज़ है जो अजीब हो? एक स्त्री, जिसे जीवन में कोई सुख नहीं मिला। अगर मैं केवल कोचवान हूं तो क्या हुआ? स्त्री के लिए इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। कोचवान, भाग्यवान्, पदवान–हम सब एक उसी नर-योनि के हैं। और उसकी नज़र में सभी सुअर हैं–सब एक उसी चीज़ के भूखे और हममें से प्रत्येक जहां तक बने सस्ते से सस्ते में उसे पाने के लिए प्रयत्नशील। और आदमी जितना अधिक सीधा-सादा होता है, उसकी आत्मा भी उतनी ही खरी होती है और मैं सीधों में भी सबसे सीधा हूं। स्त्रियां हमेशा मुझमें यह देखती हैं... वे देखती हैं कि मैं कभी उन्हें नुक़सान नहीं पहुंचाऊंगा और कभी उनकी हंसी नहीं उड़ाऊंगा। जब कोई स्त्री पाप करती है तो

अन्य किसी चीज़ से वह इतना नहीं डरती जितना कि हंसी उड़ाए जाने से,– इस बात से कि उसे खिलवाड़ का पात्र बनाया गया। स्त्री में शर्म की भावना हम लोगों से ज़्यादा होती है। जब हम मज़ा ले चुकते हैं तो बीच बाज़ार में भी उसकी डींग मारने के लिए तैयार हो जाते हैं–'ओह, अगर तुम होते तो देखते कि कल रात उस छोकरी का कितना उल्लू बनाया!' लेकिन स्त्री डींग नहीं मार सकती। सब जानते हैं कि पाप करके उसे चतुराई की सनद नहीं मिलती। गिरी से गिरी स्त्री में भी हमसे ज़्यादा शर्म की भावना होती है।"

उसकी बात सुनते हुए मैंने सोचा–"इस जैसा आदमी,– और कितने विचित्र भाव प्रकट कर रहा है यह अपने मुंह से। क्या ये सचमुच उसके ही उद्‌गार हैं?"

और मेरा यह अचरज, जैसे-जैसे वह बोलता गया, और भी अधिक बढ़ता गया। बच्चों ऐसी स्वच्छ आंखों से वह मेरी ओर देख रहा था और बोलता जा रहा था।

तन्दूर की लकड़ी जल चुकी थी और उजले कोयलों का एक ढेर बाक़ी बच रहा था जिसकी गुलाबी चमक बेकरी की दीवार पर पड़ रही थी।

नीला आकाश खिड़की के चौरस चौखटे में जड़ा था जिसमें दो तारे चमक रहे थे। उनमें से एक काफ़ी बड़ा था और सब्ज़े की भांति चमक रहा था, दूसरा–जो उसके पास ही एकदम सटा था–बहुत धुंधला पड़ गया था।

* * *

सात दिन बीतते न बीतते कोनोवालोव और मैं अच्छे मित्र बन गए।

"तुम सीधे-सादे आदमी हो और यही मैं पसन्द करता हूं," अपने भारी-भरकम हाथ से मेरी पीठ थपथपाते हुए उसने प्रशस्त हंसी के साथ कहा।

वह अपने फ़न का मास्टर था। खमीर के सात पूड भारी पिंड की लपेटते समय जब वह उसे उछालता था या खमीर को गूंधने के लिए जब वह पीपे पर झुकता था तो देखते ही बनता था। उसकी बांहें उस लचकीले पदार्थ में कोहनी तक धंस जाती थीं और अपनी इस्पाती उंगलियों से जब वह उसे कोंचता था तो एक महीन-सी चीख़ उसमें से निकलती थी।

लम्बे दस्ते वाली उसकी ट्रे पर सांचे ख़ाली करने का मुझे मुश्किल से ही अवकाश मिलता कि वह उसे तन्दूर में पहुंचा देता। पहले पहल मैं डरा कि उतावली में डबल रोटियों को कहीं वह ज्यादा सटाकर न रख दे, लेकिन जब पहला घान सिंककर तन्दूर से बाहर निकला और एक सौ पच्चीस डबल रोटियों में से—सब बढ़िया सिंकी थीं और पंख की भांति हल्की थीं—एक की भी किसीसे 'टक्कर' नहीं हुई, तब मैंने अनुभव किया कि वह एक उस्ताद-कारीगर है। उसे अपने काम से प्यार था, हृदय उंडेलकर वह उसमें जुट जाता था, अगर तन्दूर गरमाई नहीं देता था या ख़मीर उठने में देर करता था तो वह ख़ूब झुंझलाता था, मालिक जब कभी निकम्मा आटा ख़रीद लाता था तो उसे झिड़कियां सुनाता था और जब गोल-मटोल तथा फूली हुई, एकदम इकसार सिंकी और कुरकुरी पपड़ी से युक्त रोटियां तन्दूर से बाहर निकलती थीं तो वह बच्चों की भांति ख़ुशी से नाच उठता था और सन्तोष प्रकट करता था। कभी-कभी वह सबसे बढ़िया—एकदम सर्वांगपूर्ण—रोटी को ट्रे में से उठा लेता और उसे एक हाथ से दूसरे हाथ में उछालकर हंसते हुए कहता—

"देखो न, कितनी प्यारी चीज़ तैयार की है हमने—तुमने और मैंने!"

आयु बढ़ जाने पर भी अपने बचपन को जीवित रखनेवाले इस आदमी को जब मैं काम करते देखता तो हृदय खिल जाता,—इतने उछाह-उत्साह

से वह काम करता था। और यह एक ऐसी चीज़ थी जो हरेक में होनी चाहिए—चाहे जो भी धंधा वह करता हो।

एक दिन मैंने उससे कहा—

"साशा, लोग कहते हैं कि तुम बहुत अच्छा गाते हो।"

"गाता तो हूं। लेकिन मैं अब पहले की भांति हर घड़ी राग नहीं अलापता, बल्कि—अगर कहना चाहो तो—दौरे पड़ने पर ही गाता हूं। मैं गाता हूं जब दुख मुझे धर दबोचता है। या अगर पहले गाना शुरू करता हूं तो, समझ लो कि उसके बाद, उदासी अदबदाकर अपना जाल फेंकेगी। सो उसका नाम न लो और मुझे न चिढ़ाओ। लेकिन तुम अपनी कहो,—क्या तुम नहीं गाते? सच, यह भी एक चीज़ है,—गाना एक बड़ी चीज है। लेकिन जब तक मेरे हृदय के तारों के झनझनाने की पारी न आए, तब तक गाना शुरू न करना। तब हम दोनों मिलकर एक साथ गाएंगे,—ठीक है न?"

और मैं तब तक रुके रहने के लिए राजी हो गया। जब कभी गाने की हुमक उठती तो सीटी की धुन गुनगुनाकर उसे पूरी कर लेता। लेकिन कभी-कभी ध्यान न रहता और खमीर को गूंधते या लपेटते समय अपने आपमें मगन मैं कुछ गाने लगता। कोनोवालोव सुनता, उसके होंठ फरकने लगते और फिर वह मुझे अपने वायदे की याद दिलाता। अक्सर वह खीजकर चिल्लाता—

"ऐ, बंद करो! यह क्या टीं-टीं कर रहे हो!"

एक दिन मैंने अपने बक्से में से एक किताब निकाली और उसे पढ़ने के लिए खिड़की के पास बैठ गया।

कोनोवालोव एक पीपे पर ऊंघ रहा था। मैं पुस्तक पढ़ रहा था। जब उसने अपने सिर के ऊपर पन्ने पलटने की सरसराहट सुनी तो उसकी आंखें खुल गईं।

"यह कौनसी किताब है?"

पुस्तक का नाम था 'पोद्लिपोव्त्सी'।

मुझे भी पढ़कर सुनाओ, – सुनाओगे न?"

खिड़की की ओटक पर बैठे हुए मैंने ज़ोरों से पढ़ना शुरू किया। वह भी उठकर बैठ गया और अपना सिर मेरे घुटने पर टिकाए सुनने लगा। बीच-बीच में मैं पुस्तक के ऊपर से नज़र उठाकर देखता और उसकी आंखों से मेरी मुठभेड़ हो जाती। उन आंखों की छाप आज दिन तक मेरे हृदय पर अंकित है – बरबट्टे-सी खुली, खिंचाव लिए, एकाग्र। उसका मुंह भी खुला हुआ, उजले दांतों की दो इकसार पांतें चमकती हुई, भौंहें ऊपर उठी हुई, ऊंचा माथा टूटी रेखाओं से पुरा हुआ, हाथ घुटनों को दबोचे हुए – उसका समूचा आकार एकदम थिर और तनाव से पूर्ण, ऐसा कि देखकर हृदय अनुप्राणित हो उठता, – और मैं, जितना भी मुझसे बनता, भावों के और भी अधिक उभार के साथ पिला और सिसोइका की वह उदास कहानी पढ़कर सुनाने का प्रयत्न करता।

अन्त में थककर मैंने पुस्तक को बन्द कर दिया।

"बस, खत्म हो गई?" कोनोवालोव ने धीमे स्वर में पूछा।

"अभी तो आधी से भी कम हुई है।"

"क्यों, पूरी पढ़कर सुनाओगे न?"

"अगर तुम चाहोगे।"

"आह!" अपने सिर को दोनों हाथों से थामे और बग़ल के रुख इधर से उधर डोलाते हुए उसके मुंह से निकला। कुछ था जो वह कहना चाहता था। धौंकनी की भांति भभकारा छोड़ते हुए उसने अपना मुंह खोला और बन्द किया। उसकी आंखें सिकुड़ी हुई थीं। मुझे उम्मीद नहीं थी कि पुस्तक पढ़ने का उसपर इतना और ऐसा असर होगा और न ही मैं यह समझ सका कि उसके मन में क्या उमड़-घुमड़ रहा है।

"तुमने पढ़ने में कमाल कर दिया," वह फुसफुसाया – "विभिन्न आवाज़ों में, जैसे हर व्यक्ति खुद सजीव होकर बोल रहा हो। आप्रोस्का, पिला। सारी मूर्खता जैसे उन्हींके पल्ले पड़ी हो। बड़े हास्यप्रद। आगे क्या होगा? वे अब कहां जाएंगे? ओह, कितना सच है यह सब! वे सचमुच के आदमी हैं, सचमुच के दहक़ान – ज़रा भी फ़रक़ नहीं – और उनकी आवाज़ें ठीक वैसी ही जैसी कि वे जीवन में बोलते हैं, और उनके चेहरे और अन्य सब बातें भी एकदम सच्ची। सुनो, मक्सिम, रोटियों को तन्दूर में रखने के बाद हम फिर पढ़ना शुरू करेंगे।"

रोटियों को हमने तन्दूर में रख दिया, एक और घान तैयार किया और इसके बाद डेढ़ एक घंटे तक मैंने फिर पुस्तक का पाठ किया। जब रोटियां तैयार हो गईं तो हमने पढ़ना फिर बन्द कर दिया, उन्हें बाहर निकाला, दूसरा घान तन्दूर के भीतर रखा, नया आटा मांड़ा और उसमें कुछ खमीर मिला दिया। आनन-फ़ानन, बिना कुछ बोले, सरगर्म तेज़ी के साथ हम काम में जुटे थे। कोनोवालोव की भौंहें तनी थीं। आधे पूरे शब्दों में वह जब-तब मुझे आदेश देता और काम बिजली की गति से आगे बढ़ चलता।

सुबह का उजाला फैल रहा था उस समय, जब हमने पुस्तक पढ़कर समाप्त की। मेरी जीभ कड़ी पड़ गई थी और दुख रही थी।

कोनोवालोव आटे के एक बोरे पर बैठा था और बिना कुछ बोले, अपनी आंखों में एक अजीब भाव भरे और हाथों से घुटनों को दबोचे मेरी ओर देख रहा था।

"क्यों, पुस्तक पसन्द आई?" मैंने पूछा।

अपनी आंखें सिकोड़ते हुए उसने सिर हिलाया, और जब वह बोला तो उसकी आवाज़ पहले की भांति इस बार भी धीमी थी – निस्तब्धता में डूबी हुई।

"इसे किसने बनाया है?" उसकी आंखों में एक ऐसा अचरज उमड़ रहा था कि उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। सहसा उसका चेहरा सशक्त भावों के उभार से आलोकित हो उठा।

मैंने उसे लेखक का नाम बता दिया।

"ओह, अद्भुत आदमी है वह,—इसे बनानेवाला! कितना सही, एकदम ठीको-ठीक, पकड़ा है उसने इसे,—क्यों, पकड़ा है न? हृदय जैसे सहम जाता है, सारे बदन में ऊपर से नीचे एक कंपकंपी-सी दौड़ जाती है। ओह, कितनी सचाई है इसमें,—जैसे जीवन को ही उठाकर रख दिया है। लेकिन उसे—उस लिखारिये को—इसके लिए क्या मिला?"

"यानी?.."

"क्या उन्होंने उसे कुछ नहीं दिया—कोई जागीर या ऐसे ही कुछ?"

"क्यों, उसे वे जागीर क्यों देते?"

"देखो न, एक पुस्तक,—वह पुलिस के ऐलान की भांति होती है.—लोग उसे पढ़ते हैं और उसके बारे में बातें करते हैं। मिसाल के तौर पर जैसे यह कि पिला और सिसोइका किस तरह के आदमी थे। उनपर तरस आए बिना नहीं रह सकता, इतना अंधकारमय जीवन था उनका। बिल्कुल कुत्तों का जीवन। और सो ..."

"और सो क्या?"

कोनोवालोव ने सचेत हो मेरी ओर देखा।

"सो यह कि कुछ न कुछ होना चाहिए," उसने दबे स्वर में कहा—"वे भी आदमी हैं। किसीको उनकी मदद करनी चाहिए।"

जवाब में मैंने एक लम्बी-चौड़ी तक़रीर दे डाली, लेकिन सब बेकार! उसपर वैसा कोई असर नहीं पड़ा जैसा कि मैं आशा करता था।

कोनोवालोव सोच में डूब गया। उसने अपना सिर लटका लिया, एक आह भरी और आगे-पीछे की ओर झूलता रहा। उसने मुझे एक बार भी नहीं टोका। आख़िर मैं बोलता-बोलता थक गया और चुप हो गया।

उसने अपना सिर उठाया और उदास भाव से मेरी ओर देखा।

"सो उन्होंने उसे कुछ नहीं दिया?" उसने कहा।

"किसे?" मैंने पूछा। लेखक की बात मेरे ध्यान से एकदम उतर गई थी।

"उस लिखारिये को।"

मैंने कोई जवाब नहीं दिया। मैं खीज उठा था यह देखकर कि वह प्रत्यक्षतः यह समझकर कि वह इस योग्य नहीं है, दार्शनिक सवालों से जूझना बेकार समझता है।

कोनोवालोव ने पुस्तक को उठा लिया, अपने हाथों में श्रद्धा के साथ उसे उलटा-पलटा, उसे खोला, फिर बन्द किया और एक उसांस छोड़ते हुए उसे मेज़ पर रख दिया।

"कितनी गहरी चीज़ है," उसने धीमी आवाज़ में कहा–"यह देखो, एक आदमी किताब लिखता है... काग़ज़ और उसपर छोटे-छोटे कीरमकाटे–बस, और कुछ नहीं... वह लिखता है और... क्या यह आदमी मर चुका है?"

"हां," मैंने कहा।

"वह मर चुका है, लेकिन उसकी किताब यहां मौजूद है और लोग उसे पढ़ते हैं। एक व्यक्ति अपनी आंखों से इसे देखता है और भिन्न शब्द मुंह से निकालता है। और एक दूसरा व्यक्ति इसे सुनता है और देखता है कि किसी समय पिला, सिसोइका और आप्रोस्का नाम के आदमी रहते थे। और वह उनके दुख का अनुभव करता है, हालांकि उसने उन्हें कभी नहीं देखा और उसका उनसे रत्ती भर भी वास्ता नहीं पड़ा। हो सकता है कि सड़क में उन जैसे बीसियों जीवित आदमी आए दिन उसके पास से गुज़र जाते हों और वह उनके बारे में कुछ भी नहीं जान पाता,–और इससे कोई अन्तर भी नहीं पड़ता क्योंकि वह उनकी ओर ध्यान तक नहीं देता। लेकिन जब वह उनसे किसी पुस्तक में मिलता है तो उसका हृदय उनके लिए

सहानुभूति से उमड़ पड़ता है, – लगता है जैसे वह फट जाएगा। ऐसा क्यों होता है?.. सो वह लिखारिया ऐसे ही मर गया, बिना किसी इनाम के? कुछ भी नहीं मिला उसे, – क्यों?"

मैं झुंझला उठा और लेखकों को कैसे क्या पुरस्कार मिलता है, यह उसे बता दिया।

भयभीत आंखों से कोनोवालोव ने मेरी ओर देखा और अपनी जीभ को सहानुभूति से चटकारा।

"यह अच्छा तमाशा है," उसांस भरते हुए उसने कहा, फिर अपना सिर लटका लिया और अपनी मूंछों का बायां छोर दांतों से चबाने लगा।

मैंने अब उसे रूसी लेखकों के जीवन में शराब-घरों की घातक भूमिका के बारे में बताना शुरू किया। मैंने उसे उन वस्तुतः महान् और गहरे लेखकों के बारे में बताया जिन्हें वोडका ने बरबाद कर दिया था, जिसके प्यालों में डूबकर कठिनाइयों से भरे इस जीवन में वे अपना एकमात्र सुख पाते थे।

"क्या ऐसे लोग भी पीते हैं?" कोनोवालोव ने सहमी हुई फुसफुसाहट में पूछा। उसकी फटी हुई आंखों में मेरे कथन के प्रति अविश्वास और भय का तथा उन लोगों के प्रति तरस का भाव झलक रहा था। "क्या वे सचमुच पीते हैं? मेरी समझ में ऐसा वे अपनी पुस्तकें लिखने के बाद करते होंगे, – क्यों, ठीक है न?"

इस प्रश्न में कोई तत्व न देख मैं उसे टाल गया।

"निश्चय ही वे तभी – अपनी पुस्तकें लिखने के बाद – पीते होंगे," कोनोवालोव ने फ़ैसला दिया – "ये लिखारिये लोग स्पंज की भांति दूसरों का दुख सोखते रहते हैं। इसके लिए उनकी आंखें एक ख़ास क़िस्म की होती हैं। इसी प्रकार उनके हृदय भी ख़ास क़िस्म के होते हैं। जीवन को लम्बे अर्से तक देखते-देखते वे दुख से लबालब भर जाते हैं और तब वे उसे

पुस्तकों में उंडेल देते हैं। लेकिन इससे निस्तार नहीं होता, क्योंकि दुख उनके हृदय के तारों को झनझना देता है, और जब दुख एक बार हृदय में पेबस्त हो जाता है तो उसे जलाकर राख भी नहीं किया जा सकता। सो एक ही रास्ता रह जाता है,– वोडका में उसे डुबा दिया जाए। इसीलिए वे पीते हैं। क्यों, मैं ठीक कह रहा हूं न?"

मैंने कहा कि हां, उसकी बात ठीक है। इससे वह उत्साहित होता मालूम हुआ।

"लेकिन ईमानदारी की बात यह है कि," लेखक के मनोविज्ञान में और गहरी डुबकी लगाते हुए उसने कहना जारी रखा–"उन्हें इनाम मिलना चाहिए। क्यों, ठीक है न? कारण कि वे अन्य लोगों से ज़्यादा समझते हैं और दूसरों को बताते हैं कि जीवन में क्या गड़बड़ है। मिसाल के तौर पर मुझे लो–मैं क्या हूं? एक आवारा, एक पियक्कड़, एक बेमसरफ़ आदमी, एक गंदा चरित्र। मेरे जैसे जीवन में कोई अर्थ नहीं है। इस दुनिया में मेरे जीवित रहने में क्या तुक है? और अगर सच पूछो तो किसके काम मैं आता हूं?–न पत्नी, न बच्चे, न कोई अपना घर, न बार,–यहां तक कि उन्हें पाने को कोई भूख तक नहीं। मैं बस अपने दुख में लिपटा जा रहा हूं, यह कोई नहीं जानता कि क्यों। मेरे भीतर ऐसा कुछ नहीं है जो मुझे रास्ता दिखाए। ओह, जाने क्या कहते हैं उसे? मेरी आत्मा में कोई चिंगारी नहीं–या शायद कोई जान नहीं। जो कुछ भी तुम उसे कहो, वह वहां नहीं है, और बस। सो मैं जीवित हूं, उस चीज़ की खोज में हूं जो मुझमें नहीं है, चाहता हूं कि वह मुझे मिले, लेकिन वह चीज़ है क्या, यह नहीं जानता।"

उसने मेरी ओर देखा। उसका सिर उसकी हथेली पर टिका था और उसका चेहरा उन भावों को प्रतिबिम्बित कर रहा था जो कि उसके मस्तिष्क में आकार ग्रहण करने के लिए कसमसा रहे थे।

"हां तो?.." मैंने उसे उकसाया।

"हां तो... मेरी समझ में नहीं आता कि मैं उसे कैसे व्यक्त करूं, लेकिन मैं सोचता हूं कि अगर उन लिखारियों में से कोई इधर आ निकलता और एक नज़र मुझे देखता तो शायद वह मेरे जीवन का भेद प्रकट कर देता, – क्यों, कर देता न? तुम्हारा क्या ख़याल है?"

मुझे लगा कि यह तो मैं ख़ुद भी कर सकता हूं और तुरत उस चीज़ को व्यक्त करने के लिए तैयार हो गया जिसे मैं उसके जीवन की एक बहुत ही साफ़ और सीधी व्याख्या समझता था। मैंने परिस्थितियों और वातावरण का ज़िक्र किया, असमानता के बारे में कहा, उन लोगों के बारे में मैंने बताया जो जीवन के स्वामी बने बैठे हैं, और उन लोगों का भी मैंने ज़िक्र किया जो उनके शिकार हैं।

कोनोवालोव ध्यान से सुनता रहा। वह मेरे सामने ही बैठा था। उसका गाल हथेली पर टिका था। उसकी बड़ी-बड़ी नीली आंखें पूरी तरह से खुली और दैवी प्रतिभा तथा चिन्ताशील प्रकृति का परिचय दे रही थीं। ऐसा मालूम होता था जैसे उनमें क्रमशः एक झिलमिली-सी तिरती आ रही हो। उसके माथे की रेखाएं गहरी हो गई थीं और मेरी बात को समझने-पकड़ने की कोशिश का तनाव इतना गहरा था कि सांस तक मुश्किल से लेता प्रतीत होता था।

इससे मैं उत्साहित हो उठा। भारी जोश के साथ उसके लिए मैंने उसके जीवन का चित्र खींचा, दिखाया कि जो कुछ और जैसा भी वह है, उसकी ज़िम्मेदारी उसपर नहीं है। वह परिस्थितियों का शिकार है, वह भी अन्य सबके समान अधिकारों के साथ मां के पेट से जन्मा है और उसकी इस सामाजिक तुच्छता का – समाज में कोई स्थान न होने का – कारण अन्यायों की एक लम्बी श्रृंखला है जो इतिहास में बहुत पीछे तक फैली है। अन्त में मैंने कहा –

"तुम अपने आपको किसी चीज़ के लिए दोषी नहीं ठहरा सकते। तुम्हें अन्याय का शिकार बनना पड़ा है।"

उसने कुछ नहीं कहा। बस, वैसे ही बैठा रहा। उसकी आंखें मुझपर जमी थीं। मैंने देखा कि उनकी गहराइयों में एक उजली मुसकान आकार ग्रहण कर रही है, और मैं उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगा कि वह क्या कहता है।

कोमल हंसी के साथ वह मेरी ओर झुका और स्त्रियों ऐसे नर्म अन्दाज़ में उसने अपना हाथ मेरे कंधे पर रख दिया।

"कितनी आसानी से तुमने यह सब समझा दिया, मित्र। यह सब तुमने कहां सीखा? किताबों से? सचमुच तुमने बहुत पढ़ा है। काश मैं भी उतना पढ़ सकता! सबसे बड़ी बात यह कि तुमने जो कुछ कहा, उसमें मानवीय भलमनसाहत का रस निचोड़कर रख दिया। ऐसी बातें मैंने पहले कभी किसीके मुंह से नहीं सुनी थीं। अजीब बात है—ज़्यादातर लोग अपनी मुसीबतों का दोष दूसरों के सिर मढ़ते हैं, लेकिन तुम समूचे जीवन को, समूची व्यवस्था को, दोष देते हो। तुम्हारे कहने के मुताबिक़ मानव को अपने आपमें किसी चीज़ के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता। अगर उसने आवारा बनने के लिए जन्म लिया है तो वह आवारा रहेगा। और क़ैदियों के बारे में तुमने जो कहा वह भी विचित्र है—वे चोरी करते हैं इसलिए कि वे बेकार होते हैं और पेट भरने के लिए चाहे जैसे भी हो उन्हें खाना चाहिए। बड़े उदार हो तुम। कोमलता में तुम्हें कोई पा नहीं सकता।"

"ज़रा ठहरो," मैंने कहा—"क्या तुम मुझसे सहमत हो? तुम्हारा क्या ख़याल है—मैंने जो कुछ कहा वह ग़लत है या सही?"

"यह तो तुम ख़ुद मुझसे अच्छी तरह जानते हो कि वह ग़लत है या सही। तुम पढ़ सकते हो। अगर तुम दूसरे लोगों की बात पूछो तो मेरी समझ में तुम ठीक हो, लेकिन अगर तुम मेरी..."

"हां, अपनी ही कहो।"

"मेरा मामला खास है। मैं पियक्कड़ हूं,–इसके लिए भला कौन दोषी है? मेरा भाई पावेल नहीं पीता। पेर्म में उसकी निजी बेकरी है। मैं उससे कहीं अच्छा कारीगर हूं, फिर भी मैं आवारा और पियक्कड़ हूं,–बस, इससे अधिक मैं और कुछ नहीं हूं। फिर भी हम दोनों ने एक ही मां के पेट से जन्म लिया था। वह मुझसे छोटा तक है। सो तुम्हीं देखो न, गड़बड़ ज़रूर ख़ुद मेरे ही भीतर है। मैंने कुछ ग़लत ही जन्म लिया है। तुम कहते हो कि सब लोग बराबर हैं। लेकिन मेरा मामला ख़ास है। और अकेले मेरा ही नहीं, मेरे जैसे और भी बहुत से लोग हैं। हम सब ख़ास लोग हैं–किसी चौखटे में फ़िट नहीं होते। और हमें कसने के लिए कसौटी भी ख़ास होनी चाहिए। और ख़ास क़ानून–सख़्त क़ानून, जो इस धरती से हमारा निशान मिटा दें, क्योंकि हम किसीका कोई भला नहीं करते। हम केवल जगह घेरते हैं और दूसरों की राह में आड़े आते हैं। इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है? इसके लिए हम ख़ुद ज़िम्मेदार हैं क्योंकि जीवन के प्रति हमारे मन में कोई प्यार नहीं है,–हम ख़ुद अपने को भी प्यार नहीं करते।"

बच्चों ऐसी निश्छल आंखों वाला यह भारी-भरकम आदमी इतने सहज भाव से अपने आपको दाग़ रहा था, हृदय को चीर देनेवाली मुसकराहट के साथ इस तरह अपने आपको निकम्मा और इसलिए धरती से मिटा दिए जाने योग्य क़रार दे रहा था कि मैं स्तब्ध रह गया। अब से पहले किसी भी आवारा में आत्मप्रताड़ना का यह गुण मैंने नहीं देखा था जो अधिकांशत: अपनी प्रकृति मात्र से ही अपने चारों ओर की हर चीज़ से अलग, हर चीज़ का दुश्मन और हर चीज़ को अपनी कुत्सित घृणा का निशाना बनाने के लिए ज़रूरत से ज्यादा व्यग्र रहता है। जिन लोगों से अब तक मैं मिला था वे हमेशा दूसरों को दोष देते थे, हमेशा शिकायतों के रजिस्टर पूरते थे,

उन अकाट्य प्रमाणों को देखने से पूरी हठधर्मी के साथ इन्कार करते थे जो कि निर्दोषता के उनके दावों को काटनेवाले होते थे। अपनी विफलताओं के लिए, अदबदाकर, वे भाग्य की क्रूरता या दूसरों की कुटिलता को ज़िम्मेदार ठहराते थे। कोनोवालोव न भाग्य को दोष देता था, न दूसरों पर आरोप लगाता था। अपने जीवन की इस गड़बड़ के लिए वह केवल अपने को दोष देता था, और जितना ही अधिक मैं यह सिद्ध करने की कोशिश करता था कि वह 'परिस्थितियों और वातावरण का शिकार है', उतनी ही दृढ़ता से वह इस बात पर बल देता था कि अपनी हालत के लिए एकमात्र वह ख़ुद ज़िम्मेदार है। यह एक मौलिक नज़रिया था, लेकिन मैं इससे झुंझला उठा। वह अपने आपको दागने में – लांछित करने में – ख़ुशी का अनुभव कर रहा था और यह ख़ुशी ही थी जो उस समय उसकी आंखों में चमक रही थी जब उसने गूंजती हुई आवाज़ में चिल्लाकर कहा था –

"हर आदमी ख़ुद अपने भाग्य का मालिक है, और सिवा मेरे अन्य कोई इस बात के लिए ज़िम्मेदार नहीं है अगर मैं शैतान हूं।"

अगर किसी पढ़े-लिखे व्यक्ति के मुंह से मैंने यह सुना होता तो मुझे ज़रा भी अचरज न होता, कारण कि 'बुद्धिजीवी' नाम से विख्यात उस पेंच-पेचीले मानसिक पिण्ड में किसी भी तरह के नासूर फूट सकते हैं। लेकिन इस तलछटी जीव के मुंह से यह सब प्रकट होना अजीब था। इसका मतलब यह कि वह उन सताए हुए, भूखे, नंगे, खीज और झुंझलाहट से भरे अर्द्ध-मानवों और अर्द्ध-पशुओं के बीच उत्पन्न एक बुद्धिजीवी था जो हमारे नगरों की सड़ांध-भरी गंदी बस्तियों में पाए जाते हैं। इन सब बातों से इस नतीजे पर पहुंचने के सिवा और कोई चारा नहीं था कि कोनोवालोव सचमुच में 'एक ख़ास केस' है, लेकिन मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं था।

बाहरी शक्ल-सूरत से–बारीक से बारीक बात में भी–वह एक टिपीकल (हू-ब-हू) आवारा मालूम होता था, लेकिन जितनी अधिक घनिष्ठता के साथ मैं उससे परिचित होता गया, उतना ही अधिक मेरा यह विश्वास भी दृढ़ होता गया कि वह मेरे उस भाववादी चित्र से भिन्न था जो कि मैंने अपनी कल्पना में उन लोगों का गढ़ रखा था जिन्हें बहुत पहले ही एक वर्ग मान लेना चाहिए था और जो अपनी असाधारण रूप में उत्कट इच्छा और तत्परता के लिए–हद दर्जे की अपनी दुष्टता और उस बुद्धि के लिए, जिसे किसी तरह भी मूर्ख नहीं कहा जा सकता,–हमारी देख-भाल के अधिकारी हैं।

हमारी बहस अधिकाधिक गर्म हो चली।

"सुनो," मैंने चिल्लाकर कहा–"एक आदमी अपने पांवों पर कैसे खड़ा रह सकता है जब कि दुनिया भर की काली ताक़तें उसे गिराने के लिए चारों ओर से ज़ोर लगा रही हों?"

"उसे ज्यादा मज़बूती से खड़े होना चाहिए," मेरे विपक्षी ने फनफनाते हुए कहा। उसकी आंखें चिंगारियां छोड़ रही थीं।

"किस चीज़ के सहारे?"

"किसी भी चीज़ के सहारे, जो भी उसके हाथ लगे।"

"तुम खुद क्यों नहीं ऐसा करते?"

"खुश्की की बत्तख! इतनी देर से मैं और क्या झींक रहा हूं? और इसीलिए तो मैं अपने को दोष देता हूं। ऐसी कोई चीज़ मेरे हाथ नहीं लगी जिसके सहारे मैं टिक सकता। मैं उस चीज़ की खोज में हूं और उसे पाने के लिए बेचैन हूं, लेकिन वह मुझे मिल नहीं रही।"

तन्दूर में रोटियों की ओर ध्यान देने का समय हो गया था। सो हम काम में जुट गए और काम करते-करते भी एक दूसरे के सम्मुख अपने दृष्टिकोण को सही सिद्ध करने का प्रयत्न करते रहे। कहने की जरूरत नहीं

कि सिद्ध हम कुछ भी नहीं कर सके, और जब हमारा काम खत्म हुआ तो हम लम्बे पसर गए—थके हुए और बेहद निढाल।

कोनोवालोव फ़र्श पर ही पसरकर शीघ्र नींद की गोद में गोल हो गया। मैं आटे की बोरियों पर पड़ गया। इस ऊंची जगह से दाढ़ी-युक्त उसका सबल शरीर ख़ूब अच्छी तरह दिखाई देता था। पीपों के पास बक्कल की एक चटाई पर वह कहानियों के प्रसिद्ध हीरो की भांति लेटा हुआ था। कमरा गर्म रोटियों, खट्टे खमीर और जलते हुए कुन्दों की गंध से भरा था। धीरे-धीरे उजाला हो चला और आटे की धूल जमे खिड़की के चौखटे में से सलेटी आसमान झांकने लगा। एक गाड़ी चरचराती हुई निकल गई और एक गड़रिये ने रेवड़ जमा करने के लिए अपना सींग बजाया।

कोनोवालोव घर्राटे भर रहा था। उसकी भारी-भरकम छाती सांस के साथ उठ-गिर रही थी। मैं उसे देख रहा था और कोई ऐसी तरक़ीब सोचने की कोशिश कर रहा था जिसके द्वारा जल्दी से जल्दी मैं उसे अपने मत का बना सकूं। लेकिन इसमें सफल होने से पहले ही मैं भी नींद में खो गया।

सवेरा होने पर हम उठ खड़े हुए, खमीर मिलाया, हाथ-मुंह धोए और एक बेंच पर चाय पीने बैठ गए।

"क्या तुम्हारे पास और भी किताबें हैं?" कोनोवालोव ने पूछा।

"हां, हैं।"

"उन्हें भी पढ़कर सुनाओगे न?"

"अच्छी बात है, सुनाऊंगा।"

"बहुत ठीक। और सुनो, बिला नागा पूरे एक महीने तक मैं काम करूंगा, मालिक से अपनी पगार लूंगा और आधी तुम्हें दे दूंगा।"

"किसलिए?"

"पुस्तकें ख़रीदने के लिए। अपने मन से चाहे जो पुस्तकें ख़रीदना और मेरे लिए—कम से कम दो मेरे लिए भी—ख़रीद लेना। दहक़ानों के

बारे में। पिला और सिसोइका जैसे लोगों के बारे में। लेकिन यह देख लेना कि वे सच्चे हृदय से लिखी हुई हों, ख़ाली मज़ाक़ करने के लिए नहीं। कुछ पुस्तकें निरी कूड़ा होती हैं। जैसे 'पानफ़िल्का और फ़िलात्का' को ही लो – एकदम बकवास, हालांकि उसके कवर पर तस्वीर बनी है। या फिर पोशेखोंत्सी तथा परियों की कहानियों की अन्य पुस्तकें। मुझे यह सब पसन्द नहीं। ऐसी पुस्तकें भी हो सकती हैं जैसी कि तुम्हारे पास हैं, यह मैं पहले नहीं जानता था।"

"अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें 'स्तेन्का राज़िन' पढ़कर सुना सकता हूं।"

"स्तेन्का? क्या यह अच्छी किताब है?"

"बहुत अच्छी।"

"तो सुनाना।"

और मैंने उसे कोस्तोमारोव कृत 'स्तेन्का राज़िन का विद्रोह' पढ़कर सुनाना शुरू किया। शुरू-शुरू में तो यह प्रतिभाशाली खोजपूर्ण ऐतिहासिक कृति – जो महाकाव्य की ऊंचाइयों को छूती मालूम होती है – मेरे दढ़ियल श्रोता को कुछ रुची नहीं।

"इसमें कोई बातचीत – कथोपकथन – क्यों नहीं है?" पुस्तक के पन्नों में झांकते हुए उसने पूछा। और उस समय जब मैं उसे समझा रहा था तो वह अपनी जमुहाई छिपाने की कोशिश कर रहा था। इसपर उसने लज्जा का अनुभव किया और अपराध के-से स्वर में बोला –

"रुको नहीं, पढ़े जाओ। मेरी पर्वाह न करो!"

लेकिन जैसे-जैसे एक कलाकार की दक्षता से इतिहास-लेखक स्तेपान राज़िन का चित्र खड़ा करता और 'वोल्गा के आज़ाद लोगों का यह हृदय-सम्राट' पुस्तक के पन्नों में से शान के साथ उभरता गया, वैसे-वैसे कोनोवालोव में भी एक अद्भुत परिवर्तन होता गया, – उसकी काया ही पलट गई। उस कोनोवालोव ने, जो ऊबा हुआ, उदासीन और भारी पलकें

लिए बैठा था, धीरे-धीरे और बिना मेरे जाने, अब इस हद तक नया चोला धारण कर लिया था कि देखकर अचरज होता था। वह मेरे सामने एक बेंच पर बैठा था—घुटनों को अपनी बांहों से घेरे और अपनी ठोड़ी को घुटनों पर इस तरह टिकाए कि उसकी दाढ़ी ने उसकी टांगों को अपनी ओट में छिपा लिया था। उसकी भौंहें खिंची थीं और उनके नीचे उसकी प्रज्वलित आंखें मुझे निगलती प्रतीत होती थीं। बच्चों ऐसी उसकी वह निश्छलता, जिसे देखकर मैं इतना चकित रह जाता था, उसका वह सारा भोलापन, स्त्रियों ऐसी वह कोमलता, जो उसकी नीली आंखों के साथ बड़ी सुहावनी मालूम होती थी, अब ग़ायब हो गई थी। उसकी आंखों का वह नीलापन ग़ायब हो गया था। वे अब काली और आम की फांक की भांति खुली थीं। उसका बदन, जो अब तनी हुई मांस-पेशियों का बंडल बन गया था, ऐसा मालूम होता था जैसे लपलपा रहा हो,—उछलकर लपकने के लिए अपना वज़न तौल रहा हो। मैंने पढ़ना रोक दिया।

"पढ़े जाओ," उसने शान्त लेकिन दृढ़ अन्दाज़ में कहा।

"लेकिन यह तुम्हें क्या हो गया है?"

"पढ़े जाओ," उसने दोहराया, और उसके अनुरोध में झुंझलाहट का पुट था।

मैं फिर पढ़ने लगा। बीच-बीच में जब मैं नज़र उठाकर उसकी ओर देखता, तो साफ़ मालूम होता कि वह अधिकाधिक विह्वल होता जा रहा है। कोई चीज़ थी जो उसमें से प्रवाहित हो रही थी—एक तरह की गर्म भाप-सी। वह मुझे झुलसा रही थी—यहां तक कि एक नशा-सा मुझपर छाता जा रहा था। आख़िर मैं उस जगह पहुंचा जहां स्तेन्का गिरफ़्तार कर लिया जाता है।

"ओह, वह उनके पंजों में फंस गया!" कोनोवालोव चीख़ उठा।

उसकी इस चीख़ में दुःख, गुस्सा और विक्षोभ उमड़ रहा था। पसीने की बूंदें उसके माथे पर उभर आई थीं और उसकी आंखें अजीब ढंग से

फैल गई थीं। वह बेंच से उछला और मेरे सामने आकर खड़ा हो गया,– लम्बा और थरथराता हुआ।

"ज़रा रुको। पढ़ना बन्द कर दो," मेरे कंधे पर हाथ रखते हुए उसने तेज़ी से कहा–"यह बताओ कि अब क्या होगा? नहीं, यह न बताओ। क्या वे उसे मार डालेंगे? पढ़ो, मक्सिम, जल्दी पढ़ो।"

ऐसा मालूम होता था जैसे फ़ोल्का नहीं, बल्कि यह कोनोवालोव ही राज़िन का भाई हो। ऐसा मालूम होता था जैसे यह आवारा जीव राज़िन के साथ रक्त के नाते में गुंथा हो जिसे तीन सौ साल की दूरी नष्ट नहीं कर सकी थी। अपने मज़बूत और प्राणवान् शरीर की समूची ताक़त से, 'कोई सहारा पाने के लिए बेचैन' अपनी आत्मा की सम्पूर्ण व्यग्रता से वह उस वेदना और गुस्से का अनुभव कर रहा था जिसका कि उस आज़ादी प्रिय विद्रोही ने–आज से कई शती पहले–पकड़े जाने पर अनुभव किया था।

"रुको नहीं, खुदा के लिए पढ़े जाओ।"

मैंने आगे पढ़ना शुरू किया। मेरे हृदय में गहरी उथल-पुथल मची थी, उसकी प्रत्येक धड़कन मुझे सुनाई दे रही थी और कोनोवालोव के साथ-साथ मैं भी उस वेदना का अनुभव कर रहा था जो कि स्तेन्का ने सही थी। शीघ्र ही हम उस स्थल पर आ गए जहां स्तेन्का को यातनाएं दी जाती हैं।

कोनोवालोव ने अपने जबड़े कस लिए और उसकी नीली आंखें आग बरसाने लगीं। वह मेरे कंधे के ऊपर झुक आया। उसकी आंखें पन्ने पर चिपकी थीं। उसकी सांस मेरे कानों में आवाज़ कर रही थी और उसकी झोंक से उड़े बाल मेरी आंखों में आ-आकर उलझ जाते थे। सिर झटककर मैं उन्हें पीछे कर देता था। कोनोवालोव ने यह देखा और अपनी भारी-भरकम हथेली मेरे सिर पर रख दी।

"'तब राज़िन ने अपने दांतों को इतना कसकर भींचा कि वे उखड़ गए और खून के साथ उसने उन्हें बाहर फ़र्श पर थूक दिया...'"

"बस करो! फेंक दो इसे!" कोनोवालोव चिल्लाया, पुस्तक को उसने मेरे हाथ से छीन लिया, अपनी समूची शक्ति से उसे फ़र्श पर पटक दिया और फिर खुद भी उसके पास ही ढह गया।

वह रो रहा था, और चूंकि खुलकर रोते शर्म मालूम होती थी इसलिए आवाज़ छिपाने के लिए वह गुर्रा रहा था। घुटनों के बीच अपना सिर छिपाए वह रो रहा था और गंदी सूती पतलून पर अपनी आंखें पोंछता जाता।

मैं उसके सामने ही बेंच पर बैठा था और समझ नहीं पा रहा था कि क्या कहकर उसे धीरज बंधाऊं।

"मक्सिम!" फ़र्श पर जहां वह बैठा था वहीं से कोनोवालोव ने कहा—"ज़रा सोचो तो! पिला—सिसोइका—और अब स्तेन्का। यह कैसा अन्त है! उफ़, दांतों को उस तरह बाहर थूक देना! जरा सोचो तो!.."

उसके समूचे बदन में एक कंपकंपी-सी दौड़ गई थी।

उसके हृदय पर स्तेन्का के अपने दांतों को बाहर थूक देने का ख़ास तौर से आघात लगा था, रह-रहकर उसे इसका ध्यान आता था और जब वह इसका ज़िक्र करता था तो उसके कंधों में झटके-से पड़ने लगते थे,—वह इस हद तक विचलित हो गया था।

पुस्तक में खींचे गए मानवीय यंत्रणा के इस निर्मम चित्र की छाप ने हमारे दिमाग़ों की एक-एक नस को झंझोड़ दिया था।

"इसे एक बार फिर पढ़ो,—पढ़ोगे न?" पुस्तक को फ़र्श पर से उठाते और उसे मेरे हाथ में देते हुए कोनोवालोव ने मुझे दुलराया—"यह लो और मुझे वह जगह दिखाओ जहां दांतों का ज़िक्र आया है।"

मैंने उसे वह जगह बताई और उसने अपनी आंखें उन पांतों पर जमा दीं।

"क्या सचमुच यहां वह लिखा है–'खून के कुल्ले के साथ उसने अपने दांतों को बाहर थूक दिया'? अक्षर तो यहां भी वैसे ही हैं जैसे कि और। हे भगवान्! ज़रा कल्पना तो करो कि कितनी तिलमिला देनेवाली यंत्रणा थी वह! उसके दांत तक निकल आए। और आगे क्या होनेवाला है? क्या वे उसे मार डालेंगे? शुक्र है कि अन्त में वे उसे मार डालेंगे।"

उत्कट भावना के साथ, आंखों में चरम सन्तोष की झलक लिए, अपना यह उछाह उसने प्रकट किया था और मेरा हृदय कांप उठा,– संवेदनशीलता का यह रूप देखकर, जो यंत्रणा ग्रस्त स्तेन्का के लिए इतनी उत्कंठा से मृत्यु की कामना कर रही थी।

बाक़ी सारा दिन भी उसीके प्रभाव में डूबते उतराते बीता,–केवल स्तेन्का के बारे में बातें करते हुए, उसके जीवन की घटनाओं, उसके बारे में रचे गए गीतों और उन यंत्रणाओं को याद करते हुए जो कि उसे सहनी पड़ीं। इन गीतों में से एक को अपनी समृद्ध आवाज़ में दो बार कोनोवालोव ने गाने की कोशिश की और दोनों बार बीच में ही टूट गया।

इसके बाद वह और मैं घनिष्ठ मित्रता के सूत्र में और भी ज़्यादा गुंथ गए।

* * *

'स्तेन्का राज़िन का विद्रोह', 'तारास बुल्बा' और 'ग़रीब लोग' मैंने उसको कई बार पढ़कर सुनाए। तारास बुल्बा ने मेरे श्रोता को अत्यधिक प्रभावित किया, लेकिन कोस्तोमारोव की पुस्तक की जो छाप उसके हृदय पर पड़ी थी, वह मन्द न पड़ सकी। मकर देवुश्किन और वार्या उसकी समझ में नहीं आए। मकर के पत्रों की भाषा उसे हास्यास्पद लगी और वार्या के प्रति उसका रुख अविश्वास से भरा था।

"देखो न, किस तरह डोरे डालती है वह उस खूसट पर! रीझने के लिए अच्छा चंडूल पकड़ा उसने,–फ़ितरती कहीं की! लेकिन छोड़ो,

मक्सिम, इस कबाड़ को लेकर समय बरबाद न करो। इसमें आखिर है क्या? वह उसे खर्रे भेजता है, वह उसे खर्रे भेजती है,—काग़ज़ की बरबादी के सिवा इसमें और क्या है? भाड़ में झोंको उन्हें। न इसमें कोई हंसी की बात है, न इसमें कोई रोने की बात है। बोलो, किसलिए इसे लिखा गया है?"

मैंने कहा कि वे पोद्लिपोव्त्सी से मिलते हैं, लेकिन उसने यह नहीं माना।

"पिला और सिसोइका,—उनकी बात ही दूसरी है। वे सचमुच के लोग हैं, जीते-जागते और लड़ते-जूझते। लेकिन ये क्या है? उनकी कुल करतूत यही है कि पत्र लिखते हैं। उबा देनेवाले। वे जीवित आदमी तक नहीं हैं,—केवल गढ़े हुए हैं। तारास और स्तेन्का को देखो,—ओ मेरे भगवान्, उन दोनों में अगर एक बार भी गठबन्धन हो जाता तो वे क्या कुछ न कर डालते! पिला और सिसोइका के जीवन में वे एक नयी जान फूंक देते।"

समय के मामले में उसका दिमाग़ बराबर गड़बड़ा जाता था। वह समझता था कि उसके सभी प्रिय चरित्र समसामयिक थे। उनमें से दो उसोलिये में रहते थे, एक ख़ोख़ोलों* के बीच रहता था और चौथा वोल्गा प्रदेश का निवासी था। मेरे लिए उसे यह विश्वास दिलाना कठिन था कि अगर सिसोइका और पिला वोल्गा नदी में बहाव की ओर यात्रा करते तो स्तेन्का से उनकी भेंट न होती और अगर स्तेन्का कभी कज़ाकों के दोन प्रदेश से जाकर ख़ोख़ोलों से जा मिलता तो उसे वहां बुल्बा नज़र नहीं आता।

---

*उक्रइन-निवासियों को नीचा दिखाने के लिए उन्हें इसी हीन नाम से पुकारा जाता था।—सम्पा०

कोनोवालोव को सच बात जानकर निराशा हुई। मैंने उसे पुगाचोव विद्रोह का भी कुछ हाल बताया और मैं यह जानने के लिए व्यग्र हो उठा कि वह पुगाचोव के बारे में क्या सोचता है। कोनोवालोव ने उसे कन्नी से ही उड़ा दिया।

"एक कमीना धोखेबाज़,—मुझसे पूछो तो यह था वह। ज़ार के नाम की टट्टी की ओट में छिपकर लोगों को भड़कानेवाला। उसकी वजह से जाने कितने भले आदमियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। स्तेन्का? वह दूसरी ही चीज़ था। पुगाचोव तो मोरी की तलछट था और कुछ नहीं। तुम्हारे पास कुछ और भी वैसी पुस्तकें हैं— जैसी कि स्तेन्का वाली थी? देखना, अगर हों तो। लेकिन उस बेवकूफ़ के बच्चे मकर को गोल करना। वह ज़रा भी दिलचस्प नहीं। उससे तो यह कहीं अच्छा है कि तुम मुझे फिर वही पढ़कर सुनाओ —यह कि उन्होंने किस तरह स्तेन्का की हत्या की।"

छुट्टी के दिनों में कोनोवालोव और मैं नदी के उस पार चरागाहों में चले जाते। थोड़ी वोडका, रोटी और एक पुस्तक के साथ सुबह ही हम रवाना हो जाते—'हवा खाने के लिए', जैसा कि कोनोवालोव कहा करता था।

'शीश-महल' में जाने का हमें खास चाव था। यह उस इमारत का नाम था जो नगर से थोड़ी ही दूर एक खुले मैदान में खड़ी थी। समझ में नहीं आता कि इसका यह नाम क्यों रखा गया। यह ईंटों की इमारत थी—तीन-मंज़िला, छत नीचे को बैठी हुई, खिड़कियां टूटी हुई, और एक तहख़ाने से युक्त, जिसमें सड़ा हुआ पानी सारी गर्मियों बुरी तरह गंधाता रहता था। ख़स्ताहाल, भूसला-हरा रंग, चेहरे पर नहूसत की छाप, मैदान के बीच खड़ी अपनी जर्जर खिड़कियों के अंधे कोटरों से नगर की ओर ताकती रहती थी,— उस अपंग की भांति,

जो नगर से सर्वथा बहिष्कृत वहां पड़ा दम तोड़ रहा हो। आए साल वसन्त की बाढ़ उसे अपनी लपेट में लेती, पानी उसके ऊपर से तिर जाता, लेकिन वह वैसे ही खड़ी रहती। बाढ़ का पानी उसके इर्द-गिर्द जमा हो जाता और पुलिस के जब-तब धावों से उसकी रक्षा करता। बावजूद इसके कि उसकी छत बैठ गई थी, सभी काट-छांट के आवारा और तलछटी लोग उसमें शरण लेते थे।

उनका वहां सदा जमघट लगा रहता। फटे-हाल, अधभूखे, सूरज की रोशनी से मुंह छिपाते, इस इमारत के खंडहरों में वे उल्लुओं की भांति रहते थे। कोनोवालोव और मुझे देखकर वे सदा खुश होते। कारण कि बेकरी से चलते समय हम दोनों एक-एक सफ़ेद रोटी अपने कब्ज़े में करते, वोडका का पौवा ख़रीदते और खोंचेवाले से पूरी एक रकाबी मांस ख़रीदते जिसमें सभी कुछ मिला होता—गुर्दा, फेफड़े, कलेजा और आंतें। इस प्रकार केवल दो या तीन रूबल में ही 'शीश-महल के साथियों' के लिए—कोनोवालोव के शब्दों में—बढ़िया दावत का सामान जुटा लेते।

इस दावत के बदले में वे हमें कहानियां सुनाते जिनमें हृदय को झंझोड़ देनेवाले भयानक सत्य के साथ-साथ अत्यन्त प्रत्यक्ष झूठ भी अजीब ढंग से गुंथा होता। प्रत्येक कहानी जैसे काले फ़ीते (सत्य) की बेल थी जिसमें उजले रंगों (झूठ) के टांके लगे थे। यह बेल दिल व दिमाग़ के इर्द-गिर्द लिपट जाती और उन्हें अपने अजीब व ग़रीब तथा कठोर नमूनों में उलझा लेती। 'शीश-महल के साथी' भी—अपने ढंग से—घनिष्ठ रूप में हमसे सम्बद्ध थे। मैं उन्हें अकसर पुस्तकें पढ़कर सुनाता और वे आम तौर से ध्यान बांधकर सुनते।

जीवन की उन्हें—उन लोगों को, जिन्हें जीवन ने बहिष्कृत कर दिया था,—गहरी जानकारी थी। मैं बड़ी उत्सुकता से उनकी

कहानियां सुनता और उनकी इस जानकारी पर स्तब्ध रह जाता। कोनोवालोव भी सुनता, लेकिन केवल उनके जीवन सम्बन्धी विचारों को काटने और मुझे बहस में उलझाने के लिए।

इनमें से एक जीव ने—कल्पनातीत नंगधड़ंग अवस्था और ऐसी भाव-भंगिमा के साथ, जिसे देखकर भाग जाने को जी चाहे,—जब अपने जीवन और विनाश की कहानी सुनाई, जो अनिवार्यतः अपना बचाव करने और अपने को सही ठहरानेवाले भावों से भरी थी, तो कोनोवालोव मन ही मन गुनगुनाकर मुसकराया और अपने सिर को झटक दिया। उसकी यह हरकत उनसे छिपी न रही।

"क्या तुम मेरी बात पर विश्वास नहीं करते, साशा?" कहानी सुनानेवाले ने बल देकर पूछा।

"ज़रूर विश्वास करता हूं। एक आदमी जो कुछ कहता है, उसका विश्वास करना चाहिए। यह जानते हुए भी कि वह झूठ बोल रहा है, उसका विश्वास करना चाहिए,—उसकी बात सुनना और यह जानने की कोशिश करना चाहिए कि वह क्यों झूठ बोल रहा है। कभी-कभी आदमी को समझने-पहचानने में उसका झूठ जितना कारगर होता है, उतना सच नहीं। और अगर सच पूछो तो हमारा यह जीवन आखिर है क्या? निरी कीचड़। सो हम उसे झूठ से सजाकर पेश करते हैं। क्यों, मैं ठीक कह रहा हूं न?"

"हां, ठीक कहते हो," प्रश्न करनेवाले ने मंजूर किया—"लेकिन तुमने अपना सिर क्यों हिलाया?"

"इसलिए कि तुम चीज़ों को ठीक ढंग से नहीं देखते। तुम इस तरह बातें करते हो जैसे खुद तुमने नहीं, बल्कि राह-बाट में मिले अन्य किसी चंडूल ने—जो भी तुम्हें पहले नज़र पड़ा—तुम्हें वह बना दिया है जो कि तुम हो। लेकिन तुमने उसे ऐसा करने क्यों

दिया? तुम उससे जूझे क्यों नहीं? हम हमेशा दूसरों के बारे में शिकायत करते हैं, लेकिन हम भी तो आदमी हैं,–क्यों, हैं न? सो हमें लेकर भी कोई शिकायतों का दफ़्तर खोल सकता है। शायद हम भी किसीको राह में आड़े आ रहे हों,–क्यों, ऐसा हो सकता है न? बोलो, अब तुम क्या कहते हो?"

उन्होंने जवाब दिया–

"जीवन को ऐसा बनाना चाहिए कि उसमें हर कोई के लिए काफ़ी जगह रहे और कोई भी अन्य किसीके रास्ते में आड़े न आए।"

"लेकिन कौन है जो उसे ऐसा बनाए?" चुनौती देते हुए उसने ललकारा और फिर, इससे पहले कि अन्य कोई जवाब देता, जल्दी से बोला– "हम हैं। हम ख़ुद। लेकिन हम उसे कैसे बनाएंगे अगर हम यह नहीं जानते कि किस ढंग से यह किया जाए? ख़ुद अपने आपको जब हम किसी काम का नहीं बना सकते तो फिर जीवन को कैसे बना सकते हैं? इसका मतलब यह कि सिवा ख़ुद अपने और कोई नहीं है जिसका हम मुंह देखें, और जहां तक हमारा अपना सम्बन्ध है हम सभी यह जानते हैं कि हम क्या हैं।"

उन्होंने इसका विरोध किया, अपने बारे में सफ़ाई देने की कोशिश की, लेकिन वह अपने नुक़्ते से नहीं डिगा–हर आदमी जो कुछ भी वह है उसके लिए ख़ुद ज़िम्मेदार है, अन्य किसीको उसकी विफलता के लिए दोष नहीं दे सकते।

उसे इस स्थिति से डिगाना एकदम असम्भव था और ठीक इतना ही असम्भव लोगों के बारे में उसके दृष्टिकोण से सहमत होना था। एक ओर तो वे–उसकी राय में–जीवन को फिर से बनाने की क्षमता से पूर्णतया युक्त थे ताकि सभी स्वतंत्रता का उपभोग कर सकें और दूसरी

ग्रोर वे कमज़ोर, रीढ़विहीन रेवड़-मात्र थे जो एक दूसरे की शिकायत करने के सिवा ग्रौर कुछ करने की क्षमता नहीं रखते।

ग्रक्सर ये बहसें दोपहर से शुरू होकर ग्राधी-ग्राधी रात तक चलतीं ग्रौर कोनोवालोव तथा मैं, घटाटोप-ग्रंधेरे ग्रौर घुटनों तक कीचड़ में धंसे, 'शीश-महल' से लौटते।

एक बार तो दलदल ने हमें निगल ही लिया होता। दूसरी बार हम पुलिस के धावे में फंस गए ग्रौर 'शीश-महल' के क़रीब बीस साथियों के साथ, जिन्होंने पुलिस के कान खड़े कर दिए थे, सारी रात हमने स्टेशन पर गुज़ारी। कभी-कभी जीवन की गुत्थियों को लेकर बहस करने की इच्छा न होने पर हम दोनों नदी पार की चरागाहों में दूर तक निकल जाते ग्रौर ऐसी जगह पहुंचते जहां छोटी-छोटी-सी झीलें बन गई थीं जिनमें बाढ़ के पानी के साथ बहकर ग्राई छोटी-छोटी मछलियां उछलती थीं। केवल दृश्य की सुन्दरता में वृद्धि करने के लिए इन झीलों में से एक के किनारे उगी झाड़ियों में हम ग्रलाव जलाते ग्रौर वहां बैठकर पढ़ते या जीवन के बारे में बातें करते। कभी-कभी तरंग में ग्राकर कोनोवालोव कहता—

"मक्सिम, ग्राग्रो, ज़रा ग्राकाश की ग्रोर देखें।"

कमर के बल हम लेट जाते ग्रौर ऊपर छाए नीले गुम्बज़ की ग्रतल गहराइयों की थाह लेते। शुरू-शुरू में पत्तों की सरसराहट, पानी की लहरियों की कलकल-ध्वनि ग्रौर कमर के नीचे धरती के स्पर्श का ग्राभास बना रहता। लेकिन धीरे-धीरे नीला ग्राकाश जैसे हमें ग्रपने में समो लेता, ग्रपने ग्रस्तित्व की ग्रोर से हम बिल्कुल बेख़बर हो जाते ग्रौर, मानो धरती से ऊंचा उठकर, दैवी विस्तारों में तैरने लगते—उनींदे-से विचारों में डूबे ग्रौर किसी शब्द या हरकत द्वारा ग्रपनी इस ग्रवस्था में विघ्न डालने का साहस तक न करते हुए।

इस प्रकार एक साथ घंटों तक हम पड़े रहते और नयी शक्ति में उमगे, शरीर और मन में नयी ताज़गी का अनुभव करते हुए अपने काम पर लौटते।

कोनोवालोव का प्रकृति-प्रेम गहरा और अकृत्रिम था और जब कभी भी वह खेत-खलिहानों या नदी-किनारे पर होता तो एक शान्त और कोमल मूड उसपर छा जाता। इससे बच्चों के साथ उसके सादृश्य में और भी अधिक वृद्धि हो जाती। कभी-कभी, आकाश की ओर ताकते हुए, गहरी सांस लेकर वह कह उठता—

"आह, यह है वह चीज़!"

और उसके इस अकेले उद्गार में जितना गाम्भीर्य और जितनी भावना होती उतनी कतिपय कवियों के ऊहापोह में नज़र नहीं आती,—ख़ास तौर पर उन कवियों के, जो अपने आपको बहुत ही नफ़ीस रुचि का आदमी दिखाने की इच्छा से अनुप्राणित होते हैं, न कि प्रकृति के सौन्दर्य की सच्ची सराहना से। कविता भी, अन्य सभी चीज़ों की भांति, अपनी स्वच्छ सरलता खो देती है जब उसे धंधे की चीज़ बना दिया जाता है।

* * *

इस प्रकार एक-एक दिन करके दो महीने बीत गए। कोनोवालोव और मैंने बहुत-बहुत बातें कीं और बहुत-बहुत पढ़ा। 'स्तेन्का राज़िन का विद्रोह' मैंने उसे इतनी अधिक बार पढ़कर सुनाया कि वह समूची कहानी को पृष्ठ प्रति पृष्ठ अपने शब्दों में शुरू से आख़िर तक सुना सकता था। एक ग्रहणशील बच्चे के हृदय में जिस प्रकार परियों की आह्लादपूर्ण कहानी घर कर लेती है, वैसे ही स्तेन्का राज़िन की कहानी उसके हृदय में बस गई थी। पुस्तक के पात्रों के नाम

के आधार पर उसने उन चीज़ों के नाम रख लिए थे जिनसे कि वह बेकरी में काम लेता था। एक बार जब एक भगौना शेल्फ़ पर से गिरकर टूट गया तो उसने गुस्से से चिल्लाकर कहा—

"जहन्नुम रसीद हो, कैप्टेन प्रोज़ोरोव्स्की!"

अगर ख़मीर उठने में देर करता तो वह उसे फ़ोल्का कहकर पुकारता, ख़मीर जब उठता तो वह उसे 'स्तेन्का के विचार' कहता और ख़ुद स्तेन्का उसके लिए हर उस चीज़ का पर्यायवाची था जो महान तथा असाधारण थी, हालांकि उसका—स्तेन्का का—सितारा खोटा था और विफलता उसके भाग्य में बदी थी।

इस समूचे दौरान में कापीटोलिना का—कोनोवालोव से अपनी भेंट के पहले ही दिन जिसका पत्र मैंने पढ़कर सुनाया था और उसका जवाब लिखा था—एक बार भी ज़िक्र नहीं आया।

कोनोवालोव ने फ़िलिप की मारफ़त उसे धन भेज दिया था और उससे अनुरोध किया था कि पुलिस से वह उसके बारे में मिले, लेकिन इसका कोई जवाब न तो फ़िलिप ने ही दिया और न उस लड़की ने ही।

और इसके बाद सहसा एक दिन सांझ के समय, जब कि हम ख़मीर को तन्दूर के लिए तैयार कर रहे थे, बेकरी का दरवाज़ा खुला और सीलन-भरे अंधेरे में से एक लड़की की गहरी आवाज़ सुनाई दी—

"ज़रा सुनिए तो!"

आवाज़ एकबारगी सहमी और लड़खड़ाती हुई-सी थी।

"क्यों, तुम क्या चाहती हो?" मैंने पूछा।

कोनोवालोव के हाथ से ट्रे का एक सिरा छूटकर फ़र्श पर गिर गया और वह बेचैनी से अपनी दाढ़ी खींचने लगा।

"क्या बेकर कोनोवालोव यहां काम करता है?"

अब वह दरवाज़े के भीतर खड़ी थी और छत से लटकते लैम्प की रोशनी पूरी तरह उसके सिर पर पड़ रही थी जो सफ़ेद रंग के ऊनी शाल में लिपटा था। उसकी परतों के बीच उसका गोल और सुन्दर चेहरा दिखाई दे रहा था। उसकी नाक कुछ ऊपर को उठी थी और उसके भरे-पूरे लाल होंठ जब मुसकराहट में खुलते थे तो उसके गोल गालों में भंवर पड़ जाते थे।

"हां, यहीं काम करता है," मैंने जवाब दिया।

"हां-हां, यहीं काम करता है,–यहीं!" कोनोवालोव ख़ुशी में फूट पड़ा और ट्रे का दूसरा सिरा भी अपने हाथ से छोड़ लम्बे डगों से उसकी ओर बढ़ गया।

"साशा!" उसने कहा और मुंह बाये उसे देखती रह गई।

उन्होंने एक दूसरे को अपनी बांहों में लपेट लिया, कोनोवालोव उसके ऊपर झुका एकदम दोहरा हो गया था।

"तुम कैसी हो? यहां कब पहुंची? भई ख़ूब! आज़ाद तो हो गई न? बहुत ठीक! देखा, मैंने तुमसे क्या कहा था? अब तुम्हारे सामने साफ़ रास्ता खुला है। किसीसे न डरना, एकदम सीधे उसपर बढ़ती जाना," कोनोवालोव एक ही सपाटे में कह गया। वह अभी भी वहीं दरवाज़े की राह में खड़ा था, अपनी बांहों में उसके कंधों और कमर को लपेटे।

"सुनो, मक्सिम, आज तुम अकेले ही काम संभालना। मैं इसकी देख-भाल में जुटता हूं। कापी, तुमने टिकने के बारे में क्या सोचा?"

"यहीं, तुम्हारे पास।"

"यहां? तुम यहां नहीं टिक सकतीं। यहां हम पाव-रोटियां सेंकते हैं। इसके अलावा,–नहीं, यहां टिकना बिल्कुल नहीं हो

सकता। हमारा मालिक बड़ा सख़्त है। रात के लिए तुम्हारे वास्ते अन्य कोई जुगत करनी होगी। हो सकता है कि किसी होटल में। चलो, चलें।"

और वे चले गए। रोटियां सेंकने के लिए मैं अकेला रह गया और इसकी उम्मीद नहीं थी कि कोनोवालोव सुबह से पहले लौटेगा। लेकिन तीन घंटे बाद ही लौटकर उसने मुझे भारी अचरज में डाल दिया। मेरे अचरज में और भी अधिक वृद्धि हुई उस समय, जब मैंने उसके चेहरे पर नज़र डाली और उसे ख़ुशी से छलछलाने के बजाय, जिसकी कि मैं आशा करता था, थका हुआ और उदास—एकदम खिन्न-चित्त—पाया।

"क्यों, क्या बात है?" मैंने पूछा। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसी क्या चीज़ हो सकती है जिसने मेरे मित्र को परिस्थितियों से एकदम प्रतिकूल इतना खिन्न बना दिया है।

"कुछ नहीं," उसने उदास भाव से जवाब दिया और एक क्षण की ख़ामोशी के बाद बहुत ज़ोरों से थूका।

"लेकिन फिर भी..." मैंने फिर पूछा।

"क्या करोगे तुम जानकर?" बेंच पर पसरते हुए उसने थके स्वर में कहा—"फिर भी... फिर भी... फिर भी यह कि वह निरी चमगादड़ है!"

उसके मुंह से भेद की बात निकलवाने के लिए मुझे भारी कोशिश करनी पड़ी। आख़िर क़रीब-क़रीब निम्न शब्दों में उसने यह भेद खोला—

"सच, वह निरी चमगादड़ है। और अगर मैं इतना बड़ा बेवक़ूफ़ न होता तो इस सबकी कभी नौबत न आती, समझे! तुम हमेशा स्त्रियों की हिमायत करते रहते हो कि आख़िर वे भी इन्सान हैं। बेशक,

वे अपनी पिछली टांगों के बल चलती हैं, वे घास नहीं चबातीं, वे बातें बघारना और खिलखिलाना जानती हैं, लेकिन फिर भी वे हमारी जाति की नहीं हैं। क्यों? यह मैं नहीं बता सकता। मैं केवल इतना जानता हूं कि वे हमारी जाति की नहीं हैं, —और बस। अपनी इस कापीटोलिना को ही लो। उसका आशय यह है: 'मैं तुम्हारे साथ रहना चाहती हूं,' उसने कहा —'तुम्हारी पत्नी की भांति। जहां तुम जाओगे, कुत्ते की भांति साथ लगी रहूंगी।' इससे अधिक पागलपन की बात क्या तुमने कभी सुनी है? 'बस करो रानी,' मैंने कहा— 'यह सब बकवास है। तुम खुद सोचो—कि तुम कैसे मेरे साथ रह सकती हो? सबसे पहली बात तो यह कि मैं पियक्कड़ हूं। दूसरी यह कि मेरे सिर पर कोई छत नहीं है। तीसरी यह कि मैं आवारा हूं और अधिक दिनों तक किसी एक जगह जमकर नहीं रह सकता...' आदि आदि ढेर सारे कारण मैंने बताए। लेकिन वह बोली—'तुम पियक्कड़ हो तो हुआ करो, सभी कारीगर पियक्कड़ होते हैं, लेकिन वे फिर भी बीवी-बच्चे रखते हैं, और जहां तक सिर पर छत होने का सवाल है, एक बार बीवी के आ जाने पर छत भी हो जाएगी और तब तुम जगह-जगह की धूल छानते फिरना खुद पसन्द नहीं करोगे।' 'नहीं, कापी,' मैंने कहा—'मैं तुमसे सहमत नहीं हो सकता क्योंकि मैं जानता हूं कि उस तरह के जीवन के लिए मैं फ़िट नहीं हूं और न ही कभी हो सकूंगा।' लेकिन वह बोली—'तब मैं नदी में कूदकर जान दे दूंगी!' 'तुम पगला गई हो, रानी!' मैंने कहा, और तब वह लगी मुझे पानी पी-पीकर कोसने—'कुत्ता, कमीना, ठग, मुझे इस तरह धोखा दिया, घिनौना लमढ़ींक!' उसने जाने क्या-क्या कहा और वह गाड़ी छोड़ी कि रुकने में न आए। यहां तक कि मैं उसे छोड़कर भाग आने के लिए तैयार हो गया। तब वह

रोने लगी। वह रोती जाती थी और मुझे दोष देती जाती थी। 'अगर तुम्हें मेरी चाह नहीं थी तो मुझे यहां क्यों बुलाया? क्यों मुझे वह जगह छोड़ने के लिए उकसाया?' उसने कहा—'और अब मैं अपना क्या करूं,— बेवकूफ़ की औलाद!'— बोलो, अब इसका क्या-क्या इलाज है?"

"लेकिन तुमने उसे यहां फिर किसलिए बुलाया था?" मैंने पूछा।

"किसलिए? तुम भी अजीब चोंच हो! इसलिए कि मुझे उसपर तरस आया। उस व्यक्ति के लिए, जो कीचड़ में डूब रहा हो, किसीके भी हृदय में तरस आ सकता है। लेकिन अपने आपको खूंटे से बांधने या ऐसी ही दुनिया भर की अन्य बातों का जहां तक सम्बन्ध है,—नहीं, यह सब जान देकर भी मैं नहीं करूंगा। उस तरह की चीज़ के लिए मैं कभी तैयार नहीं हो सकता। भला, परिवार से मेरा क्या वास्ता हो सकता है? अगर मुझे ऐसा मालूम होता कि यही वह चीज़ है जिसके सहारे मैं टिक सकता हूं तो बहुत पहले ही मैं घर बसाकर बैठ गया होता। एक से एक बढ़िया मौक़े मेरे जीवन में आए। दहेज और हर चीज़ के साथ। लेकिन जो चीज़ मेरे बूते से बाहर है, वह मैं कैसे कर सकता हूं? वह रो-रोकर जान दिए देती है। माना कि यह बहुत बुरा है। लेकिन मैं क्या करूं? नहीं, मैं कुछ नहीं कर सकता।"

अपने इस उदास उद्‌गार कि 'नहीं, मैं कुछ नहीं कर सकता' की पुष्टि में उसने अपना सिर हिलाया, बेंच से उठ खड़ा हुआ, दोनों हाथों से अपनी दाढ़ी को इधर-उधर किया और सिर झुकाए इधर से उधर बेकरी का फ़र्श नापने लगा। बीच-बीच में घिनाकर थूकता जाता था।

"मक्सिम !" उसने कहा और उसके स्वर में मनुहार और संकोच दोनों का ही पुट था—"शायद तुम्हारे जाने से काम बन जाए,—क्यों? उसे तुम सारी स्थिति समझा देना। सच, कितने अच्छे लड़के हो तुम !"

"मैं उसे क्या बताऊंगा?"

"सारी बात सच-सच बता देना। कहना कि मैं यह नहीं कर सकता। यह चीज़ मेरे रक्त में शामिल नहीं है। या कहना,—कहना कि मुझे कोई बुरी बीमारी लगी है।"

"लेकिन यह तो सच नहीं है!" मैंने हंसते हुए कहा।

"नहीं, लेकिन यह एक भला बहाना है। क्यों, है न? लेकिन छोड़ो, गोली मारो इस सारे जंजाल को! इस दुनिया में बीवी जैसी चीज़ का मैं क्या करूंगा?"

कुछ ऐसी शून्य निराशा से उसने अपने हाथों को हवा में फेंका जिससे साफ़ ज़ाहिर होता था कि बीवी जैसी चीज़ से सचमुच उसका कोई वास्ता नहीं हो सकता। और उस हास्यप्रद ढंग के बावजूद, जिसमें कि उसने अपनी कहानी को पेश किया था, उसके नाटकीय पहलू ने मुझे उलझा लिया और मैं सोचने लगा कि उस लड़की का अब क्या होगा। वह अभी भी, मानो अपने आपसे ही बात करता, इधर से उधर डग भर रहा था—

"और मैं उसे अब चाहता भी नहीं,—ज़रा भी नहीं। वह हाथ धोकर मेरे पीछे पड़ी है, दलदल की भांति मुझे निगल जाना चाहती है। समझती है कि उसे उसका पति मिल गया। हम्फ! वह चतुर ज़रा भी नहीं है, लेकिन चंट है।"

इसमें कोई सन्देह नहीं था कि आवारापन की उसकी भावना जोर पकड़ रही थी, आज़ाद रहने की उसकी अदम्य चाह अपने लिए एक ख़तरा अनुभव कर रही थी।

"लेकिन वह मुझे अपने जाल में नहीं फंसा सकती। नहीं, मैं उससे कहीं बड़ी मछली हूं, – सच, कहीं बड़ी!" उसने डींग मारी – "मैं उसे दिखा दूंगा, और... और... हां, मैं उसे दिखा दूंगा!"

वह कमरे के बीच ठिठककर खड़ा हो गया और कुछ सोचने लगा। उसके होंठों पर मुसकराहट खेल रही थी। मैं उसके चेहरे की ओर, जो सहसा खूब खिल उठा था, देख और यह सोचने की कोशिश कर रहा था कि उसने क्या निश्चय किया है।

"मक्सिम! चलो, कुबान चलें!"

यह अप्रत्याशित था। मैं उसे लेकर कुछ साहित्यिक शिक्षात्मक योजनाओं के मन्सूबे अपने हृदय में संजोये था। मैं आशा बांधे था कि उसे पढ़ना और लिखना सिखाऊंगा और अब तक संचित अपना सारा ज्ञान उसके सामने उंडेलकर रख दूंगा। उसने वायदा किया था कि वह गर्मियों भर यहीं रहेगा। इससे मेरा काम आसान हो जाता। लेकिन अब?..

"यह तुम बकवास कर रहे हो," मैंने हड़बड़ी में कहा।

"तो मैं क्या करूं?" उसके मुंह से निकला।

मैंने उसे बताने की कोशिश की कि कापीटोलिना के इरादे इतने गम्भीर नहीं मालूम होते जितने कि वह सोचता है, और यह कि उसे धीरज रखकर देखना चाहिए कि ऊंट किस करवट बैठता है।

और इसके लिए हमें अधिक इन्तज़ार नहीं करना पड़ा।

तन्दूर के सामने हम फ़र्श पर बैठे थे। हमारी पीठ खिड़की की ओर थी। क़रीब आधी रात का समय था। कोनोवालोव को वापिस लौटे डेढ़ एक घंटा या ऐसा ही कुछ हुआ था। एकदम सहसा कांच के टूटने की खनखनाहट सुनाई दी और एक बड़े आकार का सड़क

का पत्थर लुढ़कता हुआ फ़र्श पर आ गिरा। हम दोनों डर से उछलकर खड़े हो गए और खिड़की की ओर लपके।

"चूक गया," कोई हिनहिनाया—"निशाना ग़लत बैठा। मज़ा आ जाता अगर..."

"चलो," गहरी मन्द आवाज़ में कोई गरजा—"चलो अब। उसे फिर देख लूंगा..."

खिड़की में से नशे में डूबी उन्मादपूर्ण हंसी की आवाज़ आई,—गहरी निराशा से उत्पन्न हंसी, इतनी महीन और तेज़ कि सुनकर दांत किरकिरा उठें।

"यह वह है," कोनोवालोव ने दुख से बल खाते हुए कहा।

मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था,—सिवा उन दो टांगों के, जो खिड़की के कोटर में छटपटा रही थीं। वे अधर लटकीं, झोंके खा रही थीं और एड़ियां दीवार से टकराकर इस तरह फिसल रही थीं मानों वे टिकने का सहारा खोज रही हों।

"चलो अब," उस आदमी ने कहा।

"छोड़ो। मुझे खींचो नहीं। मुझे अपने मन की निकाल लेने दो। विदा, साशा, विदा..."

और इसके बाद उसने जो बौछार की वह छापे में नहीं दी जा सकती।

मैं खिड़की के और नज़दीक खिसक गया जिससे कापीटोलिना को देख सकूं। वह नीचे झुकी पटरी से चिपकी थी और बेकरी के भीतर झांकने का प्रयत्न कर रही थी। उसके बाल खुले थे और उसके कंधों तथा सीने पर झूल रहे थे। उसका सफ़ेद शाल सिर पर से खिसक गया था। और उसकी पोशाक गले के पास से फट गई थी। कापीटोलिना नशे में सराबोर थी। वह दाएं-बाएं डोल रही थी, हिचकियां ले रही थी, कोस रही थी,

उन्माद में चीख़ रही थी, थरथरा रही थी। उसके कपड़े फटे थे, चेहरा तमतमाया और आंसुओं से भीगा था।

एक लम्बा आदमी उसपर झुका था।

"चलो भी," वह बराबर चिल्ला रहा था। एक हाथ से वह उसका कंधा पकड़े था और दूसरा दीवार पर टिकाए था।

"साशा! तुमने मेरा सत्यानास कर दिया है, यह याद रखना। ख़ुदा तुम्हें ग़ारत करे, लाल बालों वाले शैतान! अच्छा होता अगर तुम जन्म ही न लेते, मां के पेट में ही मर जाते। मैं तुमपर भरोसा करती थी और तुमने मेरे मुंह पर थूका। अच्छी बात है, तुम्हें इसका भुगतान करना पड़ेगा। मुझसे मुंह छिपाकर बैठे हो, – क्यों? सामने आते शर्म मालूम होती है, – सुअर-मुंह-भुतने! साशा... मेरे प्यारे..."

"मैं किसीसे मुंह नहीं छिपा रहा हूं," खिड़की के सामने बेंच पर झुकते हुए कोनोवालोव ने भरभराई-सी आवाज़ में कहा – "मुंह छिपाने की मुझे ज़रूरत नहीं है। और तुम्हें इस तरह की बातें नहीं कहनी चाहिएं। मैं तुम्हारी मदद करना चाहता था। मैं सोचता था कि जो कुछ मैं कर रहा हूं उसका नतीजा भला निकलेगा, लेकिन तुमने सब ख़राब कर दिया।"

"साशा, क्या तुम मुझे इस जीवन से छुटकारा नहीं दिला सकते?"

"तुमने नशा क्यों किया? कौन जानता है कि भविष्य अपने गर्भ में क्या छिपाए है?"

"साशा! साशा! तुम मुझे डुबा क्यों नहीं देते?"

"चुप करो! चलो मेरे साथ!" उस आदमी ने कहा।

"मोरी का कीड़ा! मेरे साथ भला बनने का ढोंग करता था!"

"झगड़ा क्या है? ये लोग कौन हैं?"

रात के चौकीदार की सीटी की आवाज ने बातचीत को रोक दिया, उसे सन्नाटे में डुबाया और इसके बाद उसका स्वर टूट गया।

"अच्छा होता अगर मैं तुझपर कभी भरोसा न करती,—ओह शैतान!" लड़की खिड़की पर सुबक उठी।

सहसा उसकी टांगें हवा में उछलीं, फिर वे तेज़ी से सिमटकर सीधी हुई और अंधेरे में ओझल हो गईं। धुंधली आवाज़ें और लड़ने-झगड़ने की ध्वनियां सुनाई दे रही थीं।

"मैं थाने नहीं जाऊंगी! सा-आ-आ-आ-शा!"

पटरी भारी डगों की चाप से गूंज उठी।

सीटियां, गूंगी गुर्राहट, चीख़-पुकार।

"सा-आ-आ-आ-शा! साशा... प्यारे!"

ऐसा मालूम होता था जैसे किसीको बर्बर यंत्रणा दी जा रही हो। यह सब रात के गर्भ में समाता गया—धुंधला और अधिक धुंधला और अन्त में दुःस्वप्न की भांति विलीन हो गया।

जो कुछ हुआ था उसने कोनोवालोव को और मुझे इतना स्तब्ध कर दिया था कि हम अंधेरे में आंखें गड़ाए वैसे ही ताकते रह गए। चीख़ने-चिल्लाने, सुबकने, गालियां देने, कराहने और पुलिस के डांटने-डपटने की आवाज़ें अभी तक कानों में गूंज रही थीं। रह-रहकर मुझे उनकी याद आती और एकाएक विश्वास न होता कि यह सब वास्तव में घटित हुआ था,—इतने आनन-फ़ानन में यह संक्षिप्त किन्तु अत्यन्त गहन नाटक सम्पन्न हो गया था।

"क़िस्सा ख़त्म!" सन्नाटे में एक बार और टोह लेते हुए कोनोवालोव ने सीधे और दो टूक शब्दों में कहा। काली रात—एकदम निस्तब्ध और कठोर—खिड़की में से झांक रही थी।

"और उसने क्या कुछ न मुझे कहा!" कुछ रुककर, अभी भी खिड़की की ओटक पर बांह टेककर बेंच पर झुके हुए उसने कहा—"सो पुलिस उसे पकड़ ले गई। नशे में धुत्त। और उस पियक्कड़ के साथ। अपना रास्ता निश्चित करने में उसने ज़रा भी देर नहीं की।"

उसने एक गहरी सांस छोड़ी, बेंच से हटकर आटे के एक बोरे पर बैठ गया और दोनों हाथों में अपने सिर को थामे इस बाज़ू से उस बाज़ू डोलने लगा।

"मुझे यह बताओ, मक्सिम, कि हो क्या गया," उसने दबे स्वर में कहा—"और मुझे इस सिलसिले में क्या करना चाहिए।"

मैंने उसे बताया। कहा कि आदमी को सबसे पहले इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि वह चाहता क्या है और यह उसे पहले ही देख लेना चाहिए कि जो क़दम वह उठाने जा रहा है उसका क्या नतीजा होगा। उसने इन दोनों में एक को भी न तो जाना और न देखा, इसलिए जो कुछ हुआ उसकी ज़िम्मेदारी उसपर है। मैंने उसे बेहद भला बुरा कहा। नशे में धुत्त वह 'चलो भी' और कापीटोलिना का चीख़ना-कराहना अभी तक मेरे कानों में गूंज रहा था। और मैंने अपने मित्र के साथ ज़रा भी रियायत नहीं बरती।

वह सिर झुकाए मुझे सुनता रहा। जब मैं ख़त्म कर चुका तो उसने अपना सिर उठाया और मैंने देखा कि उसका चेहरा स्तब्ध और सहमा हुआ था।

"क्या कहते हो तुम इस जंजाल के बारे में?" उसके मुंह से निकला—"अब क्या होगा? मुझे क्या करना चाहिए? उसके साथ मैं क्या करूं?"

अपराध की इस स्वीकृति में बच्चों जैसी स्पष्टता और उलझनी निराशा का कुछ ऐसा भाव था कि मेरा हृदय तुरत उसके लिए दुख से भर गया और उसे इतनी कठोर बातें सुनाने के लिए पछतावे का मैंने अनुभव किया।

"ओह, मैंने उसे यहां बुलाया ही क्यों?" पश्चाताप के स्वर में उसने थूका—"अच्छी-ख़ासी मुसीबत खड़ी कर ली। जाने क्या सोचती होगी वह अब मेरे बारे में? मैं पुलिस-थाने जाकर उसे छुड़ाने का प्रयत्न करूंगा। मैं उससे मिलूंगा और—जो बन सकेगा—करूंगा। मैं उसे बताऊंगा यह या वह,—जो सूझेगा उससे कहूंगा। बोलो, जाऊं न?"

मैंने कहा कि मेरी समझ में उन दोनों के मिलने से कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा। वह उसे क्या बताएगा? इसके अलावा वह नशे में धुत्त वैसे है और हो सकता है कि तब तक वह नींद में गोल हुई मिले।

लेकिन वह जाने के लिए तुला बैठा था।

"जो हो, मैं जाऊंगा ज़रूर। आख़िर मैं उसकी मदद तो करना चाहता हूं। थाने के लोग उसकी क्यों पर्वाह करने लगे? मैं जाऊंगा। तुम यहां का काम देखना। मैं अभी लौटकर आता हूं।"

उसने अपनी टोपी सिर पर जमाई और बाहर निकल गया। उतावली में उसे अपने फटे हुए जूते भी पहनना याद नहीं रहा जिनपर कि उसे इतना अधिक गर्व था।

मैंने अपना काम किया और सोने चला गया। सबेरा होने पर जब मैं उठा और सदा की भांति जब मैंने उस कोने में नज़र डाली जहां कोनोवालोव सोता था, तो वह वहां नहीं था।

सांझ होने पर उसकी शक्ल दिखाई दी—उदास, अस्त-व्यस्त, माथे में गहरी रेखाएं और नीली आंखें अंधेरे की काली छाया से घिरी हुई। बिना मेरी ओर देखे वह पीपों के पास गया, मेरी कारगुज़ारी का उसने मुआइना किया और फिर बिना एक शब्द मुंह से निकाले फ़र्श पर लम्बा लेट गया।

"क्या उससे मिले?" मैंने पूछा।

"और नहीं तो क्या किसी दूसरे काम से मैं वहां गया था?"

"अच्छा तो फिर क्या हुआ?"

"कुछ नहीं।"

साफ़ था कि वह बात नहीं करना चाहता था। मैंने उसे सवालों से अधिक नहीं कुरेदा। मुझे निश्चय था कि उसका यह मूड अपने आप उतर जाएगा। अगले समूचे दिन भी उसका बोलना-चालना गिने-चुने शब्दों तक—

जिनकी हमारे काम के दौरान में ज़रूरत पड़ती थी—सीमित रहा। फ़र्श से आंखें चिपकाए वह इधर से उधर डोल रहा था। उसकी नज़र अब भी वैसी ही छाया से घिरी थी जैसी कि उस समय थी जब वह वापिस लौटा था। ऐसा मालूम होता था जैसे उसके भीतर की जोत बुझ गई हो। अपने विचारों के बोझ से दबा वह अलस भाव और आधे मन से काम कर रहा था। उस रात रोटियों का आख़िरी घान जब हम तन्दूर में रख चुके थे और इस डर से लेट नहीं रहे थे कि कहीं वह जल न जाए, उसने मुझसे कहा—

"'स्तेन्का' में से कुछ पढ़कर सुनाओ।"

मैंने स्तेन्का की यंत्रणा और फांसी का वर्णन पढ़ना शुरू किया। कारण कि यह हिस्सा उसके भावों को सबसे ज़्यादा मथता और आन्दोलित करता था। वह कमर के बल फ़र्श पर लम्बा लेटा था और बिना पलक झपकाए छत की कारिख-लगी मेहराबों की ओर ताक रहा था।

"सो इस तरह उन्होंने एक आदमी को ठिकाने लगा दिया," कोनोवालोव ने धीमे से कहा—"लेकिन फिर भी उन दिनों जीवन इतना कठिन नहीं था। लोग ज़्यादा आसानी और ज़्यादा आज़ादी से जीवन बिताते थे। कम से कम इतना तो था ही कि अपनी शक्ति को किसी काम में लगाने की गुंजाइश थी। आजकल तो हर चीज़ ठीक-ठाक और शान्त है,—बहुत ही शांत—अगर बाहर से उसे देखा जाए तो। पुस्तकें हैं, ज्ञान हैं और सभी कुछ है। लेकिन आदमी जीवन बिताता है इस तरह कि कोई उसके साथ खड़ा होनेवाला नहीं, -कोई उसकी देख-भाल करनेवाला नहीं। ग़लत काम करना मना है, लेकिन साथ ही यह भी असम्भव है कि ग़लत काम न किया जाए। इसलिए बाहर व्यवस्था है और भीतर इतनी गड़बड़ कि तबीयत हरी हो जाए। और कोई भी किसी अन्य को नहीं पहचानता।"

"तुम्हारे और कापीटोलिना के बीच अब क्या स्थिति है?" मैंने पूछा।

"क्या?" उसने कहा और उसका समूचा बदन हिल उठा—"कापी के साथ? सब ख़त्म।" कहते हुए निर्णयात्मक अन्दाज़ में उसने अपना हाथ हिलाया।

"सो तुम सभी सूत्र काट आए?"

"मैंने नहीं, ख़ुद उसने काट डाले।"

"कैसे?"

"बहुत सीधे ढंग से। वह अपने नुक़्ते से नहीं डिगी। और अन्य कोई बात मानने को तैयार नहीं हुई। सो हम वहां के वहीं रहे जहां कि पहले थे। केवल एक बात थी कि तब उसे पीने की लत नहीं थी और अब वह पीती है। तन्दूर से रोटियां तुम्हीं निकाल लेना, मैं सोने जाता हूं।"

बेकरी निस्तब्ध हो गई। लैम्प धुंआं दे रहा था, रह-रहकर धुंवांकश से चटखने की आवाज़ आ रही थी, और दराज़ों में रखी सिंकी हुई रोटियों की पपड़ियां भी कुरकुरा रही थीं। रात के चौकीदार हमारी खिड़की के बाहर खड़े बतिया रहे थे और रह-रहकर एक अन्य आवाज़ भीतर आ रही थी—शायद यह हमारे साइन-बोर्ड के चरचराने की आवाज़ थी या शायद कोई कराह रहा था।

पाव-रोटियां तन्दूर से बाहर निकालने के बाद मैं लेट गया, लेकिन मुझे नींद नहीं आई,—बस वहां पड़ा अधमुंदी आंखों से रात की आवाज़ें सुनता रहा। सहसा मैंने देखा कि कोनोवालोव चुपचाप—बिना कोई आवाज़ किए—उठा, उठकर दराज़ तक गया। कोस्तोमारोव की पुस्तक को उसने निकाला, उसे खोला और उसे अपनी आंखों के पास तक ले गया। उसका विचारों में खोया चेहरा साफ़ नज़र आ रहा था। मैंने देखा कि वह छापे की पांतों पर अपनी उंगली तिराता नीचे तक ले गया, सिर हिलाकर उसने पन्ना पलटा, ध्यान से उसका निरीक्षण किया और फिर मेरी ओर देखा। उसके खिंचे हुए चेहरे में एक बहुत ही विचित्र, गहरा और टोह-भरा भाव झलक

रहा था। देर तक वह मेरी ओर देखता रहा। उसके चेहरे पर पहले कभी मैंने ऐसा भाव नहीं देखा था।

अपनी उत्सुकता पर क़ाबू न पा मैंने उससे पूछा कि वह क्या कर रहा है।

"मैंने समझा कि तुम सो रहे हो," उसने माफ़ी के अन्दाज़ में कहा। फिर पुस्तक हाथ में लिए मेरे पास आया, बराबर में बैठ गया और अटकते हुए बोला – "देखो, मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता था। वह यह कि क्या कोई ऐसी पुस्तक नहीं है जिसमें जीवन के नियम लिखे हों और जो यह सिखाती हो कि कैसे क्या किया जाए? मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या करना ग़लत है और क्या करना – सही। मैं अपनी करनी से – जो भी मैं करता हूं उससे – तंग हूं। शुरू में तो सब ठीक मालूम होता है, लेकिन अन्त में सब चौपट हो जाता है। इस कापी का मामला ही देखो," उसने एक गहरी सांस खींची और फिर मनुहार-सी करता बोला – "बड़ा अच्छा हो अगर तुम कोशिश कर कहीं से ऐसी किताब खोज लाओ। उसे पढ़कर मुझे सुनाना।"

वह रुक गया।

"मक्सिम।"

"क्या है?"

"कापीटोलिना ने क्या कुछ मुझे नहीं कहा!"

"तो क्या हुआ? भूल जाओ उन बातों को।"

"बेशक उनसे अब कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। लेकिन मुझे यह बताओ, क्या उसे वह सब कहने का अधिकार था?"

यह नाजुक सवाल था। लेकिन एक क्षण तक कुछ सोचने के बाद मैंने कहा कि हां, उसे अधिकार था।

"मैं भी ऐसा ही सोचता हूं। उसे इसका अधिकार था," कोनोवालोव ने उदास भाव से कहा और फिर चुप हो गया।

बक्कल की चटाई के ऊपर फ़र्श पर पड़ा वह छटपटा रहा था। कई बार वह उठा, उसने सिगरेट जलाई, खिड़की के पास जाकर बैठा और फिर अपनी जगह पर आकर लेट गया।

आखिर उसे नींद आ गई और जब मैं जागा तो वह वहां नहीं था। वह सांझ को लौटा। ऐसा मालूम होता था जैसे उसपर धूल की एक मोटी परत चढ़ी हो, और उसकी धुंधली आंखें पथरा गई हों। अपनी टोपी को उतारकर उसने शेल्फ़ पर फेंक दिया, एक उसांस भरी और मेरे पास आकर बराबर में बैठ गया।

"कहां गए थे?"

"कापी से मिलने।"

"हां तो?.."

"खेल ख़तम, मित्र! जैसा कि मैंने कहा था।"

"उस जैसे प्राणियों के साथ कुछ किया भी नहीं जा सकता," उसका जी हल्का करने के लिए मैंने कहा, पड़ी हुई आदत कभी नहीं छूटने और इसी तरह की अन्य कितनी ही बातों का–जो मुझे मौक़े के अनुकूल लगीं–मैंने जिक्र किया। कोनोवालोव बैठा हुआ फ़र्श की ओर ताकता और बिना एक शब्द मुंह से निकाले अन्त तक मेरी बातें सुनता रहा।

"ओह नहीं, तुम ग़लत कहते हो। मामले की जड़ यह नहीं है। बात असल में यह है कि मैं एक रोग की भांति हूं। मैं इस दुनिया में रहने के लिए नहीं बना। मैं जहर उगलता हूं। जो भी मेरे नज़दीक आता है, उसमें यह जहर सरसराने लगता है। दुख के सिवा मैं किसीको और कुछ नहीं दे सकता। तुम्हीं सोचो, ऐसा एक भी जीव तुम्हें नहीं मिलेगा। और

जाने कितने लोग इस जीवन में मेरे सम्पर्क में आए हैं। मेरे भीतर ही कोई ऐब है।"

"यह सब फ़िज़ूल की बात है।"

"नहीं, यह एकदम सच है," विश्वास के साथ सिर हिलाते हुए उसने कहा।

मैंने सिद्ध करने की कोशिश की कि वह ग़लत है, लेकिन जो कुछ मैंने कहा उससे उसका यह विश्वास केवल और भी दृढ़ हो गया कि वह इस दुनिया में रहने योग्य नहीं है।

उसमें तेज़ी के साथ आमूल परिवर्तन हो गया। वह आलसी, खोया-खोया हुआ, चुप्पा और मिलनसारी से शून्य बन गया। पुस्तकों में उसकी दिलचस्पी जाती रही और काम भी अब वह पहले जैसे उत्साह से नहीं करता था।

अवकाश के घंटों में वह फ़र्श पर लेट जाता और डाटदार छत की ओर ताकता रहता। उसके गाल भीतर को धंस गए और उसकी आंखों में बच्चों ऐसी वह चमक अब नहीं रही।

"साशा, तुम्हें हो क्या गया है?" मैंने पूछा।

"गड़गच्च होने का दौर सवार हो रहा है," उसने बताया—"शीघ्र ही मैं वोडका में डूबना-उतराना शुरू कर दूंगा। मेरा अन्तर ऐसे टीस मारता है जैसे उसे गर्म लोहे से दाग़ा जा रहा हो। लेकिन अब वह समय आ गया। अगर वह सब न घटा होता जो कि घट चुका है, तो शायद मैं कुछ दिन और टिक जाता। बस, और कुछ नहीं। तुम्हीं सोचो, यह क्या बात है,—मैं समझता था कि एक आदमी का भला कर रहा हूं, लेकिन हुआ ठीक एकदम उलटा। कैसे क्या करना चाहिए, इसके नियम होने चाहिएं। मित्र! क्या उन्हें—उन नियमों को—बनाना सचमुच बहुत कठिन है? वे हों तो सब एक ढंग से काम करें और एक दूसरे को समझें।

इतनी बड़ी खाई जब लोगों को अलग किए हो – इतनी दूर-दूर जब वे छिटके हों – तब उनसे जीवन की आशा भी क्या की जा सकती है? क्या उनके पास दिमाग़ नहीं है? उन्हें इतना भी नहीं सूझता कि जीवन में व्यवस्था लाए बिना काम नहीं चलेगा और देखना होगा कि हर आदमी यह जाने कि कौन क्या है? हे मेरे भगवान्!"

जीवन में व्यवस्था लाने के विचारों में वह इतना डूबा था कि मैंने जो कुछ कहा उसपर वह कोई ध्यान नहीं दे सका। मैंने देखा कि वह अब मुझसे कतराने लगा है। एक दिन जीवन को फिर से बनाने के बारे में मेरे विचारों को सुनकर – जिन्हें मैं सैकड़ों बार उसके सामने रख चुका था – वह भड़क उठा –

"मुंह बन्द करो। यह सब सुनते-सुनते मेरे कान पक गए। दोष जीवन का नहीं, लोगों का है। लोग ही मुख्य चीज़ हैं, – समझे? और बस, यही सारे तत्व की बात है। अगर तुम्हारी बात मान लें तो जब तक चीज़ें बदलें, लोगों को वैसे ही बने रहना चाहिए जैसे कि वे हैं। ओह नहीं, पहले लोगों को बदलो, उन्हें बताओ कि कैसे क्या करें, तब हर चीज़ साफ़ हो जाएगी और लोग एक दूसरे की राह में आड़े नहीं आएंगे। यही वह चीज़ है जो लोगों के लिए हमें करनी चाहिए। उन्हें सही गली में पहुंचने का तरीक़ा बताओ।"

जब मैं विरोध करता तो वह बौखला उठता या उदासी में डूब जाता।

"ओह, मेरी जान छोड़ो!" वह कहता।

एक दिन वह सांझ को चला गया और उस रात या अगले दिन भी काम पर नहीं लौटा। उसके बजाय मालिक ने आकर चिन्तित आवाज़ में कहा –

"साशा गड़गच्च होने चला गया है। वह 'दीवाल' नाम के दारुघर में अड्डा जमाए है। हमें दूसरा बेकर खोजना होगा।"

"हो सकता है कि वह वहां से उबरकर लौट आए।"

"कोई उम्मीद नहीं। मैं उसे जानता हूं।"

मैं 'दीवाल' नामक दारुघर में पहुंचा। यह बड़ी ख़ूबी के साथ पत्थर की दीवार में सटा था और इसी वजह से इसका यह नाम पड़ गया था। इसकी एक सबसे निराली विशेषता यह थी कि इसमें एक भी खिड़की नहीं थी, रोशनी छत में बने एक झरोखे में से आती थी। असल में यह धरती में एक चौरस खोह के सिवा और कुछ न था। इसपर तख़्तों की छतछाई थी। यह मिट्टी, माख़ोरका तम्बाकू और वोडका की गंध से गंधाता था और सदा सन्देहजनक चरित्रों का यहां जमघट लगा रहता था। ये इसके स्थायी ग्राहक थे। कई-कई दिन तक वे यहीं पड़ाव डाले रहते,— इस प्रतीक्षा में कि कोई कारीगर आकर रंग-पानी शुरू करे और वे उसके कपड़े तक उतरवाकर पी जाएं।

कोनोवालोव दारुघर के बीचोंबीच एक बड़ी-सी मेज पर बैठा था। उसके साथ फटे चिथड़े पहने छः महानुभाव और थे। उनके चेहरे देखकर ऐसा मालूम होता था जैसे हाफ़मैन की कहानियों के पात्र यहां आ मौजूद हुए हों। वे बीयर और वोडका पी रहे थे और मिट्टी के ढेलों ऐसी शक्ल की कोई चीज़ खा रहे थे। साथ ही, चापलूसी के अन्दाज़ में, उसकी बातें सुन रहे थे।

"पियो, साथियो, पियो! जी भरकर पियो! मेरी गांठ में पैसा और बदन पर कपड़े हैं। तीन दिन तक कोई टोटा नहीं। क्या मजाल जो कुछ भी बचाकर रखूं, और फिर... फिर जाए जहन्नुम में! मैं अब यहां काम करना नहीं चाहता और न ही मैं यहां और अधिक रहना चाहता हूं!"

"बहुत ही सड़ा हुआ नगर है!" उनमें से एक ने कहा जो जौन फ़ालस्टाफ़ का नमूना मालूम होता था।

"काम ?" एक दूसरे ने सवाल किया, छत की ओर देखते और अचरज-भरे स्वर में यह और जोड़ते हुए — "आदमी क्या इसलिए जन्म लेता है कि हर घड़ी काम की चक्की में पिसा करे ?"

और वे सब एकबारगी बतियाने और कोनोवालोव के सामने यह सिद्ध करने में लगे कि उसे पीने का पूरा अधिकार है, और यह कि वह पीकर भलमनसाहत तक का परिचय दे रहा है, क्योंकि वह अकेले नहीं बल्कि उनके साथ पी रहा है।

"अरे, तुम हो, मक्सिम! इंजन गरम है," मुझे देखते ही वह चहक उठा — "चले आओ, किताब-चाटू कीड़े, ढोंगी, — चले आओ, — यह लो, तुम भी अपना गला तर कर लो। मैं तो लीक छोड़ आया, अब लौटकर नहीं जाऊंगा, मित्र! जो भी हो, मेरी बला से! मैं तो डूबना चाहता हूं, पूरी तरह गड़गच्च होना चाहता हूं। यह दौर तभी बन्द होगा जब मेरे तन पर सिवा मेरे बालों के और कुछ बाक़ी न रहेगा। आओ, तुम भी हमारे साथ आ जाओ!"

वह अभी पूरी तरह नशे में धुत्त नहीं हुआ था। उसकी नीली आंखों में विह्वलता की चमक थी और उसकी ख़ूबसूरत दाढ़ी रेशम के पंखे की भांति उसकी छाती पर फैली उसके निचले जबड़े के स्नायुविक कम्पन के साथ थिरक रही थी! उसकी कमीज़ का कालर खुला था, पसीने की छोटी-छोटी बूंदें उसके सफ़ेद माथे पर चमक रही थीं और उसका हाथ — जिसमें बीयर का गिलास थामे जिसे वह मेरी ओर बढ़ाए था — कांप रहा था।

"इसे फेंको साशा! चलो, यहां से बाहर चलें," उसके कंधे पर हाथ रखते हुए मैंने कहा।

"इसे फेंक दूं!" वह हंसा — "दस साल पहले अगर तुमने यह बात कही होती तो शायद मैं इसे फेंक देता। लेकिन अब नहीं। इसके सिवा मैं और करूं भी क्या? मुझे हर चीज़ का — एक-एक

चीज़ का–चेत है,–हल्की से हल्की हरकत भी मुझसे छिपी नहीं रहती,–लेकिन मेरी समझ में कुछ नहीं आता और मैं नहीं जानता कि मुझे क्या करना चाहिए। सच, मुझे हर चीज़ का चेत है, और इसीलिए मैं पीता हूं, क्योंकि इसके सिवा और कुछ नहीं है जो मैं कर सकूं। यह लो, तुम भी अपना गला तर कर लो।"

उसके साथी प्रत्यक्ष नाराज़ी से मुझे देख रहे थे, बारह की बारह आंखें विरोध-भरी नज़र से सिर से पांव तक मुझे नाप रही थीं।

उन दयनीय जीवों को डर था कि कहीं मैं कोनोवालोव को उठा न ले जाऊं और वे उस रंग-पानी से वंचित न रह जाएं जिसकी कि वे उम्मीद बांधे थे।

"यह मेरा मित्र है, साथियो! ख़ूब पढ़ा-लिखा, ख़ुदा की मार हो इसपर! मक्सिम, क्या तुम स्तेन्का वाली किताब यहां पढ़कर सुना सकते हो?–ओह, कैसी-कैसी किताबें इस दुनिया में मौजूद हैं, भाइयो!–या फिर पिला वाली किताब। बोलो, मक्सिम, क्या कहते हो? ख़ून और आंसू, भाइयो! वह पिला जैसे मैं ही था,–क्यों था न, मक्सिम? और ऐसा ही सिसोइका था। एकदम मेरे जैसा,–बिल्कुल मैं ही। है न यह भारी रहस्य की बात!"

उसने मेरी ओर पूरी तरह खुली और भय-भरी आंखों से देखा। उसका निचला जबड़ा अजीब ढंग से कांप रहा था। उसके साथियों ने अनमने भाव से मेरे लिए मेज़ पर बैठने की जगह छोड़ दी। मैं कोनोवालोव की बग़ल में बैठ गया। उस समय वह आधी वोडका और आधी बीयर से भरा गिलास अपने हाथ में उठाने जा रहा था।

ऐसा मालूम होता था जैसे वह, जितना भी जल्दी हो सके, अपने आपको इस दोहरे घोल में डुबा देने के लिए उतावला हो। इसे गले में उंडेलने के बाद उसने उस चीज़ का एक टुकड़ा उठाया जो

देखने में मिट्टी का ढेला मालूम होती थी, लेकिन असल में उबला हुआ मांस थी। एक क्षण तक नज़र गड़ाकर उसने उसे देखा और फिर उसे दारुघर की दीवार पर दे मारा।

उसके साथी दबी आवाज़ में गुर्रा उठे, जैसे भूखे भेड़ियों की टोली गुर्रा रही हो।

"मेरी आत्मा मर चुकी है। मेरी मां ने क्यों मुझे इस दुनिया में पैदा किया? कोई नहीं बता सकता। अंधेरा। कचरपचर। अगर तुम मेरे साथ पी नहीं सकते तो जाओ, मक्सिम, यहां से विदा हो जाओ। मैं बेकरी में लौटकर नहीं जाऊंगा। मालिक से मुझे कुछ धन लेना है। उसे लेकर मुझे यहां दे जाओ। पीने के काम आएगा। या नहीं, उसे लेकर अपने लिए किताबें ख़रीद लो। क्यों, ऐसा करोगे न? नहीं करोगे? ऐसा नहीं करना चाहते? अगर नहीं तो समझ लो कि तुम निरे सुअर हो! दफ़ा हो जाओ यहां से। जाओ, मैं कहता हूं,—चले जाओ यहां से!"

नशे के साथ-साथ उसकी आंखों में विरोध की चिंगारियां भी तेज़ होती गईं।

उसके साथी मुझे गरदनियां देकर बाहर निकालने के लिए तैयार बैठे थे। उन्हें इसका मौक़ा न दे मैं पहले ही वहां से खिसक आया।

तीन घंटे बाद मैं फिर 'दीवाल' नामक दारुघर में पहुंचा। उसके साथियों की संख्या में अब दो की वृद्धि और हो गई थी। सबके सब नशे में धुत्त थे,—वह भी नशे में धुत्त था, लेकिन उनसे कम। वह अपनी कोहनियों को मेज़ पर टेके और अपनी आंखों को आसमान पर जमाए, जो छत के झरोखे में से झांक रहा था, गाने में मगन था। उसके पियक्कड़ साथी विचित्र मुद्राओं में बैठे गाना सुन रहे थे और उनमें से कुछ हिचकियां ले रहे थे।

कोनोवालोव की गहरी परुष ग्रावाज़ थी जिसे खींचकर वह काफ़ी ऊंचे तक ले जाता था, जैसे कि सभी मज़दूर ग्रौर कारीगर गाते हैं। गाल पर हाथ रखे, ग्रपनी ग्रांखों को ग्राधा मूंदे ग्रौर ग्रपने घेंटुवे को बाहर निकाले गहरी भावना के साथ वह गा रहा था। उसके गीत के बोल उदासी में डूबे थे। नशे में धुत्त ग्राठ सूनी शक्लें उसकी ग्रोर ताक रही थीं ग्रौर जब-तब बुदबुदाने या हिचकियां लेने के सिवा ग्रन्य कोई ग्रावाज़ वे नहीं कर रही थीं। कोनोवालोव की ग्रावाज़ सुबक, कराह ग्रौर मृदु कम्पन से भरी थी। ऐसा मालूम होता था जैसे उसका – इस ग्रनुपम जीव का – इस हद तक उदासी में पगा गाना सुनकर हृदय ग्रभी टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाएगा।

दारुघर की दमघोट गंध, पसीने से चुचुग्राते नशे में धुत्त चेहरे, धुंवां देते दो तैल-लैम्प, कारिख-चढ़ी गंदी दीवारें, कच्चा मिट्टी का फ़र्श, उदास परछाइयां – यह सभी कुछ हृदय को बोझिल ग्रौर ग्रस्वास्थ्यकर था। ऐसा मालूम होता था जैसे किसी मक़बरे में जीवित दफ़ना दिए गए लोग किसी वीभत्स भोज में जुटे हों ग्रौर उनमें से एक मानो मरने से पहले ग्राकाश से विदा लेते हुए ग्रपना ग्राख़िरी गीत गा रहा हो। मेरे मित्र का गीत घोर शोक, थिर निराशा ग्रौर कभी न तुष्ट हुई ग्राकांक्षा से भरा था।

"मक्सिम, ज़रा इधर देखो। बोलो, मेरे वज़ीर बनोगे?" गाना रोककर मेरी ग्रोर ग्रपना हाथ बढ़ाते हुए उसने कहा – "हर चीज़ मेरे पास मौजूद है, मित्र! यह देखो, यह मेरे ग्रादमियों का दल है, – ग्रौर हम कुछ ग्रौर जमा कर लेंगे। सच, हम ज़रूर जमा कर लेंगे। यह कुछ मुश्किल न होगा। ग्रौर हम पिला तथा सिसोइका को बुलाएंगे। हर रोज़ मांस ग्रौर दलिये का उन्हें भोजन कराएंगे। क्यों, कराएंगे न? बस, ग्रब झटपट तैयार हो जाग्रो। लपककर कुछ

पुस्तकें ले आओ। तुम हमें स्तेन्का और अन्य के बारे में पढ़कर सुनाना। ओह, मित्र, मैं तंग आ गया हूं इस सबसे! तंग... आ गया हूं... इस सबसे!"

और उसका बंधा हुआ मुक्का ज़ोरों के साथ मेज़ पर आ गिरा। गिलास और बोतलें खड़खड़ा उठीं, उसके साथी एकाएक चौंक उठे और उनकी भयानक चीख़-पुकार से दारुघर गूंज उठा।

"पियो, साथियो, पियो!" कोनोवालोव ने चिल्लाकर कहा—"अपनी सारी मुसीबतें इसमें डुबा दो। उंडेलो, गले के नीचे ख़ूब उंडेलो!"

मैं बाहर चला आया और दरवाज़े में खड़ा होकर कोनोवालोव की नशे में बड़बड़ सुनता रहा। इसके बाद जब उसने फिर पीना शुरू किया तो मैं वहां से बेकरी के लिए चल दिया। नशे में डूबे गीत की आवाज़ें रात की निस्तब्धता में देर तक सुबकती और कराहती मेरा पीछा करती रहीं।

इसके दो दिन बाद कोनोवालोव ग़ायब हो गया।

* * *

आदत में शामिल हुए तुच्छ कपट से पूर्ण झूठों द्वारा पोषित सभ्य समाज की दमघोट परिपाटियों को, उस समाज के अस्वस्थ दम्भ, संकीर्णता और ढोंग को,—एक शब्द में झूठी प्रतिष्ठाओं के उस झूठे अभिमान को, जो अनुभूतियों को कुन्द और मस्तिष्क को भ्रष्ट करता है,—बिना किसी विरोध या उससे बचकर भागने की आकांक्षा के वही सहन कर सकता है जो जन्म से ही उसकी घुट्टी पीकर बड़ा हुआ हो। मेरा जन्म और पालन-पोषण उससे बाहर हुआ और इसीलिए —भला हो इस परिस्थिति का—जब-तब इस समाज की सीमाओं को तोड़कर बाहर निकलने और उसकी अति पेचीदगियों तथा अस्वस्थ

नफ़ासत से जान बचाने की आवश्यकता का अनुभव किए बिना बड़ी मात्राओं में इस सभ्यता का पान करना मेरे बूते की बात नहीं था।

देहातों का जीवन भी बुद्धिजीवियों के बीच वाले जीवन से कुछ कम उदास और असह्य नहीं था। ऐसी स्थिति में जब मन ऊबता तो नगर की गंदी बस्तियों में जाना सबसे अच्छा मालूम होता जहां गंदगी के बावजूद जीवन बहुत ही सरल और सच्चा था। या फिर अपने देश की सड़कों और खेत-खलिहानों के ओर-छोर नापना अच्छा मालूम होता, —एक ऐसी अभियान-यात्रा, जो भारी ताज़गी प्रदान करती और जिसके लिए दो मज़बूत टांगों के सिवा अन्य किसी प्रसाधन की ज़रूरत नहीं होती।

पांच साल पहले मैं ऐसी ही एक यात्रा पर चल पड़ा था और पवित्र रूस के विस्तारों में घूमता-घामता अन्त में फ़ेओदोसिया जा पहुंचा था। उन दिनों बांध के निर्माण का काम अभी शुरू ही हुआ था और कुछ धन कमाने की आशा ने मेरे डग भी उधर मोड़ दिए।

सबसे पहले मैंने निर्माण-स्थल को एक चित्र की भांति अपने हृदय के पट पर उतारना चाहा। सो एक पहाड़ी पर मैं चढ़ गया। नीचे, जहां तक नज़र जाती थी, शक्तिशाली सागर फैला था और उसे बांधनेवाले लोग छोटे-छोटे जीवों की भांति दिखाई देते थे।

मानवीय श्रम का एक व्यापक चित्रपट मेरी आंखों के सामने खुला था। समूचा पहाड़ी-तट खुदा हुआ था, जगह-जगह से छिदा था, पत्थरों और लकड़ियों के ढेरों, ठेलों, लट्ठों, लोहे की छड़ों, लट्ठा गाड़ने के यंत्रों और अन्य मशीनों तथा यांत्रिक औज़ारों का बोलबाला था और इस सबके भीतर और बाहर कारीगर और मज़दूर तेज़ी से हरकत करते नज़र आ रहे थे। पहाड़ियों में से एक डिनामाइट से उड़ा दी गई थी और अब लोग उसे कुदालियों से काट रहे थे ताकि रेल की

पटरी बिछाने के लिए रास्ता साफ़ किया जा सके। भीमाकार खत्तियों में सीमेंट मिलाया जा रहा था और उसे छ:फ़ुट के ब्लाकों में ढाला जा रहा था। ये ब्लाक लहर की प्रचंड शक्ति के ख़िलाफ़ सुदृढ़ प्राचीर खड़ा करने के लिए समुद्र में उतारे जा रहे थे। कत्थई पहाड़ी की पृष्ठ-भूमि में लोग कीड़े-मकोड़ों की भांति छोटे मालूम होते थे और दक्खिनी सूरज की झुलसा देनेवाली धूप में रेंग रहे थे – कचरी हुई चट्टान के ढेरों और लकड़ी के लट्ठों के अम्बारों के बीच, जो पत्थरों की धूल के बादलों मे घिरे धुंधले-धुंधले-से नज़र आ रहे थे। उनके चारों ओर फैले मलबे तथा सिर पर चिलकते आकाश को देखकर ऐसा मालूम होता था जैसे सूरज की तपन और चारों ओर की तोड़-फोड़ मे शरण पाने के लिए वे पहाड़ी की गहराइयों में घुसे जा रहे हों।

बोझिल वायुमंडल काम की भनक और धड़कन से गूंज रहा था, – कुदालियों के चट्टान से टकराने की खनखन, ठेलों के पहियों की चींचीं, लट्ठा गाड़ने के यंत्रों के गिरने की धुंधली धमक, मज़दूरों के 'दुबिनुश्का' गीत की विरह में डूबी आवाज़, लट्ठों को काटनेवाली कुल्हाड़ियों की खटखट और मटमैली मानवीय आकृतियों की बहु-स्वरीय चीख़-चिल्लाहट दृश्यपट को सजीव बनाए थी।

एक जगह मज़दूर ज़ोरों से आवाज़ करते चट्टान के एक बड़े टुकड़े को धकियाने के लिए जूझ रहे थे और एक अन्य स्थल पर वे किसी भीमाकार लट्ठे को उठाते हुए एक स्वर में चिल्ला रहे थे –

"एक, दो – हइया!"

बाज़ू-कटी पहाड़ी से टकराकर उनकी चिल्लाहट की धुंधली प्रतिध्वनि गूंज रही थी।

जहाज़ की छत के टूटे हुए तख़्तों के ऊपर से मज़दूरों की एक पांत धीमी गति से चली आ रही थी – पत्थर-लदे ठेलों पर अपनी

कमर को दोहरा किए। इसीके साथ-साथ विरोधी दिशा से ख़ाली ढेलों की एक पांत का तार बंधा था जिसकी गति और भी धीमी थी,– यह इसलिए कि वे एकाध घड़ी का विश्राम लेकर अपने बदन को कुछ सीधा कर सकें। लट्ठा गाड़ने के यंत्र के इर्द-गिर्द लोगों की एक बहुरंगी भीड़ जमा थी और उनके बीच से किसीके ऊंचे परुष स्वर में गाने की आवाज़ आ रही थी–

अख़, साथियो, यह दोज़ख़ी गर्मी,
अख़, साथियो, यह दोज़ख़ी जीवन,–
अई-ई-ई, दु-ऊ-बिनुश्का,
एक, दो, लगे ज़ोर हइया!

उन लोगों की ओर से, जो रस्सा खींच रहे थे, एक धीमी गरज आई, लोहे का सिलंडर तेज़ी से खिसकता लट्ठे की चोटी पर पहुंचा और फिर धुंधले धमाके के साथ नीचे आ गिरा,– लट्ठा गाड़ने का यंत्र उसकी धमक से थरथरा उठा।

पहाड़ी और समुद्र के बीच की जगह छोटे-छोटे मटमैले आदमियों की भीड़ जमा थी। वायुमंडल धूल, चीख़-चिल्लाहट और पसीने की खट्टी गंध से भरा था। उनके बीच उनके मालिक सफ़ेद कोट पहने इधर से उधर हरकत कर रहे थे। उनके कोटों में लगे पीतल के बटन सूरज की धूप में निर्मम पीली आंखों की भांति चमक रहे थे।

समुद्र शांत और गम्भीर धुंध छाए क्षितिज तक फैला था और उसकी पारदर्शक लहरें काम की चहल-पहल से पूर्ण तट से टकराकर चुपचाप छितरा रही थीं। सूरज की धूप में जब समुद्र चमकता तो ऐसा मालूम होता जैसे वह मुसकरा रहा हो – उस गुलीवर की भांति, जो जानता था कि अगर वह चाहे तो अपनी एक ज़रा-सी

हरकत से इन लिलिपुतों (बौनों) के श्रम के फलों को मटियामेट कर सकता है।

वह सामने दूर तक फैला था, – चौंधिया देनेवाली चमक से चमचमाता, सुविस्तृत, शक्तिशाली और सहृदय, अपने शीतल श्वास से थकान से चूर उन लोगों को ताज़गी प्रदान करता, जो उसकी लहरों की आज़ादी को कुचलने के लिए जूझ रहे थे – उन लहरों की आज़ादी कुचलने के लिए, जो इस समय इतने दबे रूप में कटे हुए तट से छपछपा रही थीं। ऐसा मालूम होता था जैसे वह इन लोगों के लिए शोक का अनुभव कर रहा हो। सैकड़ों वर्षों के दौरान में उसने यह जान लिया था कि श्रम करनेवाले ये लोग वे नहीं हैं जो उसके ख़िलाफ़ कुटिल मन्सूबे बांधते हैं, ये तो निरे दास हैं जिन्हें प्रकृति के तत्वों से लड़ने के काम में जोत दिया गया है, और यह निश्चित है कि इस लड़ाई में प्रकृति के तत्व उन्हें अपने प्रतिशोध का शिकार बनाएंगे। वे और कुछ नहीं केवल श्रम करते हैं, वे हर घड़ी कुछ न कुछ बनाते रहते हैं। उनके रक्त और पसीने का सीमेंट – हमारी इस धरती पर जितनी भी इमारतें हैं – उन सबमें लगा है। फिर भी इस सबके बदले में वे अपने लिए कुछ नहीं पाते। कुछ न कुछ निर्माण करने की अपनी चिरन्तन आकांक्षा में – उस आकांक्षा में, जिसने इस धरती पर चमत्कारों के महल खड़े किए हैं, – अपनी समूची शक्ति उंडेल देने के बाद भी ऐसा नहीं होता कि लोगों को अपने सिर के ऊपर छत या अपने बदन के लिए काफ़ी भोजन नसीब हो। ये लोग खुद भी प्रकृति के तत्वों में से एक तत्व हैं, और इसीलिए समुद्र गुस्से के बजाय सहृदयता की नज़र से उनके अलाभप्रद श्रम को देख रहा था। पहाड़ी के बाज़ू को छेदनेवाले ये छोटे-छोटे मटमैले कीड़े जैसे पानी की उन बूंदों के समान थे जिन्हें समुद्र अपनी सीमाओं का विस्तार करने

की अपनी चिरन्तन आकांक्षा से हुमककर सर्द और अडिग चट्टानों से टकराने के लिए फेंकता है। मुठभेड़ होने पर सबसे पहले वे ही नष्ट होती हैं। इन बूंदों का जोड़ बहुत कुछ सागर के समान होता है,– उससे किसी रूप में भी भिन्न नही – शक्तिशाली और तूफ़ान की सांस का स्पर्श मिलने पर उतना ही विनाशकारी। समुद्र पुराने ज़माने में उन ग़ुलामों से परिचित था जिन्होंने रेगिस्तान में पिरामिडों का निर्माण किया, और उस हास्यास्पद बादशाह ऐक्सरैक्सस के ग़ुलामों की भी उसे जानकारी थी जिसने समुद्र को तीन सौ कोड़े लगाने की सज़ा इसलिए दी थी कि उसकी लहरें उसके खिलौना-पुलों को बहा ले गई थीं। ग़ुलाम सभी कालों में एक जैसे रहे हैं। उन्हें हमेशा मातहती में रखा गया, उन्हें कभी भरपेट भोजन नसीब नहीं हुआ, उन्होंने हमेशा महान् और अद्भुत काम सम्पन्न किए – कभी उन लोगों की देवता की भांति प्रशंसा करते हुए, जो उन्हें काम में जोतते थे, लेकिन अधिकतर उन्हें कोसते हुए और कभी कदास अपने शासकों के ख़िलाफ़ विद्रोह करते हुए।

...लहरें चुपचाप छलछलाती हुई तट के ऊपर तक दौड़ आतीं जहां लोग उनकी निरन्तर गतिशीलता के ख़िलाफ़ बांध का निर्माण कर रहे थे, और जब वे दौड़ती हुई आतीं तो एक मृदु गीत गाती जातीं – अतीत के बारे में, उस सबके बारे में, जिसे उन्होंने एक शती के बाद दूसरी शती में इस तट पर देखा था।

मज़दूरों में तपे ताम्बे के रंग की आकृतियां नज़र आ रही थीं – क्षीणकाय, पगड़ी बांधे या फ़ैज़ टोपी पहने, बदन पर छोटी-छोटी नीली जाकटें और छोटे थैलेनुमा पायजामे डाटे, जो ऊपर खींचकर घुटनों पर कस दिए गए थे। ये लोग, जैसा कि मुझे बाद में मालूम हुआ, अनातोलिया-निवासी तुर्क थे। गले में गड़गड़ाती उनकी बोली

व्यात्का-निवासी रूसियों की धीमी बिलम्बित बोली, वोल्गा प्रदेश के लोगों की खड़तल और तेज़ आवाज़ तथा उक्रइनियों के मृदु लहराते हुए सुरों के साथ घुल-मिल रही थी।

उन दिनों रूस में अकाल फैला था और अकाल के मारे लोग क़रीब-क़रीब सभी ग्रस्त क्षेत्रों से यहां खिदड़ आए थे। वे अपने-अपने देश के लोगों के साथ सटकर रहने की कोशिश करते थे और इस तरह उनके छोटे-छोटे गिरोह बन गए थे। लेकिन आवारा लोग—जिनका न कोई देश था, न घर-बार—अपनी आज़ाद चाल-ढाल और कपड़ों तथा बोली-ढोली के निरालेपन के कारण उन लोगों से साफ़ अलग नज़र आते थे जिनकी जड़ें अभी भी उनके देश की धरती में जमी थीं, जो अपनी धरती को नहीं भूले थे और जो भूख से त्रस्त होकर फ़िलहाल कुछ दिनों के लिए उसे छोड़ आए थे। बे-घर-बार ये आवारा हर गिरोह में मौजूद थे—वे व्यात्का-निवासियों के साथ भी उतनी ही आसानी से घुल-मिल जाते थे जितना कि उक्रइनियों के साथ,—और हर कहीं उन्होंने घर कर लिया था। लेकिन ज़्यादातर वे लट्ठा गाड़ने के यंत्र के इर्द-गिर्द बटुर आए थे। कारण कि कुदालियों या ठेलागाड़ियों के मुक़ाबिले यहां काम आसान था।

जब मैं उनके निकट पहुंचा तो मज़दूर अपने हाथों में ढीला लटकता हुआ रस्सा थामे खड़े थे। पुली में रस्से का सन फंस गया था और इसने उसकी हरकत को जाम कर दिया था। फ़ोरमैन उसे मुक्त करने में जुटा था और मज़दूर उसके मुक्त होने की प्रतीक्षा में खड़े थे। लकड़ी के छोटे-से गुम्बज़ में खड़ा वह उससे उलझ रहा था और रह-रहकर नीचे की ओर चिल्लाता जाता था—

"ऐ, इसे एक झटका दो!"

और वे आधे मन से रस्से को झटक देते।

"ठहरो! फिर झटका दो! रुको! अब फिर झटको!"

वह, जो उनके बीच गा रहा था, एक युवक था। उसके चेहरे पर चेचक के दाग़ थे, गालों पर दाढ़ी बढ़ी थी और उसका कँड़ा फ़ौजी मालूम होता था। उसने अपने कंधों को चौरस किया, एक बाज़ू नज़र फेंकी, खंखारकर अपने गले को साफ़ किया और गाने लगा—

हुआ छू मन्तर—
चालक ने धम्म से
पटका उसे जमीन पर!

इसके बाद की पंक्तियां ऐसी थीं कि अत्यन्त मुलायम सेन्सर भी उन्हें पास न करता। साफ़ मालूम होता था कि मौक़े से अनुप्राणित होकर गायक खुद अपने मन से उन्हें तुरत गढ़ता और गाता जाता है। लोग जोरों से हंसकर उसे दाद देते और इसके जवाब में वह अपनी मूंछों में बल डालता—उस कुशल अभिनेता की भांति, जो प्रशंसा का अभ्यस्त हो चुका है।

"काम-धाम से कुछ मतलब नहीं," फ़ोरमैन फनफनाता हुआ नीचे की ओर चिल्लाया — "बस, गधे की तरह खड़े रेंक रहे हैं!"

"इतना क्यों चिल्लाते हो, मित्रिच? देखो, कोई नस न फट जाए!" मज़दूरों में से किसीने जवाब दिया।

आवाज़ जानी-पहचानी थी और मुझे लगा कि उस चौड़े कंधों वाली काठी को, उस अंडाकार चेहरे को और उन नीली आंखों को पहले भी कहीं देखा है। कहीं यह कोनोवालोव तो नहीं है? लेकिन कोनोवालोव के चेहरे पर घाव का वह निशान नहीं था जो दाईं कनपटी से लेकर नाक के पुल तक उसके माथे को चीरे था। और कोनोवालोव के बाल इतने गहरे और इतने घुंघराले नहीं थे। इसके अलावा कोनोवालोव के चेहरे पर एक ख़ूबसूरत दाढ़ी लहराती

थी जब कि इस युवक की ठोड़ी सफ़ाचट थी और वह उक्राइनियों की भांति लम्बी तथा छोरों पर लहराती मूंछें रखे था। फिर भी उसमें कुछ था जो एकदम परिचित मालूम होता था। मैंने मन ही मन उससे पूछने का निश्चय किया कि काम के लिए मुझे किसके पास जाना चाहिए। लेकिन मशीन के चालू होने तक रुका रहा।

"आ-आ-अम्फ़! आ-आ-अम्फ़!" मज़दूर पसरकर ज़ोरों से रस्सा खींच रहे थे, फिर वे हवा में इस तरह उछल गए जैसे उनके पंख लगे हों। लट्ठा गाड़ने का यंत्र चिचियाकर हिला, धूप में तपी बालदार काली बांहें लोगों के सिरों के ऊपर रस्सों तक खिंच गईं, पुट्ठों की मछलियां बड़ी-बड़ी गांठों की भांति उभर आईं, लेकिन चालीस पूड भारी लोहे का घन जितनी अधिक ऊंचाई से गिरना चाहिए था उससे उत्तरोत्तर ओछा पड़ता गया और उसकी चोट भी उतनी ही कमज़ोर होती गई। दृश्य को देखने से ऐसा मालूम होता जैसे ये लोग मूर्ति-पूजक हों और आवेग तथा निराशा में डूबे अपनी बांहों को ऊंचा उठाए अपने मूक देवता के सामने सिर झुका रहे हों। वायुमंडल गर्म भापों से भरा था जो पसीना-चूते उनके गंदे चेहरों और गीले माथे पर चिपके उनके अस्त-व्यस्त बालों, उनकी काली गरदनों, बल खाते हुए उनके कंधों और उनके शरीरों से उठ रही थीं जो हर प्रकार के चिथड़ों से केवल आधे ढके थे। और ये शरीर एकाकार होकर मांस-पेशियों का एक ठोस पिंड बन गए थे जो दक्खिन की गर्मी से थरथराते और पसीने की गंध में पगे नम वायुमंडल में कसमसा और बल खा रहा था।

"बस करो। समय पूरा हो गया!" बैठी हुई खुरदरी आवाज़ में कोई चिल्लाया।

मज़दूरों के हाथ ढीले पड़े और रस्से लट्ठा गाड़ने के यंत्र के

इर्द-गिर्द लिजबिजाकर नीचे आ गिरे। लोग पसरकर धरती पर बैठ गए, अपने चेहरे का उन्होंने पसीना पोंछा, गहरी सांस लेकर अपने फेफड़ों में हवा भरी, अपनी कमर को सीधा किया, अपने कंधों को सहलाया और उनकी बुदबुदाहट हवा में इस तरह गूंजने लगी जैसे कोई चोटियल जन्तु गुर्रा रहा हो।

"सुनो भाई," मैंने उस आदमी से कहा।

वह धीरे से मेरी ओर मुड़ा, उसकी आंखें मेरे चेहरे पर घूम गईं, फिर उसने उन्हें सिकोड़ लिया और नज़र जमाकर मुझे देखने लगा।

"कोनोवालोव!"

"ठहरो!" ठहाका मारकर उसने मेरा सिर इस तरह पीछे की ओर धकेल दिया जैसे मेरी गरदन को दबोचने जा रहा हो, फिर उसका चेहरा अचानक आह्लादपूर्ण मुसकराहट से खिल गया।

"मक्सिम! ओह, तुम कहां से आ टपके? मेरे पुराने साथी! सो तुम भी एकदम रस्सा तुड़ा आए, –क्यों? हम आवारों में शामिल हो गए? यह अच्छा किया। तुमने कब रस्सा तुड़ाया? और अब कहां से आ रहे हो? तुम और मैं दोनों मिलकर समूची धरती छान डालेंगे। वह जीवन हमारे लिए नहीं था, –वही दूसरे वाला जीवन। दु:ख और ढेर सारी मुसीबतें, –इसके सिवा और कुछ नहीं। सड़-सड़कर मरने का सीधा रास्ता। तुमसे अलग होने के बाद मैं बराबर अपने पांव का शनीचर उतार रहा हूं। ओह, कैसी-कैसी जगह मैंने देखी हैं और जाने कितनी ताज़ी हवा मैंने अपने फेफड़ों में भरी है! लेकिन तुम ज़रा अपनी शक्ल तो देखो! क्या धज बना रखी है! मैं तो तुम्हें कभी पहचान न पाता। सैनिकों ऐसे कपड़े और छात्रों ऐसा चेहरा। लेकिन छोड़ो, यह बताओ कि तुम्हें इस तरह जीवन

बिताना कैसा लगता है—आज यहां तो कल वहां। यह मत सोचना कि मैं स्तेन्का को—या तारास या पिला को—भूल गया हूं। मुझे वे सब याद हैं।"

उसने अपनी उंगली मेरी पसलियों में गडाई और अपनी प्रशस्त हथेली से मेरे कंधे को थपथपाया। बग़ल आड़ी होने के कारण मैं कुछ बोलने में असमर्थ था। मैं केवल खड़ा और मुसकराता हुआ उसके भले चेहरे की ओर देख रहा था जो अब पुनर्मिलन की ख़ुशी से चमक उठा था। मैं भी उससे मिलकर ख़ुश था—अत्यन्त ख़ुश। मुझे याद हो आया कि किस प्रकार मैंने अपने जीवन का प्रारम्भ किया था और वह प्रारम्भ असंदिग्ध रूप में उससे अच्छा था जो उसके बाद घटित हुआ।

आख़िर मैं कुछ बोलने में समर्थ हुआ। मैंने अपने पुराने साथी से पूछा कि उसके माथे पर यह निशान कैसे पड़ा और उसके सिर के बाल इतने हल्के और घुघराले कैसे हो गए।

"ओह, वे! अच्छा तो सुनो। मेरे दो साथियों और मैंने सोचा कि हम सीमा लांघ रूमानिया पहुंच जाएंगे। हम देखना चाहते थे कि रूमानिया में जीवन का क्या रंग-ढंग है। सो हम कागुला से—यह बेस्सारबिया में एकदम सीमा पर स्थित जगह है—चल पड़े। हम आगे बढ़ते रहे—बेशक रात का ही समय था—बहुत ही चुपचाप, बिल्ली के पांव से,—और तभी एकदम अचानक—'हाल्ट!' ये कस्टम-गारद के सैनिक थे। हम सीधे उन्हींकी ओर बढ़ रहे थे। सो हम पत्ता तोड़ भागे। उन सैनिकों में से एक ने मेरे सिर पर कुन्दा जड़ दिया। हाथ कुछ जमकर नहीं पड़ा—नहीं, बिल्कुल नहीं—फिर भी एक महीना अस्पताल का पलंग तोड़ना पड़ा। और मज़े की बात यह कि वह सैनिक भी उसी क़स्बे का लड़का था जिसका कि मैं।

वह हमारे मुरोम का रहनेवाला था। मेरे अस्पताल में पहुंचने के बाद शीघ्र ही वह भी वहां आ गया। किसी कस्टम-चोर ने–चोरी से माल ले जानेवाले ने–उसके पेट में छुरा भोंक दिया था। जब हम कुछ अच्छे हो चले तो हमने दो और दो चार किए। 'तो क्या मैंने ही तुम्हारी खोपड़ी पर वह कुन्दा जड़ा था?' उस सैनिक ने पूछा। 'ज़रूर तुम ही रहे होगे, जब कि एक बार तुम खुद यह मंज़ूर कर चुके हो,' मैंने कहा। 'ठीक कहते हो, मैं ही रहा हूंगा,' उसने कहा–'लेकिन उसे लेकर मुझसे बैर न बांधना। वह मेरा काम था। मैंने समझा कि तुम चोरी से बिना चुंगी का माल लिए जा रहे हो। यह देखो, मैं खुद भी तो नहीं बचा–उन्होंने मेरा पेट ही चीरकर रख दिया। लेकिन किया क्या जाए? जीवन कोई नाक-भौंह सिकोड़ने की चीज़ तो है नहीं!' वह और मैं गहरे दोस्त बन गए। बहुत ही बढ़िया आदमी था वह,–याश्का माज़िन! और जहां तक घुंघराले बालों की बात है, ये टायफ़ायड की देन है। मुझे टायफ़ायड हुआ था। सीमा लांघने के अपराध में उन्होंने मुझे किशीन्योव के जेल में बन्द कर दिया। वहीं मुझे टायफ़ायड हुआ,–ऐसा कि बेजोड़। इतने दिनों तक मैं बिस्तरे का जीव बना रहा कि लगता था–अब कभी उठना नसीब न होगा। और शायद मैं कभी न उठ पाता अगर एक नर्स ने मेरी इतनी बढ़िया देख-भाल न की होती। सच, अचरज होता है कि कैसे चंगा हो गया। वह इस तरह मेरी निगरानी करती जैसे मैं बच्चा हूं। पता नहीं, क्यों। मैं उसका कुछ नहीं लगता था। 'छोड़ो भी, मारिया पेत्रोव्ना,' मैं कहता–'तुम्हें इतना कष्ट उठाते देख मुझे शर्म मालूम होती है।' लेकिन वह केवल हंसकर टाल देती। बड़ा अच्छा हृदय था उसका। कभी-कभी मेरी आत्मा की मुक्ति के लिए वह मुझे कुछ पढ़कर सुनाती। 'पढ़ने के

लिए क्या तुम कोई और चीज़ नहीं ला सकतीं?' एक दिन मैंने उससे पूछा। सो वह किसी अंग्रेज़ी नाविक के बारे में एक किताब ले आई जिसका जहाज़ एक निर्जन द्वीप से टकराकर चूर-चूर हो गया था और जिसने उस द्वीप में नया जीवन बसाना शुरू किया था। सच, तुम भी पढ़ना, बहुत बढ़िया किताब है। मुझे तो उस किताब ने पागल बना दिया—जी करता कि मैं भी उस द्वीप में नाविक के पास पहुंच जाऊं। ओह, क्या जीवन था वह! वह द्वीप, वह समुद्र, वह आकाश,—और अपने सिवा अन्य कोई माई का लाल नहीं! ज़रूरत की हर चीज़ मौजूद, बस पंछियों की भांति आज़ादी से रहो। अपने साथ रखने के लिए एक जंगली आदमी को भी वह पकड़ लाया। मैं तो उसे डुबा देता। तुम्हीं बताओ, उस बला को साथ रखकर मैं क्या करता? मैं तो अकेले ही मज़े से काट देता। क्या तुमने वह किताब कभी पढ़ी है?"

"लेकिन यह बताओ कि तुम जेल से कैसे बाहर आए?"

"उन्होंने मुझे छोड़ दिया। मुक़दमा हुआ, मैं बेक़सूर निकला और उन्होंने मुझे छोड़ दिया। बस, इतनी-सी बात, बहुत सीधी। लेकिन देखो, आज मैं और काम नहीं करूंगा। जहन्नुम में जाए यह काम! मेरे हाथों में पहले ही काफ़ी छाले पड़े हैं। तीन रूबल मेरे पास हैं और इस सुबह के काम के लिए चालीस कोपेक मुझे और मिल जाएंगे। कुछ बुरे नहीं,—क्यों? सो तुम चलो और आज का दिन मेरे साथ बिताओ। हम बैरकों में नहीं, बल्कि यहां से थोड़ी ही दूर एक पहाड़ी पर रहते हैं। गुज़र करने के लिए एक बहुत ही माक़ूल दरबा मिल गया है। एक अन्य और मैं—दो जने मिलकर—रहते हैं। लेकिन वह बीमार है। बुख़ार में पड़ा है। तुम यहां ठहरो, मैं दौड़कर फ़ोरमैन के पास हो आऊं, एक मिनट भी नहीं लगेगा!"

कोनोवालोव तेज़ी से उठ खड़ा हुआ और उधर चल दिया। ठीक उसी समय अपना काम शुरू करने के लिए मज़दूरों ने फिर लट्ठा गाड़ने के यंत्र के रस्से संभाले। मैं वहीं बैठा अपने चारों ओर की इस कोलाहलपूर्ण हलचल और शान्त गम्भीर नीले-हरे सागर को देखता रहा।

कोनोवालोव का लम्बा शरीर लोगों, ठेलागाड़ियों, पत्थरों और लकड़ी के ढेरों के भीतर और इर्द-गिर्द से तीर की भांति लपका जा रहा था। नीले रंग की सूती कमीज़ पहने, जो उसके बदन के लिहाज़ से बेहद छोटी और तंग थी, मोटी लिनेन की पतलून और भारी जूते डाटे, अपनी बांहों को झुलाता वह बढ़ा जा रहा था। जब-तब वह पीछे की ओर मुड़कर देख लेता और अपना हाथ हिलाकर मेरी ओर इशारा करता। यह पहले से भिन्न कोनोवालोव था—बहुत ही सशक्त, सजीव और शांत आत्मविश्वास से पूर्ण। उसके चारों ओर काम का ज़ोर अपने पूरे उभार पर था—लट्ठे चीरे जा रहे थे, पत्थर तोड़े जा रहे, थे ठेले चींचीं की उदास आवाज़ कर रहे थे, धूल के बादल हवा में उठ रहे थे, कोई चीज़ ज़मीन पर गिरकर चकनाचूर हो रही थी, लोग ज़ोर लगाते समय कांख और चिल्ला रहे थे, गालियां दे रहे थे और विलाप के स्वरों में गा रहे थे।

ध्वनि और गति के इस ऊहापोह की पृष्ठ-भूमि में इतने मज़बूत डगों से दूर होता हुआ मेरे मित्र का सुन्दर डील-डौल तेज़ स्पष्टता से उभर आया था और कोनोवालोव क्या है इस पहेली का उत्तर सुझाता मालूम होता था।

दो घंटे बाद वह और मैं 'गुज़र करने के लिए एक बहुत ही माक़ूल दरबे' में लेटे थे। और यह दरबा बहुत ही माक़ूल था भी। बीते ज़माने में कभी पहाड़ी के बाज़ू में से चट्टान काटी गई थी और उसकी

जगह एक बड़ी चौरस खोह बन गई थी जिसमें चार आदमी आराम से रह सकते थे। लेकिन यह नीची बहुत थी और इसके दरवाज़े पर एक बड़ा-सा सिलपट पत्थर लटक आया था। नतीजा इसका यह कि केवल पेट के बल रेंगकर ही उसके भीतर प्रवेश किया जा सकता था। यह सात फ़ुट गहरी थी, लेकिन भीतर जाने की आवश्यकता नहीं थी और सच पूछो तो ऐसा करना ख़तरनाक भी था। कारण कि अगर दरवाज़े का पत्थर टूटकर नीचे आ गिरे तो हमें ज़िन्दा ही दफ़ना दे। इस डर से बचने के लिए हमने जो तरीक़ा अपनाया वह यह कि अपनी टांगों और शरीर को तो हमने खोह के भीतर घुसा दिया, जहां काफ़ी ठंड थी, और अपने सिरों को बाहर निकाले रखा,—इस तरह कि अगर गोल पत्थर गिरे तो हमारी खोपड़ी चूर-चूर हो जाए।

बीमार साथी रेंगकर सूरज की धूप में बाहर निकल आया था और हमारे इतने काफ़ी नज़दीक लेटा था कि जब कभी उसे जूड़ी चढ़ती थी तो उसके दांतों के किटकिटाने की आवाज़ हमें सुनाई देती थी। वह उक्रइन में पोल्तावा का रहनेवाला था, जैसा कि उनींदी-सी आवाज़ में उसने मुझे बताया। उसका क़द लम्बा और शरीर दुबला-पतला था।

छेदों से छलनी-बने एक मटमैले चीथड़े में अपने आपको लपेटने के लिए वह ज़मीन पर लुढ़क रहा था। जब वह अपने आपको ढंकने में समर्थ नहीं हो पाता तो बहुत ही चित्रमय गालियां देता, लेकिन अपने आपको ढंकने की कोशिश करना या गालियां देना दोनों में से छोड़ता एक को भी नहीं था। अपनी छोटी-छोटी काली आंखों को वह हमेशा इस तरह सिकोड़े रहता था जैसे किसी चीज़ का जायज़ा ले रहा हो।

सूरज हमारे सिरों के पिछले हिस्सों पर बड़ी बेरहमी के साथ

आग बरसा रहा था। कोनोवालोव ने मेरा फ़ौजी कोट लिया और उसे कुछ सरकंडों पर फैलाकर—जिन्हें उसने ज़मीन में गड़ा दिया था—एक तम्बू-सा तान दिया। दूर खाड़ी में हो रहे काम की आवाज़ सुनाई दे रही थी, लेकिन दिखाई कुछ नहीं देता था। तट पर हमारे दाहिनी ओर ढूहनुमा सफ़ेद मकान क़स्बे का परिचय दे रहे थे। बाईं ओर हमारे सामने समुद्र फैलता हुआ दूर तक चला गया था,—इतनी दूर, जहां आश्चर्यजनक कोमलता से मंडित रंग, जिनकी झलक का मायावी सौन्दर्य आंखों और आत्मा को बड़ा सुहावना मालूम हो रहा था, एक कल्पनातीत मरीचिका की मृदु झिलमिल में विलय हो रहे थे।

कोनोवालोव रंगों के इस मायावी उत्सव को देखने में रमा था। तभी उसका चेहरा एक अत्यन्त सुखद मुसकान से खिल उठा और उसने मुझसे कहा—

"सूरज के डूबने के बाद हम आग जला लेंगे और चाय तैयार करेंगे। रोटी और मांस हमारे पास है। तरबूज़ खाना पसन्द करोगे?"

और उसने अपने पांव के सहारे खोह के भीतर से एक तरबूज़ बाहर लुढ़का लिया। फिर अपनी जेब से चाकू निकालकर उसे तराशते हुए बोला—

"हर बार जब भी समुद्र के साथ मेरा सम्पर्क होता है तो यह देखकर मुझे बड़ा अचरज होता है कि यहां बसनेवाले लोगों की संख्या इतनी कम क्यों है। वे यहां कहीं अच्छी तरह रह सकते हैं क्योंकि समुद्र इतना ... इतना कोमल है। वह अच्छे विचार उपजाता है। लेकिन छोड़ो, तुम यह बताओ कि पिछले कई साल तक कहां-कहां पापड़ बेलते रहे।"

मैंने उसे बताना शुरू किया। दूर क्षितिज के पास समुद्र गुलाबी और सुनहरी आभा में रंग चुका था और गुलाबी तथा बैंगनी बादल सूरज की अगुवानी के लिए उठ रहे थे। ऐसा मालूम होता था जैसे पहाड़—डूबते हुए सूरज की किरनों से दमकती अपनी बर्फ़-आच्छादित चोटियों के साथ—समुद्र में से प्रकट हो रहे हों।

"यह बेहद बुरा है मक्सिम कि तुम नगरों में ही रहते रहे," जब मैं अपना हाल सुना चुका तो कोनोवालोव ने बहुत ही निश्चित अन्दाज़ में कहा— "वह क्या चीज़ है जो तुम्हें नगरों की ओर खींचती है? निरा दमघोट जीवन। न हवा, न खुली जगह,—मानव के लिए ज़रूरी कोई चीज़ नहीं। लोग? वे सभी जगह और हर कहीं मिलेंगे। पुस्तकें? बहुत पुस्तकें पढ़ चुके। क्या इसीलिए तुम्हारा जन्म हुआ था? पुस्तकें एक जंजाल हैं। अगर ऐसी ही ज़रूरत है तो एकाध ख़रीद लो, अपने थैले में रखो और चल पड़ो। बोलो, मेरे साथ ताश्कन्द चलोगे? .. या समरकन्द ... या अन्य किसी जगह? कुछ दिन वहां रहेंगे और फिर आमूर की राह पकड़ेंगे। मैंने निश्चय किया है कि हर जगह जाऊंगा,— केवल यही काम मुझे अब करना है। तब हमेशा नयी चीज़ देखने को मिलेगी और सोच-विचार में समय बरबाद नहीं होगा। बस, आगे बढ़ते चलो। सामने से हवा थपेड़े मारेगी और भीतर की सारी गर्द—सारा कूड़ा-कचरा—निकाल बाहर करेगी। हृदय हल्का हो जाएगा, आज़ादी से सांस लोगे। न कोई मालिक, न कोई चाकर। भूख लगे तो रुक जाओ, पचास एक कोपेक की मज़दूरी करो या अगर मज़दूरी न मिले तो किसीसे रोटी का एकाध टुकड़ा मांग लो,—और वह तुम्हें हमेशा मिलेगा। कम से कम दुनिया को और उसके सौन्दर्य को कुछ न कुछ तो तुम देख सकोगे। बोलो, मेरे साथ चलोगे?"

सूरज क्षितिज की ग्रोट में ग्रोझल हो गया। बादल काले हो चले, इसी प्रकार समुद्र पर भी छाया गहरी हो चली ग्रौर हवा ठंडी हो गई। जहां-तहां एकाध तारा उभर ग्राया ग्रौर खाड़ी में काम की गूंज शान्त हो गई, लेकिन जब-तब उसांस की भांति धीमी ग्रावाज़ें सुनाई दे जाती थीं। लहरें तट को पखार रही थीं ग्रौर उनकी उदास मर्मर-ध्वनि वायु के साथ बहकर हमारे कानों से टकरा रही थी।

ग्रंधेरा तेज़ी से गहरा हो गया ग्रौर उक्रइनी साथी का ग्राकार, पांच मिनट पहले जो बिल्कुल साफ़ नजर ग्रा रहा था, ग्रब केवल एक धुंधली लोथ-सा मालूम होता था।

"ग्राग का क्या हुग्रा?" उसने खांसते हुए पूछा।

"ग्रभी चेतन करता हूं।"

कोनोवालोव ने छेपटियों का एक ढेर जमा कर उसमें दियासलाई दिखा दी। ग्राग की पतली जिह्वाएं रालदार पीली लकड़ी को चाटने लगीं। धुवें का फ़ीता रात की ठंडी ग्रौर समुद्र के कारण नम हवा में चक्कर काटता हुग्रा ऊपर उठ रहा था। निस्तब्धता ग्रधिकाधिक गहरी होती जा रही थी। ऐसा मालूम होता था जैसे जीवन ग्रपनी ग्रावाज़ों को समेटे ग्रंधकार में हमसे दूर ग्रौर दूर खिसकता जा रहा हो। बादल छितरा गए थे ग्रौर तारे गहरे नीले ग्राकाश में खूब उजले चमक रहे थे। समुद्र की मखमली सतह पर तारों के प्रतिबिम्ब ग्रौर मछियारों की नावों की रोशनियां उभर ग्राई थीं। हमारे सामने ग्राग इस तरह जल रही थी जैसे लाल ग्रौर पीले रंग का कोई बहुत बड़ा फूल खिलता जा रहा हो। कोनोवालोव ने उसके ऊपर चाय की केतली लटका दी, फिर घुटनों को ग्रपने हाथों में दबोचा ग्रौर सोचपूर्ण मुद्रा में ग्राग की लपटों में ताकने लगा। उक्रइनी रेंगकर ग्रौर नज़दीक ग्रा गया, जैसे कोई बहुत बड़ा गिरगिट रेंग ग्राया हो।

"लोग नगरों और घरों का निर्माण करते हैं, भीड़-भड़क्का और घिचपिच में सट जाते हैं, धरती को गंदा करते हैं, उसे दमघोट बनाते हैं, एक दूसरे की राह में आड़े आते हैं। जीवन नहीं, यह जहन्नुम है! जीवन तो केवल यह है, – यह, जो हम बिता रहे हैं!"

"हम्म-म!" सिर को झटका देते हुए उक्रइनी ने कहा – "जाड़ों के लिए एक गर्म घर और भेड़ की खाल भी अगर साथ में हो तो कहा जा सकता है कि हां, हमारा जीवन शाहों का जीवन है!" उसने अपनी एक आंख सिकोड़कर कोनोवालोव की ओर ताका और एक हल्की हंसी हंस दिया।

"ठी-ई-क!" कोनोवालोव ने स्वीकार किया – "जाड़ों के दिन बड़े जानमारू होते हैं। जाड़ों में नगरों की ज़रूरत है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। लेकिन फिर भी बड़े-बड़े नगरों का बोझ लादने में कोई तुक नहीं है। दो या तीन आदमी भी जब सहूलियत से नहीं रह सकते तो इतनी बड़ी भीड़ों को क्यों जमा किया जाए? मेरे कहने का यही मतलब है। और यों सच पूछो तो मानव के रहने योग्य जगह कोई नहीं है – न नगर, न स्तपी, न अन्य कोई। लेकिन अच्छा यही है कि ऐसी बातों के बारे में कुछ न सोचा जाए। सोचने से होता जाता कुछ नहीं, मूड ज़रूर खराब हो जाता है।"

मुझे ऐसा लगा था कि कोनोवालोव के घुमक्कड़ जीवन ने उसे बदल दिया है, यह कि पिछले कई साल से उन्मुक्त हवा में सांस लेते रहने से दुख उदासी के वे पंजे ढीले पड़ गए हैं जो उसके हृदय को जकड़े थे, लेकिन उसका यह स्वर सुनकर मैंने अनुभव किया

कि वह अभी भी वही आदमी है जिससे कि मैं परिचित था – एक ऐसा आदमी जो "सहारे के लिए किसी आधार की खोज कर रहा है।" उसका सशक्त शरीर – दुर्भाग्य से जो अपने भीतर एक कोमल हृदय लिए पैदा हुआ था – भूलभुलैयां में फंसा अब भी क्षीण हो रहा था, चिन्ताशील जीवन का विष उसे नष्ट कर रहा था। रूस में ऐसे चिन्ताशील लोगों की कमी नहीं है और वे अन्य सबसे कहीं ज्यादा दुख भोगते हैं, क्योंकि उनके विचारों का बोझ उनके दिमागों की अज्ञानता के कारण और भी बोझिल हो उठता है। संवेदन मे उमगकर मैंने अपने मित्र की ओर देखा और वह, मानो मेरे नतीजे की पुष्टि करते हुए, दुख से फूट पड़ा –

"मक्सिम, मैं अक्सर सोचता हूं कि हम दोनों – तुम और मैं – किस तरह एक साथ रहते थे। उन दिनों की एक-एक बात मुझे याद है। और तब मे बहुत-बहुत जगहों में मैं गया हूं, बहुत-बहुत मैंने देखा है। फिर भी इस धरती पर कहीं भी मैं फ़िट नहीं हो सका। सच तो यह है कि अपने लिए ऐसी कोई जगह खोजना मेरे बस की बात नहीं है।"

"यह तो होना ही था। तुम अपनी मां के पेट से ऐसी गरदन लेकर पैदा हुए हो जिसपर कोई जुवा फ़िट नहीं बैठता," उबलती हुई केतली को आग पर से उतारते हुए उक्रइनी ने बेरुखी से कहा।

"तुम्हीं बताओ, मैं कहीं जम क्यों नहीं पाता?" कोनोवालोव ने फिर कहना शुरू किया – "यह क्या बात है कि अधिकांश लोग सहज साधारण जीवन बिताते हैं, काम-धंधा करते हैं, बीवी-बच्चे और अन्य सभी कुछ जुटाते हैं, हमेशा कुछ न कुछ करने के लिए व्यग्र

रहते हैं लेकिन मैं नहीं कर सकता। बस, कर ही नहीं सकता। क्यों, मैं क्यों नहीं कर सकता?"

"इसलिए कि तुम इतना झींकते हो!" उक्रइनी ने अचरज से कहा—"मानो झींकने से दुनिया सीधी हो जाएगी।"

"तुम ठीक कहते हो," कोनोवालोव ने उदासी से कहा।

"मैं ज़्यादा जुबान नहीं चलाता, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मुझे जुबान चलाना नहीं आता,—मैं हमेशा कांटे की बात कहता हूं," बुख़ार से जूझते और अपने महत्व की चेतना का अनुभव करते हुए वीतराग उक्रइनी ने कहा।

उसे खांसी आई, वह कसमसाया और ज़ोरों से आग में थूक की पिचकारी छोड़ी। हमारे चारों ओर की हर चीज़ ओझल हो गई थी, अंधकार के घने पर्दों के पीछे छिप गई थी। आकाश पर भी काला पर्दा पड़ा था, क्योंकि चांद अभी तक नहीं निकला था। अंधेरा इतना घना था कि समुद्र के आभास का अनुभव-मात्र होता था, वह दिखाई नहीं देता था। ऐसा मालूम होता था जैसे काला कोहरा धरती पर उतर आया हो। आग बुझ चली थी।

"चलो, भीतर चलें," उक्रइनी ने कहा।

हम 'खोह' में रेंग गए और अपने सिरों को हमने बाहर निकाले रखा। हम अब चुप थे। कोनोवालोव बिना हिले-डुले थिर पड़ा था,—जैसे वह सकते में आ गया हो। उक्रइनी बेचैनी से छटपटा रहा था और उसके दांत किटकिटा रहे थे। बुझती हुई आग की दमक पर आंखें गड़ाए मैं देर तक उसे देखता रहा। पहले कोयले बड़े और उजले थे, फिर वे छोटे होते गए और उनके ऊपर राख की परत चढ़ती गई जिसने अन्त में उन्हें बुझा दिया। देखते न

देखते आग का—उसकी गर्म उसांसों के सिवा—और कुछ शेष न रहा। मैंने उसकी ओर देखा और सोचा—

"हममें से प्रत्येक इसीके समान है। लेकिन ओह, कितना अद्भुत है यह क्षण भर के लिए प्रज्वलित हो उठना!"

तीन दिन बाद मैंने कोनोवालोव से विदा ली। मैं कुबान के लिए चल दिया। वह मेरे साथ नहीं चल सका। हम दोनों एक दूसरे से विदा हुए—हृदय में यह निश्चित विश्वास लिए कि फिर मिलेंगे।

लेकिन हम फिर कभी नहीं मिल सके।

१८९७



वान्का मार्ज़िन

उसका सिर लम्बोतरा और अग़ल-बग़ल से कुछ धंसा हुआ था। छाज-सेबड़े बड़े उसके कान थे। उसका चेहरा पीला और भावशून्य था। गालों पर लाल झाड़ियां उगी थीं और उसकी ठोड़ी नुकीली थी। उसकी

आंखें निश्चल और बेरंग थीं और दीदे निकाले उदास भाव से ताकती रहती थीं। उसकी नाक लम्बी थी और नीचे का होंठ पेंडुलम की भांति लटका हुआ था। उसका मुंह बड़ा था जो हमेशा आधा खुला रहता था। सरकंडे-सी उसकी गरदन थी, ख़ूब गांठ-गठीली और उमेठी हुई। उसके कंधे बैठे हुए थे, छाती भीतर की ओर धंसी थी और पेट हामिला स्त्री की भांति मटका-सा निकला था। उसकी बाईं बांह दाहिनी से छोटी थी—इतनी कि दूर से नज़र आती थी। उसकी टांगें पहिये के दो अर्द्ध-भागों की भांति बाहर की ओर ख़म खाए थीं। और इस सबके ऊपर एक रंग-उड़ी टोपी सजी थी जिसका छज्जा टूटा था और बीच में एक काला धब्बा पड़ा था। टोपी सिर से बेहिसाब बड़ी थी। खिसककर आंखों पर न आ गिरे इसलिए उसने उसे बाएं कान पर अटका रखा था और पीले मोटे बालों की एक लट उसे संभाले थी। इस लट के बाल आपस में उलझकर और धूल-कीट से चिपककर नम्दा बन गए थे। पैवन्दों और टांकियों से भरा एक रूसी ब्लाउज़ बहुत ही औघड़ ढंग से इस अष्टावक्री चौखटे पर फटफटा रहा था। उसकी मरियल टांगें ज़रूरत से ज्यादा ढीली-ढाली पतलून में खो गई थीं। टांगों की पट्टियों की चिन्दियां बिखरी थीं और लाप्ती * को देखकर घिन आती थी। जो हो, यह उसका—वान्का माज़िन का—एकदम सही हुलिया था। वह बढ़ई था। व्यात्का का रहनेवाला। ऐसा मालूम होता था जैसे मानव-जाति को एक अत्यन्त विकट आकार का जीव भेंट करने और सबका—जो भी उसे देखे—मन बहलाने के ख़ास उद्देश्य से प्रकृति ने उसे गढ़ा था।

---

* लाप्ती—लाइम वृक्ष की छाल के बने हुए एक प्रकार के जूते।—सम्पा०

इस उद्देश्य को वान्का माज़िन बड़ी ख़ूबी से पूरा करता था। उसके साथी मज़दूरों की जैसे ही उसपर नज़र पड़ती, गरदन उठाकर वे उसकी ग्रोर इशारा करते ग्रौर ख़ुशी से चहक उठते—

"वह देखो, शैतान की सवारी ग्रा रही है!"

शैतान की सवारी मैंने कभी नहीं देखी, लेकिन जब भी मैं माज़िन को ग्राते हुए देखता तो मुझे ऐसा मालूम होता जैसे उसके बदन के हाड़ ग्रापस में जुड़े नहीं हैं ग्रौर इसलिए वह इतने ग्रजीब ढंग से चलता है। पांव धरती पर टेकने से पहले वह उन्हें इस तरह दाहिनी ग्रौर बाईं ग्रोर उचकाता, जैसे किसी ग्रधिक समतल ग्रौर चलने के लिए ग्रासान स्थल की टोह में हो। उसकी बांहें उसके झुके हुए ग्रौर ढीले धड़ के दोनों ग्रोर लिजबिज-सी लटकती रहतीं। उसका सिर हारी हुई लड़ाई लड़ता ग्रौर उसकी टोपी बार-बार खिसककर उसकी ग्रांखों को ढंकती रहती। वह ग्रपनी नाक सुड़कता-सिकोड़ता ग्रौर उसमे फुंकार छोड़ता, उसकी कमर पर लटका ग्रौज़ारों का बक्सा झूलकर उसकी बग़ल से उलझने लगता। लेकिन इन सब बाधाग्रों के बावजूद माज़िन की उदास ग्रांखें कहीं दूर एक उसी नुकते पर जमी रहतीं, — जैसे वे उसके विशृंखलित शरीर से भिन्न ग्रपना एक ग्रलग जीवन बिताती हों।

उसकी एक मज़ेदार ग्रादत यह थी कि वह मन ही मन कोई धुन गुनगुनाता रहता था—एक ऐसी धुन, जो शब्दविहीन थी ग्रौर जिसका कोई ग्रोर-छोर नहीं मालूम होता था। ग्रौर जब वह ग्राता था—गुनगुनाता ग्रौर नाक से फुंकार छोड़ता—तो सचमुच ऐसा मालूम होता था जैसे वह कोई पुरानी चरमराती गाड़ी हो जिसके सभी पेच ग्रौर कीच-कांटे इतने दिनों से चलते-चलते गुम गए थे।

वे उसे 'बिना पेंदी का लोटा' ग्रौर 'मच्छर' ग्रौर ग्रन्य कुछ,

जो भी उनके मन में आता, कहते थे। ये सभी विशेषण समान रूप से उसपर चस्पां हो जाते थे और वह इनमें से एक का भी बुरा मानता मालूम नहीं होता था। जो कुछ भी कहकर उसे पुकारा जाता, वह उसपर ध्यान देता।

"क्यों, क्या चाहिए?" अपनी घर्राटेदार खोई-सी आवाज़ में वह कह उठता।

उसके पासपोर्ट के अनुसार उसकी आयु मैंतालीस वर्ष थी, लेकिन किशोर लड़के तक उसे वान्का कहकर पुकारते थे। उसके नाम के आखिरी हिस्से से प्रायः कभी भी उसे सम्बोधित नहीं किया जाता था। लेकिन इसकी भी वह उसी प्रकार पर्वाह नहीं करता था जिस प्रकार कि वह उन लघु नामों की पर्वाह नहीं करता था जो उसपर चस्पां किए जाते थे। कारण कि अपने साथियों के मनामन के प्रति वह अत्यन्त उदासीन था। वह एकान्त पसन्द करता था और भीड़ के बीच भी वह अकेला रहना जानता था। रविवार और छुट्टियों के अन्य दिनों में जब उसके साथी क़हवाख़ाने में चाय पीने जाते तो कहने पर वह भी उनके साथ हो लेता, लेकिन अपनी चाय या वोडका की बोतल सामने रखे वह उसी प्रकार चुप्पा और उदासीन बना रहता। लेकिन यह सब होने पर भी उसे ग़ैर-मिलनसार कहना ग़लत होगा। वह उस व्यक्ति की भांति था जो किसी अनबूझ पहेली को लेकर जुगाली करने में गहरा ग़ोता खा गया हो,—एक ऐसा व्यक्ति, जिसका मानसिक सन्तुलन गड़बड़ा गया हो। जब पहली बार बढ़इयों के इस दल में शामिल होने वह आया था तो उसकी ताकने की आदत को लक्ष्य कर—वह ऐसी नज़र से ताकता था जो दीवारों और लोगों को आर-पार देखती मालूम होती थी—दादा ओसिप ने, जो कि बढ़ई-मास्टर और गिल्ड का सरपंच था, कहा था—

"उस व्याल्का-निवासी के साथ कुछ गड़बड़ मालूम होता है। लगता है जैसे उसका कोई पुर्ज़ा ढीला हो। उसकी आंखें नहीं चमकतीं। मुर्दा मालूम होती हैं। ज़रूर कुछ गड़बड़ है। या तो जीवन ने उसे अत्यधिक झंझोड़ा है, या फिर उसकी आत्मा किसी बोझ से दबी है। एक शब्द में—उसकी आत्मा काली है। जैसे कि कहते हैं, उसपर पोचारा फिरा है। जब ऐसा होता है तो आत्मा का परछांवा उसकी आंखों पर पड़ता है। अगर किसीकी आंखें टेरती हों तो यह भी बुरा है। इसका मतलब यह कि उसकी आत्मा बेचैन है—उसके मस्तिष्क या आत्मा में कोई गड़बड़ है। इस प्रकार मुर्दा आंखें अच्छी नहीं होतीं। अगर आदमी स्वच्छ और खरा है तो उसकी आंखें सीधी होती हैं—वे हर चीज़ को सीधे देखती हैं, चमक और दमक लिए। दूसरे शब्दों में यह कि उस व्याल्का-निवासी पर नज़र रखना। हमारे लिए वह अभी अनजान है।"

और सो गिल्ड के सभी सदस्यों ने मुर्दा आंखों वाले इस आदमी की चाल-ढाल पर नज़र रखनी शुरू की और सबसे पहली चीज़, जो उन्हें दिखाई दी, वह यह कि वह बहुत ही रद्दी कारीगर है। यों वह अपना धंधा जानता था, लेकिन बसूला, आरी और रन्दा उसकी मरियल बांहों और हाथों का आदेश नहीं मानते थे। ऐसा मालूम होता था जैसे औज़ारों में भी उसकी उदासीनता समा गई थी और उनमें वह गर्वीली शक्ति नहीं थी जो उस समय गूंज उठती थी जब अन्य कारीगर उनसे काम लेते थे। कभी-कभी माज़िन कोई काम करते-करते अधबीच में ही रुक जाता और चुपचाप अपने औज़ार की ओर ताकने लगता। साफ़ मालूम होता कि वह कुछ सोच रहा है।

"ऐइयू, मक्खीमार! क्या ऊंघने लगा है?" फ़ोरमैन उसपर चिल्लाता।

माज़िन, बिना मुंह से एक शब्द कहे, फिर अपना काम शुरू कर देता।

"यह उतावली करनेवाला जीव नहीं है," अन्य चुटकी लेते हुए हंसते।

"क्यों, मैं उतावली क्यों करूं?" माज़िन गम्भीरता से पूछता और उत्तर पाने की आशा में अपने साथियों की ओर ताकता। वे केवल हंसते और उसका मज़ाक़ बनाते। लेकिन उसकी उदासीनता ने उसे उनकी चुटकियों और भोंड़े छींटों के लिए दुर्भेद्य बना दिया था।

वे उसे पसन्द नहीं करते थे। निज्नी नोव्गोरोद के इन बढ़इयों के बीच वही एक अकेला व्यात्का-निवासी था। वह साथी भी अच्छा नहीं था—कठदिमाग़, काहिल और मिलने-जुलने में औघड़। लेकिन उसका मज़ाक़ उड़ाते हुए भी वे अपनी छेड़छाड़ को सीमा के भीतर ही रखते। कारण, वे जानते थे कि उसकी हड्डियां भले ही ऐंड़ी-बैंड़ी हों, लेकिन उसकी ताक़त की उपेक्षा नहीं की जा सकती। यह उन्हें कैसे मालूम हुआ, इसकी भी एक कहानी है।

एक दिन छः कारीगर एक भारी कड़ी उठाकर ले जा रहे थे। माज़िन उसका एक छोर संभाले था।

"ऐ, डग साथ-साथ बढ़ाओ," आगे वालों में से एक उसपर चिल्लाया। लेकिन माज़िन की खमदार टांगें साथ-साथ डग नहीं बढ़ा सकती थीं, सो कड़ी धचका खाकर उछली।

"ऐ, उचको नहीं, समतल चलो। अटेरन की दुम!"

अपने साथियों के डगों के साथ अपने डगों की पटरी बैठाने की कोशिश में वह बहुतेरा हांफा और कांखा, लेकिन कड़ी का धचके खाना बढ़ता ही गया।

"ऐइयू, कंगारू की मनहूस औलाद!" हट्टा-कट्टा याकोव लाप्तेव, जो

अपनी ताक़त के लिए नामी था, गरज उठा। और इसीके साथ-साथ माज़िन की पीठ पर एक भारी बांस से उसने आघात किया। माज़िन कराह उठा, लेकिन बिना एक शब्द कहे वह वैसे ही चलता रहा। जब उन्होंने कड़ी को नीचे उतार दिया तो माज़िन पलटकर उस जगह गया, जहां याकोव काम कर रहा था, और उसके सामने जाकर रुक गया।

"तुमने मुझपर आघात क्यों किया?" उसने शान्त स्वर में पूछा।

"जाओ, अपना काम देखो," याकोव चिल्लाया।

"क्या तुम मालिक हो कि जिसको चाहा मार दिया?" माज़िन ने पूछा।

"मैं कहता हूं कि जाओ, अपना काम देखो। मैं तुम्हें अभी चींटी की भांति कुचलकर रख देता। लेकिन कौन अपनी शक्ति बरबाद करे!"

"किसलिए?"

"आज इसकी थूथनी सीधी कर दो, याकोव! इसीलिए यह तुम्हारे पास आया है," किसीने कहा। याकोव को यह सलाह जंची, उसकी बांह सपाक से उठी, और... उसने अपने आपको चारों खाने चित्त ज़मीन पर पसरा हुआ पाया। यह माज़िन के बहुत ही सधे हुए आघात का नतीजा था।

यह देखकर सब स्तब्ध रह गए। ताक़त की, चाहे जिस रूप में वह प्रकट हो, लोग इज़्ज़त करते हैं। याकोव उनके बीच रुस्तम की ख्याति का उपभोग करता था और इस व्यात्का-निवासी के सामने यों ही – बिना संघर्ष के – मात खाने के लिए वह तैयार नहीं था। सो वह ज़मीन से उठकर खड़ा हो गया और अपनी अस्तीनें चढ़ा लीं।

"तो आओ, आज तुम्हारी पसलियां मेरे हाथ से टूटने के लिए कसमसा रही हैं," उसने माज़िन को चेतावनी दी।

"अच्छा तो," माज़िन ने सन्दिग्ध भाव से कहा।

"अलग हटो, साथियो, बीच में दख़ल न देना!" दादा ओसिप ने कहा—"अपने हाथ अलग रखो! उन्हें आपस में सुलटने दो। यही न्याय की बात है। हां, तो शुरू करो, लेकिन देखो, वीरों की तरह लड़ना। कोई धोखाधड़ी या चालबाज़ी नहीं। ख़ुदा का नाम लो और... चटाख-पटाख! ओ-उ-च्च!"

माज़िन ने अपनी बाईं पसलियों में इस चटाख-पटाख का अनुभव किया, लेकिन याकोव एक बार फिर ज़मीन पर पड़ा अपने आपको बटोर रहा था और अपने विरोधी की ओर दोहरे गुस्से से ताक रहा था। माज़िन खड़ा था और उसके उठने की प्रतीक्षा कर रहा था। वह भारी सांस ले रहा था और बाएं हाथ से अपनी आहत पसलियों को सहला रहा था। याकोव गुस्से में फनफनाता उसकी ओर झपटा। माज़िन ने शांत अन्दाज़ में अपनी दाहिनी लम्बी बांह को ऊंचा उठाया और ऊपर से बमबारी शुरू कर दी। ऐसा मालूम होता था जैसे वह याकोव के सिर पर कीलें ठोक रहा हो। सात बार धरती पर गिरकर याकोव ने अपनी लम्बाई नापी, और आख़िरी बार जब वह गिरा तो उठना ही भूल गया और वहीं पड़ा-पड़ा माज़िन को कोसने लगा—

"ख़ुदा के मारे लुंजपुंज! तूने मेरे सिर पर क्यों प्रहार किया, कम्बख़्त? मेरे बदन में तुझे और कोई जगह नज़र नहीं आई, बेडौल भुतने? भुतना,—हां, भुतना ही है तू,—आदमी की तरह लड़ना तक नहीं जानता!"

यह सभी को मानना पड़ा कि माज़िन तगड़ा आदमी है, लेकिन उन्होंने कहा कि वह क़ायदे से लड़ना नहीं जानता। माज़िन ने धूल चाटते अपने दुश्मन को एक भाषण पिलाया।

"अब तो तुम्हें मालूम हो गया कि झगड़ा मोल लेने का क्या अर्थ होता है!" उसके सिर के ऊपर घूंसा ताने हुए उसने कहा—"देखा, यह अर्थ

होता है उसका। अपना भाग्य सराहो, अगर मुझे तरस न आ गया होता तो तुम्हारी और भी बुरी गत होती। आगे कभी इतनी उतावली न दिखाना। जहां तक तुम्हारे सिर का सवाल है, – थोड़ा ठंडा पानी डालो, सब ठीक हो जाएगा। ज्यादा नहीं दुखेगा। जाओ और इसे पानी में तर कर लो।" और वह एड़ियों के बल मुड़कर सदा की भांति अपनी ओर-छोरविहीन धुन गुनगुनाता वहां से चल दिया।

"एकदम शैतान का अवतार है!" सब बढ़ई इस नतीजे पर पहुंचे। जो कुछ हुआ था, उसने उन्हें स्तब्ध कर दिया था। कहां तो याकोव – इतना बड़ा, चकले-चौड़े कंधे, हंसमुख, और कहां वह – सचमुच में लुंजपुंज, कुंठित।

"देखा तुमने?" दादा ओसिप ने कहा – "व्यात्का के उस निवासी ने हमें एक अच्छा सबक दिया। हृदय है उसके पास, – उस आदमी के पास। भाग्य ने उसे सताया है, इसमें कोई शक नहीं, लेकिन याकोव से उसने जो कुछ कहा, वह सही था। अपने हाथों को इतना छुट्टा न छोड़ो, लड़ाई मोल लेते न फिरो। हम सब उसी ख़ुदा के बन्दे हैं। बेमतलब क्यों एक दूसरे का गला दबोचे? और उसने यह ठीक ही किया जो याकोव की मरम्मत की – उसने काम ही ऐसा किया था – और इसके बाद उसने उससे कहा – 'जाओ, और थोड़ा ठंडा पानी डालकर अपना सिर तर कर लो!' बहुत ही मुनासिब बात। सो ऐसा है तुम्हारा यह व्यात्का-निवासी! और मेरी बात गांठ-बांध लो – यह आख़िरी सबक ही नहीं है जो वह हमें देगा!"

"अच्छा हो कि उसे निकाल बाहर करो," लोगों ने कहा।

"यह सच है कि वह हमसे कुछ भिन्न क़िस्म का है," दादा ओसिप ने सोचते हुए कहा – "तुम्हारी समझ में वह क्या चीज़ है जो उसे ऐसा बनाती है?

लेकिन उसे बाहर निकालना? नहीं, अभी नहीं। ज़रा ठहरो। हो सकता है कि वह बदल जाए – धीरे-धीरे हम लोगों के साथ फ़िट हो जाए।"

"उसे रखने का कोई लाभ भी तो नहीं है," दूसरों ने कहा।

"वह काहिल है और वह यह भी नहीं जानता कि काम कैसे किया जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। लेकिन फिर भी हम सबकी भांति उसे भी भूख और प्यास लगती है और अपने टैक्स देने होते हैं। क्यों, ठीक है न? और वह किसान है, – हम उसे निकालकर बाहर कैसे फेंक सकते हैं? अगर हम उसे निकाल बाहर करेंगे और दूसरे लोग भी उसे निकाल बाहर करेंगे तो वह अपनी रोटी-पानी कैसे कमाएगा?"

इसके बाद किसीने और कोई आपत्ति नहीं की, इसलिए वान्का माज़िन को निकाला नहीं गया। पहले पहल तो वे यह प्रतीक्षा करते रहे कि वह अपने आपको बदलकर उनके अनुकूल बना लेगा, लेकिन जब यह नहीं हुआ तो वे ख़ुद उसके अनुकूल बन गए और बावजूद इसके कि आदमी और कारीगर दोनों ही हैसियत से वे उसे सबसे बुरा समझते थे, अभी तक उसका मज़ाक़ उड़ाते थे, और उनका यह मज़ाक़ कभी-कभी बड़ा निर्मम होता था उसे निकाल बाहर करने का सवाल उन्होंने फिर कभी नहीं उठाया। वे उसके धीमे किन्तु कील-कांटों से दुरुस्त काम के आदी हो गए जिसके लिए उसे प्रति सप्ताह दो रूबल और मुफ़्त खाना मिलता था।

मानवों के इस बहुत ही छोटे रेवड़ में वह एक काली भेड़ था। हर मानवीय रेवड़ में काली भेड़ें होती हैं जिनकी कमज़ोरियां सफ़ेद भेड़ों के गुणों को उभारने का काम करती हैं। अगर ऐसा न हो तो गुणों की इतनी क़द्र न रहे, उनकी ओर किसीका ध्यान तक न जाए।

स्मूरोव नामक किसी धनी सौदागर के लिए एक चार-मंज़िला मकान बनाया जा रहा था। एक दिन कारीगर उसकी उपरली मंज़िल तक मचान को ऊंचा उठाने में जुटे थे।

भोजन करने का समय हो गया था। तभी खुद ठेकेदार भी वहां मौक़े पर आ मौजूद हुआ। उसका नाम ज़ख़ार इवानोविच कोलोबोव था। वह मोटा थलथल, लाल चेहरे और एक बड़ी लाल दाढ़ी वाला आदमी था जिसे कंघी से संवारने में उसने कोई कसर नहीं छोड़ी थी। उसकी कंजी आंखें बड़ी पैनी थीं, एक ही नज़र में हर चीज़ को ताड़ लेती थीं। पलक झपकते उसने भांप लिया कि कितने कारीगर काम में जुटे हैं और यह कि वान्का माज़िन एक तख़्ते को ऊपर मचान तक ले जाने में घंटों लगा रहा है।

"ऐ, खटमल की औलाद!" वह चिड़चिड़ाकर चिल्लाया – "जल्दी नहीं रेंगा जाता! उल्लू की दुम!"

यह देखकर कि उनके मालिक का पारा चढ़ा है, बढ़ई दुगुने जोश से काम करने लगे, लेकिन इससे कोई ख़ास फ़र्क़ नहीं पड़ा। कारण कि ठेकेदार इसलिए नहीं कोस रहा था कि कोसने की कोई वजह थी, बल्कि इसलिए कि इसमें उसे रस मिलता था।

"काठ के उल्लुओ, क्या मैंने तुम्हें नहीं बताया था कि मचान के लिए नये तख़्ते न लेना, नयी लकड़ी न चीरना, पुराना माल काम में लाना?"

"पुराने तख़्ते तो काफ़ी घुन गए हैं, ज़ख़ार इवानोविच," याकोव लाप्तेव ने रिरियाते हुए कहा।

"सुअर-मुंह, बड़ी जानकारी बघारता है!" कोलोबोव गरज उठा।

आध घंटे तक वह ख़ुदा का क़हर बनकर उनके हृदयों को कंपाता रहा और अन्त में जब वे खाना खाने के लिए वहां से चल दिए तो वह झुंझलाहट में भरा मचान पर चढ़ गया।

"भौंकना कुत्ता!" दादा ओसिप ने बुदबुदाकर कहा।

"हरामी गावदुम!" याकोव ने स्वर मिलाया।

अन्य कारीगरों ने भी अपनी-अपनी टिप्पणियां कंसीं, लेकिन माज़िन ने कुछ नहीं कहा और चुपचाप अपने औज़ार बटोरता रहा।

"चलो अब," दादा ओसिप ने कारीगरों से कहा जो उसके इर्द-गिर्द खड़े थे—"यहां अब किसलिए खड़े हो? क्या उसके नीचे उतरने और उसकी गालियों से अपना पेट भरने का इन्तज़ार कर रहे हो?"

अब कोलोबोव मचान की तीसरी मंज़िल पर पहुंच गया था और वहां खड़ा हुआ पांव से तख़्तों की और हाथों से बल्लियों की मज़बूती जांच रहा था। उसके जूतों के चरमराने की आवाज़ सुनाई देती थी जब वह तख़्तों पर दबाव डालकर उन्हें जांचता था। कारीगरों ने आड़ी नज़रों से उसे देखा और फिर एक साथ टोली बना खाना खाने चल दिए।

उसी समय चरचराने की आवाज़ सुनाई दी—एक तख़्ते में से कील के बाहर खिंच आने की चरचर आवाज़—और तख़्ते के टूटने की आवाज़। ओसिप ने घूमकर देखा।

"साथियो!" विचित्र ढंग से उछलते हुए वह चीख़ उठा।

उसकी इस चीख़ के साथ ही साथ लकड़ी के तड़कने और छपटियों के उड़ने, तख़्तों के खड़खड़ाकर नीचे गिरने और वहशियाना ढंग से चिल्लाने की आवाज़ आई—

"म-द-द!"

बढ़ई वहां के वहीं जाम हो गए। मचान गिर रहा था। खड़ी बल्लियां धीरे-धीरे, सावधानी से, दीवार से अलग हट आई थीं, जैसे अपने आपको दूर धकेल रही हों। तख़्ते, पट्टियां और ईंटें धूल उड़ाती नीचे ज़मीन पर गिर रही थीं और इस गड़बड़झाले के बीच बेसुध अन्दाज़ में कोलोबोव चीख़ रहा था—

"मदद! म-द-द!"

तख़्ते टूट रहे थे, उनकी छपटियां उड़ रही थीं, और बढ़ई जहां खड़े थे वहीं जाम हुए सूनी आंखों से अपनी मेहनत को धूल में मिलता देख रहे थे। दादा ओसिप उन्हें कोंच और कुरेद रहा था, लेकिन वे डर के मारे निकट जाने का साहस नहीं कर रहे थे।

"मैंने तुमसे कहा था, साथियो, कि तख़्तों में कुछ कीलें जड़ दो। लेकिन तुमने मेरी बात नहीं सुनी और तुम्हारी वजह से एक आदमी की जान जा रही है। वह अब क्या बचेगा! हे भगवान्!.. तुम यहां मुंह बाए क्या देख रहे हो? कुछ करो न, नासखेतो! जाओ और उसे बाहर खींच लाओ। जाओ, मैं तुमसे कहता हूं!"

"क्यों इतना शोर मचा रहे हो?" याकोव ने झुंझलाकर कहा—"इसमें हमारा क्या क़सूर है? ख़ुद उसीने तो कहा था कि नये तख़्तों को हाथ न लगाना!"

"और इतनी कीलें थीं कहां, जो उन्हें ठोक देते! उसने हमें काफ़ी कीलें भी तो नहीं दीं," किसी अन्य ने कहा।

"क्या इसके लिए भी हमीं ज़िम्मेदार हैं?" कोई और भुनभुनाया।

"लेकिन इसके लिए क्या हम उसकी हत्या हो जाने दें? हत्या,—सुना तुमने?"

दादा ओसिप का चेहरा उत्तेजना से तमतमा रहा था और वह अपने हाथों को हिलाता, लोगों को धकियाता और खींचता इधर से उधर लपक रहा था।

और मचान एक-एक हिस्सा करके बन्धन तोड़कर दीवार से अलग हो रहा था। तख़्ते और ईंटें पटरों के ऊपर से उछलती भरभराकर नीचे गिर रही थीं, एक नांद नीचे गिरकर ज़मीन पर लुढ़क रही थी, उसका चूना बिखर गया था और सफ़ेद धूल के बादल बनकर उड़ रहा था। कोलोबोव की चीख़ें अब सुनाई देना बन्द हो गई थीं।

"मैं जाकर देखता हूं," धूल के बादलों पर सोच में डूबी नज़र गड़ाए माज़िन ने कहा।

"क्यों जाते हो? क्या मरने की जी में है?" वे उसके पीछे चिल्लाए।

"उसे जाने क्यों नहीं देते? जाग्रो, वान्का, जाग्रो। ख़ुदा के लिए जाग्रो, मित्र, जाग्रो!"

लेकिन वह अपने आप, बिना किसी बढ़ावे के, जा रहा था। उसकी चाल सदा की भांति अब भी धीमी थी, वह अपनी ख़मदार टांगों से उचकता-डगमगाता चला जा रहा था।

अब तक एक अच्छी-ख़ासी शोर मचाती भीड़ वहां जमा हो गई थी जिसमें दो पुलिसमैन सबसे ज़्यादा होहल्ला किए थे, लेकिन कर कुछ नहीं रहे थे। चूने के बादल अब हट गए थे और मचान के नंगे-बूचे अवशेष दिखाई पड़ रहे थे। तख़्ते और पटरियां जहां-तहां बाहर निकल आए थे और उनमें से कुछ तो इस तरह झूल रहे थे, मानो यह निश्चय करने में उलझे हों कि गिरें या न गिरें।

एक तख़्ता, जो खिड़की में से बाहर निकला था, सबसे ज़्यादा ज़ोरों से झूल रहा था। कारण कि कोनोवोव इसीके छोर से चिपका था। हाथों और पांवों से उसे जकड़े, अपना सिर और पेट उससे सटाए वह हवा में अधर लटका था। दूसरा छोर खिड़की में अटका था और काठ-कबाड़ के ढेर में जो उसपर आ गिरा था, मज़बूती से फंसा था। लेकिन वह चरचराकर बीच में से टूट सकता था या उससे लटके आदमी की शक्ति थककर जवाब दे सकती थी। और इस दोनों ही सूरतों में वह तीन मंज़िल की ऊंचाई से नीचे के नोक-नुकीले मलबे पर गिरकर चूर-चूर हो सकता था। इस वक़्त बिना हिले-डुले या कोई आवाज़ किए वह तख़्ते से इस तरह चिपका था जैसे उसे वहां मज़बूती से जड़ दिया गया हो।

उसपर नज़र पड़ते ही भीड़ एकाएक सन्नाटे में आ गई और फिर

ग्रौर भी दूने ज़ोर से उत्सुकता से लेकर भय तक के अपने भावों को प्रकट करने लगी। इसके बाद उसने सलाह देनी शुरू की।

"एक तिरपाल पकड़कर नीचे खड़े हो जाओ। वह उसमें कूद जाएगा।"

"कौन जाने, वह बेहोश हो। तब कैसे कूदेगा?"

"घर के भीतर जाओ और तख़्ते को खिड़की में से खींच लो!"

"वह टूट जाएगा।"

"उसके नीचे बांस की टेक लगा लो।"

"उतना लम्बा बांस कहां मिलेगा?"

"अरे देखो,—वह देखो!"

अपने हाथ में रस्सा लिए मार्ज़िन खिड़की पर खड़ा था और ऐसा मालूम होता था जैसे वह कुछ कह रहा हो क्योंकि उसके होंठ हिल रहे थे।

भीड़ पर सन्नाटा छा गया।

"ज़खार इवानोविच! मेरी आवाज़ सुन रहे हो न? यह देखो, तुम्हारे लिए मैं रस्सा फेंक रहा हूं, तुम इसका फंदा तख़्ते के सिरे में डाल देना। सुन रहे हो न? यह लो, इसे पकड़ो!"

रस्से का एक छोर हवा में उड़ा और कोलोबोव के बदन पर जा गिरा। बहुत ही धीरे-से—अनजान-से अन्दाज़ में—उसने हरकत की। तख़्ता हिला। कराहने की आवाज़ सुनाई दी।

"डरो नहीं, इवानोविच! ख़ुदा का नाम लो और जैसा मैंने कहा वैसा करो। खुदा तुम्हें इस तरह, बिना पश्चाताप के, नहीं मरने देगा!" दादा ओसिप नीचे से चिल्लाया। भीड़ के अन्य लोगों ने भी ढारस बंधाया और काफ़ी कशमकश के बाद ठेकेदार तख़्ते के छोर में फंदा खिसकाने में सफल हुआ।

"अब एकदम थिर पड़े रहना," माज़िन ने कहा और ओझल हो गया। एक मिनट बाद रस्सा कस गया और तख़्ते का छोर धीरे-धीरे ऊपर उठने लगा।

"ख़ूब, तुमने बहुत अच्छा किया, वान्का!" माज़िन की तरक़ीब का अन्दाज़ हो जाने पर दादा ग्रोसिप ने चिल्लाकर कहा—"देख क्या रहे हो, मिट्टी के ढेलो? जाओ और उसकी मदद करो! ख़ूब, माज़िन, ख़ूब! जाओ, और उसकी मदद करो, साथियो!"

कई आदमी घर के भीतर दौड़ गए और शीघ्र ही छोर इतना ऊंचा उठ गया कि तख़्ता खिड़की में हल्का ढलुवां हो गया। माज़िन अब फिर खिड़की पर दिखाई दिया।

"अब, ज़खार इवानोविच, पेट के बल नीचे खिसक आओ। धीरे-धीरे, आराम से। बोर्ड जवाब नहीं देगा, काफ़ी मोटा और मज़बूत है। चले आओ, केकड़े की भांति!"

हालांकि खतरा अभी दूर नहीं हुआ था—डर था कि कहीं बोर्ड बीच में ही न टूट जाए—फिर भी भीड़ में हंसी दौड़ गई। कोलोबोव, धूल से अटा, भट्टे-सा मुंह बाए, नीला चेहरा और उद्भ्रांत आंखें लिए, पेट के बल तख़्ते के ऊपर से नीचे रेंग रहा था। और यह दृश्य ऐसा था जिसे मुश्किल से ही दुःखान्त कहा जा सकता था।

जब वह बड़ी सावधानी से अपने हाथों को नीचे खिसकाता तो अपने गावदुम बदन को कुबड़ाकर एक मिनट के लिए गोल गेंद-सा बना लेता और फिर उसे सीधा फैला लेता। उसके पांव रह-रहकर फिसल जाते और हवा में झूलने लगते। कभी-कभी तख़्ता भी हिल उठता। जब कभी ऐसा होता, वह वहां का वहीं जाम हो जाता, अपनी समूची शक्ति से तख़्ते से चिपक जाता और रुआंसी आवाज़ में मिमिया उठता। इससे लोग और भी ज़ोरों से हंसने लगते। और जैसे-जैसे वह खिड़की के अधिक निकट पहुंचता जाता, उनकी यह हंसी भी उतना ही ज़ोर पकड़ती जाती।

"मैं शर्त बदता हूं, अगर उसका पेट चीरा जाए तो उसमें से ज़रूर कुछ खपचियां निकलेंगी!" एक लाल बालों वाले रंगसाज़ ने स्वर छेड़ा।

"देख लेना, आज यह खूब खाएगा। पहले का खाया-पिया सब पच गया होगा।"

"खाना तो यह हमेशा ही खूब खाता है—उसका बस चले तो हमें भी समूचा हज़म कर जाए," याकोव ने मज़ाक़ किया जो किसी वजह से प्रसन्न नज़र आता था।

अब तक कोलोबोव खिड़की पर पहुंच उसके भीतर रेंग गया था। देखते न देखते, दो कारीगरों का सहारा लिए, वह सामने प्रकट हुआ—कटा-फटा, गंदा, पसीनों में लिपटा। उसमें इतनी भी ताक़त नहीं थी कि एक के बाद अपना दूसरा डग उठा पाता। उन्होंने उसे एक गाड़ी में लादा और वहां से ले गए। भीड़ छंट चली। लेकिन कुछ लोग माज़िन के इर्द-गिर्द जमा हो गए और उससे पूछने लगे कि मालिक को बचाने की तरक़ीब उसे कैसे सूझी। माज़िन हाथों में रस्सा थामे जैसे था वैसे ही खड़ा रहा।

"मैं नहीं जानता," उसने कहा—"वह तख्ता ही मुख्य चीज़ था। लेकिन छोड़ो। मुझे अभी जाकर भोजन करना है।"

"लेकिन अगर तुम मर जाते तो? तुमने ऐसी जोखिम में क्यों हाथ डाला?"

"लेकिन मैं मरा नहीं। अरे, लगता है, अन्य साथी पहले ही चले गए।"

"ओह, यहां है वह—माज़िन! भई वाह, हमने तुम्हें सब कहीं खोज डाला। कुछ समझ नहीं पड़ता था कि तुम कहां लोप हो गए, और अब देखते हैं कि तुम यहां हो!" दादा ओसिप ने, जो अभी-अभी यहां प्रकट हुआ था, छलछलाते हुए कहा—"चलो, खाना खा लो। इस बार खुदा तुम्हारे पक्ष में था, माज़िन। वह सब खुदा का ही जहूरा था। क्योंकि ज़रा उस तख्ते को देखो, कितना

बोदा था वह! लेकिन वह नहीं चाहता था, खुदा की मर्जी नहीं थी कि एक आदमी ऐसे ही मर जाए, अपने गुनाहों के लिए पछताने का भी उसे मौक़ा न मिले। तुमने अपना काम किया, – लेकिन इसे लेकर गर्व में न फूल जाना!"

माज़िन अपने इस सीखदाता के साथ चलता रहा, नाक से फुंकार छोड़ता और उसके उद्गारों की ओर कोई ध्यान न देता हुआ।

"क्यों, कहीं चोट तो नहीं लगी?"

"नहीं। यों ही टांग में ज़रा-सा धचका लगा है।"

"क्या दु:खती है?"

"अधिक नहीं। ठीक हो जाएगी।"

"इसपर थोड़ी वोडका मल लो।"

"तुम मलने की बात करते हो," कुछ रुककर माज़िन ने कहा – "अगर मिलती तो मैं उसे गले के नीचे उंडेल लेता!"

"मिलेगी," दादा ओसिप ने उछाह में भरकर वायदा किया।

अपना भोजन ख़त्म करने और वोडका पीने के बाद कारीगर और मज़दूर बैठकर ठेकेदार के आने और मचान के बारे में आदेश लेने की प्रतीक्षा करने लगे।

"वह जल्दी ही आएगा, मेरे अन्दाज़ से," छत की ओर ताकते हुए याकोव ने खीज के साथ कहा।

"आएगा क्यों नहीं?.. वह ज़रूर आएगा, हम लोगों की चिन्दियां बिखेरने के लिए! कहेगा कि उससे पीछा छुड़ाने के लिए हमने जान-बूझकर यह सब किया," युवक आफ़ोनिया ने मन ही मन लापर्वाही से हंसते हुए कहा।

"वह हम लोगों की चिन्दियां क्यों न बिखेरे?" दादा ओसिप ने पूछा – "यह उसका अधिकार है, क्योंकि कुछ अंशों में ख़ुद हम

भी इसके लिए ज़िम्मेदार हैं। माना कि तख़्ते पुराने थे, लेकिन फिर भी भगवान् ने हमें हाथ और आंखें दी हैं, – क्यों, दी हैं न? सो उसे अधिकार है कि हमारी ख़बर ले!"

उन्होंने बूढ़े दादा से बहस की, लेकिन वे इस बात से इन्कार नहीं कर सके कि हालांकि तख़्ते पुराने थे, खड़ी बल्लियों में जोड़ थे और कीलें काफ़ी परिमाण में नहीं मिली थीं, ख़ुद उन्होंने भी लापर्वाही बरती और इसलिए कोलोबोव को अधिकार है कि वह उन्हें झिड़के।

"लेकिन इन सब बातों में तुक क्या है?" याकोव ने धीरज खोते हुए कहा – "मानो अधिकार होने या न होने से कोई फ़र्क़ पड़ता हो। वह हमेशा भौंकता है, चाहे अधिकार हो, चाहे न हो!"

इसमें भी इन्कार नहीं किया जा सकता था, लेकिन इस मामले में लोगों को निराश होना पड़ा।

ज़खार इवानोविच कारीगरों-मज़दूरों के सामने बहुत ही रोब-दाब और बड़प्पन के साथ नमूदार हुआ। और इससे पहले कि वह दरवाज़े के भीतर पांव रखता, उन्होंने देखा कि झगड़ा खड़ा करने का उसका कोई इरादा नहीं है।

"वान्का कहां है?" उसने पूछा।

कारीगरों में तीन वान्का थे। उनमें से दो बेंचों के ऊपर से, जहां कि वे बैठे थे, उठ खड़े हुए और सवालिया नज़र से ठेकेदार की ओर देखने लगे।

"तीसरा कहां है?" कोलोबोव ने भौंहें चढ़ाते हुए पूछा।

"व्यात्का-निवासी? वह एक तख़्ते पर पड़ा ऊंघ रहा है। वान्का, ऐ वान्का! मालिक तुझे बुला रहे हैं!"

माज़िन कांखा-कराहा, उसने जमुहाई ली, उठकर खड़ा हुआ

ग्रौर उचकता-डगमगाता ठेकेदार के पास पहुंचा। कोलोबोव ने इतनी गहरी सांस ली कि उसकी तोंद हिल उठी ग्रौर गाल कुप्पा-से फूल ग्राए।

"हां तो, माज़िन," उसने धीमे-धीमे कहना शुरू किया – "तुम्हारे लाभ के लिए मैं कुछ कहना चाहता हूं। यह ग्रब साफ़ मालूम हो गया कि इन बनमानुषों में तुम सबसे तेज़ हो ग्रौर ग्रगर तुम न होते तो शायद ग्राज मैंने मौत को गले लगा लिया होता। कारण कि यहां ग्रौर कौन हैं? क्या इन लोगों को ग्रादमी कहा जा सकता है? लकड़ी के कुन्दे हैं ये – ठोस लकड़ी के कुन्दे, जिनके पास रत्ती भर भी ग्रक़्ल नहीं। हां तो बात यह है कि ग्रपनी जान बचाने के लिए मैं तुम्हारा ग्रहसान मानता हूं। ग्रौर सच्चे हृदय से तुम्हें धन्यवाद देता हूं।"

कोलोबोव की शिकायत भरी नज़र कमरे में घूम गई ग्रौर उसने सबके चेहरों पर ग्राशा-भरी उत्सुकता की एक झलक देखी।

"तुम लोग इस तरह दीदे निकालकर क्या देख रहे हो? क्या तुम इस ताक में हो कि वान्का को जो इनाम मैं देने जा रहा हूं, उससे गुलछर्रे उड़ाग्रो? जो भी वान्का की बोतल खोलने के लिए सबसे पहले डग बढ़ाएगा, उसे एक रूबल जुरमाना ग्रदा करना होगा। इस बात को गांठ-बांधकर जेब में रख लो ग्रौर मौज करो। ग्रौर सुनो, वान्का, तुम इनके हत्थे ज़रा भी न चढ़ना। ये लोग बड़े काइयां हैं, सच बहुत काइयां हैं – तुम्हारी जेब में ग्रभी भी छेद किए हैं, हरामी कहीं के! जहां इन्होंने देखा कि यह ग्रादमी कुछ बूदम-सा है, फिर ये उसे नहीं छोड़ते – उसकी पतलून तक उतरवाकर पी जाते हैं! जाग्रो, इस धन से ग्रपने कर ग्रदा कर देना या ग्रन्य कुछ, जो तुम्हारा जी चाहे, करना, लेकिन उन्हें इसकी गंध तक न लगने देना।"

"कौनसा धन?" माज़िन ने पूछा।

"एक मिनट ठहरो। यह लो। और तुम्हें बहुत-बहुत धन्यवाद!"

ठेकेदार ने तीन रूबल का एक नोट माज़िन के हाथ में ठांस दिया और उदारता का भाव चेहरे पर सजाए उसकी ओर देखने लगा। लेकिन माज़िन उसी प्रकार खड़ा अपने हाथ में पड़े नोट की ओर ताकता रहा।

"तो यह क्या मेरे लिए है?" उसने धीमी आवाज़ में पूछा।

"तुम अजीब चोंच हो! निश्चय ही यह तुम्हारे लिए है।"

"हम्म-म! दूसरे शब्दों में यह कि ... वह रस्सा लेकर ऊपर चढ़ने और ... एक शब्द में ..."

"हां-हां, उसीलिए, कुन्द खोपड़ी!" माज़िन की मोटी बुद्धि और उछाह के अभाव पर प्रसन्नता से हंसते हुए कोलोवोव ने कहा।

"क्या तुम समझते हो कि तीन रूबल की इस चिन्दी के लिए मैंने वह सब किया?" वान्का माज़िन ने पूछा जो अभी भी वैसे ही सिर झुकाए खड़ा था और ठेकेदार की नज़र से बचता हुआ हाथ में पड़े नोट की ओर ताक रहा था।

"क्यों, क्या यह तुम्हारे लिए बहुत कम है?" ठकेदार रूखी आवाज़ में गुर्राया और अपना हाथ पतलून की जेब में वापिस डाल लिया। माज़िन ने अपनी भौंहों के नीचे से उसकी ओर देखा और फिर धीरे-धीरे अपना सिर उठाकर एक गहरी सांस ली। उसके होंठों में बल पड़ा और उसने ऐसा चेहरा बनाया जैसा कि वह उस समय बनाता था जब शोरबे की रकाबी में मांस की बोटी हस्ब मामूल से ज़्यादा गंधाती थी या गोभी ज़रूरत से ज्यादा सड़ी हुई होती थी।

"सो तुम समझते हो कि मैंने तीन रूबल की इस चिन्दी के लिए वह सब किया,—क्यों? यह लो, इसे अपनी जेब में वापिस रख

लो। तुम मूर्ख आदमी हो, ज़खार इवानोविच! तुमने हद कर दी,–तीन रूबल का यह इनाम दिखाकर! तुम्हारी अजर अमर आत्मा को बचाने के लिए मैं वहां चढ़ा था, तीन रूबल के लिए नहीं। इसलिए कि कहीं तुम अपने गुनाहों का प्रायश्चित किए बिना ही न मर जाओ। और तुम मुझे तीन रूबल का नोट थमाते हो! ख़ैर मनाओ जो इस पुरस्कार के बदले मैंने तुम्हारी थूथनी न तोड़ दी। निकल जाओ,–चले जाओ यहां से! मैं तुम्हारी शक्ल तक देखना बरदाश्त नहीं कर सकता!"

उसने अपना यह भाषण सदा की भांति धीमे और बोझिल अन्दाज़ में शुरू किया था, लेकिन अन्त तक पहुंचते न पहुंचते उसकी आवाज़ ने सहसा एक तेज़ फटकार का रूप धारण कर लिया। बढ़ई आंखें फाड़े उसकी ओर ताक रहे थे, दादा ओसिप मुसकरा रहा था, कोलोबोव पीला पड़ गया था, उसे क़तई आशा नहीं कि मामला इस तरह उलट जाएगा।

"यह क्या बकवास है? तुम मेरी थूथनी तोड़ दोगे? तुम मुझे निकल जाने का आदेश दे रहे हो,– और भी किसीको नहीं, मुझे?" विक्षोभ से घुटते हुए वह हांफ उठा–"और तुम–तुम बूढ़े शैतान–तुम किसलिए अपनी बत्तीसी चमका रहे हो?"

"निकल जाओ, ज़खार इवानोविच! खबरदार, मेरे साथ खिलवाड़ न करना," माज़िन ने चेतावनी दी–"मेरा पगार मूझे दो। मैं जा रहा हूं।"

"बहुत ख़ूब!" दादा ओसिप ने ज़ोरों से कहा।

ठेकेदार पूर्णतया निरस्त्र हो गया। सभी कारीगरों-मज़दूरों की आंखें उसपर जमी थीं। निर्भय और शत्रुतापूर्ण भाव से वे उसे देख रहे थे और उसने अनुभव किया कि उसका वह आतंक, जो मालिक के रूप में उनपर छाया रहता था, हवा में उड़कर छू-मन्तर हो गया

है। लेकिन फिर भी वह वहां से जा न सका। कोई चीज़ थी जो उसके पांवों को रोके थी। सो वह उनके सामने ही खड़ा रहा। एक कुटिल मुसकराहट उसके चेहरे पर खेल रही थी और वह उनसे कह रहा था –

"मानना पड़ेगा कि तुम बहुत चतुर हो। हम्फ। हां तो छोड़ो यह, कुछ और कहो।"

"कहता ज़रूर," माज़िन ने कहा – "लेकिन इस समय नहीं। इस समय तो मैं एक ही काम कर सकता हूं – वह यह कि तुम्हारी थूथनी को तोड़कर रख दूं। समझे, बस निकल जाओ यहां से! हटा लो अपनी इस काली काया को मेरी आंखों के सामने से!"

"बहुत ख़ूब!" दादा ओसिप ने दाद दी।

"सो यह बात है, हरामी कुत्तो! अच्छा, मैं भी तुम्हें दिखाऊंगा, वह भुगतान कराऊंगा कि याद रखो!"

लेकिन वह जानता था कि न वह उन्हें कुछ दिखा सकता है, न उनसे कुछ भुगतान करा सकता है, सो उसने मुंह फेरा और वहां से नौ दो ग्यारह हो गया।

"बहुत अच्छा किया, माज़िन! तुमने बहुत ठीक किया!" माज़िन के इर्द-गिर्द कुदकते हुए दादा ओसिप चिल्लाकर बार-बार कह रहा था – "तुमने बहुत अच्छा किया! और कितना सीधा हिसाब लगाया उसने! एक बैंक-नोट? ओह नहीं, जीत का सेहरा हमेशा बैंक-नोट के सिर ही नहीं बंधता! लेकिन उसे पक्का विश्वास था कि ऐसा ही होगा। बहुत अच्छा किया, माज़िन! तुमने आज उसे एकदम चौचक कर दिया!"

और सभी कारीगरों ने अनुभव किया कि बेढंगे-बेडौल वान्का माज़िन ने मालिक को कुछेक दांव दिखाए, – और बहुत ही अच्छे

ढंग से दिखाए। और वे उसकी ओर इस तरह ताकते रहे जैसे वह कोई विकट वीभत्स जीव हो–एक ऐसी उत्सुकता से, जिसपर भय की परत चढ़ी थी। शायद वह अपने तरकश में उनके लिए भी कुछ तीर छिपाए हो। लेकिन वह अब फिर वही मूर्ख वान्का माज़िन बन गया था जिससे कि वे परिचित थे,–उतना ही उदासीन, उतना ही कुन्द और सदा की भांति उतना ही रीढ़-विहीन!

उस सांझ माज़िन और दादा ओसिप–ठेकेदार ने दोनों को ही बर्ख़ास्त कर दिया था–एक क़हवाख़ाने में बैठे चाय पी रहे थे। माज़िन चुपचाप अपनी सफ़ेद रोटी चबा रहा था और दादा ओसिप उस करतब के महत्व का बखान कर रहा था जो कि वान्का ने सम्पन्न किया था–

"तीन रूबल का वह नोट ऐसा ही था जैसे तुम्हारे हृदय में किसीने छुरी भोंक दी हो। अपनी जान हथेली पर रखकर तुम वहां चढ़े। आख़िर किसलिए? इसलिए कि तुम्हें उसपर तरस आया। आख़िर हम सबकी भांति वह भी एक इनसान था और हम सभी में आत्मा का निवास है। और इसके बाद वह आता है और तुम्हारे हाथ में वह तीन रूबल का चिथड़ा थमा देता है। उसे यह करने का साहस कैसे हुआ? उसका मूल्य क्या था,–उस धन का? तुमने अपना हृदय और आत्मा उंडेलकर वह काम किया और उसके लिए अगर इसका कुछ अर्थ था तो केवल तीन रूबल। यह सरासर अपमान था!"

वान्का माज़िन ने बड़ी मुश्किल से अपने दोनों गालों में भरी रोटी को निगला और चाय का गिलास उठाते हुए निम्न उद्गार प्रकट किए–

"यह बहुत बुरा हुआ कि इस मामले को मैं हल्के ढंग से न निबटा सका। अच्छा होता अगर मैं उसके बालों को पकड़कर थोड़ा इधर-उधर झंझोड़ देता। लेकिन मुझे उसपर तरस आ गया। मैंने देखा कि वह निरा मूर्ख है। ऐसे आदमी से और क्या आशा की जा सकती है?"

और अपने हाथ को हवा में हिलाकर उसने उसे अपने दिमाग़ से निकाल बाहर किया और मुंह से आवाज़ करता अपने गिलास से चाय चुसने लगा। हर घूंट को जब वह गले से नीचे उतारता तो उसके होंठ बड़े स्वाद के साथ चटकारा लेते।

१८९७



उत्पाती

संपादक का पारा गरम था और वह, उत्तेजित तथा विचलित, समाचारपत्र का नवीनतम अंक अपने हाथों में थामे, होंठों ही होंठों में कोसता और झिड़कियां-सी देता, बड़े और उजले कमरे में, जो कि स्थानिक पत्र का दफ़्तर था, मंडरा रहा था। वह एक टुइयां-सा

आदमी था और उसका पैना-पतला चेहरा एक छोटी दाढ़ी और सुनहरी फ़्रेम के चश्मे से सजा था। वह अपने छोटे-छोटे पांवों को पटक रहा था और कमरे के बीचोंबीच रखी लम्बी मेज़ की बग़ल में – चुरे-मुरे समाचारपत्रों, प्रूफ़ों और पांडुलिपियों का जिसपर ऊंचा अम्बार लगा था – चकरघिन्नी बना हुआ था।

प्रकाशक – लम्बा, मोटा-ताज़ा, सुनहरी बाल और मझोली उम्र वाला – एक हाथ के सहारे मेज़ पर झुका था और दूसरे से अपना माथा खुजला रहा था। उसकी भूरी आंखें संपादक का अनुसरण कर रही थीं और उसके चर्बी-चढ़े सफ़ेद चेहरे पर एक व्यंगपूर्ण मुसकान खेल रही थी। मेकअपमैन – वह, जो समाचारपत्र के पन्ने बनाता है, – सहमा-सा दीवार से सटा खड़ा था। उसका रंग पीला था, बदन में कोने-कोने निकले थे और वह एक कत्थई रंग का, ज़रूरत से ज्यादा लम्बा, मैला कुचैला फ़ाक-कोट पहने था। वह अपनी भौंहों को उठाता, नज़र गड़ाकर छत की ओर देखता, जैसे कुछ सोच या याद कर रहा हो, और फिर, एकाध मिनट बाद, निराशा से नाक सिकोड़ता और उदास भाव से अपना सिर लटका लेता। चेहरों पर परेशानी और विक्षोभ लिए रह-रहकर लोग भीतर आते और फिर बाहर चले जाते, दरवाज़े पर खड़े मैसेंजर-ब्वाय को धकियाते हुए।

संपादक की क्रुद्ध आवाज़ जब-तब तीन गुनी भड़क उठती और हर बार, जब भी ऐसा होता, प्रकाशक का चेहरा ऐंठ जाता और मेकअपमैन अपनी आंखों को मिचमिचाता।

"मैं उस बदमाश को अदालत में खींच ले जाऊंगा। क्या प्रूफ़-रीडर आ गया? जहन्नुम रसीद हो गए सब, – मैं तुमसे पूछता हूं, – क्या वह आ गया? और तमाम कम्पोज़ीटर्स, – उनसे भी कहो कि यहां पेश हों। क्यों, तुमने उन्हें इत्तला दी या नहीं?

हे भगवान्, जाने अब क्या होगा! सभी समाचारपत्र इसपर टूट पड़ेंगे। बदनामी होगी। देश के ओर-छोर में इसका नक्क़ारा पीटा जाएगा। कौन है वह शैतान? उसे इसका भुगतान करना पड़ेगा।"

उसने अपने हाथों को, जिनमें वह समाचारपत्र थामे था, ऊपर उठाया और फिर, एकाएक, रुक गया। ऐसा मालूम होता था जैसे वह अपने सिर को आसन्न बदनामी से बचाने के लिए उसमें लपेट लेना चाहता हो।

"पहले उसका पता तो लगाओ," तीखी मुसकान के साथ प्रकाशक ने सलाह दी।

"चिन्ता न करो, मैं सब पता लगा लूंगा," संपादक की आंखों में बिजली कौंनी और वह फिर दुलकी चाल से मंडराने लगा। समाचारपत्र को वह अपनी छाती पर दबोचे था और गुस्से में भरा बुरी तरह उसे नोच रहा था—"मैं उसका पता लगा लूंगा और उसके होश ठिकाने कर दूंगा। लेकिन उस प्रूफ़-रीडर का क्या हुआ,—वह कहां मर गया? ओह, आइये, भीतर चले आइए, आप लोग ही तो सीसे की इस नाव के खेवैये हैं। आइए, भीतर आ जाइए!"

सीसे के टाइप जोड़नेवाले कम्पोज़ीटरों की क़तार कमरे में आकर खड़ी हो गई। वे जानते थे कि मामला क्या है, और प्रत्येक को भय था कि दोष उसके मत्थे मढ़ा जाएगा। उनके चेहरे, जो सीसे की धूल से गंदे और लिपे-पुते थे, काठ की भांति निश्चल और भाव-प्रूफ़ मालूम होते थे। संपादक उनके सामने जाकर रुक गया और उसने अपने हाथ कमर के पीछे बांध लिए। वह उनसे छोटा था और उनके चेहरों में देखने के लिए उसे अपनी आंखें ऊंची उठानी पड़ती थीं। उसने इतनी तेज़ी से अपने सिर को पीछे की ओर फेंका कि उसका चश्मा एकाएक उछलकर उसके माथे पर आ गया। इस डर से कि वह गिर

न पड़े, उसका हाथ उसे पकड़ने के लिए लपका, लेकिन वह अब फिर उसकी नाक के पुल पर सुरक्षित आ बिराजा था।

"शैतान का बच्चा!" अपने दांतों को पीसता हुआ वह बुदबुदाया।

कम्पोज़ीटरों के मैले चेहरों पर मुसकराहट खेल गई। कोई दबी हंसी से हंसा।

"मैंने तुम्हें यहां अपनी बत्तीसी का प्रदर्शन करने के लिए नहीं बुलाया है," सफ़ेद पड़ते हुए संपादक ने कहा—"मेरी समझ में पत्र को धूल में मिलाने में पहले ही तुमने कोई कसर नहीं छोड़ी। अगर तुममें एक भी ईमानदार आदमी है, अगर तुममें एक भी ऐसा है जो यह जानता है कि समाचारपत्र और प्रेस के क्या मानी होते हैं, तो वह अपने आप बता देगा कि यह किसकी करतूत है। यह देखो, सम्पादकीय अग्रलेख!"

और संपादक ने पूरी गरमाहट के साथ समाचारपत्र के पन्ने पलटने शुरू किए।

"बात क्या हुई?" एक आवाज़ आई जिसमें सीधी-सादी उत्सुकता के सिवा और कोई भाव नहीं था।

"ओह, जैसे तुम्हें कुछ मालूम नहीं! अच्छा तो यह देखो—'हमारा फ़ैक्टरी सम्बन्धी क़ानून समाचारपत्रों के लिए सदा एक गर्म बहस का विषय रहा है, अर्थात् यह एक ऐसा विषय है जिसे लेकर ऊटपटांग बातों और मूर्खतापूर्ण बकवास में रीम के रीम काले किए गए हैं।' अब बोलो—कुछ तसल्ली हुई या नहीं? यह 'काले किए' किसने जोड़ा है? वह ज़रा आगे निकल आए। 'काले किए' सुना तुमने? क्या मज़ाक़ है! हां तो इस 'मूर्खतापूर्ण बकवास' के लिए कौन ज़िम्मेदार है?"

"यह किसका लेख है? आपका? तो फिर इसमें जो कुछ है उसके लिए आप ज़िम्मेदार हैं," उसी शान्त आवाज़ ने फिर कहा।

यह धृष्टता थी और हरेक को ऐसा मालूम हुआ जैसे अपराधी पकड़ा गया। कमरे में एक हलचल-सी दौड़ गई। प्रकाशक भी दल के निकट खिसक आया। वक्ता के चेहरे की झांकी लेने के लिए संपादक अपने अंगूठों के बल उचका। कम्पोज़ीटर काई की भांति फट गए। एक चकला चौड़ा जीव, नीला ब्लाउज़ पहने, संपादक के सामने खड़ा था। उसके चेहरे पर चेचक के दाग़ थे और उसकी बाईं कनपटी के बाल छल्ला बने ऊपर को उठे थे। उसके हाथ पतलून की जेबों में गहरे धंसे थे, उसकी भूरी आंखें लापर्वाही से संपादक पर टिकी थीं और छल्लेदार सुनहरी गलमुच्छों के भीतर से, जो उसके होंठों को घेरे थे, एक धुंधली मुसकान झांक रही थी। सबके सब उसकी ओर देख रहे थे—प्रकाशक कड़ाई से भौंहों में बल डाले, संपादक गुस्से और अचरज से, और मेकअपमैन होंठों पर लगी बंधी मुसकान लिए। कम्पोज़ीटरों के चेहरों पर भय, उत्सुकता और छिपाए न छिपे ऐसी प्रसन्नता के भाव झलक रहे थे।

"सो यह तुम हो,—क्यों?" चेचकरू कम्पोज़ीटर की ओर अपनी उंगली से इशारा करते और अपने होंठों को भयप्रद ढंग से भींचते हुए आखिर संपादक के मुंह से निकला।

"हां, मैं ही हूं," चेचकरू आदमी ने जवाब दिया और उसके होंठों पर एक ऐसी मुसकान खेल गई जो ख़ास तौर से चिढ़ानेवाली थी।

"ओह, मैं तो मंत्र-मुग्ध हो गया! और क्या मैं जान सकता हूं कि तुमने ऐसा क्यों किया?"

"मैंने यह कब कहा कि मैंने किया है?" अपने साथियों की ओर एक नज़र फेंकते हुए कम्पोज़ीटर ने कहा।

"यह ज़रूर इसीकी करतूत है, मित्री पाव्लोविच," मेकअपमैन ने स्वयं सेवकाई में कहा।

"अगर ऐसा है तो समझ लो कि यह मैंने ही किया," कम्पोज़ीटर ने भले स्वभाव से मान लिया और अपना हाथ हिलाते हुए मामले को दफ़ा कर दिया।

एक बार फिर सबपर सन्नाटा छा गया। किसीको उम्मीद नहीं थी कि वह इतनी आसानी से अपना क़सूर मान लेगा। संपादक का गुस्सा काफ़ूर हो गया और उसकी जगह निरे अचरज ने दख़ल जमा लिया। चेचकरू कम्पोज़ीटर के इर्द-गिर्द जगह और चौड़ी हो गई। मेकअपमैन सकपकाकर मेज से जा लगा, अन्य कम्पोज़ीटर भी पीछे हट गए।

"क्या तुमने यह जान-बूझकर किया है,—पहले से तय करके?" अपराधी की ओर फटी आंखों से देखते हुए प्रकाशक ने पूछा।

"जवाब देने की इनायत करो," अपने मुडे-तुडे समाचारपत्र को हिलाते हुए संपादक ने चिल्लाकर कहा।

"चिल्लाओ नहीं। मुझे तुम आसानी से रोब में नहीं ले सकते। चिल्लाकर तुम मुझसे कुछ पार नहीं पाओगे!" उसकी आंखों में एक उद्धत, शैतान को भी ठेंगे पर मारनेवाली चमक कौंध गई, इस पांव से उस पांव पर अपना बोझ बदलते हुए प्रकाशक की ओर वह मुड़ा और बोला—"तुम ठीक कहते हो। मैंने जान-बूझकर उन शब्दों को बदला।"

"सुना तुमने?" संपादक कमरे में जमा लोगों की ओर मुख़ातिब हुआ।

"तुम्हें यह क्या सूझी, बेवकूफ़!" एकाएक गुस्से में उबलते हुए

प्रकाशक चिल्ला उठा—"क्या तुम्हें इस बात का कुछ ख्याल है कि मुझे कितना नुक़सान तुमने पहुंचाया है?"

"नुक़सान क़तई कुछ नहीं पहुंचाया। अख़बार की फुटकर बिक्री सम्भवत: पहले से ज़्यादा होगी। और जहां तक संपादक का सम्बन्ध है, मैं समझता हूं कि यह ठीक उसकी पसन्द के माफ़िक़ नहीं हुआ।"

संपादक इतना विक्षुब्ध था कि उसके मुंह से बोल नहीं निकल रहा था। आंखों में बिजली भरे वह इस शांत और प्रतिशोधपूर्ण मज़दूर की ओर बस ताक भर रहा था और अपने भावों को व्यक्त करने लायक़ शब्द उसकी पकड़ में नहीं आ रहे थे।

"इसके लिए मैं तुम्हारे साथ सख़्ती से पेश आऊंगा," प्रकाशक ने धमकी दी, लेकिन फिर अचानक नर्म पड़कर अपने घुटने को थपथपाने लगा।

असल बात यह थी कि वह इस घटना और मज़दूर के उद्धत जवाबों से ख़ुश था। संपादक हमेशा दम्भ के साथ उससे व्यवहार करता था और अपनी बौद्धिक श्रेष्ठता का रोब जमाने में कभी नहीं चूकता था। वही गर्व से भरा और अपने सामने किसीको कुछ न समझनेवाला संपादक अब उसकी आंखों के सामने धुल में रौंदा जा रहा था,—और सो भी किसके द्वारा?"

"अपनी इस उद्धतता के लिए तुम्हें भुगतान करना होगा," अन्त में उसने जोड़ा।

"मुझे उम्मीद नहीं थी कि तुम मुझे इतनी आसानी से छोड़ दोगे," कम्पोज़ीटर ने कहा।

उसके लहजे और शब्दों ने फिर एक नयी सनसनाहट पैदा कर दी। कम्पोज़ीटरों ने एक दूसरे को भेद-भरी नज़रों से देखा, मेकअपमैन सिकुड़-सिमट गया और उसने अपनी भौंहें चढ़ा लीं, संपादक एक डग पीछे

हटकर मेज़ से जा लगा और उसके सहारे टिक गया। गुस्से से अधिक सकपकाहट और अपमान का वह अनुभव कर रहा था और अपने विपक्षी पर नज़र जमाए एकटक उसे ताक रहा था।

"तुम्हारा नाम क्या है?" अपनी जेब से एक नोटबुक निकालते हुए प्रकाशक ने पूछा।

"निकोल्का ग्वोज़्देव," मेकअपमैन ने अविलम्ब ऐलान किया।

"अपना तोबड़ा बन्द रखो, चुग़लख़ोर! तुमसे किसीने कुछ नहीं पूछा," मेकअपमैन को अपनी घिनौनी नज़र से देखते हुए कम्पोज़ीटर ने कहा— "मेरे पास अपनी ज़ुबान मौजूद है। मैं ख़ुद अपना जवाब दे लूंगा। मेरा नाम है—निकोलाई सेम्योनोविच ग्वोज़्देव। मेरा पता..."

"पता-वता हम सब लगा लेंगे," प्रकाशक ने उसे बीच में ही रोक दिया—"अच्छा तो अब दफ़ा हो जाओ यहां से,—सबके सब!"

ज़ोरों से पांव पटकते कम्पोज़ीटर वहां से विदा हो गए। ग्वोज़्देव ने भी अपना डग बढ़ाया।

"ज़रा ठहरो,—एक मिनट," अपना हाथ उसकी ओर बढ़ाते हुए संपादक ने नर्म किन्तु सुस्पष्ट आवाज़ में कहा।

ग्वोज़्देव घूम गया। उसने अपने कंधों को बिचकाया। अपनी दाढ़ी में उंगलियों से कंघा-सा किया। फिर चुनौती-भरी नज़र से संपादक की ओर ताकने लगा।

"मैं तुमसे कुछ पूछना चाहता हूं," संपादक ने कहना शुरू किया। वह प्रयत्न कर रहा था कि शांत रहे, लेकिन सफल न हो सका। उसकी आवाज़ बरबस ऊंची उठी और चीख़ के स्तर पर जा पहुंची—"तुमने ख़ुद कुबूला... कि यह शैतानी कर... तुम मुझे नुक़सान पहुंचाना चाहते थे,— क्यों, ठीक है न? यह क्या है,—बदला? मैं जानना चाहता हूं कि किसलिए। समझ रहे हो न? क्या तुम मुझे यह बता सकते हो?"

ग्वोज़देव ने अपने कंधों को बिचकाया, अपन होंठों के छोरों को नीचे खींचा और अपनी आंखों को झुका लिया। प्रकाशक ने अधीरता से अपने पांव ठकठकाए, मेकअपमैन ने अपनी गर्दन उचका ली, संपादक ने अपने होंठ काटे और विचलित भाव से अपनी उंगलियां मरोड़ीं। उसका जवाब सुनने के लिए सभी उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगे।

"अच्छी बात है, तुम भी सुन लो," एक मिनट तक ख़ामोश रहने के बाद ग्वोज़देव ने कहना शुरू किया—"लेकिन चूंकि मैं शिक्षित आदमी नहीं हूं, इसलिए हो सकता है कि अपनी बात साफ़ तौर से न कह सकूं। सो अगर ऐसा हो तो सिवा इसके और क्या चारा है कि तुम मुझे माफ़ कर दो? सारी बात यह है। तुम दुनिया भर के लेख लिखते हो, हर किसीको सीख देते हो कि अपने साथी जीवों से प्रेम करो, आदि आदि। यह सब मैं विस्तार के साथ तुम्हें नहीं बता सकता, इस मामले में मैं बहुत कुछ कोरा हूं। तुम खुद जानते हो कि आए दिन तुम कैसी-कैसी सीख देते रहते हो। हां, तो मैंने तुम्हारे इन लेखों को पढ़ा। तुम हमारे—मज़दूरों के—बारे में लिखते हो, और जो कुछ लिखते हो वह सब मैं पढ़ता हूं। लेकिन हृदय घिना जाता है, क्योंकि वह सब कूड़ा होता है। बेहया शब्दों का एक ढेर-मात्र, समझे मीत्री पाव्लोविच! 'किसी को लूटो नहीं,' तुम कहते हो, लेकिन तुम्हारे छापाघर में क्या हो रहा है? पिछले सप्ताह किर्याकोव ने साढ़े तीन दिन काम किया, तीन रूबल और अस्सी कोपेक उसकी मज़दूरी हुई और इसके बाद वह बीमार पड़ गया। उसकी बीवी पैसा लेने दफ़्तर में आई और मैनेजर ने उसे टका-सा जवाब दे दिया कि कुछ नहीं मिलेगा, बल्कि यह कि उल्टे उसे देना है—एक रूबल बीस कोपेक जुरमाना उसके नाम चढ़ा है। यह है तुम्हारा 'किसीको लूटो नहीं'! तुम इस बारे में क्यों नहीं लिखते? या इस बारे में कि मैनेजर किस प्रकार हमपर गुर्राता रहता है और मशीन से काग़ज़ उठानेवाले लड़कों को ज़रा-ज़रा-सी बात पर

पीटता है? तुम ऐसी चीज़ों के बारे में नहीं लिखते, क्योंकि तुम अपना असली चेहरा प्रकट नहीं करना चाहते। तुम लिखते हो कि लोगों के लिए आज इस दुनिया में जीना दूभर हो रहा है। तुम यह सब खुराफ़ात केवल इसलिए लिखते हो कि तुम इसके सिवा और कुछ नहीं कर सकते। बस, यही सारी बात है—और इसीलिए तुम तुर्की अत्याचारों पर तो बढ़-चढ़कर भाषण झाड़ते हो और उन अत्याचारों को नहीं देखते जो तुम्हारी आंखों के नीचे हो रहे हैं। बोलो, तुम्हारे ये लेख कूड़ा नहीं, तो और क्या हैं? बहुत दिनों से मैं मन मारे था कि तुम्हें लजाने के लिए दो-चार सच्चे शब्द भी तुम्हारे लेखों में रख दूं। लेकिन यह न समझना कि तुम्हारे साथ जो किया जाना चाहिए, उसकी इतिश्री हो गई है।"

ग्वोज़्देव गर्व से अपनी छाती ताने था, उसका सिर ऊंचा उठा था और वह सीधे संपादक की ओर ताक रहा था। संपादक मेज़ को अपने हाथों में दबोचे था और अपना सिर पीछे की ओर फेंके था। उसका चेहरा, जो पहले तमतमाया था, अब सफ़ेद पड़ गया था। घृणा, खीज और दुख से भरी मुसकराहट उसपर छाई थी और वह, बड़ी जल्दी-जल्दी, अपनी आंखों को मिचमिचा रहा था।

"क्या यह समाजवादी है?" प्रकाशक ने धीमी आवाज़ में संपादक से पूछा। उसकी आवाज़ में उत्सुकता के साथ भय का पुट मिला था।

संपादक अपने सिर को बांका कर केवल मुसकरा दिया।

मेकअपमैन खिसककर फ़िलोडैन्ड्रोन के पीपे की ओट में खिड़की के पास जा खड़ा हुआ। पीपे की छाया, एक डिज़ाइन-सा बनाती, फ़र्श पर पड़ रही थी। पीपे की ओट में खड़ा, चूहे ऐसी अपनी छोटी आंखों से वह हरेक को मिचमिचाकर देख रहा था। उसकी आंखों में एक तरह की अधीर उत्सुकता झलक रही थी और वे प्रसन्नता से टिमटिमा रही थीं।

प्रकाशक ने संपादक की ओर ताककर देखा। संपादक ने सचेत हो अपना सिर उठाया। उसकी आंखों में बेचैनी की रमक थी और उसके चेहरे पर बल पड़ रहे थे। तभी उसने ग्वोज़्देव को पुकारा जो दरवाज़े की ओर बढ़ रहा था।

"केवल एक मिनट, – ज़रा ठहरो! तुमने मेरा अपमान किया है। लेकिन तुम सही नहीं हो। मैं समझता हूं कि तुम खुद भी यह जानते हो। तुमने इतनी साफ़गोई से अपने मन की बात मेरे सामने रखी, इसके लिए मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूं। लेकिन मैं फिर कहता हूं कि..."

वह व्यंगपूर्ण अन्दाज़ में बोलना चाहता था, लेकिन व्यंग की जगह उसके शब्दों में एक अजीब घिनौनापन और बनावट भरी थी। बोलते-बोलते वह रुक गया, इस इरादे से कि अपने आपको बटोरकर ऐसा आक्रमण वह करेगा जो खुद उसके और अपने उस अभियोगकर्त्ता के लिए मौजूं हो जिसे वह अपने अत्यन्त उद्‌भ्रांत सपनों में भी अपना – एक संपादक का – जज मानने के लिए कभी राजी न होता।

"यह स्वाभाविक ही है," ग्वोज़्देव ने सिर हिलाते हुए कहा – "जो सबसे ज्यादा शोर मचाते हैं, वे हमेशा सही मालूम होते हैं।"

जिस जगह वह खड़ा था, वहीं से उसने अपने इधर-उधर नज़र डाली जो बिलाशक इस बात की सूचक थी कि वह यहां से जाने के लिए अधीर हो उठा है।

"एक मिनट और," अपनी आवाज़ और बांह दोनों को उठाते हुए संपादक ने कहा – "तुमने मेरे ख़िलाफ़ एक अभियोग लगाया है और इससे पहले ही मेरे तथाकथित अपराध के लिए तुम मुझे दंडित कर चुके हो। यह मेरा अधिकार है कि मैं अपना बचाव करूं, और मैं तुमसे कहता हूं कि मेरी बात सुनो!"

"मेरी चिन्ता छोड़ो। अगर बचाव करना ज़रूरी ही हो तो प्रकाशक

के सामने अपना बचाव करो। मुझे लेकर बातें झाड़ने से क्या फ़ायदा? मैंने तुम्हें नुक़सान पहुंचाया है, सो मुझे थाने में बन्द करा दो। लेकिन यह अपने बचाव का नाटक क्यों रचते हो?" वह एकाएक मुड़ा और पीठ के पीछे अपने हाथों को बांधे वहां से चल दिया।

वह भारी और बड़ी एड़ी वाले जूते पहने था। जब पांव ज़मीन पर पड़ते थे तो ज़ोरों से आवाज़ करते थे। उसकी पदचाप से बाड़ेनुमा बड़ा दफ़्तर गूंज उठा।

"हां तो आफ़त के एक अच्छ-ख़ासे पोट से तुम्हारा वास्ता पड़ा है," ग्वोज़्देव के बाहर जाने पर दरवाज़े के बन्द होते ही प्रकाशक ने कहा।

"वासिली इवानोविच, इस मामले में मेरा ज़रा भी हाथ नहीं है," अपने हाथों को चापलूसी के अन्दाज़ में फैलाते और प्रकाशक की ओर छोटे सावधान डगों से बढ़ते हुए मेकअपमैन ने चिरौरी की—"मैं तो कम्पोज़ किए हुए मैटर से पन्ने सजाता हूं। मैं यह कैसे जान सकता हूं कि कम्पोज़ करनेवालों ने क्या कम्पोज़ करके मुझे दिया है? सारी रात खड़े-खड़े बीत जाती है, बीवी घर पर बीमार पड़ी है और बच्चों की—तीन बच्चे हैं—देख-भाल करनेवाला कोई नहीं है। तीस रूबल महीने के लिए, जैसे कि कहा जाता है, मैं अपने जीवन का रक्त गला रहा हूं। जहां तक फ़्योदोर पाव्लोविच का सवाल है, जब उसने ग्वोज़्देव से बात की थी, तभी मैंने उसे चेता दिया था। 'फ़्योदोर पाव्लोविच,' मैंने कहा था—'निकोल्का को मैं उसके बचपन से जानता हूं, और तुम्हें यह बताना ज़रूरी समझता हूं कि वह पूरा उत्पाती और चोर है, उसमें कोई अच्छाई नहीं है। वह पहले भी शांति-सुरक्षा की अदालत का मुंह देख चुका है,' मैंने कहा—'यहां तक कि जेल की सज़ा भी काट चुका है।'"

"जेल वह किसलिए गया था?" अपनी आंखें उठाए बिना ही प्रकाशक ने पूछा।

"कबूतर पकड़ने के लिए, – यानी ताले तोड़ने के लिए। एक रात उसने कबूतरों की सात काबुकों के ताले तोड़ डाले और एक सिरे से सभी कबूतरों को आज़ाद कर दिया! मेरे भी एक जोड़ी भूरे – एक लोटन, जो सीटीदार था, और एक पाउटर – हाथ से निकल गए। बहुत ही क़ीमती पंछी थे।"

"क्या उसने उन्हें चुरा लिया?" प्रकाशक ने उत्सुकता से पूछा।

"नहीं, यह सब वह नहीं करता। एक बार चोरी का मुक़दमा उसपर चला था, लेकिन साफ़ छूट गया। वह तो निरा उत्पाती है। मज़ाक़ के लिए उसने कबूतरों को उड़ा दिया, हम कबूतर-प्रमियों की खिल्ली उड़ाने के लिए। इन हरकतों के लिए वह एक से अधिक बार मार भी खा चुका है। एक बार तो इतना पिटा कि अस्पताल ले जाना पड़ा। लेकिन अच्छा होते ही उसने मेरे लड़के की धर्ममाता के तन्दूर में भुतने घुसा दिए।"

"भुतने?" प्रकाशक ने अचरज में पूछा।

"यह क्या बकवास है!" संपादक ने कंधे बिचकाए, अपनी भौंहों को ऐंठा, होंठ काटे और सोच में डूब गया।

"बात एकदम सच्ची है, केवल मैं उसे ठीक ढंग से नहीं कह सका," मेकअपमैन ने सकपकाकर सफ़ाई दी – "देखो न, वह – यह निकोल्का – तन्दूरसाज़ है, – दुनिया भर के धंधे उसे मालूम हैं। लिथोग्राफ़ी और मीनाकारी का काम उसने किया है और नल्के लगाना भी वह जानता है। हां तो उस धर्ममाता के बारे में, – पादरियों से उसके नाते-रिश्ते हैं और उसका एक निजी घर हैं। उसने उसे तन्दूर की मरम्मत करने का काम दिया। उसने उसे बहुत ही बढ़िया बना दिया, लेकिन उसकी दीवार में उसने पारे की एक बोतल चिन दी जिसमें सुइयां और अन्य कितनी ही चीज़ें भरी थीं। जब तन्दूर गर्म होता तो यह बोतल आवाज़ करती – अजीब ढंग की आवाज़, जैसे कोई कराह या आहें भर रहा हो, और लोगों ने कहा कि घर में

भुतने घुसे हैं। गर्मी से बोतल का पारा फैलता और सुइयां कांच से टकरातीं, जैसे कोई दांत पीस रहा हो। सुइयां एक तरह की आवाज़ करतीं, छोटी कीलें दूसरी तरह की, अच्छा-ख़ासा भुतनों का कन्सर्ट शुरू हो जाता। मेरे लड़के की धर्ममाता ने मकान को बेचने तक का इरादा कर लिया, लेकिन उसे कोई लेना नहीं चाहता था। भुतनों वाले मकान को कौन ले? तीन बार उसने घर में पवित्र जल छिड़कवाया, पूजा-पाठ कराया। लेकिन सब बेकार। बेचारी भयानक मुसीबत में फंसी थी। एक ब्याहने लायक़ लड़की, सौ मुर्ग़े-मुर्ग़ियां, दो गायें, बढ़िया घर और – भुतने! उसने बहुतेरा सोचा, – सच, सोचते-सोचते उसकी नाक में दम आ गया। उसे देखकर बड़ा दुख होता। और उसी निकोल्का ने, कहना चाहिए कि, उसकी जान बचाई। 'मुझे पचास रूबल दो,' उसने कहा – 'और मैं भुतनों को मार भगाऊंगा।' पच्चीस रूबल तो उसने पहले दे दिए, लेकिन जब उसे बोतल की बात मालूम हुई तो उसने बाक़ी रक़म देने से इन्कार कर दिया और भयानक होहल्ला मचाया। वह तो उसे अदालत में घसीटना चाहती थी, लेकिन समझा-बुझाकर उसे रोक दिया। इसी तरह और भी न जाने कितने उत्पातों का सेहरा उसके सिर बंधा है।"

"इन उत्पातों में एक के असर का मैं भी कल अनुभव करूंगा," संपादक उत्तजित हो चिल्लाया और कमरे में फिर तेज़ डगों से मंडराने लगा – "ओह मेरे भगवान्! कितना कमीना काम किया है उसने!"

"बस, बस," प्रकाशक ने ढारस बंधाते हुए कहा – "एक भूल-सुधार छाप देना, यह बताते हुए कि सब कैसे हो गया... अजीब आदमी है, कम्बख़्त! तन्दूर में भुतने घुसा दिए! हम्फ! हम उसके कान सीधे करेंगे, इसमें सन्देह नहीं, लेकिन शैतान होशियार ख़ूब है और हृदय में एक तरह का – जाने क्या – कुछ होने लगता है उसे देखकर!" प्रकाशक ने अपनी उंगलियों को चटखाया और छत की ओर ताकने लगा।

"सो तुम्हें यह दिलचस्प मालूम होता है,—क्यों, ठीक है न?" संपादक चीख़ उठा।

"तो इससे क्या? समूची घटना अगर मनोरंजक नहीं, तो फिर क्या है? बहुत ही चतुर है, कम्बख़्त!" प्रकाशक ने पलटकर जवाब दिया—"तुम उसके ख़िलाफ़ क्या अभियोग लगाना चाहते हो?"

संपादक लपककर प्रकाशक के पास पहुंच गया।

"एक भी नहीं। वासिली इवानोविच, मैं उसपर कोई अभियोग नहीं लगा सकता, क्योंकि भुतनों के आविष्कारकर्त्ता ने जो कुछ कहा वह सच है। केवल शैतान ही जानता है कि तुम्हारे छापाघर में क्या कुछ होता है,—सुन रहे हो न? और तुम्हारी वजह से बेवक़ूफ़ मैं बनाया जाता हूं। उसकी बात सच है, हज़ार बार सच है!"

"और वह, जो कुछ का कुछ छपा है,—क्या वह भी सच है?" अपने होंठों को भींचते हुए प्रकाशक ने तीखी आवाज़ में पूछा।

"हां, वह भी सच है। आख़िर को हमारा पत्र उदारपंथी है।"

"और कुल दो हज़ार प्रतियां हमारे अख़बार की छपती हैं, जिनमें परिवर्तन की और कम्प्लीमैंटरी प्रतियां भी शामिल हैं!" प्रकाशक ने रूखी आवाज़ में कहा—"जब कि हमारा प्रतिद्वन्द्वी पत्र नौ हज़ार के आस-पास बिकता है।"

"हां, तो फिर?"

"फिर कुछ नहीं!"

संपादक ने निराशा से हाथ हिलाया और फिर कमरे का फ़र्श नापने लगा।

"अजीब तमाशा है," अपने कंधों को बिचकाते हुए वह बुदबुदाया—"हर चीज़ मेरे ही ख़िलाफ़ जाती है। दुनिया भर के कुत्ते मुझे ही झंझोड़ते हैं और मैं पलटकर भौंक तक नहीं सकता। और यह कम्बख़्त मज़दूर तो जैसे आख़िरी तिनका है! ओ, मेरे भगवान्!"

"बस, बस, यह झींकना बन्द करो,—इस उम्र में नहीं सुहाता!" भले स्वभाव से मुसकराते हुए सहसा वासिली इवानोविच ने सलाह दी, कुछ ऐसे अन्दाज़ में, मानो शोर और हलचल ने उसे उकता दिया हो—"इस तरह की चीज़ें जब-तब होती रहती हैं, लेकिन उनसे कुछ खास बनता बिगड़ता नहीं। तुम्हारी ख्याति का यह दाग टिकनेवाला नहीं है। सब ठीक हो जाएगा। समूची घटना दुखान्त उतनी नहीं मालूम होती, जितनी कि हास्यप्रद मालूम होती है।"

उसने अपना गुदगुदा हाथ मित्रभाव से संपादक की ओर बढ़ाया, और वह अपने भीतर वाले दफ़्तर में जाने ही वाला था कि अचानक दरवाज़ा खुला और ग्वोज़्देव भीतर आ गया। वह टोपी पहने था और विनम्रता से मुसकरा रहा था।

"संपादक महाराज, मैं आपसे यह कहने आया था कि अगर आपका इरादा मुझे अदालत में घसीटने का हो तो यह अभी बता दीजिए। मैंने यहां से विदा होने का तय कर लिया है और मैं नहीं चाहता कि मुझे फिर इधर का रास्ता देखना पड़े।"

"निकल जाओ!" सम्पादक चीखा, गुस्से के मारे सुबक उठा और भागकर कमरे के दूसरे छोर पर पहुंच गया।

"तो हिसाब चुकता हो गया!" यह कह ग्वोज़्देव ने अपनी टोपी को सीधा किया, शांत भाव से मुड़ा और ओझल हो गया।

"शैतान नहीं तो!" प्रकाशक ने प्रशंसा से उसांस छोड़ी, चेहरे पर मुसकान लिए मुड़ा और अलस भाव से अपना ओवरकोट बांहों में डालने लगा।

दो या तीन दिन बाद ग्वोज़्देव निश्चिन्त मुद्रा में 'पहाड़ी' पर टहल रहा था। वह एक नीला ब्लाउज़ पहने था जो पेटी से कसा था। उसकी पतलून काफ़ी खुली-सी थी और पांवों में पालिश किए हुए जूते चमचमा

रहे थे। सफ़ेद रंग की टोपी, बांके अन्दाज़ में, उसकी गुद्दी पर टिकी थी। हाथ में वह एक गांठदार छड़ी लिए था।

नीचे नदी-किनारे तक एक सहज ढलुवान फैला था। यही वह 'पहाड़ी' था। कभी यहां पेड़ों का एक घना झुरमुट था, लेकिन वह अब अधिकांशतः साफ़ कर दिया गया था। आंधी-पानी की चोट खाए बलशाली और गांठ-गठीले बलूत और एल्म के इक्के-दुक्के पेड़ अपनी तुड़ी-मुड़ी शाखों को आकाश में उठाए जहां-तहां खड़े थे। उनकी जड़ें नयी फूट आई कोपलों के छल्ले पहने थीं और बेलें उनके तनों को आलिंगन में जकड़े थीं। असंख्य सैलानियों के पांवों ने टेढ़ी-तिर्छी लीकें डाल दी थीं जो नीचे धूप में चमचमाती नदी तक बल खाती चली गई थीं। 'पहाड़ी' को काटता क्षितिज के समानान्तर एक चौड़ा पथ चला गया था जिसपर कभी डाक की गाड़ियां चलती थीं। मुख्यतः इसी पथ पर विरोधी दिशा में आती-जाती दो पांतों के रूप में लोग टहलते थे।

इस पथ पर दोनों दिशाओं में टहलते लोगों में शामिल होना और यह अनुभव करना ग्वोज़्देव को बड़ा अच्छा लगता कि वह भी उन्हींमें से एक है, यह कि पत्तों की सुगन्ध-भरी इस वायु को वह भी उतनी ही आज़ादी से अपनी सांसों में भर सकता है जितना कि वे, और यह कि वह भी उसी फ़ुरसत से टहल सकता है जितना कि वे, और यह कि वह एक बड़ी चीज़ का अंग है और उसमें तथा इन सब लोगों में कोई अन्तर नहीं है, — वह भी उन्हींके समान है।

आज वह नशे की हल्की तरंग में था। उसके मज़बूत और खिंचे-तने चेहरे पर भले स्वभाव और मिलनसारी की झलक थी। सुनहरे बालों के घुंघराले गुच्छे बाईं कनपटी पर ऊपर की ओर घूम गए थे और बड़ी ख़ूबसूरती से उसके कान को अछूता छोड़ उसकी टोपी की पट्टी पर छा गए थे। ऐसा मालूम होता था जैसे कोई मज़दूर दीन दुनिया से लापर्वाह और अपने आपमें मग्न इठला रहा हो... लगता था जैसे वह अभी गाना, नाचना या लड़ना

शुरू कर देगा, और यह कि एक या दो जाम गले के नीचे उंडेलने-छलकाने में वह कोई आनाकानी नहीं करेगा। विचित्र घूम वाली ये लटें उसे प्रदान कर प्रकृति जैसे दुनिया से सिफ़ारिश कर रही थी कि देखो, यह है निकोलाई ग्वोज़्देव, एक जानदार आदमी, जो अपनी क़द्र करना जानता है।

वह प्रसन्न भाव से अपने इधर-उधर देख रहा था, अल्हड़ता में गुज़रनेवालों को धकिया रहा था और बिना किसी शिकायत के उनके धक्के खा रहा था, महिलाओं से टकरा जाने पर झुककर वह उनसे माफ़ी मांगता था और अन्य सबकी भांति वह भी धूल निगल रहा था, —कुल मिलाकर यह कि वह सातवें आसमान पर चल रहा था।

सूरज, जो पत्तियों के बीच से दिखाई दे रहा था, नदी के उस पार चरागाहों में छिप रहा था। आकाश गुलाबी रंग से रंगा था और बड़ा सुहाना मालूम होता था। जी करता था कि लपककर उस जगह पहुंच जाए जहां उसके छोर चरागाहों की गहरी हरियाली को छू रहे थे। चित्र-विचित्र परछाइयां टहलनेवालों के पांवों को छूती फैली थीं और वे, उनके सौन्दर्य से बेख़बर, उन्हें रौंदते हुए बढ़ रहे थे।

ग्वोज़्देव के मुंह के बाएं छोर से एक सिगरेट हिलगी थी और दूसरे छोर से वह धुवें के गुब्बारे छोड़ रहा था। आते-जाते लोगों को वह अपनी आंखों में उतार रहा था और उसके हृदय में यह इच्छा ज़ोरों से उमग रही थी कि किसीको अपने साथ पकड़े और 'पहाड़ी' के नीचे रेस्तोरें में बैठकर बीयर की चुस्कियां लेते हुए उससे घुल-मिलकर बातें करे। लेकिन उसे ऐसा कोई नज़र नहीं आया जिससे कुछ जान-पहचान हो, और नयी जान-पहचान करने का कोई मौक़ा नहीं मिल रहा था। हालांकि छुट्टी का दिन था और बसन्त का उजला मौसम था, लेकिन लोगों को—जाने क्यों—एक सांप-सा सूंघा था। भली मुसकान और बात करने की तत्परता के साथ कई बार उसने आने-जानेवालों के चेहरों में झांका, लेकिन उसके इन चाव-भरे

प्रयासों के उत्तर में किसीने कोई उत्सुकता नहीं दिखाई। सहसा सिरों के उस समूह के बीच उसे सम्पादक के परिचित सिर की झलक दिखाई दी। सपाट ग्रौर चिकना जैसे रन्दा किया हुग्रा हो। ग्वोज़्देव यह याद कर मुसकराया कि उसने इस ग्रादमी को किस तरह उल्लू बनाया था। सम्पादक का भूरा चपटा हैट रह-रहकर जब ग्रन्य हैटों की ग्रोट में हो जाता तो ग्वोज़्देव व्यग्र हो उठता। वह ग्रंगूठों के बल उचकता, उसकी खोज लगाता ग्रौर फिर मुसकराने लगता।

वह एक ग्रांख संपादक पर जमाए चल रहा था। उसे उन दिनों की याद हो ग्राई जब कि वह—ग्वोज़्देव, निकोल्का—फ़िटर का बेटा था ग्रौर सम्पादक—मित्का—पादरी का बेटा था। उनका एक ग्रौर खेल का साथी था—मिश्का, जिसका नाम उन्होंने 'चीनी का कटोरा' रख छोड़ा था। फिर वास्का ज़ूकोव था—एक सरकारी कर्मचारी का बेटा, जो मोहल्ले के ग्राख़िरी घर में रहता था। वह एक ग्रच्छा घर था—पुराना, काई-जमा। उसके ग्रहाते में नौकरों-ढंगरों के लिए ग्रौर भी ढेर सारे छोटे-मोटे घर थे। वास्का के पिता ने बहुत ही बढ़िया कबूतर पाल रखे थे। ग्रहाते में दुनिया भर का काठ-कबाड ग्रटा था—टूटी-फूटी गाड़ियां, पीपे ग्रौर पेटियां, जिन्हें वास्का के सूम पिता ने वहां जमा कर रखा था। ग्रांखमिचौनी खेलने के लिए वह बहुत ही बढ़िया जगह था। ग्रब वास्का ज़िला-ग्रस्पताल का डाक्टर था ग्रौर पुराने घर की जगह रेलवे के गोदाम बन गए थे। नगर के बाहरी छोर पर—ज़ाद्न्याया मोक्राया मोहल्ले में—वह घर था। उस मोहल्ले के लड़के ख़ुद ग्रापस में तो शान्ति के साथ रहते थे, लेकिन ग्रन्य मोहल्लों के लड़कों के साथ उनके बराबर युद्ध ठनते रहते थे। बाग़-बग़ीचे ग्रौर तरकारी की क्यारियों को वे नोच डालते, डंडा-बेड़ी, गेंद ग्रौर ग्रन्य खेल खेलते ग्रौर बस्ती के स्कूल में पढ़ने जाते। यह सब कोई बीस साल पहले की बात है।

अब हर चीज़ बदल गई थी। निकोल्का के साथी, जो उतने ही मैले-कुचैले और शैतान थे जितना कि वह, सब बाहर चले गए और बड़े आदमी बन गए, लेकिन निकोल्का – फ़िटर का लड़का – ज़ाद्न्याया मोक्राया मोहल्ले को नहीं लांघ सका। बस्ती के स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद वे हाई स्कूल में चले गए, लेकिन वह नहीं जा सका। कैसा हो, अगर वह इस समय सम्पादक के पास पहुंच उससे बतियाए?.. बस, 'हल्लो' कहे और बातचीत शुरू कर दे? सबसे पहले वह अपनी करतूत के लिए उससे माफ़ी मांगे और फिर दोनों बतियाने लगें – किसी भी चीज़ के बारे में – शायद जीवन की आम गतिविधि के बारे में।

सम्पादक का हैट उचक-उचककर जैसे उसे लुभा रहा था। ग्वोज़्देव ने अपना मन पक्का कर लिया। सम्पादक अपने आपमें अकेला, टहलनेवालों से हटकर, खुली जगह में चल रहा था। उसकी पतली टांगें हल्के रंग की पतलून में छिपी थीं, अपने सिर को वह दाएं से बाएं और बाएं से दाएं घुमा रहा था और अपनी कमज़ोर आंखों को मिचमिचाता लोगों पर नज़र डाल रहा था। ग्वोज़्देव उसके बराबर में पहुंचा, उसके चेहरे की ओर उसने मित्रभाव से देखा और अभिवादन के लिए उपयुक्त क्षण की प्रतीक्षा करने लगा, – अचरज से यह सोचते हुए कि उसके अभिवादन का उसपर क्या असर होगा।

"शुभ दिन, मित्री पाव्लोविच!"

सम्पादक मुड़ा, एक हाथ से उसने अपना हैट उठाया और दूसरे से चश्मे को साधा, ग्वोज़्देव को पहचाना और अपनी भौंहें चढ़ा लीं।

इससे निकोलाई ग्वोज़्देव हतोत्साह नहीं हुआ। उल्टे, प्रसन्न भाव से वह सम्पादक की ओर झुका और मुंह से वोडका के भभकारे उड़ाते हुए बोला –

"क्यों, टहलने निकले हो?"

सम्पादक एक क्षण के लिए ठिठका, अपने होंठों और नथुनों को घिनाकर फरफराया।

"तुम क्या चाहते हो?" उसने रूखी आवाज़ में पूछा।

"कुछ नहीं। आज का दिन इतना अच्छा है कि यों ही मन कर आया। मैं उस घटना के बारे में कुछ कहना चाहता था।"

"मैं तुमसे कोई बात नहीं करना चाहता," अपने डगों को तेज़ करते हुए सम्पादक ने ऐलान किया।

ग्वोज़्देव ने साथ नहीं छोड़ा।

"कोई बात नहीं करना चाहते! मैं यह समझ सकता हूं। मैंने तुम्हें तंग किया और उसकी कुनह तुम्हारे हृदय में मौजूद है, इसमें शक नहीं।"

"तुम—तुम नशे में हो!" सम्पादक ने चाबुक फटकारा—"और अगर तुम मेरा पीछा नहीं छोड़ोगे तो मैं पुलिस को आवाज़ दूंगा।"

"किसलिए?"

सम्पादक ने कुछ ऐसे निराश भाव से उसकी ओर देखा जैसे वह किसी परेशान करनेवाली स्थिति में फंस गया हो और उससे उबरने का उसे कोई रास्ता नज़र न आ रहा हो। लोगों की कौतुक-भरी नज़रें उनकी ओर उठ रही थीं। सम्पादक ने बेबसी से इधर-उधर देखा।

ग्वोज़्देव ने यह भांप लिया।

"चलो, मुड़ चलें," उसने कहा और जवाब का इन्तज़ार किए बिना ही सम्पादक को चौड़े पथ से खींचकर उस सकरी पगडंडी पर ले चला जो झाड़ियों के बीच से नीचे नदी-तट तक जाती थी।

सम्पादक ने कोई विरोध नहीं किया,— शायद उसे विरोध करने का समय ही नहीं मिला या शायद उसने यह सोचा कि अपने इस

प्रतिद्वन्द्वी से अकेले में वह अधिक आसानी और अधिक जल्दी से छुटकारा पा जाएगा। धीरे-धीरे, सावधानी से डग रखता और अपनी छड़ी पर बदन का सारा भार डालता, वह नीचे उतर चला। ग्वोज़्देव की सांस का स्पर्श वह अपनी गरदन के पिछले हिस्से पर अनुभव कर रहा था।

"यहां एक पेड़ उखड़ा हुआ पड़ा था। उसीको हम अपना बेंच बनाएंगे। मैंने जो कुछ किया है, उसे लेकर मुझसे नाराज़ न होना, मित्री पाव्लोविच। मैं माफ़ी मांगता हूं। मुझे गुस्सा आ गया था। हमारा गुस्सा कभी-कभी इस तरह भड़क उठता है कि मदिरा भी उसे नहीं बुझा सकती। और जब ऐसा होता है तो शैतानी किए बिना चैन नहीं पड़ती – किसी राहचलते की पसलियों में लकड़ी घुसा दी या ऐसी ही अन्य कोई हरकत कर डाली। इसका मुझे दुख नहीं है – जो हो गया सो हो गया, लेकिन शायद मैंने ज़्यादती की, कुछ ज़्यादा आगे बढ़ गया।"

उसने अपने अपराध को खुले हृदय से स्वीकार कर उसकी आत्मा को छुआ, शायद इस वजह से, या शायद इस वजह से कि ग्वोज़्देव के व्यक्तित्व ने उसकी उत्सुकता को जगा दिया, या शायद केवल यह अनुभव कर कि इस आदमी से वह इतनी आसानी से पीछा नहीं छुड़ा सकता, जो भी हो, सम्पादक ने उससे पूछा –

"तुम मुझसे किस बारे में बात करना चाहते हो ?"

"ओह, बहुत-सी चीज़ों के बारे में। एक कांटा-सा है जो मेरी आत्मा को कुरेद और कुड़वा रहा है। आओ, ज़रा बैठ जाओ।"

"मेरे पास समय नहीं है।"

"मैं जानता हूं। वह समाचारपत्र – उसके पीछे तुम्हारी उम्र आधी रह जाएगी और स्वास्थ्य नष्ट हो जाएगा। यह न सोचो कि मैं कुछ

समझता नहीं। ग्रौर वह प्रकाशक? उसने ग्रखबार में पैसा लगाया है, लेकिन तुमने उसे ग्रपने जीवन-रक्त से सींचा है। तुम ग्रपनी ग्रांखें उसकी भेंट कर ही चुके हो। यह लो, यहां बैठ जाग्रो।"

पगडंडी की बग़ल में पेड़ का एक बड़ा-सा तना पड़ा था। कभी यह ग्रोक का एक शक्तिशाली पेड़ था। लेकिन ग्रब उसका यही ग्रवशेष बचा था जो यहां पड़ा गल-सड़ रहा था। ग्रखरोट के एक पेड़ की टहनियां उसपर झुकी हरियाली का वितान ताने थीं। टहनियों के बीच से ग्राकाश झांक रहा था जो छिपते हुए सूरज की लाली से रंगा था। ताज़ा पत्तों की भीनी गंध हवा में तैर रही थी। ग्वोज़्देव बैठ गया ग्रौर वह सम्पादक की ग्रोर मुड़ा जो ग्रभी तक खड़ा था ग्रौर दुविधा में भरा इधर-उधर नज़र डाल रहा था। ग्वोज़्देव ने उससे कहना शुरू किया—

"ग्राज कुछ बूंदें मैंने गले के नीचे उतार ली थीं। जीवन में बड़ी ऊब है, मित्री पाव्लोविच! साथी मज़दूरों से मेरा सम्पर्क छूट गया। जो भी हो, वे ग्रौर मैं चीज़ों को भिन्न ढंग से देखते हैं। ग्राज जब मेरी नज़र तुमपर पड़ी तो मुझे सहसा तुम्हारी याद हो ग्राई—उन दिनों की, जब हम तुम दोनों ग्रच्छे मित्र थे।"

सम्पादक के चेहरे पर भाव बड़ी तेज़ी से ग्रा-जा रहे थे ग्रौर वे कुछ इतने हास्यप्रद थे कि ग्वोज़्देव ग्रपनी हंसी न रोक सका।

"ग्रच्छे मित्र थे? .. कब?"

"ग्रोह, बहुत दिन पहले, मित्री पाव्लोविच। उन दिनों हम ज़ाद्न्याया मोक्राया मोहल्ले में रहते थे,—क्यों, कुछ याद है? तुम मुझसे ग्रौर मैं तुमसे केवल एक घर दूर थे। ग्रौर मिश्का—चीनी का कटोरा—ग्रब वह मिखाइल येफ़िमोविच रूलेव है, कोर्ट-इन्वैस्टीगेटर,—वह मोहल्ले के उस पार ग्रपने कठोर पिता के साथ रहता था। क्या

तुम्हें येफ़िमोविच की याद है? जाने कितनी बार उसने हमें बालों से पकड़कर झंझोड़ा। अरे आओ, यहां बैठो।"

सम्पादक ने सिर हिलाया और ग्वोज़्देव के बराबर में बैठ गया। वह अपने माथे को खुरच रहा था और आंखों को ताने इस तरह उसकी ओर देख रहा था जैसे बहुत पहले भूली किसी चीज़ को याद कर रहा हो।

ग्वोज़्देव पुराने दिनों की याद में डूब-उतरा रहा था।

"क्या जीवन था वह! आदमी अपने सारे जीवन भर बच्चा क्यों नहीं बना रहता? वह बड़ा होता जाता है, – किसलिए? इसके बाद वह नीचे गिरता जाता है – क़ब्र में। दुनिया भर की मुसीबतें उसे दबोचती हैं – वह कड़ुवाहट से भर जाता है और बनैलापन उसमें उभर आता है, – जंगली जन्तु की भांति। कितना मूर्खतापूर्ण है यह सब! आदमी बस जीता है, जिये जाता है और अन्त में ऐसा कुछ भी नहीं बचता जो किसी काम आए। लेकिन उन दिनों इस तरह के काले विचार हमें परेशान नहीं करते थे। पंछियों की भांति हम आज़ादी से – एकदम बेफ़िक्र – चौकड़ियां भरते थे। बाड़ों पर फड़फड़ाते और दूसरे लोगों के श्रम के फलों को नोच लाते। क्या तुम्हें याद है, एक बार जब कि हमने पेत्रोव्ना के तरकारियों के बग़ीचे पर धावा किया था, तो मैंने तुम्हारी नाक पर एक खीरा खींचकर मारा था। तुमने हाय-तोबा मचाई और मैं वहां से भाग खड़ा हुआ। तुम और तुम्हारी मां ने आकर शिकायत की और मेरे पिता ने मेरी चमड़ी उधेड़कर रख दी। और मिश्का, – मिख़ाइल येफ़िमोविच..."

सम्पादक बरबस मुसकरा उठा। इस आदमी की मौजूदगी में वह अपने आपको भारी-भरकम बनाए रखना चाहता था, लेकिन धूपस्नात बचपन के उजले दिनों की इन स्मृतियों में कुछ था जो हृदय को छूता

था। इसके अलावा ग्वोज़्देव के स्वर और लहजे में उसे ऐसी कोई चीज़ नज़र नहीं आई जो उसके आत्मसम्मान को आतंकित करती। फिर चारों ओर का वातावरण भी बड़ा सुखद था। ऊपर पगडंडी के रेत में लोगों के पांव लथपथा रहे थे, उनके बोलने की धीमी आवाज़ें सुनाई दे रही थीं, कभी-कभी हंसने की आवाज़ भी आ जाती थी, हवा हल्की उसांसें छोड़ रही थी, और ये सब छोटी-छोटी ध्वनियां पत्तों की उदास सरसराहट में समा रही थीं। जब सरसराहट बन्द हो जाती तो अटूट निस्तब्धता के क्षणों का उदय होता, जैसे हर चीज़ सब काम छोड़ उनके बचपन के बारे में ग्वोज़्देव के बेसिलसिला संस्मरणों को सुनने में डूबी हो।

"वार्का की याद है,—वह, जो रंगसाज़ कोलोकोल्त्सोव की लड़की थी? वह शापोश्निकोव से—जो छापाघर का मुद्रक है—ब्याही है। वह तो पूरी लेडी बन गई है। उसके पास तक जाते डर लगता है। उन दिनों वह यों ही मरियल-सी लड़की थी। तुम्हें याद है कि वह किस तरह एक बार खो गई थी और हमारे मोहल्ले के सभी लड़के खेतों और खाई-खड्डों में उसे खोजते फिरे थे? वह होहल्ला मचा कि कुछ न पूछो। आख़िरकार वह एक फ़ौजी छावनी में पायी गयी। कोलोकोल्त्सोव ने शीरमाल से हमारी ख़ातिर की और वार्का ने अपनी मां से कहा—'मैं अफ़सर की मेम के पास गई थी। वह मुझे अपनी बेटी बनाना चाहती हैं।' हा-हा-हा! बेटी बनाकर रखना चाहती है! ओह, उन दिनों वह कितनी मज़ेदार टुइयां-सी लड़की थी!"

नदी के तट से सिसकियों की आवाज़ आ रही थी जैसे कोई रो रहा हो। अपने चक्रों से पानी को मथता एक जहाज़ गुज़र रहा था। आकाश गुलाबी रंग से रंगा था और धुंधलका गहरा घिरता आ रहा था। वसन्त की रात धीमे डगों से उतर रही थी और निस्तब्धता अधिकाधिक

गहरी होती जा रही थी। ग्वोज़्देव ने, जैसे इस निस्तब्धता से अवगत होकर, अपनी आवाज़ को धीमा कर लिया। सम्पादक बिना टोके चुपचाप सुन रहा था और ग्वोज़्देव सुदूर अतीत के चित्रों को जीवन प्रदान कर रहा था। यह सभी कुछ सच था, वास्तव में घटित हुआ था।

"इस तरह, मित्री पाव्लोविच, वस्तुतः एक ही घोंसले में हम दोनों के पर जमे, लेकिन हमारी उड़ान भिन्न थी। यह सोचकर बड़ा बुरा मालूम होता है कि मेरे बचपन के पुराने साथी और मैं इतने भिन्न हैं। केवल इसलिए कि मुझे अपनी पढ़ाई जारी रखने का मौक़ा नहीं मिला। क्या पढ़ाई सचमुच में आदमी को बनाती है? कहते हैं कि असल चीज़ उसकी आत्मा और वह जगह है जो दूसरों के हृदयों में अपने लिए बनाता है। लेकिन ... तुम मेरे सहजीवी हो। और तुम्हारे लेखे मैं क्या हूं? क़तई कुछ नहीं,—क्यों, यह सच है न?"

सम्पादक, जो अपने ही विचारों में डूबा था, प्रत्यक्षतः इस सवाल को पकड़ न सका।

"हां है," उसने गम्भीरता और शून्य भाव से जवाब दिया, लेकिन ग्वोज़्देव के हंसने की आवाज़ सुन उसने अपने आपको सम्भाला और कहा— "माफ़ करना। मैं सुन नहीं सका कि तुमने किस चीज़ के बारे में कहा था कि वह सच है।"

"वह सच बात यह है कि मैं तुम्हारे लिए क़तई कुछ नहीं हूं। मेरा होना या न होना तुम्हारे लिए सब बराबर है। मेरी आत्मा का कुछ भी हो, तुम्हारी बला से! दुनिया में मैं अकेला जीव हूं और वे सब लोग, जो मुझे जानते हैं, मुझसे बुरी तरह तंग हैं। कारण, मेरे ख़ून में शैतान का अंश मिला है और मैं दुनिया भर के उत्पात किए बिना नहीं रह सकता। लेकिन मेरे भी हृदय है और एक

दिमाग़ है। मैं अपनी स्थिति से विक्षुब्ध हूं। मैं तुमसे कुछ भी गया-बीता क्यों हूं? यह केवल मेरा धंधा..."

"हां, यह सब बहुत दुखद है," अपने माथे में सलवटें डालते हुए सम्पादक ने कहा। फिर, कुछ रुककर, ढारस बंधानेवाली आवाज़ में उसने कहना शुरू किया—"लेकिन, देखो न, हमें इसे एक दूसरे दृष्टिकोण से भी..."

"मित्री पाव्लोविच! यह दृष्टिकोण क्या बला है? लोगों को एक दूसरे को किसी दृष्टिकोण से कभी नहीं देखना चाहिए। सीधे हृदय से देखना चाहिए। दृष्टिकोण क्या है? मैं जीवन के अन्याय के बारे में बोलता हूं। क्या तुम समझते हो कि मुझे किसी भी दृष्टिकोण से रद्द किया जा सकता है? मेरे लिए इस जीवन में एक बित्ता भर भी जगह नहीं है। क्यों? क्या इसलिए कि मैं शिक्षित नहीं हूं? लेकिन अगर तुम्हारा—उन सबका, जो पढ़े-लिखे हैं,—दृष्टिकोणों का चश्मा लगाकर देखना बन्द हो जाए, तो तुम मेरे बारे में कुछ सोचने और मुझे ऊंचा उठाकर अपने स्तर पर पहुंचाने में जुटो, बजाय इसके कि मुझे अज्ञान और कड़ुवाहट में सड़ने के लिए यहां पड़ा रहने दो। या शायद तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए—किसी दृष्टिकोण से?"

ग्वोज़देव ने विजयी अन्दाज़ में अपने साथी की ओर देखा। उसने अनुभव किया कि इस समय वह अपने पूरे रंग में है और कठोर काम के लम्बे सालों तथा अव्यवस्थित जीवन के दौरान में अर्जित अपने समूचे दर्शन को उंडेल रहा है। सम्पादक अपने साथी के इस धावे से सकपका गया था और यह निश्चय करने की कोशिश कर रहा था कि किस कैंड़े के आदमी से उसका वास्ता पड़ा है और किस प्रकार उसे

उसका जवाब देना चाहिए। इस बीच ग्वोज़्देव, अपने आपसे खूब प्रसन्न, कहे जा रहा था—

"तुम चतुर हो और एक सौ एक जवाब तुम मुझे दे सकते हो, और वे सबके सब ... नहीं, तुम कोई जवाब नहीं दोगे। लेकिन मैं कहता हूं कि तुम्हें जवाब देना चाहिए। क्यों? इसलिए कि तुम और मैं— हम दोनों—एक ही मोहल्ले और ही क्लास के साथी हैं। तुम कुलीन-वर्ग के—शासक-वर्ग के—जीव नहीं हो। यह सब दिन के उजाले की भांति साफ़ हो जाता है जब हम उन्हें अपने व्यवहार में लाते हैं। वे कहते हैं— 'जहन्नुम में जाओ,' — और हम चले जाते हैं। क्योंकि वे जन्म से रईस हैं। तुम भी रईस बन गए हो, क्योंकि तुमने व्याकरण और ऐसी ही दूसरी चीज़ें पढ़ी हैं, लेकिन हो तुम हमारी जात के। मैं तुमसे मांग कर सकता हूं कि जीवन में मेरा क्या स्थान है, यह मुझे दिखाओ। मैं नगर में पला हूं और इसी प्रकार रुग्लेव भी, और तुम केवल पादरी की सन्तान हो।"

"लेकिन ठहरो," सम्पादक ने कहा— "मैं तुम्हारे अधिकारों से इन्कार नहीं करता..."

लेकिन ग्वोज़्देव की इस बात में कोई दिलचस्पी नहीं थी कि सम्पादक किस बात से इन्कार करता है और किससे नहीं। वह तो अपने मन का बोझ हल्का करना चाहता था और वह अनुभव कर रहा था कि इस क्षण कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो वह न कह सके— हर वह चीज, जिसने कभी उसके हृदय को परेशान किया है, वह खोलकर रख सकता है।

"नहीं, तुम ठहरो," सम्पादक के और अधिक निकट खिसकते हुए रहस्य-भरी धीमी आवाज़ में उसने कहा। उसकी आंखें उत्तेजना

से चमक रही थीं – "क्या तुम समझते हो कि बचपन के उन पुराने साथियों की चाकरी बजाना मेरे लिए ग्रासान है जिनकी थूथनी मैं कभी तोड़ा करता था? क्या तुम समझते हो कि ख्र्र्रुलेव साहिब से, जो ग्रब कोर्ट-इन्स्पैक्टर बना है, चालीस कोपेक की बख़्शीश लेना मेरे लिए ग्रासान था? पिछले साल में मैंने उसके घर में एक नया हम्माम बनाया था। हम दोनों एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं, ग्रौर उसका नाम कभी मिश्का चीनी का कटोरा था। उसके दांत ग्राज भी उतने ही खराब हैं जितने कि उस समय थे जब कि वह छोटा था।"

सम्पादक कनखियों से उसकी ग्रोर देख रहा था, – सोच में डूबा, ग्रपने मस्तिष्क में चुपचाप इस बात की खोज करता कि उसे जवाब में क्या कहना चाहिए। वह कोई ऐसी बात कहना चाहता था जो ग्रच्छी, सचाई से भरी ग्रौर हृदय में घर करनेवाली हो। लेकिन इस समय ग्रपने हृदय या मस्तिष्क में ऐसी कोई बात उसे नहीं मिल रही थी। विभिन्न 'समस्याग्रों' को लेकर भाववादी ताना-बाना बुनते-बुनते उसे एक मुद्दत गुज़र गई थी ग्रौर सिवा ऊब तथा थकान के ग्रब ग्रौर कोई भाव वे उसमें जाग्रत नहीं करती थीं। वह ग्राज ग्राराम करना चाहता था, जान-बूझकर ग्रपने परिचितों से उसने ग्रपने ग्रापको ग्रलग रखा था, – ग्रौर ग्रब यह ग्रादमी ग्रपने भाषणों से उसके सिर पर सवार था। उसकी बातों में कुछ सचाई थी, इसमें सन्देह नहीं, जैसे कि लोगों की हर बात में, जो वे कहते हैं, कुछ न कुछ सचाई होती है। बड़ा ग्रटपटापन है इसकी बातों में, ग्रौर उन्हें लेकर मनोरंजक व्यंगचित्र लिखे जा सकते हैं...

"जैसा कि तुम जानते हो," उसने कहना शुरू किया – "तुमने कोई नयी चीज़ नहीं कही। मानवीय सम्बन्धों में ग्रन्याय बहस का एक बहुत पुराना विषय है। लेकिन तुम्हारे जैसे टाइप के ग्रादमी के

मुह से इन चीज़ों के बारे में सुनना एक नयी बात है। तुम अपने विचारों को कुछ दोषपूर्ण और एकांगी ढंग से व्यक्त करते हो, लेकिन ..."

"तुम्हारा वह दृष्टिकोण फिर बीच में आ कूदा!" ग्वोज़्देव की बत्तीसी चमक उठी—"ओह, भले लोगो, भलमनसाहत के दावेदारो, तुम्हारे हिस्से में दिमाग़ ही पड़ा है, हृदय नहीं! मुझे कोई ऐसी चीज़ बताओ जो मेरी छाती पर लदे इस बोझ को हल्का करे ..."

उसने अपना सिर झुका लिया और जवाब की प्रतीक्षा करने लगा।

सम्पादक ने उसकी ओर देखा और अपनी भौंहें चढ़ा लीं। ग्वोज़्देव का नशा अब अपना असर दिखाने लगा था। उसने उसकी सफ़ेद टोपी पर नज़र डाली जो खिसककर उसकी गुद्दी पर पहुंच गई थी, फिर उसने उसके धंसे हुए गालों और उसकी घूमदार लटों को और उसके समूचे शक्तिशाली चौखटे को अपनी नज़र से जांचा और इस नतीजे पर पहुंचा कि वह एक टिपीकल मज़दूर है, और यह कि अगर वह...

"हां तो?" ग्वोज़्देव ने पूछा।

"मैं तुम्हें क्या बता सकता हूं? सच तो यह है कि मैं अभी ठीक से यह तक नहीं जान सका कि तुम चाहते क्या हो।"

"यही तो बात है। तुम्हारे पास कुछ नहीं है जो मुझे बता सको," ग्वोज़्देव ने लघु हंसी हंसते हुए कहा।

सम्पादक ने सन्तोष की सांस ली, यह समझकर कि बातचीत का सिलसिला ख़त्म हो गया और ग्वोज़्देव अब उसकी और अधिक जान नहीं खाएगा। सहसा उसके दिमाग़ में एक भयप्रद विचार आया—अगर उसने उसपर हमला कर दिया तो? इस आदमी को भड़कते कुछ देर नहीं लगती!

उसे ग्वोज़्देव के चेहरे का वह भाव याद हो आया जो कि सम्पादकीय दफ़्तर वाले दृश्य के दौरान में उसने देखा था। और उसने कनखियों से उसपर एक नज़र डाली।

अंधेरा घिर आया था। नदी-तट से तैर आनेवाली गीत की आवाज़ निस्तब्धता को भंग कर रही थी—अनेक आवाज़ें मिलकर उसे गा रही थीं, जिनमें पुरुषों का ऊंचा सुर अलग सुनाई दे रहा था। झिल्लियों की धातुवी आवाज़ हवा में गूंज रही थी। तारे हरियाली के झरोखों में से झांक रहे थे। जब-तब सिर के ऊपर कोई शाख थरथरा उठती और पत्तों में एक मृदु फरफराहट फैल जाती।

"नमी बढ़ती जा रही है," सम्पादक ने सचेत होते हुए कहा।

ग्वोज़्देव चौंका और उसकी ओर मुड़ते हुए बोला—

"क्या कहा तुमने?"

"मैंने कहा कि नमी बढ़ रही है और उससे स्वास्थ्य को नुक़सान पहुंच सकता है।"

"ओह!"

ख़ामोशी। नदी से चिल्लाने की आवाज़ आई—

"हे-ए-ए! कोई है उस बजरे पर?"

"मुझे डर है कि अब मैं नहीं रुक सकता। अच्छा, विदा!"

"ज़रा ठहरो, दोनों साथ बैठकर थोड़ा बीयर पी लें!" ग्वोज़्देव ने आवेग से कहा और अन्त में बोला—"मुझे इस सम्मान से वंचित न करो।"

"मुझे इसका दुख है। लेकिन देर बहुत हो गई। मुझे अब लौटना है।"

ग्वोज़्देव उठकर खड़ा हो गया और खीज-भरे अन्दाज़ में सम्पादक पर उसने नजर डाली। सम्पादक भी खड़ा हो गया था और उसकी ओर अपना हाथ बढ़ा रहा था।

"सो तुम मेरे साथ बीयर नहीं पीना चाहते, – क्यों? अच्छा तो जहन्नुम में जाओ, मेरी बला से!" अपनी टोपी को आंखों पर खींचते हुए ग्वोज़्देव चिल्ला उठा – "रईसज़ादे हो न? पांच कोपेक में एक दरजन, – चाहे जहां खरीद लो! ठीक है, मैं खुद अकेला ही पियूंगा!"

सम्पादक ने बहादुरी के साथ अपने साथी की ओर से मुंह मोड़ा और पगडंडी के सहारे ऊपर चल दिया। वह अपने सिर को विचित्र ढंग से कंधों के भीतर धंसाए था, जैसे डर रहा हो कि कहीं कोई उसपर हमला न कर बैठे। ग्वोज़्देव लम्बे डग भरता पहाड़ी से नीचे उतर आया।

नदी से गला तानकर कोई चिल्ला रहा था –

"ऐ, कौन है उस बजरे पर? ऐ हरामियो, जल्दी नाव भेजो!"

और पेड़ों में एक मृदु प्रतिध्वनि फैल गई –

"ना-व भे-जो!"

१८९७



ओरलोव दम्पति

क़रीब-क़रीब हर शनिवार की सांझ, संध्या-प्रार्थना से पहले, काठ- कबाड़ छितरे और लकड़ी के बाड़े तथा जीर्ण-शीर्ण आउट-हाउसों से घिरे एक छोटे-से अहाते में, सौदागर पेतुन्निकोव के एक गंदे घर

के निचले तल्ले की दो खिड़कियों में से एक स्त्री के फुक्का मारकर चीखने-चिल्लाने की आवाज़ें सुनाई देती थीं।

"ठहर, जाता कहां है, पियक्कड़ शैतान!" तेज़ महीन आवाज़ में स्त्री चीख़ती।

"मुझे बाहर जाने दे!" ऊंची परुष आवाज़ में जवाब सुनाई देता।

"मैं नहीं जाने दूंगी, जंगली जानवर!"

"नहीं जाने देगी, – क्यों, नहीं जाने देगी मुझे? अच्छा, मैं भी देखता हूं कि कैसे रोकती है!"

"नहीं, मुझे मार डालो, तब भी नहीं जाने दूंगी!"

"नहीं जाने देगी?.. बोल, नहीं जाने देगी?.. शैतान की खाला!"

"ओ भगवान्, मुझे इसने मार डाला, ओ भगवान्!"

"देख, अब जाने देगी!"

पहली चीख़ सुनते ही सेन्का चीज़िक – रंगसाज़ सुचकोव का चेला, जिसका समूचा दिन अहाते के एक छप्पर में रंग मिलाते-घोलते बीतता था, – चूहे जैसी अपनी काली आंखों को चमकाता लपककर बाहर निकल आता और गला फाड़कर चिल्लाता –

"ओ-हो-हो, ओरलोव मियां-बीवी में कुश्ती हो रही है!"

सनसनी और हलचल के लिए सदा तैयार सेन्का तेज़ी से ओरलोव दम्पति की खिड़कियों के पास पहुंच मुंह के बल धरती पर पसर जाता, उलझे बालों वाला उसका सिर मेड़ पर झूलने लगता और लाल-पीली धारियां पड़े अपने चेहरे से दीदे निकाल वह अंधेरी खोली में ताकने-झांकने लगता। भीतर से सांचे, चमार के मोम और बदबूदार चमड़े की गंध के भपके निकलते।

इस खोली की तलहटी में दो जने गुत्थमगुत्था हो रहे थे, कांख-गुर्रा रहे थे और ज़ोरों से कोस रहे थे।

"ओह, क्या मुझे मार ही डालोगे!" स्त्री हांफती हुई चिल्लाई।

"तू... तू मुझे मारकर मरेगी!" अपनी आवाज़ में समूचा विष बटोर पुरुष ने उसकी आशंका दूर की।

किसी नर्म चीज़ पर भारी और धुंधली धमाधम, फिर चीखें, आह-कराह और चढ़ी हुई सांस की आवाज़, जैसे कोई भारी वज़न उठा रहा हो।

"ओ-हो, कितना करारा झापड़ था वह सबसे बाद वाला!" सेन्का ने कहा और खोली के भीतर क्या हो रहा है अपने इर्द-गिर्द जमा छोटी-सी भीड़ को हाव-भाव के साथ इसका भान कराने लगा। सदा की भांति इस समय भी यहां वही एक दो दर्ज़ी, कोर्ट-हाउस का हरकारा लेव्चेन्को, अकार्डियन-वादक किस्ल्याकोव और निःशुल्क मनोरंजन के कुछ और प्रेमी मौजूद थे। वे सेन्का पर सवालों की बौछार लगाए थे और उसकी टांगों तथा रंग में डूबी उसकी पतलून को खींच-झटक रहे थे।

"हां तो?"

"अब वह उसकी चड्डी गांठे है और उसकी नाक फ़र्श पर रगड़ रहा है," सेन्का ने रिपोर्ट दी। उसका रोम-रोम विह्वल हो उठा था और उसका बदन सनसना और थरथरा रहा था।

अन्य सब भी, इस वीभत्सता को बारीकी के साथ खुद अपनी आंखों से देखने के लिए बुरी तरह बेचैन, खिड़की पर झुक आए और बावजूद इसके कि वे उन दांव-पेंचों से एक मुद्दत से परिचित थे, जिन्हें ग्रिगोरी ओरलोव अपनी पत्नी से लड़ने के दौरान में इस्तेमाल करता था, वे अचरज प्रकट किए बिना न रहे।

"ओह, शैतान! क्या उसने तोड़ ही डाला?"

"सब खूनमखून! फ़ौवारा छूट रहा है!"

"हे भगवान्!" स्त्रियां चीख उठीं—"पूरा पिशाच है!"

पुरुषों की टिप्पणियां अधिक तटस्थ थीं।

"वह निश्चय ही उसे मार डालेगा," वे बोले।

"मेरी बात गांठ-बांध लो, वह छुरा भोंके बिना नहीं छोड़ेगा," अकार्डियन-वादक ने भविष्यवाणी के अन्दाज़ में ऐलान किया—"उसकी झिक-झिक से तंग आकर किसी दिन भी वह उसे ठंडा कर देगा।"

"अब कुछ नहीं," उछलकर खड़ा होते हुए सेन्का फुसफुसाया और लपककर, दूर कोने में, एक नये निरीक्षण-मोर्चे पर जा डटा। वह जानता था कि ओरलोव अब किसी भी क्षण बाहर निकल आएगा।

उबलते-फनफनाते मोची की नज़र से बचने के लिए अन्य सब भी इधर-उधर बिखर गए। उसके सामने पड़ना खतरनाक था, इसके अलावा—लड़ाई के खत्म हो जाने पर—अब कोई दिलचस्पी भी नहीं रही थी।

आम तौर से जब ओरलोव बाहर निकलता था तो सेन्का के सिवा अहाते में और कोई जीव नज़र नहीं आता था। सांस चढ़ी हुई, कमीज़ फटी हुई, सिर के बाल कांटों की भांति तने हुए, चेहरा उत्तेजित, नोचा-खरोंचा और पसीने में भीगा हुआ,—खून उगलती आंखों से वह अहाते को छानता, अपने हाथों को कमर के पीछे ले जाकर कस लेता और टहलता हुआ उस पुरानी बर्फ़-गाड़ी के पास जा खड़ा होता जो एक आउट-हाउस की बग़ल में औंधी पड़ी थी। कभी-कभी, तानाशाही अन्दाज़ में, वह मुंह से सीटी की आवाज़ निकालता और इधर से उधर इस तरह देखता मानो पेतुन्निकोव के बाड़े के सभी निवासियों को लड़ने के लिए ललकार रहा हो। इसके बाद वह बर्फ़-गाड़ी के

रनर्स पर बैठ जाता, कमीज़ की ग्रास्तीन से अपने चेहरे का पसीना ग्रौर ख़ून पोंछता, थके हुए अन्दाज़ में अपने बदन को ढीला छोड़ देता ग्रौर ऊब-भरी ग्रांखों से ताकने लगता, – घर की गंदी दीवार की ग्रोर, दीवार के उन घावों की ग्रोर, जो पलास्तर उखड़ने से बन गए थे, ग्रौर रंग की बहुरंगी धारियों की ग्रोर, जो दीवार पर पड़ी थीं, – सुच्कोव के रंगसाज़ चेलों की यह ग्रादत थी कि जब वे काम से लौटते थे तो घर के इस कोने पर अपने ब्रुशों को पोंछ देते थे।

ग्रोरलोव की ग्रायु पच्चीस-तीस के बीच थी। उसके स्पन्दनशील चेहरे की सुन्दर ग्राकृति काली छोटी मूंछों से सजी थी जिनकी गहरी छाया उसके भरे-पूरे लाल होंठों पर पड़ती रहती थी। उसकी घनी भौंहें उसकी नाक के बड़े पुल के ऊपर एक दूसरे को छूती-सी मालूम होती थीं। इन घनी भौंहों के नीचे काली ग्रांखें झांकती थीं जिनमें बेचैनी की लौ हमेशा लपकती रहती थी। वह – मांस-पेशियों से पुष्ट मझोले ग्राकार का तेज़ तर्रार ग्रादमी, जिसे काम ने कुछ झुका दिया था, – सकते की हालत में वहीं, बर्फ़-गाड़ी पर, देर तक बैठा रहता, गहरी सांस लेकर अपनी गेहुंवा चौड़ी छाती में हवा भरता ग्रौर रंगों के धब्बे लगी दीवार की ग्रोर ताकता रहता।

सूरज छिप चला, लेकिन अहाते की वायु अभी भी उतनी ही दमघोट बनी थी। रंगों, कोलतार ग्रौर सड़ी गोभी तथा अन्य कूड़े-कचरे की सड़ांध ग्रा रही थी। घर के दोनों तल्लों की खिड़कियों में से गाने ग्रौर लड़ने-झगड़ने की ग्रावाज़ें सुनाई दे रही थीं। जब-तब किसी एक खिड़की में से फदफदाया-सा चेहरा बाहर निकलता, क्षण भर के लिए ग्रोरलोव की ग्रोर ताककर देखता ग्रौर लघु हंसी के साथ फिर विलीन हो जाता।

रंगसाज़ काम से लौटकर अहाते में पांव रखते, गुज़रते हुए

कनखियों से ओरलोव की ओर देखते आपस में नजरों का आदान-प्रदान करते और अहाते को अपनी तेज़ कोस्त्रोमा बोली से गुंजाते हुए कुछ हम्माम की ओर रुख करते, और कुछ दारुघर का रास्ता नापते। दर्ज़ी का काम करनेवाले – दुबले-पतले, खमदार टांगों वाले अधढंके जीव – दूसरे तल्ले के अपने घरों से नीचे अहाते में रेंग आते और रंगसाज़ों को चिढ़ाना शुरू कर देते जो शब्दों का इस तरह उच्चारण करते थे मानो बेर की गुठलियां थूक रहे हों। शोरगुल, हंसी, ठिठोली और प्रसन्न खिलखिलाहट के फ़ौवारे छूटते। लेकिन ओरलोव वैसे ही चुपचाप बैठा रहता, किसीकी ओर नज़र तक उठाकर न देखता। अन्य कोई भी उसके पास न फटकता, उसे लेकर मज़ाक़ करने का साहस न करता। कारण, वे जानते थे कि ऐसे क्षणों में उसके जंगली ग़ुस्से का कोई पारावार नहीं होता।

वह वहां बैठा रहता, उसकी छाती पर बोझ की भांति सवार अस्पष्ट ग़ुस्सा उसे जलाता रहता और उसकी सांस में अटकाव पैदा करता। उसके नथुने फरफराते, उसके होंठों में लहरियां-सी पड़तीं और बड़े-बड़े पीले दांतों की दो पांतें दिखाई देने लगतीं। कोई काली और आकारहीन-सी चीज़ उसके हृदय में उमड़ती, उसकी आंखों के आगे लाल तिरमिरे तैरने लगते। अंधी वेदना और वोडका की उचंग उसकी आंतों को उमेठती। वह जानता था कि वोडका से उसे चैन मिलेगा, लेकिन अभी अंधेरा नहीं गहराया था, और इस नोची-खरोंची तथा बदनाम हालत में मोहल्ले से गुज़रते उसे लाज आती थी जहां उसे – ग्रिगोरी ओरलोव को – एक सिरे से सभी जानते थे।

वह अपने आपको मोहल्ले भर की हंसी का निशाना बनाना नहीं चाहता था, लेकिन वह अपने आपको इसके लिए भी तैयार नहीं कर सका कि घर लौटकर मुंह-हाथ धो डाले और कपड़े बदल आए। वहां उसकी

बीवी, जिसे उसने पीटा था, फ़र्श पर पड़ी थी, और उस समय उसकी बात तक सोचते उसे घिन मालूम होती थी।

वह वहां पड़ी कराह रही थी, इस सजग चेतना के साथ कि वह सही थी, और यह कि वह उसकी बेगुनाह शिकार थी। वह भी यह जानता था। वह जानता था कि वह सही थी और वह ख़ुद ग़लत था। लेकिन यह चेतना केवल उसके ग़ुस्से को और भी अधिक भड़का देती, कारण कि उसकी आत्मा के किसी गहरे कोने में अंधा ग़ुस्सा उमड़-घुमड़ रहा था जो सही और ग़लत सम्बन्धी उसकी चेतना से कहीं ज़्यादा ज़बर था। उसके सभी भाव धुंधले और बोझिल थे, और उनके इस बोझ से उस समय तक बचने का कोई चारा नहीं था जब तक कि वह उन्हें समझे नहीं। लेकिन एक बात वह जानता था,—वह यह कि केवल वोडका का पौवा एक ऐसी चीज़ है जो उसे कुछ आराम दे सकता है।

तभी अकार्डियन-वादक किस्ल्याकोव अहाते में बाहर निकल आया। वह लाल रंग की रेशमी कमीज़ और उसके ऊपर मख़मल की जाकेट पहने था। उसकी चौड़ी मोहरी की पतलून लक़दक़ जूतों के भीतर खोंसी हुई थी। उसके अकार्डियन पर हरे रंग के कपड़े का गलेफ़ चढ़ा था जिसे वह अपनी एक बग़ल में दाबे था। उसकी मूंछें तीर की भांति सीधी एक लकीर की शक्ल में बंटी हुई थी। उसकी टोपी बांकपन के साथ एक कान पर टिकी थी और उसके चेहरे से प्रसन्नता प्रवाहित हो रही थी। ओरलोव उसकी ख़ुशमिज़ाजी के लिए, अकार्डियन बजाने में उसकी दक्षता और उसके भरे-पूरे आत्मविश्वास के लिए उसे चाहता था और उसके चिन्तामुक्त जीवन के लिए उसपर ईर्ष्या करता था।

बधाई, ग्रिगोरी,
कि पाई तुमने युद्ध में जीत
और साथ ही पाया तुमने
आंख के ऊपर नीला गुम्मा।

ओरलोव इस छेड़छाड़ से नाराज़ नहीं हुआ। इससे पहले भी कम से कम पचास बार वह इन्हीं पंक्तियों को सुन चुका था। फिर वह जानता था कि अकार्डियन-वादक कोई नुक़सान पहुंचाने की ग़रज़ से इन पंक्तियों को नहीं दोहराता, जी बहलाने के लिए ख़ाली हल्का-सा मज़ाक़ करता है।

"तुमने एक बार फिर प्लेव्ना के युद्ध की याद ताज़ा करा दी, –क्यों?" ओरलोव के सामने एक क्षण के लिए ठिठकते हुए किस्ल्याकोव ने कहा–"बड़े वीर मालूम होते हो–सिर पर इतने घावों का सेहरा बांधे हुए। चलो, आज ज़रा अपने रक्त की रवानी देखें... थोड़ा रंग पानी करें हम दोनों–तुम और मैं!"

"कुछ देर बाद," बिना सिर उठाए ओरलोव ने कहा।

"मैं तुम्हारे लिए वहां इन्तज़ार करूंगा और चुपचाप विरह की वेदना सहूंगा।"

ओरलोव ने उसका अनुसरण करने में अधिक देर न लगाई। और जब वह चला गया तो डबल रोटी-सी एक छोटी स्त्री दीवार का सहारा लेते हुए खोली से बाहर निकली। उसका सिर शाल में कसकर बंधा था जिसकी परतों के भीतर से एक आंख, थोड़ा-सा गाल और माथा झांक रहा था। लड़खड़ाते डगों से अहाते को पार कर वह भी उसी बर्फ़-गाड़ी पर आकर बैठ गई जिसपर कि उसका पति बैठा था। मात्र्योना को देखकर किसीको अचरज नहीं हुआ–पति के चले जाने के

बाद उसे इस तरह प्रकट होता देखने के वे आदी थे, और वे जानते थे कि वह उस समय तक वहां बैठी रहेगी जब तक कि ग्रिगोरी, नशे में धुत्त और तोबा करता, दारुघर से वापिस न लौट आएगा। वह अहाते में आकर इसलिए बैठी थी कि खोली में उसका दम घुटता था, और इसलिए भी कि नशे में धुत्त अपने पति को खोली की सीढ़ियों से उतारने में उसे सहारा देना होता था: सीढ़ियां गहरी और टूटी-फूटी थीं, एक बार ग्रिगोरी उनके ऊपर से गिर पड़ा था और उसकी कलाई की हड्डी टूट गई थी। दो सप्ताह तक वह काम नहीं कर सका और दो जून खाना जुटाने के लिए उसे अपनी गिनी-चुनी चीज़ें तक गिरवी रखनी पड़ीं।

तब से मात्र्योना बराबर उसकी प्रतीक्षा किया करती थी।

कभी-कभी उसके पड़ोसियों में से कोई एक उसके पास आ बैठता। आम तौर से पेन्शन-प्राप्त नान-कमीशन्ड फ़ौजी अफ़सर लेव्चेन्को ऐसा करता। वह उक्रइन का निवासी था – गम्भीर और समझदार, मूंछें झुकी हुई, सिर घुटा हुआ और लाल नाक।

"क्यों, फिर युद्ध छेड़ दिया?" उसके पास बैठते और जमुहाई लेते हुए वह पूछता।

"लेकिन तुम क्यों दुबले होते हो?" मात्र्योना तड़ाक से जवाब देती।

"मैं क्यों दुबला होने लगा!" उक्रइनी कहता और इसके बाद लम्बी ख़ामोशी छा जाती।

स्त्री की छाती में, कहीं गहराई में, जब वह सांस लेती तो कोई चीज़ घरघराती-सी मालूम होती थी।

"तुम दोनों क्यों हमेशा लड़ते रहते हो?.. ऐसा क्या ज़हर का पौधा उगा है तुम लोगों के हृदय में?" गम्भीरता से कुछ सोचकर लेव्चेन्को कहना शुरू करता।

"यह हमारा निजी मामला है!"

"बेशक," सिर हिलाते हुए लेञ्चेन्को सहमति प्रकट करता।

"तब तुम बीच में टांग क्यों अड़ाते हो?"

"क्या स्त्री है! बोलते जुबान पकड़ती है। तुम और ग्रिगोरी दोनों बराबर के जोड़ीदार हों, यह मैं दावे से कह सकता हूं। दिन में दो बार तुम्हारी चमड़ी उधेड़नी चाहिए–एक बार सुबह और दूसरी बार सांझ को। तब सारी चर्बी छंट जाएगी!"

झुंझलाकर वह उठ खड़ा होता और वहां से चल देता। वह ख़ुद भी ठीक यही चाहती थी। कुछ दिनों से अहाते में यह कानाफूसी चल रही थी कि उक्रइनी ने उसे अपने डोरों में फंसा लिया है। इस कानाफूसी ने उसे उसके ख़िलाफ़ और उन सब लोगों के ख़िलाफ़, जो दूसरों के मामलों में टांग अड़ाते हैं, भड़का दिया था। उक्रइनी चुस्त फ़ौजी डगों से अहाते के दूसरे छोर पर पहुंच गया। चालीस वर्ष का हो जाने पर भी उसमें फ़ुर्ती बनी थी।

अचानक, जाने कहां से, सेन्का प्रकट हो गया।

"लाल मिर्च की बुकनी है वह–ओरलोव की वह बीवी!" गरदन से मात्र्योना की ओर इशारा करते हुए वह लेञ्चेन्को के कान में फुसफुसाया।

"लाल मिर्च की वह बुकनी मैं तुम्हारी आंखों में झोंक दूंगा,–समझे!" लेञ्चेन्को ने धमकी दी, लेकिन मन ही मन वह मुसकराया। वह चपल सेन्का को पसन्द करता था और उसकी बातों को बड़ी व्यग्रता से सुनता था। कारण, उसे अहाते के सभी भेदों की जानकारी थी।

"उसे तुम उल्लू नहीं बना सकते," धमकी की उपेक्षा कर सेन्का कहता गया–"रंगसाज़ मक्सिम ने एक बार कोशिश की थी और उसने

उसकी वह थूथनी रगड़ी कि मज़ा आ गया। मैंने खुद अपनी आंखों से देखा। उसने खूब घूंसे बरसाए, जैसे ढोल बजा रही हो।"

जीवन से छलछलाता और प्रभावशील, आधा बच्चा और आधा वयस्क, केवल बारह वर्ष बड़ा सेन्का अपने चारों ओर की गन्दगी को उसी प्रकार जज्ब कर रहा था जैसे स्पंज पानी को जज्ब करता है। उसके माथे के आर-पार एक महीन रेखा पड़ गई थी जो इस बात की सूचक थी कि सेन्का ने अभी से चीज़ों के बारे में सोचना शुरू कर दिया है।

अब अहाते में अंधेरा हो गया था। ऊपर गहरे नीले आकाश का एक छोटा-सा चौरस खंड—तारों से जगमगाता—नज़र आ रहा था। ऊंचाई से देखने पर अहाता एक गहरे गड्ढे की भांति मालूम होता था जिसके किनारों पर ऊंची इमारतें खड़ी थीं और गड्ढे के एक कोने में बैठी एक छोटी स्त्री अपने बदन की चोटों को सहला और नशे में धुत्त अपने पति के घर लौटने की प्रतीक्षा कर रही थी।

* * *

ओरलोव दम्पति का विवाह हुए चार साल पूरे हो चले थे। उनके एक बच्चा हुआ था, लेकिन वह केवल अठारह महीने की आयु में ही चल बसा। इस निधन से दोनों को सदमा पहुंचा, लेकिन शीघ्र ही इस आशा ने उन्हें ढारस बंधाया कि और बच्चा होगा।

निचले तल्ले की खोली, जिसमें वे रहते थे, लम्बी और अंधेरी थी। उसकी छत डाटदार थी। दरवाज़े की बग़ल में, खिड़कियों की ओर मुंह किए, एक बड़ा रूसी तन्दूर था। तन्दूर और दीवार के बीच तंग रास्ता एक चौरस ओलखी तक जाता था जो अहाते की ओर खुलनेवाली दो खिड़कियों से आलोकित थी। खोली में रोशनी की

तिर्छी और गंदली धारा प्रवेश कर पाती थी। सीलन और सड़ांध का उसमें ज़ोर था और अन्य सभी चीज़ों से वह अलग—कटी हुई—मालूम होती थी। जीवन की हलचल ऊपर—खोली से बाहर —उमंग रही थी। भीतर उसका आभास केवल उन धुंधली और पहचानी न जा सकनेवाली आवाज़ों से मिलता था जो धूल के रंगविहीन कणों के साथ इस खोह में गिर रही थीं जिसमें कि ओरलोव दम्पति रहते थे। तन्दूर की बग़ल में, दीवार से सटा, लकड़ी का एक बड़ा पलंग पड़ा था जिसपर सूती पर्दे टंगे थे,—पीले खेत में गुलाबी फूल खिले हुए। पलंग के सामने एक मेज़ थी जिसपर मोची और उसकी बीवी खाना खाते थे। बिस्तरे और दूर स्थित दीवार के बीच की जगह में, जहां रोशनी की दो धाराएं पड़ रही थीं, वे अपना काम करते थे।

तिलचट्टे उदास भाव से दीवारों के उपर-नीचे आ-जा रहे थे और काली रोटी के गुंधे हुए कणों को—जिजनसे कि पत्र-पत्रिकाओं से काटी हुई तस्वीरें दीवार से चिपकी थीं—चाट रहे थे। बेजान-सी मक्खियां हवा में भनभना रही थीं और दीवारों की गंदी भूरी पृष्ठभूमि में मक्खियों के दाग़ लगी तस्वीरें काले पुचारों की भांति मालूम होती थीं।

ओरलोव दम्पति के दिन का कार्यक्रम इस प्रकार शुरू होता था। सुबह छः बजे मात्र्योना उठती, हाथ-मुंह धोती, युद्ध के घाव खाए तथा टिन धातु के पैवन्द लगे समोवर को गर्म करती, समोवर में पानी उबले तब तक खोली को साफ़ करती और दुकान से सौदा ले आती, फिर अपने पति को जगाती और उसके उठने तथा हाथ-मुंह धोने तक मेज़ पर समोवर का संगीत शुरू हो जाता और वे दोनों चाय तथा एक पौंड सफ़ेद रोटी का नाश्ता करने बैठ जाते।

ओरलोव एक अच्छा मोची था और उसके पास हमेशा काम की काफ़ी भरमार रहती थी। नाश्ता करते समय वह दिन के कामों को

गिनाता। उन कामों को वह ख़ुद करता जिनके लिए उस्ताद-दक्षता दरकार होती, छोटे-मोटे कामों को—जैसे धागे में मोम लगाना, भीतरी सोल (पतावे) चिपकाना और नयी एड़ियों में कीलें ठोंकना—वह मात्र्योना के लिए छोड़ देता। नाश्ते के समय वे यह भी तय करते कि आज दोपहर का भोजन क्या बनेगा। जाड़ों में, जब कि वे अधिक खाते थे, इस विषय को लेकर दिलचस्प बहस छिड़ जाती। गर्मियों में वे किफ़ायत करते और केवल रविवार के दिन ही तन्दूर गरमाते, और सो भी हर रविवार के दिन नहीं। इस प्रकार उनका मुख्य भोजन था क्वास का शोरबा, प्याज़ पड़ा हुआ, नमकीन मछली और कभी-कभी मांस, जिसे वे अपने पड़ोसियों में से किसी एक के तन्दूर में पकवा लेते थे। नाश्ता ख़त्म करके वे काम में जुट जाते—ग्रिगोरी अचार के एक औंधे पीपे पर, जो एक बाज़ू से कटा हुआ था और जिसपर चमड़े की गद्दी बिछी थी, और मात्र्योना उसकी बग़ल में ही एक छोटे-से स्टूल पर।

शुरू-शुरू में वे चुपचाप काम करते,—और बतियाने के लिए उनके पास ऐसा था भी क्या? बीच-बीच में काम के बारे में इक्के-दुक्के शब्द उनके मुंह से निकलते और फिर निस्तब्धता छा जाती। इस तरह आधा एक घंटा बीत जाता। हथौड़ी खुटखुट करती रहती और तागा चमड़े के बीच से खिंचने पर स्विश-स्विश की आवाज़ करता। ग्रिगोरी जब-तब जमुहाई लेता जिसके अन्त में अदबदाकर उसके मुंह से गुर्राने या कराहने की आवाज़ निकलती। मात्र्योना लम्बी सांस खींचती। कभी-कभी ग्रिगोरी कोई गीत गुनगुनाने लगता। उसकी आवाज़ में धातुवी खरोंच थी, लेकिन वह गाता अच्छा था। गीत के उदास बोल कभी रेवड़ की भांति रेलपेल मचाते इतनी उतावली के साथ ग्रिगोरी के कंठ से उभड़ते, मानो उन्हें डर हो कि कहीं वे अनुच्चारित ही न रह

जाएं, और कभी शोकपूर्ण मात्राओं में गुंथे, 'आह' और 'ओह' के उद्गारों के साथ, ऊंचे और उद्वेगपूर्ण स्वर में खिड़कियों में से निकल अहाते में तैरने लगते। मात्र्योना की मधुर कोमल आवाज़ उसके पति की ऊंची परुष आवाज़ का साथ देती। दोनों के चेहरे उदास और चिन्तित हो जाते और ग्रिगोरी की काली आंखों में एक धुंध-सी छा जाती। मात्र्योना को जैसे कुछ सुध-बुध न रहती, एक तरह के आवेश में मंत्र-मुग्ध-सी हो आगे-पीछे की ओर डोलती, चरम आनन्द से विह्वल हो गीत की कड़ी को बीच में ही छोड़ देती और बाद में फिर उसे पकड़ लेती। गाते समय दोनों में से किसी एक को भी दूसरे का चेत नहीं रहता और वे किसी और के शब्दों में ख़ुद अपने अंधकारमय जीवन की समूची ऊब और सूनापन भरने का प्रयास करते, अपने हृदय में जन्मे अस्पष्ट अर्द्ध-आकारी विचारों और भावनाओं को उन शब्दों के द्वारा व्यक्त करने का प्रयत्न करते।

कभी-कभी ग्रिगोरी अपने मन से ही गीत के बोल गढ़ लेता—

आह, यह जी-ई-व-न मेरा!
ओह, यह जीवन कटु अभिशप्त!
आह, यह दुख की घोर घटा!
ओह, यह दुख का तोड़ अभिशप्त!

मात्र्योना को यह जोड़-तोड़ अच्छा न लगता।

"बन्द करो यह अटूट रोदन! किसीके मरने से पहले जैसे कुत्ता रो रहा हो।"

इससे वह हमेशा झुंझला उठता।

"वाह, शक्ल तो देखो जैसे भूतनी हो। समझती कुछ ख़ाक-धूल है नहीं, बस बलबलाना जानती है। सुअर-मुंह कहीं की!"

"रोना ख़त्म हुआ तो अब भौंकना शुरू कर दिया!"

"बहुत जुबान न चला और अपना काम कर। मुझे क्या तू अपना अप्रेन्टिस समझती है जो लगी डांटने कि यह न कर, वह न कर!"

और मात्र्योना यह देखकर कि उसके गले की नसें उभर रही हैं और उसकी आंखों में एक कुत्सित चमक मंडरा रही है, सचमुच अपना मुंह बन्द कर लेती और घंटों तक बन्द किए रहती, पति कुछ पूछता तो भी जान-बूझकर जवाब न देती। लेकिन वह था कि उसका गुस्सा जितनी जल्दी भड़कता था, उतनी ही जल्दी हमेशा शांत भी हो जाता था।

वह उसकी आंखें अपने ऊपर टिकने न देती, जिनमें फिर से मेल करने की चाह और उसे मुसकराता देखने की इच्छा उमंगती होती। साथ ही यह भय भी उसे थरथराता रहता कि उसकी भावनाओं के साथ इस तरह की खिलवाड़ कहीं उसके जंगली गुस्से को न कुरेद दे। लेकिन फिर भी उससे नाराज़ होने और मेल करने के लिए उसके प्रयासों को देखने में उसे सुख मिलता। कम से कम वह अपने को जीवित, स्पन्दनशील और सूझबूझ से सम्पन्न अनुभव करती!

दोनों ही युवा अवस्था के और स्वस्थ थे, दोनों एक दूसरे से प्यार करते थे और दोनों को एक दूसरे पर गर्व था। ग्रिगोरी इतना बलशाली, इतना व्यग्र और इतना ख़ूबसूरत था और मात्र्योना गोरी-चिट्टी, ख़ूब गुदगुदी और अपनी भूरी आंखों में एक चमक लिए थी—गुम्बज़ी वक्षों वाली कुतिया, जैसा कि अहाते के लोग कहते थे। वे एक दूसरे से प्यार करते थे, लेकिन वे जीवन से ऊबे थे, उनकी अन्य कोई दिलचस्पियां न थीं, कोई नये अनुभव उन्हें प्राप्त नहीं होते थे जो उन्हें एक दूसरे से उबारते और सोचने तथा अनुभव करने की—एक शब्द में सजीव जीवन बिताने की—साधारण मानवीय आकांक्षा

को तुष्ट करते। उन्हें दरकार थी जीवन में किसी एक उद्देश्य की –चाहे वह कौड़ी-कौड़ी करके धन जमा करने का ही उद्देश्य क्यों न हो।

लेकिन उनके पास यह नहीं था।

हमेशा एक साथ गुंथे, वे एक दूसरे के – एक दूसरे के प्रत्येक शब्द ग्रौर प्रत्येक हरकत के–ग्रभ्यस्त हो गए। दिन के बाद दिन ग्राते ग्रौर चले जाते, बिना किसी ताज़गी ग्रौर बहलाव के। कभी-कभी छुट्टियों के दिनों में वे ग्रपने मित्रों के यहां जाते जिनकी ग्रात्माएं उन्हीं की भांति खोखली होतीं, ग्रौर कभी-कभी मित्रों का उनके यहां ग्राना होता, –गाना-बजाना ग्रौर पीना-पिलाना चलता ग्रौर उतने ही सहज भाव से मारपीट तक की नौबत भी ग्रा जाती। इसके बाद फिर वही, एक ग्रदृश्य ज़ंजीर की कड़ियों की भांति, घटनाविहीन दिनों का सिलसिला चलता–प्रत्येक दिन काम के बोझ, ऊब ग्रौर एक दूसरे के प्रति बेतुकी चिड़चिड़ाहट में डूबा हुग्रा।

कभी-ग्रभी ग्रिगोरी कहता–

"यह भी कोई जीवन है कम्बख्त! मुझे इससे क्या लेना? काम ग्रौर ऊंघना। ऊंघना ग्रौर काम।" क्षण भर के लिए रुककर वह ग्रपनी ग्रांखें उठाता ग्रौर छत की ग्रोर ताकता। फ़िर ग्रपने होंठों पर मुसकराहट की एक छाया-सी लाते हुए कहना जारी रखता– "खुदा की मर्ज़ी से मेरी मां ने मुझे इस दुनिया में जन्म दिया–सो इसके खिलाफ़ मैं कुछ नहीं कह सकता। फिर मैंने ग्रपना धंधा सीखा,–लेकिन किसलिए? क्या दुनिया में मोचियों का टोटा था? ग्रच्छी बात है, मैं मोची बन गया। लेकिन मिला क्या? बस, इस खोह में पड़े सड़ते रहो। ग्रौर इसके बाद एक दिन मर जाग्रो। कहते हैं कि हैज़े का ज़ोर है। हुग्रा करे। कभी यहां ग्रिगोरी ग्रोरलोव नाम का एक मोची

रहता था जो हैज़े से मर गया। क्या इसमें कोई तुक है? किसे पर्वाह है कि मैं जीवित था और जूते बनाता था और मर गया या नहीं?"

मात्र्योना कोई टिप्पणी न करती। अपने पति के शब्दों में उसे कुछ ऐसा मालूम होता जो भयानक था। कभी-कभी वह उससे अनुरोध करती कि ऐसी बातें मुंह से न निकाला करे क्योंकि उनसे खुदा नाराज होता है जो जानता है—खूब अच्छी तरह जानता है—कि लोगों के जीवन का कैसे क्या किया जाए। या फिर, जब उसका मिज़ाज ठिकाने पर न होता, व्यंग की आवाज़ में वह ऐलान करती—

"अगर तुम पीना छोड़ दो तो जीवन में फिर सुख लौट आए और तुम्हारा दिमाग़ ऐसी बातों के चक्कर में न पड़े। रोने-झींकने की बजाय और लोग एक-एक पैसा बचाकर अपना निजी वर्कशाप तक खड़ा कर लेते हैं और कुलीनों की भांति मज़े से जीवन बिताते हैं।"

"गोबर ऐसा तेरा दिमाग़ है और गोबर ऐसी तेरी बातें। अकल की डोर खींचकर ज़रा अपने से ही पूछ कि मैं पीना कैसे छोड़ सकता हूं। वही तो मेरे जीवन का एकमात्र आनन्द है। अन्य लोग! तुझे क्या मालूम कि अन्य लोग क्या हैं? शादी से पहले क्या मैं ऐसा ही था? अगर सच पूछो तो तूने ही मेरा सारा रस सोख लिया है और मेरे जीवन में ज़रा-सा भी आनन्द बाक़ी नहीं रहने दिया है। बस, मेंढक की भांति टर्राना जानती है!"

मात्र्योना को ठेस लगी, लेकिन वह अपने पति के शब्दों की सचाई से इन्कार नहीं कर सकी—नशा करने पर वह सचमुच प्रसन्नता और प्यार से छलछलाने लगता था, और वे 'दूसरे लोग' सचमुच उसके अपने दिमाग़ की उपज थे, और ग्रिगोरी उनका विवाह होने से पहले सचमुच एक मगन जीव था—बहुत ही सहृदय और दिलचस्प।

"समझ में नहीं आता कि क्यों ऐसा हुआ? क्या मैं सचमुच में उसके लिए बोझ बन गई हूं?" उसने मन ही मन अपने से पूछा।

इस विचार से वह कसमसा उठी और दोनों पर उसने तरस का अनुभव किया। उसके पास पहुंच उसने दुलार से उसकी आंखों में देखा और उसकी छाती से लगकर कुड़मुड़ाने लगी।

"अब यह अपनी जीभ से मुझे चाटना शुरू कर देगी,—बछिया कहीं की!" ग्रिगोरी ने उदास भाव से कहा और उसे धकियाकर अलग करने के लिए कुछ उचका उचकाया, लेकिन वह और भी अधिक सटकर उससे चिपक गई, निश्चय के साथ यह जानते हुए कि वह उसे छिटकाकर अलग नहीं करेगा।

इसपर उसकी आंखों में लौ चेतन हो जाती, हाथ के काम को वह नीचे फेंक देता, अपनी बीवी को घुटनों पर बैठा लेता और उसे बारम्बार चूमता, गहरी उसांसें भरता और धीमी आवाज़ में—इस डर से कि कोई सुन न ले—गुनगुनाता—

"सच, मात्र्योना, बड़े कुत्सित ढंग से जीवन बिताते हैं हम—तुम और मैं। जंगली जानवरों की भांति हम एक दूसरे पर टूटते हैं। और क्यों? इसलिए कि मेरा भाग्य ही ऐसा है—हर आदमी एक खास ग्रह के असर में जन्म लेता है और वह ग्रह उसका भाग्य होता है।"

लेकिन इस व्याख्या से उसे सन्तोष न होता, वह अपनी बीवी को और भी निकट खींच लेता और सोच में डूब जाता।

बहुत देर तक वे इसी प्रकार अपनी अंधेरी खोली की गंदी हवा में बैठे रहते। वह उसांस भरती और मुंह से कुछ न कहती, लेकिन कभी-कभी—चरम सुख के इन क्षणों में—उन अपमानों और चोटों की उसे याद हो आती जो कि उसने बिला वजह उसके हाथों सहे थे। और तब वह

धीरे-धीरे रिसती और गिला करती। उसकी मृदु शिकायतों से उसका हृदय छू जाता, वह और अधिक उमड़कर उसे दुलराता जिससे उसकी आंखें और भी अधिक छलछला उठतीं। अन्त में वह इससे खीज उठता।

"बन्द करो यह फेचकुर निकालना। कौन कह सकता है कि जब मैं तुम्हें पीटता हूं तो उससे मुझे तुम्हारी निस्बत हज़ार गुना ज़्यादा दुख नहीं होता, – सुना तुमने? सो बन्द करो अपना यह तोबड़ा। स्त्रियां होती ही ऐसी हैं, – ज़रा ढंग से बोलो नहीं कि सिर पर चढ़ बैठती हैं। बस, बहुत रिरिया चुकीं। उस आदमी से तुम क्या कहोगी जो जीवन से पहले ही बुरी तरह तंग है?"

कभी-कभी उसके निःशब्द आंसुओं और हृदय से उमंगी शिकायतों की बाढ़ के आगे वह मुलायम पड़ जाता। ऐसा होने पर, कांखता-कराहता, बड़ी मुश्किल से चीज़ों को समझाने का वह निरीह प्रयास करता –

"तुम्हीं बताओ, मेरे जैसे आदमी का क्या अचार डाला जाए? मैं हमेशा तुम्हें चोट पहुंचाता रहता हूं, यह मैं जानता हूं। लेकिन यह भी मैं जानता हूं कि सिवा तुम्हारे मेरा अन्य कोई नहीं है। यह सच है कि कभी-कभी मैं यह भूल जाता हूं और कभी-कभी तो तुम्हें फूटी आंखों देखना भी मुझे बरदाश्त नहीं होता, मात्र्योना, – ज़रा सोचो तो! जैसे तुमसे मुझे अपच हो जाता है। और तब एक पागलपन-सा मेरे हृदय में सरसराने लगता है, जी करता है कि तुम्हारी बोटी-बोटी नोच डालूं और साथ ही अपने को भी चीर फाड़कर फेंक दूं। और जितना ही अधिक सही तुम होती हो, उतना ही अधिक प्रहार मैं तुमपर करता हूं।"

उसकी बात चाहे उसकी समझ में आती या न आती, लेकिन कोमल और पछतावा-भरा उसका स्वर मरहम का काम करता।

"खुदा ने चाहा तो सब ठीक हो जाएगा, – हम दोनों एक दूसरे के अभ्यस्त हो जाएंगे," वह कहती और उसे इस बात का भान तक न होता

कि वे एक मुद्दत पहले से ही एक दूसरे के अभ्यस्त हैं और एक दूसरे को पूरी तरह उबा चुके हैं।

"अगर घर में कोई बच्चा ही होता तो यह सब न होता," उसांस भरते हुए वह कहती—"उससे जी भी लगता और उसकी देख-भाल में ध्यान भी बंटा रहता।"

"तो फिर तुम कोई बच्चा जनती क्यों नहीं?"

"मैं नहीं जन सकती,—जिस तरह कि तुम मुझे पीटते हो। तुम हमेशा पेट और पसलियों पर ही टूट पड़ते हो। अगर तुम केवल अपने पांवों को बस में रखते..."

"हम्म!" सकपकाकर ग्रिगोरी भुनभुनाया—"जैसे आदमी ऐसे क्षणों में यह सोच सकता हो कि उसे कहां प्रहार करना चाहिए और कहां नहीं। मैं राक्षस नहीं हूं। मैं क्या मजे के लिए ऐसा करता हूं? यह तो मेरा दुख है जो मुझे इस तरह पागल बना देता है।"

"कहां से आता है तुम्हारा यह दुख?" मात्र्योना ने उदास होकर पूछा।

"यह मेरा भाग्य है, मात्र्योना," ग्रिगोरी दार्शनिक की भांति कहता—"मेरा भाग्य और मेरी प्रकृति। मेरी ओर देखो,—क्या मैं किसीसे बुरा हूं? मिसाल के तौर पर जैसे उस उक्रइनी से? लेकिन फिर भी दुख उसे नहीं दबोचता। और वह एकदम अकेला है—न बीवी और न अन्य कोई। मैं मर जाता अगर तुम न होतीं। लेकिन उसे इस सबकी चिन्ता तक नहीं। बस, वहां बैठा हुआ अपना पाइप पीता और मुसकराता रहता है, इस बात से सन्तुष्ट कि उसके पास धुंवां उड़ाने के लिए पाइप है,—शैतान कहीं का! लेकिन मैं वैसा नहीं हूं। मैं हृदय में यह बेचैनी लिए जन्मा हूं। यह मेरी प्रकृति है। मैं इस्पात के स्प्रिंग की भांति हूं। ज़रा छुआ नहीं कि वह थरथराने लगता है। मिसाल के लिए यह देखो—मैं टहलने के लिए बाहर जाता हूं और कभी इस चीज़ पर मेरी नज़र पड़ती है, कभी उसपर और कभी किसी

अन्य चीज़ पर, लेकिन यहां मेरे पास एक भी ऐसी चीज़ नहीं जिसे मैं अपनी कह सकूं। और इससे मेरा दिमाग़ पगला जाता है। वह उक्रइनी – वह कुछ पर्वाह नहीं करता, किसी चीज़ के बिना भी वह गुज़ारा कर सकता है। वह भी मुझे पगला देता है – शैतान उखाड़ ले जाए उसके गलमुच्छों को – इसलिए कि वह बिना किसी चीज़ के चला सकता है जब कि मैं... ऐसी कोई चीज़ नहीं, जो मैं न चाहता हूं! लेकिन मैं हूं कि इस खोह में बैठा बस खुटखुट किया करता हूं और इसी तरह खुटखुट करते अपनी कहने लायक़ किसी चीज़ के बिना मैं ख़त्म हो जाऊंगा। या तुम अपने को ही लो। तुम मेरी पत्नी हो, लेकिन इससे क्या? अन्य सबकी भांति तुम भी एक स्त्री हो, – स्त्रियों के सभी तामझाम और तीर-तरकश से लैस। लेकिन तुम्हारे बारे में सभी कुछ मैं जानता हूं जो कि जाना जा सकता है – यह तक कि कल तुम किस तरह छींकोगी, क्योंकि मैं तुम्हें और भी कुछ नहीं, तो एक हज़ार बार छींकते सुन चुका हूं। सो हृदय में कोई तरंग उठे भी तो किस चीज़ को लेकर। एक भी ऐसी चीज़ नहीं कम्बख़्त। सो मैं दारुघर की राह नापता हूं क्योंकि वहां कम से कम कुछ प्रसन्नता तो नज़र आती है।"

"तो फिर तुमने विवाह क्यों किया?" मात्र्योना ने पूछा।

ग्रिगोरी एक हल्की हंसी हंसा।

"यह केवल शैतान ही बता सकता है," उसने कहा – "सच तो यही है कि मुझे कभी इस जंजाल में नहीं फंसना चाहिए था। मैं आवारा रहता तो अच्छा होता। हो सकता है कि तब मुझे भूखे रहना पड़ता, लेकिन कम से कम आज़ादी से जहां जी चाहता घूम-फिर सकता। दुनिया के सारे ओर-छोर नाप डालता।"

"तो अब चले जाओ और साथ ही मुझे भी घूमने के लिए आज़ाद कर दो," मात्र्योना ने कहा। उसकी आंखों में आंसू छलछलाना ही चाहते थे।

"तुम? तुम कहां जाना चाहती हो?" ग्रिगोरी ने भौंहें चढ़ाकर पूछा।

"कहीं भी जाऊं, – तुमसे मतलब?"

"बताती क्यों नहीं, कहां जाग्रोगी?" ग्रौर उसकी ग्रांखें ग्रातंकप्रद ढंग से कौंध गईं।

"चिल्लाग्रो नहीं। तुम मुझे डरा नहीं सकते।"

"सो तुम ग्रपनी ग्रांखें किसी ग्रौर पर जमा चुकी हो, – क्यों? बोलो, कौन है वह?"

"मुझे जाने दो!"

"कहां?" ग्रिगोरी गरजा।

ग्रिगोरी ने उसके बाल पकड़कर खींचे। उसके सिर का रूमाल झटके से ग्रलग जा गिरा। उसकी इस हिंसा से वह ग्राग बगूला हो गई ग्रौर इस ग़ुस्से से उसे भारी सन्तोष मिला। वह ग्रपने हृदय की ग्रन्तर्तम गहराइयों तक ग्रान्दोलित हो उठी जिसके फलस्वरूप, बजाय इसके कि कोई ऐसा शब्द उसके मुंह से निकलता जो उसकी ग्राशंकाग्रों को दूर करता, उसने लपटों को ग्रौर भी भड़का दिया ग्रौर भेद-भरी मुसकराहट के साथ सीधे उसकी ग्रांखों में देखा। वह बेक़ाबू हो गया ग्रौर उसे पीटने लगा – बेरहमी से पीटने लगा।

ग्रौर रात को, उस समय जब कि वह उसकी बग़ल में बिस्तरे पर पड़ी कराह रही थी, – बुरी तरह नोची-खरोंची ग्रौर टूटी हुई, – उसने ग्रांख के कोने में से उसकी ग्रोर झांककर देखा ग्रौर गहरी उसांस भरी। वह बेहद दुखी था। उसकी ग्रात्मा उसे कचोट रही थी। कारण, वह जानता था कि उसकी ईर्ष्या ग्रकारण थी ग्रौर उसने ग्रकारण ही उसे पीटा था।

"बस, बस, बहुत हो चुका," उसने व्यथित स्वर में कहा – "मैं समझता हूं कि दोष मेरा ही था। लेकिन तुम भी तो कुछ कम नहीं हो। मुझे कुरेदते जाने के बजाय तुमने कुछ कहा क्यों नहीं? तुमने ऐसा क्यों किया?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह जानती थी कि उसने ऐसा क्यों किया। वह जानती थी कि अब, नोची-खरोंची और लहूलुहान हुई हालत में जब कि वह पड़ी है, उसे उसका प्यार और दुलार मिलेगा—कोमल और उमंगों से भरा दुलार—फिर से मेल करने के लिए। और इस चीज़ के लिए दिन प्रति दिन—जीवन पर्यन्त—अपने हाड़ तोड़वाने की वेदना सहने को वह तैयार थी। और उसकी आंखें छलछला उठीं इस आनन्द की पूर्व कल्पना कर, हालांकि उसके पति ने अभी उसके तन का स्पर्श तक नहीं किया था।

"बस करो, मात्र्योना, मेरी नन्ही डौकी, रोओ नहीं, मुझे माफ़ करो, मेरी रानी," कहते हुए वह उसके बाल सहलाता, उसे चूमता और समूचे शरीर में उमड़ती कड़वाहट को दाबने के लिए कसकर अपने दांत भींचता।

खिड़कियां खुली थीं, लेकिन आकाश के दृश्य को ईंटों की एक दीवार ने काटकर ओझल कर दिया था। सदा की भांति उनके कमरे में अंधेरा था, ऊमस थी और दम घुटता था।

"उफ़, क्या जीवन है! कुत्ते का जीवन!" अपनी समूची वेदना को, जो कि वह अनुभव कर रहा था, व्यक्त करने में असमर्थ ग्रिगोरी फुसफुसा उठा—"यह सब इस खोली की करतूत है, मात्र्योना, जिसमें कि हम रहते हैं। ऐसा मालूम होता है जैसे समय से पहले ही हमें धरती में दफ़ना दिया गया हो।"

"तो चलो, कहीं और चलो—किसी नयी जगह," उसके शब्दों को सच मानते हुए आंसुओं के बीच उसने कहा।

"नहीं, सो नहीं। अगर हम किसी अटारी पर पहुंच जाएं तब भी हमारा जीवन गड्ढे में ही रहेगा। कारण, गड्ढा यह खोली नहीं, बल्कि जीवन खुद अपने आपमें एक गड्ढा बन गया है।"

माव्योना ने एक क्षण कुछ सोचा।

"ख़ुदा ने चाहा तो हमारे अच्छे दिन भी आएंगे," उसने दोहराया।

"'अच्छे दिन आएंगे'—तुम हमेशा यह राग अलापती रहती हो। लेकिन अच्छे होने के बजाए वे बदतर होते जा रहे हैं। अधिकाधिक बार अब हममें लड़ाई होती है।"

और यह सच था। उनके झगड़ों के बीच की अवधि अधिकाधिक कम होती जा रही थी,— यहां तक कि अब हर शनिवार को जब ग्रिगोरी उठता था तो उसका हृदय उसके प्रति कड़ुवाहट से कसमसाता रहता था।

"आज मैं गंजू के दारुघर में जाकर खूब गहरी डुबकी लगाऊंगा," वह ऐलान करता।

मात्र्योना अपनी आंखें सिकोड़ लेती और मुंह से कुछ न कहती।

"एकदम चुप? यह ठीक है। अगर तुम्हें अपने भले-बुरे का ख़याल है तो अपना मुंह बन्द ही रखोगी।"

दिन के दौरान में अपने इस इरादे की अनेक बार वह उसे याद दिलाता, जैसे-जैसे सांझ निकट आती उसका विषैलापन भी उतना ही बढ़ता जाता। वह भांपता कि उसकी बात से उसे ठेस लगती है, और वह आग बगूला हो उठता उसकी उस हठीली चुप से, जिससे कि वह उसके ऐलानों की अभ्यर्थना कर रही थी, और उसकी आंखों की उस निर्मम चमक से, जो कहती प्रतीत होती थी कि वह उसका प्रतिरोध करने के लिए तैयार है।

और सांझ को, एकदम सचमुच, उनके दुर्भाग्य का एलची सेन्का चीजिक घोषणा करता कि युद्ध छिड़ गया है।

अपनी पत्नी को पीटने के बाद ग्रिगोरी ग़ायब हो जाता, बहुधा रात भर के लिए और कभी-कभी रात के अलावा समूचे रविवार के लिए भी। जब वह लौटकर आता तो मात्र्योना, समूचे बदन पर नोच-खरोंच के निशान लिए, उसका स्वागत करती — चुपचाप और बिना किसी उछाह के, लेकिन

हृदय में तरस की एक गुप्त भावना छिपाए,—अपने इस आदमी के लिए, जो उसके पास वापिस लौटता था, फटेहाल और गंदा, आंखें अंगारे-सी जलतीं, मारा-पीटा हुआ—शायद उतनी ही बुरी तरह, जैसे कि वह खुद पिटी थी।

यह जानते हुए कि नशे का उतार होगा और उतरने से पहले वह उसके अंजर-पंजर ढीले कर देगा, सो उसे सहज बनाने के लिए वह एक पौवा तैयार रखती। यह वह भी जानता था।

"देना कुछ," वह कहता और दो या तीन गिलास गले में उंडेलने के बाद अपना काम करने बैठ जाता।

दिन भर उसकी आत्मा उसे कचोटती, उसका हृदय वेदना से व्यथित हो उठता और यह वेदना बहुधा इतनी असह्य होती कि वह अपना काम उठाकर अलग फेंक देता और एक से एक भयानक क़समें खाता, कोसता और गालियां देता, कमरे में पागलों की भांति मंडराता या बिस्तरे पर औंधे मुंह गिर जाता। मात्र्योना उसे अपने आपको संभालने का समय देती और इसके बाद दोनों में फिर मेल हो जाता।

विवाह के शुरू के दिनों में मान-मनौवल के ये क्षण काफ़ी मधुर और चरपरे होते थे, लेकिन धीरे-धीरे वे अधिक रूखे और नीरस होते गए और अन्त में तो वे केवल इसलिए सुलह कर लेते थे कि अगले शनिवार के बीच में पड़नेवाले पांच दिनों तक एक दूसरे से बोले बिना रहा नहीं जा सकता था।

"सो तुम आख़िरी सांस तक पीते ही रहोगे," मात्र्योना उसांस भरती।

"बिल्कुल," ग्रिगोरी पुष्टि करता और इस अन्दाज़ से कोने में थूक की पिचकारी छोड़ता मानो उसे इस बात की रत्ती भर भी चिन्ता नहीं है कि वह पीते-पीते दम तोड़ता है या क्या करता है। "और तुम

मुझे छोड़ दोगी," भविष्य के चित्र को पूर्ण करने के लिए वह इतना और जोड़ देता और यह कहते हुए कुरेदनेवाली नज़र से उसे देखता।

वह अपनी आंखें गिरा लेती। यह एक नयी चीज़ थी जो वह पहले कभी नहीं करती थी। ग्रिगोरी यह देखता, अपनी भौंहें सिकोड़ता और दांतों को कसकर पीसता। अपने पति की अजानकारी में वह तक़दीर का हाल बतानेवालों और ओझाओं के पास जाती और मंत्र-पढ़ी जड़ी-बूटियों तथा कोयले के टुकड़ों के साथ घर लौटती। इस सबके कारगर सिद्ध न होने पर उसने महान् सन्त बोनिफ़ेस की पूजा कराई जो कि पियक्कड़ों को सीधा करनेवाला सन्त था। जब तक पूजा चली, घुटनों के बल बैठ वह छार-छार आंसू बहाती और अपने होंठों को निश्शब्द फरफराती रही।

अपने पति के प्रति एक प्रकार की जंगली घृणा अब अधिकाधिक बार उसे दबोचती, एक से एक विकृत विचार उसके दिमाग़ में सरसराते और उसका हृदय क्रमशः अधिकाधिक कठोर होता जाता, — इस आदमी के प्रति, जिसकी प्रसन्न खिलखिलाहट और कोमल शब्दों ने तीन साल पहले उसका जीवन जगमगा दिया था।

इस प्रकार ये दोनों जन, जिनमें हृदय का एक भी बुरा नहीं था, एक-एक करके दिन बिता रहे थे और प्रतीक्षा कर रहे थे कि कोई घटना घटेगी जो उनके जीवन के इस वीभत्स ढब की यंत्रणा का अन्त कर देगी।

* * *

एक दिन — सोमवार की सुबह — उस समय, जब कि ओरलोव दम्पति नाश्ता कर रहे थे, अंधेरे में डूबी उनकी खोली के दरवाज़े पर एक पुलिसमैन का रोबीला आकार नमूदार हो गया। ओरलोव चौंककर उछला, पिछले कुछ दिनों की घटनाओं की याद ताज़ा करने के लिए ख़ुमारी में डूबे साहस के

साथ अपने दिमाग़ से जूझा और अत्यन्त भयानक आशंकाओं से घिरा, नज़र गड़ाकर, धुंधली आंखों से आगन्तुक की ओर देखन लगा।

"इधर आओ, – इस तरफ़," पुलिसमैन ने बाहर किसीको आवाज़ दी।

"यह तो अंधी गुफा है कम्बख़्त, – शैतान उठा ले जाए सौदागर पेतुन्निकोव को!" प्रसन्नता से छलछलाती एक युवा आवाज़ सुनाई दी और अगले ही क्षण यूनीवर्सिटी की सफ़ेद पोशाक पहने एक छात्र ने खोली में प्रवेश किया। वह अपनी टोपी को हाथ में थामे था, उसके बाल बारीक छंटे हुए थे, उसका ऊंचा तपे ताम्बे-सा माथा और सुनहरी आंखें थीं जो चश्मे के भीतर से मगन भाव से चमक रही थीं।

"शुभ सुबह," उसने गहरी आवाज़ में कहा – "पहले अपना परिचय दे दूं, – मैं सफ़ाई का इन्स्पैक्टर हूं। मैं यह मुआयना करने आया हूं कि आप लोग कैसे रहते हैं – उस हवा को सूंघने, जिसमें आप लोग सांस लेते हैं, – सचमुच, बुरी तरह गंधाती है वह!"

ओरलोव मुसकराया और सन्तोष की सांस ली। इस छात्र ने तुरत उसके हृदय में घर कर लिया – लाल गेहुंवा गालों और ठोड़ी से युक्त उसका चेहरा कुछ इतना गुलाबी, स्वस्थ और सहृदय था कि अनायास ही अपनी ओर खींचता था। और वह कुछ इतने असाधारण और मिलनसार ढंग से मुसकरा रहा था कि उसकी वजह से निचले तल्ले की ओरलोव की इस खोली में एक उजाला-सा भर गया था और एक आनन्द-सा छलछला उठा था। "हां, तो भले लोगों," वह बिना रुके कहता गया – "कूड़ा-कचरा बाहर फेंकने पर अब और अधिक ध्यान देना, क्योंकि यह कूड़ा-कचरा ही है जिससे मुंह का ज़ायक़ा तक बिगाड़ देनेवाली वह सड़ांध निकलती है। और मालकिन, तुम्हें भी मेरी यही सलाह है कि मांजन-धोवन की अपनी बालटी को और ज़्यादा साफ़ रखा करो। और भले आदमी, तुम अपना चेहरा इतना लम्बा

क्यों बनाए हो?" कहते हुए उसने ओरलोव का हाथ अपने हाथ में लिया और उसकी नब्ज़ देखने लगा।

छात्र के फुर्तीले हाव-भाव और व्यवहार ने ओरलोव दम्पति को सन्न कर दिया। मात्र्योना सकपकाई-सी मुसकरा रही थी और बिना मुंह से कुछ कहे उसे देख रही थी। ग्रिगोरी की मुसकान में अविश्वास था।

"और तुम्हारे पेटों का क्या हाल है?" छात्र ने कहा—"लजाओ नहीं, पेट हम सभी के पास हैं... और अगर वे तुम्हें कुछ परेशान कर रहे हैं तो हम अनेक प्रकार की दवाइयां देंगे जिनसे सब ठीक हो जाएगा।"

"हम बिल्कुल ठीक हैं। शिकायत की कोई बात नहीं," ग्रिगोरी ने एक हल्की हंसी हंसते हुए कहा—"और यह, जो तुम मुझे कुछ ढीला-ढाला देख रहे हो, सो वह—सच पूछो तो वह इसलिए कि ... अभी थोड़ा ख़ुमार बाक़ी है।"

"ओह, ठीक कहते हो। मेरी नाक भी मुझे ऐसा ही बता रही थी, रात तुमने थोड़ा रंग-पानी किया है,—सच, बहुत ही थोड़ा, होंठों से छुआना भर जिसे कहते हैं।"

उसने यह बात कुछ ऐसे मज़ाक़िया ढंग से कही और कुछ ऐसा ऊटपटांग-सा मुंह बनाया कि ग्रिगोरी की हंसी रोके न रुकी,—बांध तोड़कर वह चली। मात्र्योना भी हंस रही थी, अपने दामन को मुंह में ठूंसे। सबसे ज़ोरदार और सबसे गहरी हंसी थी छात्र की, लेकिन वह चुप भी सबसे पहले हो गया। और जब हंसी की सलवटें उसके गदराए हुए होंठों और आंखों के इर्द-गिर्द से साफ़ हो गईं तो उसका खरा चेहरा पहले से भी अधिक खरा मालूम होने लगा।

"मेहनतकश रंग-पानी का जुगाड़ करे, यह ठीक है,—बशर्तेकि वह 'बस' करना जानता हो। लेकिन आजकल के ज़माने को देखते हुए अच्छा यही है कि उससे अलग ही रहा जाए। क्या तुम उस बीमारी के बारे में कुछ जानते हो जो आस-पास के लोगों को रौंद रही है?"

और उसने उन्हें बताया, बड़ी गम्भीरता से और सीधे-साधे शब्दों में, कि हैज़ा क्या है और उससे कैसे लड़ा जा सकता है। वह बताता जाता था और कमरे में टहल-टहलकर दीवारों का स्पर्श कर उनकी टोह लेता जाता था – कभी उस कोने में झांककर देखता, जहां धोवन की बालटी और कूड़े का कनस्तर रखा था, कभी तन्दूर के दरवाज़े पर झुककर सूंघता कि उससे जो गंध निकल रही है वह किस चीज़ की हो सकती है। उत्साह के प्रवाह में उसकी मन्द आवाज़ रह-रहकर तेज़ हो जाती थी। सीधे-सादे शब्द, जिन्हें वह इस्तेमाल कर रहा था, श्रोताओं की स्मृति में एक के बाद एक सिलसिलेवार मज़बूती से टंकते जाते थे, – अपने आप, उनकी ओर से बिना किसी प्रयास के। उसकी आंखें चमक रही थीं और उसका रोम-रोम उस उद्देश्य के प्रति उत्साह से भरा था जिसकी कि वह सेवा कर रहा था।

ग्रिगोरी उसे देख रहा था और उसके चेहरे पर एक उत्सुकतापूर्ण मुसकराहट खेल रही थी। मात्र्योना अपनी जीभ चटखा रही थी और पुलिसमैन ग़ायब हो गया था।

"सो आज से ही सफ़ाई शुरू कर दो। मोहल्ले में उस ओर एक घर बन रहा है। वहां से मजूर मिल जाएंगे। उन्हें पांच कोपेक देना और चाहे जितना चूना लेना। और यह पीना बंद करो, मेरे भाई। और अब... अब मैं विदा होता हूं। जल्दी ही फिर कभी यहां आ टपकूंगा!"

जिस आकस्मिकता के साथ वह आया था, वैसे ही वह ओझल भी हो गया। उसकी हंसती हुई आंखों की याद ओरलोव दम्पति के चेहरों पर प्रसन्न मुसकानों के रूप में अंकित थी। उनके अंधकारमय जीवन में सोद्देश्य शक्ति के इस विक्षेप ने उन्हें अस्तव्यस्त कर दिया था।

"हम्म-म!" अपना सिर हिलाते और स्वर को लम्बा खींचते हुए ग्रिगोरी ने कहा – "तो वह डाक्टरी करने आया था। और वे कहते हैं कि डाक्टर लोगों को मार डालते हैं। भला उस जैसी शक्ल का लड़का क्या

कभी ऐसा कर सकता है? नहीं, जान देकर भी नहीं। वह यहां आया—एकदम खुला हुआ और छल-कपट से अछूता, जैसे कह रहा हो—'यह लो, जैसा मैं हूं, ठीक वैसा ही तुम्हारे सामने खड़ा हूं!' चूना,—क्या तुमने कभी सुना है कि वह नुक़सानदेह होता है? और साइट्रिक एसिड,—यह क्या चीज़ है? केवल ख़ाली तेज़ाब, मेरी समझ में। लेकिन सबसे बड़ी बात तो सफ़ाई है—साफ़ फ़र्श, साफ़ हवा, साफ़ भोजन, साफ़ मांजन-धोवन का बरतन। तिसपर तुर्रा यह कि वे ज़हर देते हैं। वाह, कितना मज़ेदार जीव था वह। कहता था—'मेहनतकश रंग-पानी का जुगाड़ करे, यह ठीक है,—बशर्ते कि वह 'बस' करना जानता हो।' मात्र्योना, सुना तुमने? सो अब बोलो, एक गिलास उंडेलकर मुझे और दे दो तो कैसा रहे? क्यों, अभी तो है न?"

वह जाने किस कोने में से एक बोतल निकाल लाई और आधा गिलास उंडेलकर ख़ुशी-ख़ुशी उसे दे दिया।

"सचमुच, बहुत अच्छा था वह। उसे पसन्द किए बिना कोई रह नहीं सकता," छात्र के चेहरे की याद कर मुसकराते हुए मात्र्योना ने कहा—"लेकिन और—औरों की कौन जाने? हो सकता है कि उन्हें पैसा देकर..."

"'पैसा देकर,'—किसलिए? और उन्हें पैसा देता कौन है?" ग्रिगोरी बीच में ही बोल उठा।

"लोगों को मारने के लिए। कहते हैं कि ग़रीब कंगले ढेर सारे बढ़ गए हैं और हुकम निकला है कि जो फ़ालतू हों उन्हें ठिकाने लगा दिया जाए," मात्र्योना ने कहा।

"यह सब कौन कहता है?"

"हर कोई। रंगसाज़ों की बावर्चिन और अन्य ढेर सारे लोग।"

"और वे चौंघड़ हैं जो ऐसा कहते हैं। भला, ऐसे काम से किसको लाभ हो सकता है? तुम ख़ुद ही सोचो – रोगियों की देख-भाल – वह फोकट में नहीं होती, – नहीं होती, न? और फिर उन्हें दफ़नाना – इसके लिए एक ताबूत, एक क़ब्र और बाक़ी सारा तामझाम चाहिए। निरी बकवास! अगर वे सचमुच लोगों से पीछा छुड़ाना चाहते तो उन्हें साइबेरिया भेज देते, – वहां जगह ही जगह है, चाहे जितने आदमी भेज दो। या किसी रेगिस्तानी द्वीप में भेज देते। और उनसे काम कराते। इसे कहते हैं पीछा छुड़ाना! फिर यह लाभप्रद ही ख़ूब है। लेकिन यह... सरकारी ख़ज़ाने के पेट में इससे एक दमड़ी नहीं पड़ेगी, सो वह अपने ख़र्च पर लोगों को मारने और दफ़नाने जैसी हरकत नहीं करेगी। वह छात्र, अब... माना कि वह उत्पाती है, उसे देखकर यह हर कोई जान सकता है, लेकिन उसके उत्पातों का लक्ष्य है विद्रोह। जहां तक लोगों को मारने का सम्बन्ध है, – यह तुम उससे कभी नहीं करा सकती, न लल्लो-चप्पो से, न धन से। उसकी ओर देखने-मात्र से क्या यह पता नहीं चल जाता कि वह ऐसा काम नहीं कर सकता? उसकी शक्ल वैसी नहीं है, – उन लोगों जैसी, जो ऐसा काम कर सकते हैं।"

सारे दिन वे उस छात्र और उसने जो कुछ बताया था उसके बारे में ही बातें करते रहे। उन्होंने उसके चेहरे और जिस ढंग से वह हंसता था उसकी याद की, फिर उन्हें ध्यान आया कि उसके कोट का एक बटन ग़ायब था, और इस बात को लेकर कि किस बाज़ू का वह बटन था, उनमें झगड़ा तक होने की नौबत आ गई। मात्र्योना ज़ोर देकर कहती थी कि दाहिनी ओर का बटन ग़ायब था, उसका पति कहता कि बाईं ओर का, और इस सिलसिले में दो बार वह उसपर बुरी तरह बमका, लेकिन यह याद कर कि जब वह गिलास में उसके लिए वोडका उंडेल रही थी तो बोतल ख़ाली नहीं हुई थी, उसने हथियार डाल दिए। उन्होंने तय किया कि

अगले दिन से ही कमरे की सफ़ाई में जुटेंगे, और इसके बाद – ताज़ी हवा के झोंके के समान उस अनुभव से आह्लादित – छात्र के बारे में वे फिर बातें करने लगे।

"ओहो, बन्दूकची का बच्चा!" ग्रिगोरी ने मुग्ध भाव से कहा – "आते ही ऐसा बरताव करने लगा जैसे दस साल से परिचित हो। यहां ताका, वहां झांका, हमें लेक्चर पिलाया और – गोली की भांति ग़ायब हो गया। न चिल्लाया, न कुछ हल्ला-गुल्ला किया, हालांकि वह भी तुम्हारे उन्हीं ऊंचे लोगों में से एक था। जहन्नुम में फेंको सब, मात्र्योना, क्या तुम इतना भी नहीं देख सकतीं कि वह वास्तव में हमारा भला चाहता है? एकदम शुरू से ही उसने इसका परिचय देना शुरू कर दिया। वे हमारे शरीर और आत्मा दोनों को एक साथ जीवित रखना चाहते हैं। और कुछ नहीं... नहीं... वह सब बकवास है, लोगों को ज़हर देने के बारे में। गपोड़शंखी कहानियां, घिसी-पिटी। 'तुम्हारे पेट कैसे हैं?' उसने पूछा। अगर उन्हें ज़हर देना होता तो वे यह चिन्ता क्यों करते कि हमारे पेट कैसे हैं? उन्हें क्या पागल कुत्ते ने काटा है? और कितने चकाचक ढंग से उसने हमें समझाया उन चीज़ों के बारे में... क्या कहते हैं भला उन्हें – वही जीव – थिंगुमाजिक्स – जो तुम्हारे पेट के भीतर मंडराया करते हैं?"

"मनगढ़ंत बात या ऐसे ही कुछ," मात्र्योना ने हंसते हुए कहा – "लेकिन वह सब तो केवल डराने के लिए उसने कहा था, जिससे हम सफ़ाई के काम में ढील न डालें।"

"कौन जाने? हो सकता है कि वह सब सच हो। आख़िर कीड़े सीलन से ही तो पैदा होते हैं। अजीब मुसीबत है, – क्या कहा था उसने उन खटमलों को?.. मनगढ़न्त बात? नहीं, यह नहीं, – वह शब्द मेरी जीभ की नोक पर रखा है लेकिन कम्बख़्त बाहर नहीं निकलता!"

बिस्तरे पर पहुंच जाने के बाद भी वे वैसे ही बातें करते रहे जैसे

छोटे बच्चे सरल उछाह में भरे अपने पहले उल्लेखनीय अनुभवों का आदान-प्रदान करते हैं। और उनकी ये बातें उस समय भी चल रही थीं जब नींद अपने दामन में दबोचकर उन्हें अपने साथ उड़ा ले गई।

अगली सुबह रंगसाजों की मोटी बावर्चिन ने जब उन्हें जगाया, तब वे उठे। वह उनके बिस्तरे के पास आकर खड़ी हो गई और उसका चेहरा, जो साधारणतया गोल और लाल दमकता था, लम्बा और मटमैला-सा हो रहा था।

"अब क्या सोते ही रहोगे? दिन निकल आया," अपने होंठों को विचित्र ढंग से भड़भड़ाते हुए उसने उतावली में कहा—"हैज़ा हमारे घर भी आ गया। जाने भगवान् की क्या मर्ज़ी है।" और वह फूट-फूटकर रोने लगी।

"यह क्या पागलपन है?" ग्रिगोरी चिल्लाया।

"और मुझे देखो," मात्र्योना ने कहा—"रात में धोवन की बाल्टी साफ़ करना भूल गई!"

"और जहां तक मेरी अपनी बात है," बावर्चिन ने कहा—"मैं अपना यह धंधा छोड़ रही हूं। मैं यहां से चली जाऊंगी,—दूर, अपने गांव।"

"किसे हो गया?" बिस्तर पर से उछलते हुए ग्रिगोरी ने पूछा।

"अकार्डियन-वादक को। रात में ही उसे धर दबोचा। सीधे पेट में घुस गया—मरोड़ें, ऐंठन,— जैसे संखिया खा लिया हो।"

"अकार्डियन-वादक?" ग्रिगोरी बुदबुदा उठा। उसे विश्वास नहीं हुआ। इतना हंसमुख और कड़ियल आदमी। कल ही तो वह अहाते में से जा रहा था—उसी प्रकार, मोर की भांति, हठलाता हुआ। "मैं चलकर उसे देखता हूं," ओरलोव ने अविश्वास-भरी हंसी के साथ कहा।

दोनों स्त्रियां भय से चिल्ला उठीं—

"मत जाओ, ग्रिगोरी। यह रोग उड़कर चिपटता है।"

"ऐसी बात न सोचो। भगवान् की शक्ति अनन्त है।"

ग्रिगोरी ने कोसा, पांव में जूते डाले और बालों में कंघा किए बिना या कमीज़ के कालर का बटन बन्द किए बिना दरवाज़े की ओर बढ़ चला। उसकी पत्नी ने उसका कंधा पकड़ लिया और उसने उसके हाथ का कम्पन अनुभव किया। इससे, जाने क्यों, वह भड़क उठा।

"दूर हट, नहीं तो तेरा तोबड़ा तोड़ दूंगा," उसकी छाती में धक्का मारते हुए वह गरजा।

अहाता शांत और सूना था। अकार्डियन-वादक के घर की ओर पांव बढ़ाते समय उसके बदन में भय की कम्पकम्पी-सी चढ़ गई। इसीके साथ-साथ उसने एक सन्तोष का भी अनुभव किया – यह सोचकर उसे भारी सुख मिला कि बाड़े के तमाम लोगों में वही एक अकेला ऐसा है जो बीमार के पास जाने और उसे देखने का साहस कर रहा है। यह सन्तोष उस समय और भी गहरा हो गया जब उसने देखा कि दर्ज़ी लोग दूसरी मंजिल की अपनी खिड़कियों से उसकी ओर झांक रहे हैं। उसने अपने मूंह से सीटी की आवाज़ निकालनी शुरू की। और अपना सिर उद्धत भाव से झटकाया। लेकिन दरवाज़े पर पहुंचकर उसे एक हल्की निराशा का – सेन्का चीजिक वहां पहले से ही मौजूद था – सामना करना पड़ा।

सेन्का ने दरवाज़े को थोड़ा-सा – दरार के बराबर – खोला और उसमें से अपनी पैनी नाक अंदर बढ़ाई। सदा की भांति वह अपने निरीक्षण में इस हद तक डूबा था कि उसने केवल उसी समय मुड़कर देखा जब ग्रिगोरी ने उसके कान में चुटकी काटी।

"रोग ने उसे एकदम मरोड़ डाला है, चचा ग्रिगोरी!" उसने दाग़-धब्बे लगा अपना चेहरा, जो उसके नवीनतम अनुभवों के दबाव से और भी अधिक चुरमुरा गया था, ऊपर उठाते हुए फुसफुसाकर कहा – "वह बिल्कुल ऐसा नजर आता है जैसे सूखा कुकुरमुत्ता!"

कमरे में से सड़ांध का एक झोंका आया। बिना कोई जवाब दिए

ग्रिगोरी वहीं खड़ा सेन्का की बातें सुन रहा था और दरवाज़े की दरार में से रोगी की एक झांकी पाने की कोशिश कर रहा था।

"चचा ग्रिगोरी, क्या मैं उसे थोड़ा-सा पानी दे सकता हूं?" सेन्का ने पूछा।

ग्रिगोरी ने सेन्का के चेहरे में झांककर देखा। वह इतना विचलित था कि उसके समूचे चेहरे में बल पड़ रहे थे। ख़ुद ग्रिगोरी भी कुछ कम विचलित नहीं था।

"जाओ, कुछ पानी ले आओ," उसने आदेश दिया, इसके बाद बहादुरी के साथ दरवाज़े को झटाक से खोला और चौखट के भीतर खड़ा रह गया। उसका बदन अपने आप पीछे की ओर खिंच रहा था।

उसे किस्ल्याकोव की एक धुंधली-सी झांकी दिखाई दी। अकार्डियन-वादक, बढ़िया कपड़ों में सजा, अपनी छाती को मेज़ पर सटाए, दोनों हाथों से मेज़ को मज़बूती से दबोचे, औंधा पड़ा था और उसके पांव—जिनमें वह पेटेंट चमड़े के जूते पहने था—गीले फ़र्श पर निरुद्देश्य हिल रहे थे।

"कौन है?" उसने बैठी हुई और भावशून्य आवाज़ में पूछा।

ग्रिगोरी ने अपने कंधों को चौकस किया, फ़र्श पर संभालकर डग रखता हुआ उसके पास पहुंचा और अपनी आवाज़ में प्रसन्नता का—यहां तक कि हंसी का भी—भाव लाते हुए बोलने का प्रयास करने लगा।

"अरे मैं हूं, द्मित्री पाव्लोविच। यह क्या, भाई, रात इतनी पी गए कि छर्रे छूटने लगे,—क्यों?" उत्सुकता और भय से अभिभत, आंखें गड़ाए, वह किस्ल्याकोव को ताक रहा था और उसे पहचानने में कठिनाई अनुभव कर रहा था।

अकार्डियन-वादक का चेहरा लम्बा खिंचा था, उसके गालों की हड्डियां दो तेज़ कोणों में उभर आई थीं, उसकी आंखें कोटरों में धंसी थीं, उनके इर्द-गिर्द हरे धब्बे पड़े थे और वह एक

अजीब धुंधली पथराई-सी नज़र से ताक रहा था। उसके गालों का रंग गर्मियों के चिलचिलाते दिनों में लाश के रंग की याद दिलाता था। उसका चेहरा डरावना, मुर्दे ऐसा, हो गया था, केवल जबड़ों में एक हल्की-सी हरकत थी जो उसके जीवित होने का सबूत देती थी। उसकी धुंधली नज़र जैसे ग्रिगोरी पर ही थिर होकर रह गई थी और उसके रोम-रोम में भय का संचार कर रही थी। वह वहीं, रोगी से कोई तीन डग दूर, खड़ा अपनी पतलून की सीवन को नोच रहा था और उसे ऐसा मालूम होता था जैसे किसीने अपने ठंडे और चिपचिपे हाथों से उसका गला दबोच लिया हो और धीरे-धीरे उसे घोटता जा रहा हो। वह कमरे से बाहर जाने के लिए छटपटाने लगा – उस कमरे से, जो कभी इतना उजला और सुहाना था, लेकिन अब एक अजीब शीत तथा ह्रास की गंध से भरा था।

"हां तो..." उसने अपने पलायन की तैयारी करते हुए कहना शुरू किया।

अकार्डियन-वादक के राख ऐसे चेहरे पर एक छाया तैर गई। उसने अपने होंठ खोले, जिनकी कोर पर काले झाग-उफन आए थे, और निःशब्द आवाज़ में बोला –

"मैं... मैं मर रहा हूं।"

ये शब्द, अवर्णनीय भावशून्यता से जो कहे गए थे, बे-आवाज़ प्रहारों की भांति ग्रिगोरी के सिर और सीने से आकर टकराए। खिसियाकर उसने अपनी बत्तीसी चमकाई और दरवाज़े की ओर मुड़ चला, लेकिन तभी सेन्का हाथ में पानी का डोल लिए, हांफता और पसीने में तर, भीतर लपक आया।

"यह लो... स्पिरिदोनोव के कुवें से लाया हूं... हरामी पिल्ले, वे मुझे पानी तक नहीं लेने देना चाहते थे।"

उसने डोल फ़र्श पर रख दिया, झपटकर एक कोने की ओर गया,

वापिस लौटा और ग्रिगोरी के हाथ में एक गिलास थमा दिया। उसकी जुबान बराबर चल रही थी—

"'सो तुम लोगों में हैज़ा फैला है?' उसने कहा। 'तो इससे क्या?' मैंने कहा—'आज हमारी बारी है, कल तुम्हारी भी आ जाएगी,—सभी के यहां वह रौंद लगाएगा, जैसे कि उस बार हुआ था,' मैंने कहा और—तड़ाक—उसने मेरी थूथनी पर जड़ दिया।"

ग्रिगोरी ने डोल में से गिलास भरा और एक ही घूंट में उसे गले के नीचे उतार गया। उसके कानों में जीवन से शून्य वे शब्द गूंज रहे थे—

"मैं... मैं मर रहा हूं।"

लेकिन सेन्का फिरकी बना था,—पूरी तरह से चुस्त और चेतन, जितना कि वह पहले कभी नहीं था।

"पानी," मेज़ के सहारे उनकी ओर खिसकते हुए अकार्डियान-वादक बुदबुदाया।

सेन्का लपककर बढ़ा और पानी का गिलास उसके बेरंग होंठों से लगा दिया। ग्रिगोरी दरवाज़े के पास दीवार से टिका खड़ा था। उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे रोगी के ज़ोरों से पानी सिप करने की आवाज़ वह सपने में सुन रहा हो। फिर उसे सेन्का की आवाज़ सुनाई दी जो कह रहा था कि अकार्डियन-वादक का लबादा उतारकर उसे बिस्तरे पर लेटा दिया जाए, और इसके बाद रंगसाज़ की बावर्चिन की आवाज़ उसे सुनाई दी। उसका चेहरा, भय और संवेदना के भाव लिए, खिड़की के शीशे से चिपका था और आंसुओं से भीगी आवाज़ में वह कह रही थी—

"काजर मिलाकर इसके मुंह में थोड़ी रम उंडेल दो—एक गिलास रम और दो चम्मच काजर।"

अहाते के एक अन्य निवासी ने सलाह दी कि लकड़ी के तेल, अचार के पानी और वोडका का घोला बना कर दो।

सहसा उस बोझिल और गहरे अंधेरे को बेधकर, जो ग्रिगोरी पर छा गया था, उसकी स्मृति में प्रकाश की एक रेखा उभर आई। उसने अपने माथे को ज़ोरों से खरोंचा, मानो प्रकाश की उस रेखा को और तेज़ बनाने की कोशिश कर रहा हो, फिर एकाएक मुड़ा और कमरे से बाहर लपक भागता हुआ अहाते और सड़क को पार करने लगा।

"हे भगवान्, मोची को भी रोग ने पकड़ लिया! वह अस्पताल भागा गया है," बावर्चिन ने रुआंसी आवाज़ में ओरलोव के अचानक दौड़ जाने का रहस्य प्रकट किया।

मात्र्योना उसके पास ही खड़ी थी। उसका चेहरा पीला पड़ गया था, आंखें पूरी परह फटी थीं और उसका समूचा बदन हिल रहा था।

"यह झूठ है," मरमराई-सी आवाज़ में वह बुदबुदाई। उसके होंठ मुश्किल से ही हरकत कर रहे थे – "नहीं, यह मनहूस बीमारी ग्रिगोरी को नहीं पकड़ सकती। वह कभी ऐसा नहीं होने देगा।"

लेकिन बावर्चिन, जो अभी भी विलाप कर रही थी, भागी हुई वहां से चली गई और इसके पांच मिनट बाद गली में सौदागर पेतुन्निकोव के घर के सामने अड़ोसी-पड़ोसियों और राहचलतों की एक छोटी-सी भीड़ जमा हो गई। सभी के चेहरे समान रूप से विचलित थे और वे अदल-बदलकर एक-से भाव व्यक्त कर रहे थे – कभी बेबसी में डूबी निराशा के, कभी कुत्सा के और कभी बाधित बहादुरी के। सेन्का के नंगे पांव, बिजली की भांति कौंधते, अहाते में बाहर आते, भीड़ को अकार्डियन-वादक की हालत से सूचित करते और फिर लौट जाते।

लोग एक दूसरे से रगड़ खा रहे थे, उनकी आवाज़ों की भनभनाहट गली की गंधपूर्ण हवा में गूंज रही थी, जिसे बेधकर कभी-कभी कुत्सित और अर्थहीन गालियों की आवाज़ सुनाई दे जाती थी।

"वह देखो, ओरलोव!"

ओरलोव एक गाड़ी के बम पर बैठा दरवाज़े की ओर आ रहा था। एकदम सफ़ेद कपड़े पहने एक आदमी, अपने चेहरे को कुप्पा-सा फुलाए, गाड़ी हांक रहा था।

"ऐ, रास्ता छोड़ो!" गाड़ी हांकनेवाला गहरी आवाज़ में चिल्लाया और अपने घोड़े का मुंह सीधे भीड़ की ओर मोड़ दिया।

गाड़ी के आने और गाड़ीवान की चिल्लाहट ने भीड़ के उछाह पर पानी डाल दिया। सब इस तरह चुप हो गए जैसे उन्हें सांप सूंघ गया हो, और कुछ उलटे पांव वहां से खिसक गए।

गाड़ी के पीछे वह छात्र था जिससे ओरलोव दम्पति परिचित थे। उसकी टोपी खिसककर उसकी गुद्दी से जा चिपकी थी, उसकी भौंहों से पसीना चू रहा था, बदन पर वह एक लम्बा लबादा डाले था जो इतना सफ़ेद था कि आंखें चौंधिया जाती थीं। उसमें एक बड़ा-सा छेद था जिसके अगले हिस्से में कत्थई कोर लगी थी।

"हां, तो रोगी कहां है?" उसने तेज़ आवाज़ में पूछा और दरवाज़े के पास कोने में जमा भीड़ पर कनखियों से नज़र डाली। लोगों के चेहरे से शत्रुता का भाव झलक रहा था।

"यह देखो, एक नया ख़ानसामां आया है!" किसीने आवाज़ कसी।

"देखते जाओ, यह तुम्हारी कैसी ख़ातिर करता है!" दूसरा बुदबुदाया।

"यह तुम्हें ऐसा शोरबा खिलाएगा कि भीतर तक की सफ़ाई हो जाएगी!" किसी लाल बुझक्कड़ ने कहा जो सभी भीड़ों में मौजूद रहते हैं।

इसपर एक आह्लादविहीन हंसी भीड़ में दौड़ गई जिसमें भय और अविश्वास झलक रहा था।

"देखो, उन्हें ज़रा भी डर नहीं लगता। इसमें क्या रहस्य है?" एक आदमी ने, जिसके चेहरे पर खिंचाव और आंखों में विक्षोभ भरा था, घबरा देनेवाला सवाल छेड़ा।

लोग गम्भीर हो गए और दबी आवाज़ में फुसफुसाने लगे।

"वे उसे बाहर निकाल रहे हैं।"

"बड़ा हरामी है, यह ओरलोव!"

"कम्बख़्त को डर नहीं लगता!"

"ऊंह, पियक्कड़ जो ठहरा!"

"आराम से, ओरलोव, आराम से। उसके पांवों को और ऊंचा उठाओ। हां, ऐसे। बिल्कुल ठीक। प्योत्र, अब तुम गाड़ी को हांक ले जाओ," छात्र ने कहा–"मैं भी साथ ही साथ आता हूं। हां तो ओरलोव, इसकी छूत साफ़ करने के लिए मैं तुम्हारी मदद चाहूंगा। इसमें लगे हाथ तुम्हें यह भी मालूम हो जाएगा कि यह कैसे किया जाता है,–कभी काम आएगा। क्यों, तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं?"

"नहीं," ओरलोव ने कहा और गर्व से गर्दन उठाकर अपने चारों ओर नज़र डाली।

"मैं भी मदद दे सकता हूं," सेन्का ने कहा।

उस भयावह गाड़ी को विदा करने वह दरवाज़े तक चला गया था और अब अपनी सेवाएं अर्पित करने के लिए ठीक मौक़े पर लौट आया था।

छात्र ने चश्मे के भीतर से उसकी ओर देखा।

"और तुम हो कौन?"

"रंगसाज़ों के साथ काम करता हूं। उनका अप्रेन्टिस," सेन्का ने बताया।

"तुम्हें हैज़े से डर नहीं लगता?"

"मुझे... डर?" सेन्का ने अचरज से कहा–"नहीं, मुझे नहीं। मैं किसी चीज़ से नहीं डरता।"

"ऐसा? बहुत ठीक। अच्छा तो अब..." छात्र एक ढोल पर बैठ गया, जो ज़मीन पर पड़ा था, और आगे-पीछे की ओर झूलते हुए

ग्रिगोरी तथा सेन्का को बताने लगा कि अपनी सफ़ाई रखना कितना महत्वपूर्ण है।

चेहरे पर चिन्तित मुसकान लिए मात्र्योना आगे खिसक आई। उसके साथ-साथ बावर्चिन भी बढ़ आई अपने ऐप्रन से आंखें पोंछती। थोड़ी देर बाद कुछ और लोग भी उनके साथ आ मिले, – उतने ही दबे पांव जैसे बिल्ली चिड़िया की ओर खिसकती है। अन्त में क़रीब दस लोग छात्र के इर्द-गिर्द जमा हो गए। इसने उसे उत्साहित किया। वह उनके बीच में खड़ा था और जोश में भरा, ख़ूब ज़ोरों से हाथ हिलाता, उन्हें लेक्चर दे रहा था जिसे सुनकर कभी उनके चेहरों पर मुसकराहट खेल जाती, कभी वे एकदम विभोर हो गहरे ध्यान से सुनने लगते और कभी – बिना किसी छिपाव के – अविश्वास या खिल्ली उड़ानेवाले वैरभाव का परिचय देते।

"सभी रोगों से लड़ने का सबसे महत्वपूर्ण हथियार सफ़ाई है – शरीर की सफ़ाई और उस हवा की सफ़ाई, जिसे तुम अपने फेफड़ों में भरते हो," उसने उन्हें बताया।

"भगवान् भला करे," रंगसाज़ों की बावर्चिन कराह उठी – "केवल पवित्रात्मा सन्त बारबरा की पूजा-अर्चना ही हमें बेवक़्त की मौत से बचा सकती है।"

"बहुतेरे लोग साफ़ रहते और साफ़ हवा में सांस लेते हैं, फिर भी मौत उन्हें नहीं बख़्शती," श्रोताओं में से एक ने कहा।

ओरलोव अपनी पत्नी की बग़ल में खड़ा छात्र को देख रहा था और मन ही मन कुछ उधेड़-बुन कर रहा था। उसने अपनी आस्तीन में एक हल्का-सा झटका अनुभव किया।

"चचा ग्रिगोरी," सेन्का फुसफुसाया जिसकी आंखें अंगारे की भांति दहक रही थीं – "ऐसा लगता है कि किस्ल्याकोव बचेगा नहीं और उसका कोई सगा-सम्बन्धी भी नहीं है। उसका अकार्डियन किसे मिलेगा?"

"मुंह बन्द कर, शैतान का पूत!" हाथ हिलाकर उसे दफ़ा करते हुए ओरलोव ने कहा।

सेन्का वहां से खिसका गया और अकार्डियन-वादक के कमरे की खिड़की में से भीतर झांकने लगा। उसकी आंखें जैसे कुछ खोज रही थीं।

"चूना, कोलतार..." छात्र ऊंची आवाज़ में गिना रहा था।

* * *

उसी हलचलपूर्ण दिन की सांझ, उस समय जब कि वे भोजन कर रहे थे, मात्र्योना ने अपने पति से पूछा—

"उस छात्र के साथ आज तुम कहां गए थे?"

ग्रिगोरी ने खोई हुई नज़र से उसकी ओर देखा। जवाब कुछ नहीं दिया।

अकार्डियन-वादक के कमरे में धूनी देने के बाद वह छात्र के साथ चला गया था। वहां से तीन बजे जब वह लौटा तो विचारों में डूबा और एकदम चुप साधे हुए। आते ही वह बिस्तरे पर ढह गया और भोजन के समय तक उसी प्रकार पड़ा रहा,—बिना मुंह से एक शब्द भी निकाले, हालांकि उसकी पत्नी ने उससे बातचीत करने की कई बार कोशिश की। उसने उसे कोसा तक नहीं। यह इतना अजीब और उसके स्वभाव के इतना विरुद्ध था कि मात्र्योना का हृदय बेचैन हो उठा।

एक स्त्री की सहज वृत्ति से, जिसका समूचा जीवन अपने पति में केन्द्रित हो, उसके हृदय में खटका कि कहीं उसे तो कोई छूत नहीं लग गई, और छूत के इस भय ने उसकी व्यग्र उत्सुकता को और भी अधिक भड़का दिया। वह क्या चीज़ है जो उसे परेशान कर रही है?

"तुम्हारी तबीयत तो ठीक है न, ग्रिगोरी?"

उसने अपने गिलास में से चाय का आख़िरी घूंट गले के नीचे उतारा, हाथ उलटकर अपनी मूंछों को पोंछा और अपना ख़ाली गिलास अलस भाव से मेज़ के उधर अपनी पत्नी की ओर खिसका दिया।

"छात्र के साथ मैं बैरकों में गया था," उसने भौंहें चढ़ाते हुए कहा।

"हैज़े की बैरकों में?" मात्र्योना के मुंह से निकला और फिर, आतंक में डूबी, फुसफुसा उठी—"क्या वहां काफ़ी लोग हैं?"

"तिरपन, हमारे अकार्डियन-वादक को गिनकर। कुछ अच्छे हो रहे हैं,—वे उठने-बैठने भी लगे हैं। एकदम पीले और खाल ही खाल!"

"यह क्या कहते हो? हैज़े से कोई कैसे बचेगा? मैं विश्वास नहीं करती। ऐसे ही, दिखावे के लिए, उन्होंने कुछ अच्छे-विच्छे लोगों को पकड़ लिया होगा,—जिससे यह मालूम हो कि वे उन्हें अच्छा कर सकते हैं।"

"तुम्हारे दिमाग़ में तो भूसा भरा है," ग्रिगोरी ने रुखाई से कहा और उसकी आंखों में ग़ुस्सा कौंध गया—"तुम सबके सब यहां कठदिमाग़ हो। मूर्ख और जाहिल हो तुम लोग। ऐसे कूढ़ दिमाग़ों के साथ रहकर आदमी न मरता हो तब भी मर जाए। तुम्हारे इन ठस दिमाग़ों में कोई चीज़ नहीं धंस सकती!" उसने दोबारा भरा हुआ अपना गिलास झपटकर तेज़ी से अपनी ओर खींचा और फिर चुप हो गया।

"और तुम यह सारी जानकारी क्या अपनी मां के पेट से लाए थे?" उसांस छोड़ते हुए मात्र्योना ने व्यंग से कहा।

उसने कोई जवाब नहीं दिया—वह इतना कठोर और विचारों में इतना डूबा था कि कोई भी चीज़ उसे छूती प्रतीत नहीं होती थी। ठंडा होता हुआ समोवर हल्के सुरों में भनभना रहा था। खिड़की में से रंग-रोग़नों, कार्बोलिक एसिड और उल्टे-पल्टे गए कूड़े के ढेर की गंध आ रही थी। सांझ का धुंधलका, यह गंध और समोवर की भनभनाहट सब एकाकार हो गई थी, और तन्दूर अपना काला मुंह फाड़े इस तरह चिड़चिड़ा रहा था जैसे पहला मौक़ा मिलते ही वह इस आदमी और उसकी पत्नी को कच्चा निगल जाएगा। वे दोनों—पति और पत्नी—चीनी की डलियों को कचर रहे थे, अपनी रकाबियों को खनखना रहे थे और चाय को गले के नीचे उतार रहे

थे। मात्र्योना रह-रहकर लम्बी उसांसें छोड़ रही थी और ओरलोव की उंगलियां मेज़ पर तबला बजा रही थीं।

"सफाई इतनी कि तुमने पहले कभी न देखी होगी," अप्रत्याशित रूप से उसने फिर कहना शुरू किया—"वहां काम करनेवालों में से प्रत्येक सफ़ेद बर्राक़ कपड़े पहने था। रोगियों को हर मिनट नहलाया जाता है। और मदिरा—ढाई रूबल में एक बोतल। और खाना, जो उन्हें मिलता है? तुम एक बार सूंघ लो तो उसीसे पेट भर जाए। और उनकी देख-भाल का ढंग,—बिल्कुल मां की भांति। हम्म! बोलो, क्या तुक है इसमें? एक आदमी सालों साल जीता है और कोई उसके मुंह पर थूकने तक नहीं आता, घर तक आना और यह पूछना कि क्या हाल-चाल है, जीवन के साथ कैसी गुज़र रही है,—यह सब तो और भी दूर की बात है। लेकिन जैसे ही वह मरने की ठानता है तो वे उसे नहीं मरने देंगे। इतना ही क्यों, उसे जीवित रखने के लिए वे खुद अधमरे हो जाएंगे। बैरक, ढाई रूबल में पूरी बोतल। क्या वे इतना भी नहीं देख सकते कि इसमें कोई तुक नहीं है? मदिरा और बैरकों पर वे अंधाधुंध खर्च करते हैं। उसी धन को वे उस समय क्यों नहीं खर्च करते जब कि वह अच्छा होता है—उसके जीवन को महज बनाने के लिए—आए साल थोड़ा-थोड़ा देकर?"

उसकी पत्नी ने यह समझने की कोई कोशिश नहीं की कि वह क्या कह रहा है। उसके लिए यह जानना ही काफ़ी था कि वह कोई ऐसी बात कह रहा है जो नयी है। और इससे जो सही नतीजा उसने निकाला वह यह कि ग्रिगोरी की आत्मा को चाहे जो भी चीज़ मथ रही हो उसके लिए वह शुभ नहीं है। वह केवल इतना ही जानना चाहती थी कि उसपर उसका क्या असर पड़ेगा, और इसे वह जहां तक भी हो जल्दी से जल्दी जान लेना चाहती थी। उसकी यह आकांक्षा भय और आशा से और अपने पति के प्रति एक हद तक वैर की भावना से भरी थी।

"इस बात को, कि वे क्या कर रहे हैं, शायद वे तुमसे ज़्यादा अच्छी तरह जानते हैं," उसकी बात ख़त्म होने पर अपने होंठों को भींचते हुए मात्र्योना ने कहा।

ग्रिगोरी ने अपने कंधों को बिचकाया, कनखियों से उसपर एक नज़र डाली, क्षण भर के लिए रुका और फिर अपने स्वर में और भी अधिक तीखापन भरते हुए कहने लगा—

"यह उनका काम है, चाहे वे करें या न करें। लेकिन अगर मैं उन लोगों में से हूं जो अच्छे जीवन का मुंह देखे बिना ही इस दुनिया से कूच कर जाते हैं, तो निश्चय ही मुझे यह कहने का हक़ है कि कौन क्या है। और मुझे कहना यह है—इस जीवन से मेरा पेट पूरी तरह से भर गया और मेरा यह इरादा नहीं है कि हाथ पर हाथ धरे बैठा रहूं और प्रतीक्षा करूं कि हैज़ा आए और मेरी गठरी बना दे। मैं यह नहीं कर सकता। प्योत्र इवानोविच ने कहा—'सीधे टक्कर लो—तुम भाग्य के विरुद्ध, भाग्य तुम्हारे विरुद्ध—और देखो कि कौन जीतता है। खुलकर युद्ध हो, बिना किसी माया-ममता के।' दूसरे शब्दों में—मुझे जाना है और बैरकों में काम करना है। सो यह है सौ बात की एक बात। समझ गई न? सीधे शेर के जबड़े में सिर डालना है,—अगर वह उसमें दांत गड़ाता है तो बस मैं अपनी टांगों से झटका दूंगा। बीस रूबल महीना और शायद बोनस अलग। हो सकता है कि इसमें मुझे अपनी जान देनी पड़े। ठीक, लेकिन यहां रहने पर तो मैं और भी जल्दी टें बोल जाऊंगा।"

यह कहते हुए ग्रिगोरी ने इतने ज़ोरों से मेज़ पर घूंसा पटका कि रकाबियां उछल पड़ीं।

उसके बोलने के प्रारम्भ में मात्र्योना अपने चेहरे पर व्यग्रता और जिज्ञासा के भाव लिए सुन रही थी, लेकिन जब उसने बोलना ख़त्म किया तो उसने अवमानना से अपनी आंखें सिकोड़ लीं।

"यह सब करने की सलाह क्या उस छात्र ने तुम्हें दी है?" उमन अपने आपको रोकते हुए पूछा।

"मेरे पास अपना दिमाग़ है। मैं ख़ुद अपनी बात सोच सकता हूं," ओरलोव ने टालमटोल की।

"हां तो लगे हाथ यह भी बता दो कि उसने मेरे साथ क्या करने की तुम्हें सलाह दी है?" मात्र्योना कहती गई।

"तुम्हारे साथ?" इस सवाल ने उसे औचक में पकड़ लिया। अपनी पत्नी के बारे में सोचने का उसे अभी तक समय नहीं मिला था। वह उसे घर पर ही छोड़ सकता था। अन्य लोगों ने भी ऐसा किया है, लेकिन मात्र्योना को छोड़ना ख़तरनाक होगा। उसपर निगाह रखने की ज़रूरत है। यह अनुभव करते ही वह गुर्राया। फिर बोला—"तुम यहीं रहोगी। अपनी पगार मैं तुम्हें दे जाया करूंगा।"

"यह बात है," उसकी पत्नी ने शान्त भाव से कहा और स्त्रियों की उस भेद-भरी मुसकान के साथ उसे देखा जो पुरुषों के हृदय में ईर्ष्या की छुरी घोंप देती है।

ग्रिगोरी ने, जो अत्यन्त स्पन्दनशील था, तुरत इसका अनुभव किया। लेकिन उसके अहम् ने अपनी पत्नी के सामने उसे अपने भावों को प्रकट नहीं करने दिया।

"चिचियाने और कांय-कांय के सिवा तुम और क्या कर सकती हो?" उसने कहा और जवाब की इन्तज़ार करने लगा।

लेकिन वह केवल मुसकराई,—तनतना देनेवाली वह मुसकराहट फिर उसके होंठों पर खेल गई,—और उसने कहा कुछ नहीं।

"हम—तो हम दोनों का क्या होगा?" ग्रिगोरी ने फिर पूछा।

"मतलब?" गिलासों को शान्त भाव से साफ़ करते हुए मात्र्योना ने पूछा।

"नागिन! ज़्यादा बनो नहीं,—नहीं तो यहीं थूथनी रगड़कर रख दूंगा!" ग्रिगोरी ने फुंकार छोड़ी—"कौन जाने, मैं मौत से ही गले मिलने जा रहा हूं।"

"लेकिन मैं तो तुम्हें धक्के नहीं दे रही। मत जाग्रो।"

"तुम... तुम्हारे मन की मुराद तो उससे पूरी हो जाएगी। मैं खूब जानता हूं," वह तीखे ग्रन्दाज़ में चिल्लाया।

माव्योना ने ग्रब भी कुछ नहीं कहा। इससे वह झुंझला उठा, लेकिन उसने सदा की भांति ग्रपने गुस्से को भड़कने नहीं दिया। वह इसलिए कि एक बहुत ही चतुर बात—कम से कम वह ऐसा ही समझता था—उसके दिमाग़ में ग्रभी-ग्रभी कौंध गई थी।

"मैं जानता हूं कि तुम्हारे लिए इससे बढ़कर ग्रौर कोई खुशी न होगी कि पांव के कांटे की भांति तुम मुझे रफ़ा-दफ़ा कर दो। लेकिन ज़रा ठहरो। मैं भी दो-चार दांव-पेच जानता हूं। तुम्हें वह रंग दिखाऊंगा कि तबीयत तर हो जाएगी।"

वह उछलकर खड़ा हो गया, झपटकर खिड़की की ग्रोटक पर से ग्रपनी टोपी उठाई ग्रौर बाहर चला गया। उसकी पत्नी ग्रकेली रह गई—ग्रपने छरछन्दों को कोसती, उसकी धमकियों पर झुंझलाती ग्रौर भविष्य के लिए दुश्चिन्ताग्रों में डूबती-उतराती।

"ग्रो भगवान्! ग्रो मां मरियम, स्वर्ग की देवी!" उसने उसांस छोड़ी।

बहुत देर तक मेज़ पर बैठी वह यह ग्रन्दाज़ लगाने का प्रयत्न करती रही कि ग्रिगोरी ग्रब क्या करने पर उतरा है। उसके सामने धुली हुई रकाबियां पड़ी थीं, छिपते हुए सूरज की रोशनी का एक गुलाबी धब्बा खिड़की के सामने वाली सफ़ेद दीवार पर पड़ रहा था ग्रौर दीवार से छितराकर उनकी खोली में बिखर रहा था ग्रौर उसका

एक अंश मात्र्योना के सामने मेज़ पर रखी कांच की चीनीदानी के छोरों पर झिलमिला रहा था। इस हल्की झिलमिल ने उसका ध्यान खींचा और अपनी भौंहों को सिकोड़े एकटक वह उसे देखती रही, — देखते-देखते उसकी आंखे दुखने लगीं। तब उसने रकाबियों को समेटकर संगवाया और बिस्तरे पर जाकर पड़ रही।

ग्रिगोरी जब लौटा तब अंधेरा हो गया था। सीढ़ियों पर उसके पांवों की आवाज़ से मात्र्योना ने अन्दाज़ लगाया कि वह प्रसन्न मुद्रा में है। खोली में छाए अंधेरे को कोसता वह बिस्तरे की ओर बढ़ा और मकी बग़ल में बैठ गया।

"बताओ तो जाने," उसने खिलखिलाते हुए कहा।

"क्या बताऊं?"

"तुम भी मेरे साथ वहां काम करने चलोगी।"

"कहां?" उसने कांपती आवाज़ में पूछा।

"उन्हीं बैरकों में, जहां मैं काम करूंगा," उसने विजयी अन्दाज़ में कहा।

मात्र्योना ने उसके गले में बांहें डाल दीं, कसकर उसे भींचा और उसके होंठों का चुम्बन लिया। यह इतना अप्रत्याशित था कि उसने सकपकाकर मात्र्योना को धकेल दिया।

"यह सब छरछन्द है," उसने सोचा — "वह वहां क़तई काम नहीं करना चाहती, चालाक लोमड़ी... आंखों में धूल झोंकना चाहती है — समझती है कि उसका पति निरा बुद्धू है, छबीली मटियारिन!"

"यह नाटक किसलिए?" सन्देह-भरी आवाज़ में उसने जवाब मांगा और अचानक उसे उठाकर फ़र्श पर पटकने की इच्छा उसके हृदय में उमड़ आई।

"इसलिए कि बस," उसने शब्दों को चबाते हुए जवाब दिया।

"ज़्यादा छरछन्द न दिखाओ। मैं तुम्हें खूब पहचानता हूं।"

"रूसलान, मेरे बहादुर मजनू!"

"बस करो, मैं कहता हूं!"

"ग्रिगोरी, मेरे राजा!"

"सुनो, क्या तुम सचमुच मुझे अपना राजा समझती हो?"

मात्र्योना के दुलार-प्यार से जब उसका गुस्सा ठंडा पड़ा तो वह उसकी ओर मुड़ा और व्यग्र भाव से बोला—

"तुम्हें डर नहीं लगता?"

"डर कैसा? हम दोनों साथ रहेंगे,— रहेंगे न?" उसने सहज भाव से जवाब दिया।

उसके मुंह से यह सुनना बड़ा सुखद था।

"तुम कितनी अच्छी हो!" उसने कहा और इतने ज़ोरों से उसके चुटकी काटी कि वह चिचिया उठी।

* * *

बैरकों में ओरलोव दम्पति का जीवन शुरू हुआ। पहले ही दिन काफ़ी संख्या में मरीज़ लाए गए और ये दोनों नवसिखुवे, जो अलसाहट-भरे तथा एकरस जीवन के अभ्यस्त थ, क्रियाशीलता के इस भंवर में पड़कर घबरा और खो गए। उनके अपने अटपटेपन ने—उनसे जो करने के लिए कहा जाता उसे समझ न पाने और दृश्यों की वीभत्सता ने— उन्हें सकपका दिया। अपनी ओर से वे पूरी कोशिश करते, लेकिन केवल दूसरों की राह में रुकावट डालने में ही सफल हो पाते। कई बार ग्रिगोरी को लगा कि अब उसपर ज़रूर डांट पड़ेगी या उसकी अयोग्यता के लिए उसे सख़्त चेतावनी दी जाएगी, लेकिन यह एक भारी अचरज की बात थी कि कोई भी उसपर नहीं चिल्लाया।

डाक्टरों में से एक ने—उसने, जिसका क़द लम्बा, मूंछें काली, तोते ऐसी नाक और दाहिनी भौंह के ऊपर एक बड़ा-सा मस्सा था,

– जब ग्रिगोरी से एक रोगी को नहलाने में मदद देने के लिए कहा तो उसने रोगी को इतनी मज़बूती से बांहों के नीचे से पकड़ा कि वह चीख़ उठा और दर्द के मारे उसकी बत्तीसी निकल आई।

"इसका कचूमर न निकालो, मित्र, ऐसा करो कि यह सही मालिम स्नान कर ले," डाक्टर ने गम्भीरता से कहा।

ग्रिगोरी शर्म से गड़ गया। रोगी ने, जो क्षीणकाय लम्बा आदमी था, मुसकराने का प्रयास करते हुए कहा –

"नया आदमी है न? सीखते-सीखते ही सीखेगा।"

ओरलोव दम्पति के बैरकों में पहुंचते ही एक वृद्ध डाक्टर ने, जिसकी सफ़ेद व नोकदार दाढ़ी और बड़ी-बड़ी चमकीली आंखें थीं, उन्हें एक भाषण दिया कि रोगियों के साथ कैसे क्या करना चाहिए, किस प्रकार उन्हें उठाकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाना चाहिए और विभिन्न परिस्थितियों में किस तरीक़े को उन्हें काम में लाना चाहिए। अन्त में उसने ग्रिगोरी और मात्र्योना से पूछा कि वे स्नान कर चुके हैं अथवा नहीं, और उन दोनों को एक-एक सफ़ेद लबादा दिया। डाक्टर की आवाज़ कोमल थी और वह फुर्ती से बोलता था। ओरलोव दम्पति को वह बेहद पसन्द आया। सफ़ेद लबादा पहने लोग तेज़ी से आ जा रहे थे। आदेश दिए जा रहे थे और उन्हें जैसे हवा में ही लपक लिया जाता था। रोगी कांख और कराह रहे थे। पानी छलछला और बिखर रहा था और ये सब आवाज़ें हवा में तैर रही थीं जो अरुचिकर गंधों से इतनी घनी पगी थी कि डाक्टर के मुंह से निकला प्रत्येक शब्द और रोगियों के मुंह से निकली प्रत्येक कराह अपनी एक अलग तीखी गंध का संचार करती मालूम होती थी।

शुरू-शुरू में तो ग्रिगोरी को ऐसा मालूम हुआ जैसे यहां सभी कुछ अस्तव्यस्त है। गड़बड़झाले के सिवा उसे और कुछ नज़र नहीं आता

था। उसे लगा कि चाहे जो हो, वह कभी यहां फ़िट नहीं कर सकेगा – यह कि वह यहां सांस तक न ले सकेगा और बीमार पड़ जाएगा। लेकिन कुछ ही घंटे बाद वह भी उस स्फूर्ति से अछूता नहीं रहा जो कि यहां हर कहीं उमड़ रही थी। उसमें चेतनता और चुस्ती का संचार हुआ, यह जानने के लिए वह व्यग्र हो उठा कि वह किस प्रकार अपने को उपयोगी बना सकता है। कारण, उसे लगा कि इस हलचल में शामिल होकर वह अधिक स्वस्थ और अधिक शांत अनुभव करेगा।

"बाइक्लोराइट आफ़ मर्करी!" एक डाक्टर की आवाज़ आई।

"गर्म पानी!" दुबले-पतले, लाल और सूजी हुई पलकों वाले एक छात्र ने आदेश दिया।

"एइयू... क्या नाम है तुम्हारा?.. हां, ओरलोव, ज़रा इस रोगी की टांगों में मालिश करो। इस तरह। हां, ठीक ऐसे ही। ज़रा सहज में, कहीं उसकी खाल ही न खींच लेना!" एक अन्य छात्र ने, जिसके बाल लम्बे और मुंह पर चेचक के दाग़ थे, मालिश का तरीक़ा बताते हुए ग्रिगोरी से कहा।

"वे एक और रोगी को लाए हैं," किसीने सूचना दी।

"उसे भीतर ले आओ, ओरलोव!"

"और ग्रिगोरी – चकित, पसीनों में तर, पनीली आंखों और धुंध छाए दिमाग़ के साथ – अपनी जान कोई कसर न छोड़ता। कभी-कभी एक साथ इतनी अधिक चीज़ों की छाप उसके हृदय और मस्तिष्क पर पड़ती कि उसे अपने अस्तित्व तक का भान न रहता। मिट्टी के रंग के चेहरे, पथराई-सी आंखों के इर्द-गिर्द हरे स्याह घेरे, अंग जिन्हें रोग ने एकदम निचोड़-मरोड़ दिया था, चिपचिपी

दुर्गन्ध-युक्त खाल, प्रायः जीवनशून्य शरीरों की भयानक ऐंठन, – ये सब चीज़ें उसके हृदय में पंजे गड़ातीं और उसके पेट को उलटती मालूम होती थीं।

एक या दो बार बैरकों के गलियारे – कोरीडोर -- में उसे अपनी पत्नी की उड़ती हुई झलक दिखाई दी। वह अब कुछ छरहरी हो गई थी, चेहरे का रंग मटियाला पड़ गया था और वह कुछ खोई-सी नज़र आती थी।

"कहो, कैसे चल रहा है?" एक बार उसने पूछा।

उसने एक क्षीण मुसकराहट के साथ उसकी ओर देखा और बिना कुछ कहे आगे बढ़ गई।

सहसा ग्रिगोरी के दिमाग़ में एक ऐसा ख़्याल आया जो उसकी प्रकृति के विरुद्ध था – इस अभिशप्त जगह में अपने साथ अपनी स्त्री को भी खींचकर कहीं उसने ग़लती तो नहीं की?.. अगर उसे कुछ हो गया तो? सो अगली बार जब वह उसे दिखाई पड़ी तो उसने कड़ी आवाज़ में कहा –

"सुनो, अपने हाथों को अच्छी तरह और बार-बार धोना और अपनी ख़ूब देख-भाल रखना।"

"और अगर मैं न रखूं तो?" उसने पलटकर कहा और उसके छोटे-छोटे मोती से सफ़ेद दांत हंसी में चमक उठे।

इसपर वह झुंझला उठा। मूर्खा कहीं की, यह भी भला कोई मज़ाक़ करने की जगह है? कुछ तमीज़ नहीं होती इन स्त्रियों को। लेकिन मात्र्योना ने उसकी आंखों में चिंगारी उछलते देख ली थी और इससे पहले कि वह पलटकर कुछ कहता, वह स्त्रियों के वार्ड में ग़ायब हो गई।

कुछ मिनट बाद वह अपनी जान-पहचान के एक पुलिसमैन को मुर्दाघर में ले जा रहा था। पुलिसमैन स्ट्रैचर पर निश्चल पड़ा डोल रहा

था, उसकी पथराई हुई आंखें जैसे एकटक तप्त उजले आकाश पर जमी थीं। ग्रिगोरी ने उसकी ओर देखा और एक अनबूझ भय उसके बदन में सरसरा गया। केवल तीन दिन पहले तो उसने उसे रौंद लगाते देखा था और उसे गाली तक दी थी—इस पुलिसमैन विशेष से उसकी कुछ कुनह चल रही थी। और अब वह यहां पड़ा था—वह, जो इतना हट्टा-कट्टा और इतना झगड़ालू था,—बेजान, वीभत्स, ऐंठनों से विकृत।

ग्रिगोरी ने अनुभव किया कि कुछ है जो इसमें ग़लत है—आदमी इस दुनिया में जन्म क्यों ले अगर उसका केवल यही हश्र होना है कि एक ही दिन में ऐसा घिनौना रोग उसे उठा ले जाए? उसने नीचे पुलिसमैन पर एक नज़र डाली और उसका हृदय उसके लिए दुख से भर गया।

और तभी एकदम अचानक लाश का दाहिना हाथ हिला और सीधा तन गया और उसके ऐंठे हुए मुंह का बायां हिस्सा, जो अब तक अधखुला था, पट से बन्द हो गया।

"रुको, प्रोनिन!.." स्ट्रैचर के अपनी ओर वाले छोर को ज़मीन पर टेकते हुए ग्रिगोरी हांफा—"यह ज़िन्दा है!"

दूसरे छोर वाला आदमी घूमकर मुड़ गया और नज़र गड़ाकर मृत आदमी को एक क्षण तक देखा।

"झूठ क्यों बोलते हो?" उसने तीखी आवाज़ में कहा—"उसने अपनी बांह को ज़रा ताबूत के लिए सीधा किया है... क्या तुम इतना भी नहीं जानते? चलो, उठाओ स्ट्रैचर!"

"लेकिन वह हिला-डुला था," ग्रिगोरी ने भय से कांपते हुए ज़ोर दिया।

"बस, चले चलो। तुम भी पूरे चूज़ा हो। एक बार बता दिया, लेकिन तुम समझो तब न? मैं कहता हूं, उसने अपनी बांह

ताबूत के लिए सीधी की, सो वह बिला शक हिला। तुम्हारा यह अज्ञान किसी दिन तुम्हें ले डूबेगा... 'ज़िन्दा है!' एक मुर्दा लाश के लिए क्या अनोखी बात मुंह से निकाली तुमने! क्यों, अपने सिर मुसीबत मोल लेना चाहते हो क्या? कान खोलकर सुन लो, अब उनके हिलने का किसीके सामने नाम तक न लेना। वे सब ऐसा करते हैं। सारे नगर में ख़बर फैल जाएगी, मक्खी हाथी का रूप धारण कर लेगी और तब भुगतान करते नहीं बनेगा। 'ओह, वे ज़िन्दा लोगों को दफ़नाते हैं!' लोगों की एक भीड़ यहां टूट पड़ेगी। और वे हमारी बोटी-बोटी तक नोच डालेंगे... और तुम ... तुम भी नहीं बच पाओगे। हां तो यह लो, इसे बाईं ओर पटक दो।"

उस आदमी की अविचलित आवाज़ और फ़ुरसती अन्दाज़ से ग्रिगोरी ने कुछ थिरता का अनुभव किया।

"दिल ढीला न करो। सब आदत पड़ जाएगी। ऐसी बुरी जगह नहीं है, यह। अच्छा खाना, अच्छा बरताव और अन्य सब बातें। हम सब भी एक दिन लाश बनेंगे, यह तय है। सो तब तक अपने उपरले होंठ को कसे रहो,—असल चीज़ यही है। क्या तुम रंग-पानी करते हो?"

"हां," ग्रिगोरी ने कहा।

"बहुत ठीक। वहां, उधर, एक गढ़े में मैंने बोतल छिपा रखी है,—क्यों, चलकर ज़रा गला तर कर लें तो इसमें क्या बुराई है?"

सो वे बैरकों के पीछे उस गढ़े के पास गए और उन्होंने अपना गला तर किया। इसके बाद चीनी की एक डली पर प्रोनिन ने पीपरमेंट की कुछ बूंदें डालीं और उसे ग्रिगोरी की ओर बढ़ाते हुए बोला—

"यह लो, इसे मुंह में डाल लो। फिर गंध नहीं आएगी। वोडका के बारे में वे यहां बहुत सख़्त हैं। कहते हैं—'यह तुम्हारे लिए नुक़सानदेह है।'"

"क्या तुम यहां के आदी हो गए हो ?" ग्रिगोरी ने पूछा।

"मैं ? .. मैं तो यहां एकदम शुरू से हूं। मेरे देखते यहां बहुत-से लोग मरते नज़र आए। सच पूछो तो यह वैसा नहीं है जिसे आराम-चैन का जीवन कहते हैं, लेकिन यह बुरा भी नहीं है। यह भगवान् का काम है। जैसा युद्ध में होता है। युद्ध की नर्सों और डाक्टरों के बारे में कभी सुना है ? तुर्की वाले युद्ध में मैंने उन्हें खूब देखा। अरदागान और कार्स में। ये लोग हम सैनिकों से ज़्यादा बहादुर होते हैं। हम हाथों में बन्दूक़, गोलियां और संगीन लेकर युद्ध में उतरते हैं। लेकिन वे गोलियों की बौछारों के बीच इस तरह इधर से उधर घूमते हैं जैसे किसी बाग़ में टहल रहे हों। वे हमें या तुर्कों को लादकर फ़ील्ड-अस्पताल ले जाते और उनके चारों ओर गोलियां सनसनाती और बिंग-बांग की आवाज़ करती रहतीं। कभी-कभी किसी डाक्टरी आदमी की गुद्दी में गोली आकर लगती – पिंग ! – और वह वहीं ढेर हो जाता।"

इस सम्भाषण और वोडका की गहरी डोज़ के बाद ग्रिगोरी चेतन हो उठा।

"एक बार जब लगाम हाथों में थाम ली तो उसे छोड़ना कैसा ?" किसी रोगी की टांगों में मालिश करते हुए उसने मन ही मन कहा। उसके पीछे कोई कराह रहा था और रुआंसी आवाज़ में पुकार रहा था –

"पानी ! ओह-ह-ह, दया, कोई ..."

"ओउच ! और भी गरम ! आराम मिलता है, डा-डा-डाक्टर ! खु-खु-खुदा साक्षी है। उनसे कहो, कुछ उ-उ-उबलता पानी और मिला लें !"

"इसे कुछ मदिरा दे दो," डाक्टर वाश्चेन्को ने आवाज दी।

काम के ज़ोर और उभार के साथ रम जाने पर ग्रिगोरी ने

अनुभव किया कि वास्तव में चीज़ें इतनी भयानक और घिनौनी नहीं हैं जितनी कि उसे शुरू-शुरू में मालूम हुई थीं, और जिसे वह गड़बड़झाला समझा था वह एक महान् और बुद्धिमान शक्ति का सम्यक् संचालन था। यह सब होने पर भी हर बार जब कभी उसे पुलिसमैन की याद आती तो वह कांप उठता और नज़र बचाकर खिड़की में से बाहर अहाते में झांकने लगता। वह उसे मरा हुआ ही विश्वास करता था, लेकिन उसका यह विश्वास थिर नहीं था। अगर पुलिसमैन अचानक उछलकर खड़ा हो जाए और चीख़ उठे तो? और उसे ध्यान हो आता उस बात का, जो उसने किसीके मुंह से सुनी थी,–यह कि एक बार हैज़े के शिकार लोग अपने ताबूतों में से उछलकर बाहर निकल आए थे और दूर भाग गए थे।

अपनी पत्नी के बारे में वह रह-रहकर सोचता कि उसे यह सब कैसा लग रहा है। कभी-कभी उसके मन में उड़ती-सी हूक उठती कि अपने काम से एक क्षण बचाकर खिसक जाए और मात्र्योना से मिल आए। लेकिन ऐसी तरंगों से उसे शर्म मालूम होती और मन ही मन वह उसे सम्बोधित करता–

"जाओ, ख़ूब काम करो और काम करते-करते चुक जाओ, मेरी डबल रोटी! घबराओ नहीं, यहां तुम एकदम सींकिया हो जाओगी और तुम्हारे सारे मन्सूबे यों ही धरे रह जाएंगे।"

अपनी पत्नी के प्रति सन्देह का यह कीड़ा उसके हृदय को सदा कुरेदता रहता था कि पति के रूप में उसे नीचा दिखाने के लिए वह बराबर जोड़-तोड़ लगाया करती है। जब कभी सन्देह के मारे वह वस्तुस्थिति को जांचकर देखता तो उसे मानना पड़ता कि उसका ऐसे मन्सूबे बांधना ग़लत नहीं है। ऐसा न करे तो वह और क्या करे? क्या वह भी कोई जीवन है जो उसे बिताना पड़ा है?

एकदम नगण्य। ऐसे जीवन में दुनिया भर की बातें दिमाग़ में उठ सकती हैं। और इस तरह तटस्थ तरीक़े से जब वह सोचता तो उसका सन्देह विश्वास में बदल जाता, कम से कम उस समय के लिए। इसके बाद वह अपने से सवाल करता कि उसे यह क्या सूझी जो उस खोली में से निकलकर इस उबलते हुए कड़ाह में आ गिरा? और इसका वह कोई जवाब न दे पाता। लेकिन उसके भीतर, कहीं ख़ूब गहराई में, उसकी यह उधेड़-बुन चलती रहती। उसकी दिमाग़ी उलझन उसके काम में बाधक न हो, इसलिए वह पूरा ज़ोर लगाकर ध्यान से डाक्टरों की गतिविधि का अनुसरण करता। उसने लोगों को पहले कभी इतने निःस्वार्थ भाव से काम करते नहीं देखा था जितने निःस्वार्थ भाव से कि वे यहां काम करते थे। डाक्टरों और छात्रों के थककर चूर हुए चेहरों पर वह नज़र डालता और सोचता—"ये लोग सच्ची मेहनत का धन खाते हैं।"

दिन का अन्त हो जाने पर जब उसका काम ख़त्म हो जाता तो थकान से निढाल ग्रिगोरी बैरकों के अहाते में निकल जाता और दवाईघर की खिड़की के नीचे लेट जाता। उसकी कनपटी तक-तक करती, पेट में कोई पंजे से गड़ाता और उसके पांव दर्द करते। बिना किसी विचार या इच्छा के वह घास पर लम्बा लेट जाता, वहां पड़ा छिपते हुए सूरज की लाली से ख़ूब रंजित बादलों के गालों की ओर ताकता रहता और जल्दी ही नींद में डूब जाता।

वह सपने में देखता कि उसे और उसकी पत्नी को डाक्टरों में से एक ने दावत दी है। एक बहुत बड़ा कमरा है जिसकी दीवारों से सटी सीधी पीठ वाली कुर्सियां लगी हैं। इन कुर्सियों पर बैरकों के सभी रोगी बैठे हैं। डाक्टर और मात्र्योना फ़र्श के बीच में एक शान्त 'रूसी' नृत्य कर रहे हैं और वह ख़ुद अकार्डियन बजा रहा है

श्रौर हंस रहा है, क्योंकि डाक्टर की लम्बी टांगें झुक नहीं पातीं श्रौर उस समय जब रस्मी श्रन्दाज़ में शान के साथ मात्र्योना का श्रनुसरण करता वह कमरे में चक्कर लगाता था तो एकदम ऐसा मालूम होता जैसे दलदल में सारस चल रहा हो।

श्रौर सबके सब मरीज़ भी उसे देख-देखकर हंसी में लोट-पोट हो रहे थे।

सहसा पुलिसमैन दरवाज़े में श्राकर खड़ा हो गया।

"श्रहा!" वह श्रातंकित करनेवाली श्रावाज़ में चिल्लाया – "सो तुमने समझा कि मैं मर गया, – क्यों, ठीक बात है न, ग्रिगोरी? मुझे तो मुर्दाघर में फेंक दिया श्रौर खुद यहां श्रकार्डियन बजा रहे हो! श्रच्छा तो चलो श्रब मेरे साथ। उठो!"

ग्रिगोरी जल्दी से उठ बैठा। उसका समूचा बदन थरथर कांप रहा था श्रौर ठंडा पसीना छूट रहा था। डाक्टर वाश्चेन्को उसपर श्राड़ा झुका था।

"तुम कैसे परिचारक हो, मेरे मित्र, जो यहां ज़मीन पर लम्बी ताने हो, सो भी पेट के बल?" उसने शिकायत के स्वर में कहा – "श्रगर तुम्हारे पेट में ठंड पहुंच गई तो तुम श्रपने श्रापको रोग के चंगुल में फंसा पाश्रोगे श्रौर इससे पहले कि तुम्हें इसका मान हो तुम इस दुनिया से कूच कर चुके होगे। नहीं, ऐसे नहीं चलेगा, भले श्रादमी। बैरकों के भीतर तुम्हारे लिए बिस्तर मौजूद है, – क्या उन्होंने तुम्हें यह नहीं बताया? तुम पसीने में तर हो श्रौर तुम्हें झुरझुरी चढ़ी है। चलो मेरे साथ, तुम्हें गरमाने के लिए कुछ दे दूं।"

"मैं कुछ थक गया था," ग्रिगोरी ने बुदबुदाकर कहा।

"यह श्रौर भी बुरा है। तुम्हें श्रपनी देख-भाल रखनी चाहिए। ये खतरे के दिन हैं श्रौर हमें तुम्हारी ज़रूरत है, भले श्रादमी।"

ग्रिगोरी चुपचाप डाक्टर के पीछे-पीछे गलियारे में गया और उतने ही चुपचाप एक गिलास में से कोई दवा अपने गले में उंडेल ली, इसके बाद दूसरे गिलास की दवा ख़ाली की, मुंह बिचकाया और थूककर गला साफ़ किया।

"अब जाओ और थोड़ा सो लो," डाक्टर ने कहा और अपनी लम्बी-पतली टांगों से डग भरता वहां से चला गया।

ग्रिगोरी उसे जाते हुए देखता रहा और फिर अचानक अपनी पूरी बत्तीसी चमकाता डाक्टर के पीछे लपका।

"धन्यवाद, डाक्टर!"

"किसलिए?" उसने पूछा।

"आपने जो इतना कष्ट किया, इसलिए। विश्वास करें, आपके लिए मैं कोई कसर न उठा रखूंगा। आपने मेरे लिए इतना कष्ट उठाया, यह मैं भूल नहीं सकता... और... और वह सब कि मेरी ज़रूरत है। बहुत-बहुत धन्यवाद, डाक्टर।"

बैरकों के इस परिचारक की ओर, जिसका चेहरा किसी नयी ख़ुशी से छलछला रहा था, डाक्टर ने अचरज से देखा और ख़ुद उसका चेहरा भी मुसकराहट से खिल गया।

"तुम भी अजीब जीव हो," उसने कहा—"लेकिन सो कुछ नहीं। सब ठीक है, बिल्कुल ठीक है। सच पूछो तो यह बहुत ही अच्छा और बहुत ही सचाई से भरा है। बस, डटे रहो और अपनी कोशिश में कोई कसर न छोड़ो—मेरे लिए नहीं, रोगियों के लिए। हमें लोगों को इस रोग से बचाना है—जैसा कि कहते हैं, उसके पंजों में से उन्हें खींच लाना है। हम उसपर क़ाबू पाने में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे,—ठीक है न? लेकिन पहले जाओ और थोड़ी नींद ले लो।"

इसके एक मिनट बाद ही ग्रिगोरी बिस्तर पर पड़ा ऊंघ रहा था और अपने पेट के भीतर किसी सुहावनी और सहलानेवाली चीज़ का अनुभव कर रहा था। वह ख़ुश था और यह सोचकर गर्व का अनुभव कर रहा था कि उसने डाक्टर के साथ कुछ सीधे-सादे शब्दों का आदान-प्रदान किया।

नींद में खो जाने से पहले आख़िरी बात जो उसके दिमाग़ में आई वह यह कि कितना अच्छा होता अगर मात्र्योना भी उनकी बातों को सुन पाती। अगले दिन वह उसे सारा हाल बताएगा, लेकिन वह उसका विश्वास नहीं करेगी, – मिर्चों की बुकनी है कम्बख़्त!

* * *

अगली सुबह पत्नी की आवाज़ ने उसे जगा दिया।

"चलने का समय हो गया। चलो, चाय पी लो, ग्रिगोरी," उसने कहा।

उसने अपना सिर उठाकर उसकी ओर देखा। वह मुसकरा रही थी। बाल सफ़ाई के साथ कंघी से संवारे हुए थे और अपने सफ़ेद कपड़ों में वह अद्भुत रूप में स्वच्छ तथा ताज़ा मालम हो रही थी।

इस रूप में वह बहुत ही सुहावनी लग रही थी और यह सोचकर वह कुछ विचलित हो उठा कि बैरकों में भी वह इसी रूप में अन्य सबके सामने प्रकट होगी।

"यह किसकी चाय मुझे पिलाई जा रही है? मेरी अपनी चाय मौजूद है, – उसके लिए मैं अन्य कहीं क्यों मुंह मारूं?" उसने मुंह फुलाकर कहा।

"मेरे साथ चलो, – और हम दोनों एक साथ चाय पिएंगे," अपनी आंखों में मृदु मुसकान लिए उसने कहा।

ग्रिगोरी ने आंखें बचाते हुए कहा कि अच्छी बात है।

उसके चले जाने के बाद वह फिर अपने बिस्तरे पर लेट गया और सोचने लगा।

"उसके मन में क्या है? मुझे अपने साथ चाय पीने के लिए बुलाना और मुझे वैसी नज़रों से देखना... पहले से दुबला भी गई है।" उसके लिए उसने तरस का अनुभव किया और उसके जी में आया कि उसे खुश करने के लिए कुछ करना चाहिए। चाय के साथ के लिए कुछ मिठाई ख़रीदना कैसा रहेगा? लेकिन हाथ-मुंह धोते न धोते यह विचार रद्द कर दिया। स्त्री को सिर पर चढ़ाने में कोई तुक नहीं। मिठाई के बिना वह मर नहीं जाएगी।

एक छोटे-से कमरे में उन्होंने चाय पी। कमरे में दो खिड़कियां थीं जो उगते हुए सूरज की सुनहरी किरनों का सिंगार किए एक खेत की ओर खुलती थीं। खिड़की के पास घास की पत्तियों पर ओस के मोती अभी भी जगमगा रहे थे और ख़ूब दूर—सुबह की बेला के गुलाबी धुंधलके में—डाक-पथ के पेड़ों की पांत नज़र आ रही थी। आकाश स्वच्छ था और खिड़की में से सुबह की हवा के साथ ओस में भीगी धरती तथा घास की भीनी गंध आ रही थी।

मेज़ दोनों खिड़कियों के बीच दीवार से सटी थी और मेज़ पर तीन जने बैठे थे—ग्रिगोरी, मात्र्योना और मात्र्योना की एक मित्र—मझोली आयु की दुबली-पतली लम्बे क़द की स्त्री, मुंह पर चेचक के दाग़ और बहुत ही भली भरी आंखें। उसका नाम फ़ेलीत्साता येगोरोव्ना था। अभी उसका विवाह नहीं हुआ था और वह किसी कालेजिएट असेसर की लड़की थी। अपने लिए चाय का पानी वह हमेशा अपने समोवर में ही उबालती थी, क्योंकि अस्पताल की टंकी में उबला हुआ पानी पीते उसे घिन आती थी। अपनी तड़की हुई आवाज़ में ओरलोव को यह सब बता और इसके बाद खिड़की के पास

बैठकर 'सच्चे मानी में दैवी वायु' अपने फेफड़ों में भरने की सलाह दे खुद बाहर चली गई।

"कल क्या तुम बहुत थक गई थीं?" ग्रिगोरी ने अपनी पत्नी से पूछा।

"बुरी तरह," उसने प्रफुल्लता से कहा—"ऐसा मालूम होता था जैसे मेरे पांव टूटकर गिर पड़ेंगे और मेरा सिर इस तरह घूम रहा था कि उनकी एक भी बात, जो वे मुझसे कहते थे, मेरे पल्ले नहीं पड़ रही थी। डर के मारे कि कहीं मैं यहीं ढेर न हो जाऊं, मेरी जान सूख रही थी। बड़ी मुश्किल से, जाने कैसे, मैं सांझ तक खड़ी रह सकी। मेरे मुंह से बार-बार यही एक प्रार्थना निकल रही थी—'हे भगवान्, मेरी मदद करना।'"

"तुम्हें डर तो नहीं लगता?"

"लगता है,—जो मर जाते हैं उनसे। और क्या तुम्हें पता है," आगे की ओर झुकते हुए आतंक-भरी फुसफुसाहट में वह बोली—"मरने के बाद वे हरकत करते हैं,—सच, भगवान् साक्षी है।"

"यह तो खुद अपनी आंखों से मैंने भी देखा है," अनमनी लघु हंसी के साथ ग्रिगोरी ने कहा—"कल नज़ारोव पुलिसमैन ने, मरने के बाद, मेरा जबड़ा ही तोड़ दिया होता, लेकिन बच गया। मैं उसे मुर्दाघर में ले जा रहा था कि अचानक उसने बायां हाथ तड़ाक से मारा,—मुझे डुबकी तक लगाने का मौक़ा न दिया। बोलो, कैसा लगता है यह तुम्हें?"

बात को उसने कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कहा था, लेकिन अपने आप ही ऐसा हो गया, अपनी ओर से जान-बूझकर उसने कुछ नहीं किया था।

इस उजले साफ़-सुथरे कमरे में, जिसकी खिड़कियों में से अनन्त हरे-भरे खेत और नीला आकाश नज़र आता था, चाय पीना उसे बड़ा अच्छा मालूम हुआ। इसके सिवा कुछ और भी था जो उसे अच्छा लग रहा था, लेकिन यह कुछ और क्या था—उसकी पत्नी थी या वह खुद—

इसका उसे निश्चय नहीं था। जो हो, उसकी सर्वोपरि इच्छा यही थी कि अपनी प्रकृति का श्रेष्ठतम पहलू ही वह झलकाए, दिन का हीरो वह बने।

"बस, एक बार काम में जुटने भर की देर समझो, फिर देखना, धरती किस प्रकार मेरे पांव के नीचे उफनती है। और इसकी वजह है। एक तो यह कि यहां के लोग... वे इस दुनिया के कीड़े नहीं हैं।"

और उसने उसे डाक्टर के साथ अपनी बातचीत का ब्योरा सुनाया—अनजाने में ही फिर बढ़ा-चढ़ाकर—और इससे उसका मूड और भी खिल गया।

"और दूसरे, यह काम ही ऐसा है। यह एक महान् काम है,—मिसाल के तौर पर युद्ध की भांति। एक ओर हैज़ा, दूसरी ओर रोगी,—जीत का सेहरा किसके सिर बंधेगा? यह काम ऐसा है जिसमें दिमाग़ लगता है और हर कील-कांटे से चौकस रहना पड़ता है। आख़िर, हैज़ा है क्या? पहले यह जानो और फिर—जितना तुममें दम है—उसपर प्रहार करो,—ठीक उसके मर्मस्थल पर। डाक्टर वाश्चेन्को ने मुझसे कहा—'हमें ठीक तुम्हारे जैसे आदमी की ज़रूरत है,' उसने कहा—'जाओ और उसका पीछा न छोड़ो!' वह बोला—'पांवों से सूत कर उसे तुम रोगियों के पेट में खदेड़ दो और वहां,' उसने कहा—'बहुत ही कारगर और तेज़ दवा से मैं उसकी गरदन दबोच लूंगा। वह वहीं टें हो जाएगा और रोगी अच्छा होकर तुम्हें और मुझे उम्र भर दुआ देगा, क्योंकि उसे मौत के मुंह में से किसने छुड़ाया? हमने!'"

ग्रिगोरी का सीना उभर आया और उसने चमकती हुई आंखों से अपनी पत्नी की ओर देखा। जवाब में वह उछाह से मुसकराई। वह इस समय बहुत ही सुन्दर दिख रहा था,—ठीक वैसा ही जैसा कि वह उनके विवाह से पहले दिखाई देता था।

"हमारे वार्ड में भी ऐसे ही लोग हैं—बहुत भले और मेहनती।

उनमें एक है—डाक्टर, खूब मोटी-ताज़ी और डील-डौल वाली स्त्री। वह चश्मा लगाती है। सभी बहुत अच्छे हैं,—इतने अच्छे कि कहते नहीं बनता। दिमाग़ ज़रा भी नहीं, और इतनी अच्छी तरह बोलते हैं कि उनकी बात हमेशा समझ में आ जाती है।"

"सो तुम्हें कोई शिकायत नहीं? तुम सन्तुष्ट हो?" ग्रिगोरी ने पूछा जिसका उछाह अब कुछ हल्का पड़ चला था।

"मैं? हाय भगवान्, यह भी कोई पूछने की बात है! तुम खुद ही देखो—मुझे बारह रूबल मिलते हैं और बीस तुम पा जाते हो, कुल मिलाकर हर महीने बत्तीस रूबल हुए और खर्च कुछ भी नहीं। अब तुम्हीं सोचो, अगर यह हैज़ा चलता रहा तो जाड़ों तक कितना हम बचा लेंगे। भगवान् ने चाहा तो हमें अब उस गुफा में रेंगने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। हम उसे छोड़ देंगे।"

"हम्म,—यह तुमने अच्छी बात सुझाई," ग्रिगोरी गुनगुनाया। फिर कुछ देर रुककर आशा से हुमकते हुए उसने अपनी पत्नी की कमर थपथपाई और विह्वल आवाज़ में बोला—"ओह, मात्र्योना, वह दिन अब आ ही गया, समझो, जब सूरज हमपर भी अपनी किरनों की वर्षा करेगा। बस, अपनी ठोड़ी ऊंची रखना!"

वह प्रसन्न थी।

"केवल इतना ही है कि तुम..."

"अरे छोड़ो उसे! 'जैसा चमड़ा वैसी सुई, जैसा मौसम वैसे जूते।' जब हमारा जीवन बदलेगा तो वह भी बदल जाएगा!"

"ओ, दयामय, क्या सचमुच ऐसा होगा!"

"बस-बस, रहने दो यह सब!"

"ग्रिगोरी, मेरे राजा!"

जब वे अलग हुए, उनके हृदय एक दूसरे के प्रति नयी भावना से

उमंग रहे थे। उनकी आशा-आकांक्षाओं ने उनमें आह्लाद और साहस का संचार कर दिया था और जी-जान से काम में जुटने की तत्परता उनमें छलछला रही थी।

अगले तीन या चार दिनों में ग्रिगोरी ने अपनी फुर्ती और कार्यकुशलता के लिए कई बार सराहना प्राप्त की, साथ ही उसने यह भी देखा कि प्रोनिन तथा अन्य कई परिचारक उससे जलते थे और उसे छोटा-मोटा नुक़सान पहुंचाने की कोशिश करते थे। वह चौकस हो गया और थलथल मुंह प्रोनिन से घृणा करने लगा जिसे कि वह पहले अपना मित्र बनाने तथा जिसके सामने वह 'अपना हृदय खोलकर रखने' के लिए तैयार रहता था। यह देखकर उसे बड़ा दुख होता कि उसके साथी उसे नीचा दिखाने के लिए पूरी बेशर्मी से जुटे हैं।

"शैतान कहीं के!" उसने मन ही मन में कहा और कसकर अपने जबड़े को भींच लिया। उसने निश्चय किया कि वह भी अब तुर्की ब तुर्की जवाब देगा। फिर अनायास ही उसे अपनी पत्नी का ध्यान हो आया, जिसे वह सभी कुछ बता सकता है, बिना इस डर के कि वह उसकी सफलता पर जलेगी या उसके जूतों पर कार्बोलिक तेज़ाब डाल देगी जैसा कि प्रोनिन ने किया था।

बाद के दिन भी उतने ही व्यस्त और हलचलपूर्ण बीते जितने कि शुरू के, लेकिन अब ग्रिगोरी को उतनी थकान नहीं मालूम होती थी। कारण, उसकी शक्ति का खर्च दिन प्रति दिन अब अधिक सुसंगत और नियमित होता जा रहा था। विभिन्न दवाइयों को उनकी गंध से ही वह पहचान लेता था और जब ईथर से उसका परिचय हो गया तो नज़र बचाकर वह उसे खूब सूघता। इसका नतीजा उतना ही सुखद होता जितना कि वोडका से भरे एक अच्छे ख़ासे गिलास का। डाक्टर और छात्र भी उसे अधिकाधिक पसन्द करने लगे थे। एक तो इसलिए कि वह

उनके आदेशों को बहुत ही फुर्ती से पकड़ता था, तिसपर वह सहृदय था और खूब बतियाना तथा मरीज़ों को खुश रखना जानता था। कुल मिलाकर जीवन के इस नये ढब की जो छाप उसके हृदय पर पड़ी थी, उसने ग्रिगोरी में एक विचित्र आह्लादपूर्ण मूड का संचार कर दिया था। उसे ऐसा अनुभव होता जैसे वह असाधारण तत्वों से बना है। उसके हृदय में कोई ऐसा काम करने की इच्छा का उदय हो गया था जो सबका ध्यान उसकी ओर खींचे, कोई ऐसा काम, जो सबको चकित कर दे। उसकी यह इच्छा कम व बेश रूप में अपने को उभारने के लिए उस प्राणी की इच्छा के समान थी जिसे एकाएक पहली बार अपने आपको मानव-जीवधारी अनुभव करने का मौक़ा मिला हो लेकिन जो अपनी इस सर्वथा नयी अनुभूति के प्रति अभी तक सन्देहों से घिरा होने के कारण ऐसे उपायों की खोज में हो जिनसे कि वह अपने आपको और दूसरों को उसकी सत्ता का विश्वास दिला सके। अपने को उभारकर रखने की उसकी यह इच्छा-थोड़ा थोड़ा करके आत्मत्याग से पूर्ण कोई महान् कार्य करने की भूख में परिवर्तित हो गई थी।

मस्तिष्क की इस अवस्था में ग्रिगोरी अनावश्यक खतरों में हाथ डाल देता। मिसाल के तौर पर एक दिन, किसी मदद की प्रतीक्षा किए बिना, अकेले उसने ही एक भारी-भरकम मरीज़ को बिस्तरे से उठाया और उसे ग़ुसलख़ाने की ओर ले चला। वह सबसे गंदे मरीज़ों की टहल का काम अपने ज़िम्मे लेता, छूत लगने के ख़तरे का जान-बूझकर मुंह चिढ़ाता और मृतों को इतनी सरलता से अपनाता कि उसके सनक जाने का सन्देह होता। वह इतने पर ही बस नहीं करता। कोई बड़ा काम करने की हूक उसे निचला न बैठने देती, वह बराबर बढ़ती ही जाती, उसके हृदय को कचोटती और उसमें उदासी का संचार करती। ऐसे क्षणों में वह अपनी पत्नी के सामने अपना हृदय उंडेलकर रख देता। कारण, उसके सिवा अन्य कोई नहीं था जिससे वह बातें कर सकता।

एक सांझ, जब उनका काम ख़त्म हो चुका था और वे भोजन कर चुके थे, दोनों टहलने के लिए खेतों में निकल गए। बैरक नगर से कुछ दूर एक लम्बे हरे-भरे मैदान में बनी थी। मैदान के एक बाज़ू काले जंगल की एक पट्टी फैली थी और दूसरे बाज़ू नगर की रिहाइशी इमारतों की पांत दिखाई देती थी। उत्तर की ओर, खूब दूर तक, खेत फैले थे जिनके हरियाले बिस्तार धुंधले नीले क्षितिज के साथ घुल-मिलकर एकाकार हो गए थे। दक्खिन की ओर, नदी के बहाव के साथ-साथ, पहाड़ियों का एक सिलसिला मैदान को अलग करता फैला था। इस सिलसिले के साथ-साथ डाक-पथ चला गया था जिसपर सम अन्तर पर पुराने और खूब फैले हुए पेड़ों की पांत खड़ी थी। सूरज छिप रहा था और बग़ीचों की काली-हरी हरियाली के ऊपर गिरजों के क्रास चमक रहे थे और प्रकाश की सुनहरी किरनों को छितरा रहे थे। बाह्य छोरी पर स्थित घरों की खिड़कियां भी उसी प्रकार सूर्यास्त की लाल लपटों को छितरा रही थीं। कहीं से संगीत की ध्वनि आ रही थी। घाटी में से, जो फ़र के पेड़ों से खूब घनी आच्छादित थी, राल की गंध आ रही थी। पेड़ अपनी बोझिल गंध हवा में उंडेल रहे थे और सुगंधित हवा के झोंके, कोमल और सुहावने, नगर की ओर प्रवाहित हो रहे थे। दूर-दूर तक फैले ये निराले खेत बड़े ही प्यारे मालूम होते थे—कुछ इतने शान्त, इतने मधुर और इतने उदास थे वे!

ग्रिगोरी और मात्र्योना बिना कुछ बोले खेतों में टहल रहे थे। बैरक की गंध के बजाय इस स्वच्छ हवा को अपने फेफड़ों में भरना उन्हें बड़ा आनन्दप्रद मालूम हो रहा था।

"पता नहीं, यह संगीत की ध्वनि कहां से आ रही है—नगर की ओर से या छावनी की ओर से ?" मात्र्योना ने अपने पति से पूछा जो विचारों में खोया था।

उसे उसका विचारों में खोना अच्छा नहीं लगता था। जब भी ऐसा

होता था, वह कुछ अजीब-सा मालूम होता था और पहुंच से बाहर— कहीं दूर—चला जाता था और आजकल, जब कि वे एक दूसरे से बहुत ही कम मिल पाते थे, उसके लिए एक-एक क्षण मूल्यवान् था।

"संगीत?" जैसे सपने से चौंककर ग्रिगोरी ने कहा—"भाड़ में जाए वह,—तुम्हारा वह संगीत! तुम्हें वह संगीत सुनना चाहिए जो मेरी आत्मा के तारों से झंकृत हो रहा है। असली संगीत वही है।"

"यह तुम क्या कह रहे हो?" अपने पति के चेहरे की ओर व्यग्र भाव से देखते हुए मात्र्योना ने पूछा।

"मैं... मैं नहीं जानता। मैं केवल इतना ही जानता हूं कि मेरे हृदय में लपटें लपलपा रही हैं। मुझे जगह चाहिए—खुली जगह—जहां मैं अपनी समूची शक्ति से डग भर सकूं। ओह, कोई चीज़ ऐसी नहीं है जो मेरी इस शक्ति के मार्ग में आड़े आ सके। मिसाल के लिए अगर यह हैज़ा आदमी का—जिन्न का—रूप धारण कर ले—चाहे ख़ुद इल्या मुरोमेत्स* ही क्यों न मेरे सामने आ जाए—मैं उसे ऐसे हाथ दिखाऊं कि वह भी याद रखे। जान की बाज़ी लगाकर फिर युद्ध हो! तुम मज़बूत हो और यह ग्रिगोरी भी कुछ कम नहीं है, सो दो-दो हाथ हो जाएं,—देखें कौन जीतता है। मैं हैज़े की जान निचोड़ लूं और इसके बाद धरती पर गिरकर ख़ुद भी जान दे दूं। बाहर खेतों में मेरी क़ब्र होगी और उसपर क्रास लगाते हुए वे कहेंगे—'यहां ग्रिगोरी आन्द्रेयेविच ओरलोव सोया है जिसने रूस को हैज़े से मुक्त किया,'—बस, इतना ही और कुछ नहीं।"

जब वह बोल रहा था तो उसका चेहरा चमक रहा था और आंखें कौंध रही थीं।

---

*इल्या मुरोमेत्स रूसी आल्हों का एक बहादुर है जो अपनी वीरता के लिए मशहूर है।—सम्पा०

"मेरे बहादुर आदमी!" मात्र्योना बुदबुदाई और उसके और भी निकट सट गई।

"अगर मुझे यह जंच जाए कि इससे कुछ भला होगा, जीवन कुछ और सहज हो जाएगा, तो सैकड़ों संगीनें भी मुझे नहीं रोक सकतीं, क्योंकि मैं देख चुका हूं कि लोग क्या हो सकते हैं- मिसाल के लिए जैसे डाक्टर वाश्चेन्को और वह छात्र ख़ोख़रियाकोव। तुम यक़ीन तक नहीं कर सकतीं,—इस तरह वे काम करते हैं। इसे आश्चर्य ही समझो जो वे अब तक जीवित हैं। और क्या तुम समझती हो कि वे धन के लिए ऐसा करते हैं? धन के लिए कोई उस तरह काम नहीं कर सकता। उस डाक्टर के पास धन का एक अच्छा ख़ासा ढेर जमा है और इसके अलावा एक अच्छी खासी रक़म और होगी, इसमें भी कोई सन्देह नहीं। लेकिन पिछली बार जब वह वृद्ध डाक्टर बीमार पड़ा तो डाक्टर वाश्चेन्को ने लगातार चार दिन तक काम किया,—क्षण भर के लिए भी उसने अपने घर का रुख़ नहीं किया। धन उनके लिए बड़ी चीज़ नहीं है। बड़ी चीज़ है दया की भावना। दूसरों के लिए तरस, लेकिन ख़ुद अपने लिए कोई तरस नहीं। वे किसपर तरस खाते हैं? हर किसीपर। मिसाल के तौर पर मिश्का उसोव को लो जिसका उपयुक्त स्थान—जैसा कि सभी जानते हैं—जेल है, क्योंकि मिश्का चोर है और भी जाने कितने ऐब उसमें भरे हैं। लेकिन उन्होंने मिश्का को चंगा करने में कोई कसर न छोड़ी। और जब वह बिस्तरे से उठा तो वे इतने ख़ुश हुए कि बस,—हंसने लगे। और मैं भी उस ख़ुशी का स्वाद देखना चाहता हूं – ख़ूब जी भरकर—इतना कि मैं उसमें डूब जाऊं। कारण, हृदय में चोट लगती है जब वे ख़ुशी से हंसते हैं और मैं वहां खड़ा हुआ बस ताकता रहता हूं। मेरा रोम-रोम कसकता और लपटों में जलने लगता है। ओह, भाड़ में जाए यह सब!"

और ग्रिगोरी फिर विचारों में डूब गया।

मात्र्योना ने कुछ नहीं कहा, लेकिन उसका हृदय दुख से धड़क रहा था। उसके पति की उत्तेजना ने उसे भयभीत कर दिया था। उसके शब्दों के पीछे उसने उसकी आकांक्षा की गहराई का साफ़ तौर से अनुभव किया और यह एक ऐसी आकांक्षा थी जो उसकी समझ में नहीं आती थी क्योंकि उसे समझने की उसने कभी कोशिश नहीं की थी। उसके लिए उसका पति ही प्यारा और आवश्यक था, न कि कोई भावना-शरीरी हीरो।

घाटी के कगार पर पहुंच वे दोनों अग़ल-बग़ल बैठ गए। नवजात बर्च वृक्षों की घुंघराली कलगियां नीचे से उनकी ओर देख रही थीं। नीली धुंध घाटी की तलहटी से चिपकी थी। और उसकी गहराइयों में से सीलन, देवदार के कोनों और पिछले साल की पत्तियों की गंध उठ रही थी। रह-रहकर हवा का झोंका आता, बर्च वृक्षों की टहनियां झूम उठतीं और इसी प्रकार नन्हे फ़िर वृक्ष लहराने लगते। समूची घाटी में एक सहमी-सी कांपती हुई मर्मर-ध्वनि गूंज रही थी, मानो कोई, जो पेड़ों का प्रिय था, उनकी टहनियों के साये में सो गया था और वे बहुत ही धीमे स्वरों में एक दूसरे से फुसफुसाकर बतिया रहे थे,—इस डर से कि कहीं उसकी नींद न उचट जाए। नगर में रोशनियां चमचमा रही थी, जैसे बग़ीचों की पृष्ठभूमि में उजले फूल खिले हों। ओरलोव दम्पति बिना कुछ बोले चुपचाप बैठे थे। ओरलोव अपनी उंगलियों से अपने घुटने पर तबला बजा रहा था, वह आंखें ऊंची किए उसकी ओर देख रही थी और धीमी उसांसें भर रही थी।

सहसा उसने अपनी बांहें उसके गले में डाल दीं और अपना सिर उसके सीने से सटा लिया।

"ग्रिगोरी, मेरे राजा, मेरे जीवन-धन!" वह फुसफुसा उठी— "मेरे बहादुर आदमी, एक बार फिर कितने अद्भुत हो उठे हो तुम! ऐसा मालूम होता है जैसे हमारा वह जीवन लौट आया है जो हम-तुम

उस समय बिताते थे जब कि हमारी शादी हुई थी—तुम ऐसी कोई बात नहीं कहते, जो मुझे चोट पहुंचानेवाली हो, और तुम मुझसे हर समय बातें करते—अपने मन की सारी बातें खोलकर रख देते—और तुम मुझे पीटते नहीं..."

"तो क्या पिटने के लिए तुम्हारा हृदय कुड़मुड़ा रहा है? अगर चाहो तो मैं अभी धमाधम कर सकता हूं," प्रेम की रमक में हुमकते और अपनी पत्नी के लिए तरस का अनुभव करते कोमल स्वर में उसने कहा।

उसने उसके बालों को थपथपाना शुरू किया और यह उसे इतना सुखद और इतना पितृतुल्य मालूम हुआ, जैसे वह बच्ची हो,—और मात्र्योना सचमुच बच्ची के समान थी, उसकी बांहों में वह एक मुलायम गेंद की भांति दुरक गई थी और उसके सीने से सटी कुनमुना रही थी।

"मेरे प्रिय," वह गुनगुनाई।

उसने एक गहरी सांस ली और उसके मुंह से अपने आप शब्दों की एक ऐसी धारा बहने लगी जो खुद उसके लिए और मात्र्योना के लिए नयी थी।

"मरी गुड़िया रानी! तुम कुछ भी कहो, लेकिन तुम्हारे पति जैसा मित्र कोई नहीं है। और तुम हो कि किसी अन्य की ताक-झांक में लगी रहती हो। अगर मैंने तुम्हारे साथ कभी-कभी सख़्ती बरती तो इसका कारण मेरी वेदना था, वहां उस खोह में रहना, कभी रोशनी का मुंह तक न देखना, लोग वास्तव में कैसे होते हैं, इसकी जानकारी न होना। लेकिन उस खोह से बाहर निकलते ही मेरी आंखें खुल गईं, उससे पहले तक मैं अंधा था। अब मैं जानता हूं—तुम चाहे जो भी कहो—कि तुम मेरी पत्नी ही मेरी सबसे अच्छी मित्र हो। कारण, सच पूछो तो ज़्यादातर लोग निरे सांप हैं। वे केवल ज़हर उगलना जानते हैं। मिसाल के लिए जैसे प्रोनिन और वास्युकोव। लेकिन जहन्नुम में जाएं वे... अरे चुप, तुम

कुछ न कहो, माश्योना। सब ठीक हो जाएगा। तुम बस अपनी ठोड़ी ऊंची रखो। हम बढ़िया और संगत जीवन बिताना शुरू करेंगे। अरे, यह क्या?.. तुम यह क्या करने लगी, मेरी भोली रानी!"

उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे—खुशी के आंसू—और चुम्बनों से उसने उसके प्रश्नों का जवाब दिया।

"मेरी गुड़िया!" वह फुसफुसाया और बदले में उसने भी उसे चूम लिया।

और इस तरह दोनों ने एक दूसरे के आंसुओं को चुम्बनों से धो दिया और दोनों ने उनके खारीपन की बानगी ली। और बहुत देर तक ग्रिगोरी ऐसे शब्दो का उच्चार करता रहा जो उसके लिए नये थे।

अंधेरा घिर आया। तारों-भरा आकाश गम्भीर उदासी से नीचे धरती की ओर ताक रहा था और खेत भी उतने ही शांत थे जितना शांत कि आकाश था।

* * *

एक साथ कलेवा करने की आदत उन्होंने डाल ली थी। खेतों में अपनी बातचीत के बाद अगली सुबह ग्रिगोरी अपनी पत्नी के कमरे थी, में आया। उसका चेहरा भारी और चौकन्ना-सा था। फ़ेलीत्साता बीमार थी, इसलिए माश्योना कमरे में अकेली थी। उसने अपना प्रसन्न चेहरा उसकी ओर घुमाया, लेकिन उसपर तुरत एक छाया सी तिर गई।

"क्यों, बात क्या है? तबीयत तो कुछ गड़बड़ नहीं है?"

"मैं बिल्कुल ठीक हूं," कुर्सी पर बैठते हुए उसने कुछ सख्ती से जवाब दिया।

"तो फिर क्या बात है?"

"रात मैं सो नहीं सका। सारी रात जागता और सोचता रहा। किस तरह... पिछली रात... हम कूके और चहके... तुम और मैं... पूरे

अल्हड़पन के साथ। और अब मैं शर्म मे कटा जा रहा हूं। वह सब नही चलेगा। तुम स्त्रियां हमेशा यही सोचती रहती हो कि पुरुष को किसी तरह अपनी कनकी उंगली में लपेटकर रख छोड़ें। लेकिन यह न समझना कि तुम मेरे साथ भी वैसा ही कर सकती हो। ऐसा करने से कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा। तुम मुझे अपने जाल में नहीं फंसा सकतीं। मैं तुम्हारे लासे में नहीं जाऊंगा, यह तुम अच्छी तरह से समझ रखना!"

उसने यह सब भारी बल देकर कहा, लेकिन बिना अपनी पत्नी की ओर देखे। मात्र्योना अपनी आंखें उसके चेहरे पर गड़ाए थी और उसके होंटों में विचित्र बल पड़ रहे थे।

"सो तुम्हें इस बात का दुख है कि पिछली रात तुम और मैं इतना निकट थे, – क्यों?" उसने बुदबुदाते हुए कहा – "तुम्हें दुख है कि तुमने मुझे चूमा और प्यार किया, – यही तुम कहना चाहते हो न? अगर तुम्हें केवल यह पता होता कि ऐसी बातें कहकर तुम मुझे कितनी चोट पहुंचा रहे हो! अपने निर्मम शब्दों से तुम मेरा हृदय ही तोड़ डालोगे। आखिर तुम चाहते क्या हो? क्या तुम मुझसे उकता गए हो? क्या तुम अब मुझसे प्रेम नहीं करते, या कोई और बात है?"

उसने सन्देह-भरी नज़र से अपने पति की ओर देखा। उसकी आवाज़ में चुनौती और तीखापन था।

"न... नहीं," ग्रिगोरी ने बेचैनी से कहा – "लेकिन कुल मिलाकर तुम जानती हो कि तुम्हें और मुझे कैसा जीवन बिताना पड़ा है। उसका ख़याल आते ही आंतें उलटने लगती हैं। और अब हम उससे बाहर उबर आए हैं... और... मैं सहम गया हूं। सभी कुछ इतनी आकस्मिकता से बदल गया। जैसे मैं और साथ ही तुम भी दूसरे आदमी हों। इसका क्या मतलब है? इसके बाद अब और क्या होनेवाला है?"

"जो भगवान् चाहेगा, वही होगा, ग्रिगोरी," मात्र्योना ने गम्भीरता

से कहा – "लेकिन इसके लिए दुखी न होना कि रात तुम इतने प्यार और दुलार से भरे थे।"

"अच्छा तो छोड़ो उसे!" ग्रिगोरी ने बीच में ही कहा और फिर आत्मचौकस हो गया – "मुझे उम्मीद नहीं कि हम दोनों के संयुक्त जीवन से कोई लाभ होगा। हमारा पुराना जीवन कोई खास आह्लादपूर्ण नहीं था और यह नया जीवन भी मेरे अनुकूल नहीं है। बावजूद इसके कि मैं अब नहीं पीता, यह कि मैं तुम्हें अब नहीं मारता या गालियां नहीं देता..."

वह बेसुध-सी हंस पड़ी, – एक लघु हंसी।

"यह सब करने का तुम्हें अब समय ही कहां मिलता है?" उसने कहा।

"पीने के लिए मैं जब भी चाहता समय निकाल लेता," पति ने मुसकराते हुए कहा – "लेकिन मैं चाहता ही नहीं, – यह सातवां आश्चर्य है। और कुल मिलाकर मैं नहीं जानता कि ऐसा क्यों है – शर्म की वजह से अथवा मेरे मन में डर है इसलिए!" कहते हुए उसने अपना सिर पीछे की ओर फेंका और फिर कुछ सोचने लगा।

"भगवान् ही जानता है कि तुम्हें क्या हो गया है," गहरी सांस भरते हुए मात्र्योना ने कहा – "यहां हम अच्छा जीवन बिता रहे हैं, हालांकि काम सख्त करना पड़ता है। डाक्टर तुम्हें पसन्द करते हैं, तुम कोई ऐसा काम नहीं करते जो तुम्हें नहीं करना चाहिए, – अब और क्या चाहते हो? तुम्हारे जैसा बेचैन जीव मिलना मुश्किल है!"

"यह सच है। मैं बेचैन हूं। सारी रात मैं सोचता रहा। प्योत्र इवानोविच का कहना है कि सभी लोग बराबर हैं। और क्या मैं ठीक वैसा ही नहीं हूं जैसा कि अन्य कोई? लेकिन डाक्टर वाश्चेन्को मुझसे ज्यादा अच्छा है। और इसी प्रकार प्योत्र इवानोविच तथा अन्य बहुत-से लोग

मुझसे अच्छे हैं। दूसरे शब्दों में यह कि वे मेरे बराबर नहीं हैं, मैं उनके बराबर नहीं हूं, – और यह मुझसे छिपा नहीं है! उन्होंने मिश्का उसोव को अच्छा किया, इससे उन्हें ख़ुशी हुई, लेकिन यह एक ऐसी बात है जो मेरी समझ में नहीं आती। अगर एक आदमी अच्छा हो गया तो इसके लिए ख़ुश क्यों हुआ जाए? अगर सच कहा जाए तो जिस तरह का जीवन वह बिताता है, वह हैज़े के मरोड़ों से कहीं ज़्यादा बुरा है। वे यह जानते हैं और फिर भी ख़ुश होते हैं। मैं भी उनकी भांति ख़ुश होना चाहता हूं, लेकिन नहीं, मैं ख़ुश नहीं हो सकता, क्योंकि... अगर सीधे यही देखना हो तो बोलो, इसमें ख़ुशी की ऐसी क्या बात है?"

"लेकिन लोगों के लिए उनके हृदयों में तरस है," मात्र्योना ने विरोध किया – "हमारे वार्ड में भी जब कोई स्त्री अच्छी होने लगती है तो... काश कि तुम उस समय का दृश्य देख पाते! अगर वह ग़रीब होती है तो पैसा, दवाई और सलाह देकर वे उसे उसके घर के लिए विदा करते हैं। देखकर आंखें छलछला उठती हैं, – इतने अच्छे हैं वे!"

"आंखें छलछला उठती हैं? मुझे तो केवल अचरज होता है। बस, और कुछ नहीं।" ग्रिगोरी ने अपने कंधों को बिचकाया और सिर खुजलाते हुए अपनी पत्नी की ओर चकराई आंखों से देखा।

और मात्र्योना ने अचानक शब्दों की एक बाढ़-सी लगा दी, – अपने पति के सामने यह सिद्ध करने के लिए कि लोगों पर तरस खाना ज़रूरी है। वह उसकी ओर आगे को झुकी थी, उसकी कोमल आंखें उसके चेहरे पर टिकी थीं और वह लोगों के बारे में और उनके जीवन की कठोरता के बारे में बोल रही थी। ग्रिगोरी पलटकर उसकी ओर देख रहा था और सोच रहा था –

"ओह, यह कितना अच्छा बोलती है। इसके पास इतने शब्द कहां से आ गए!"

"और खुद तुम भी उनपर तरस खाते हो। क्या तुमने यह नहीं कहा था कि तुम इतने सशक्त बनना चाहते हो कि हैज़े को निचोड़कर उसकी जान निकाल डालो? आखिर क्यों,—खासकर उस हालत में जब कि तुम हैज़े का दौर-दौरा होने के बाद से अच्छा जीवन बिता रहे हो?"

ग्रिगोरी खिलखिलाकर हंस पड़ा।

"यह एकदम सच है! सचमुच, जीवन तब से अच्छा बीत रहा है। ओह, जहन्नुम में जाए यह सब! लोग मर रहे हैं और मैं उसकी वजह से ऊंचा उठ रहा हूं। देखा, ऐसा है यह जीवन!"

वह अभी भी हंस रहा था। वह उठकर खड़ा हो गया और अपना काम करने चल दिया। गलियारे में से गुज़रते समय वह सोच रहा था—"कितना अच्छा होता अगर अन्य लोगों ने भी मात्र्योना को बोलते सुना होता। उसने एक अच्छा-खासा भाषण ही दे डाला। वह स्त्री है तो क्या, लेकिन वह चीज़ों को समझना जानती है!"

जब वह मर्दों के वार्ड में पहुंचा तो उसका हृदय खुशी से उमंग रहा था। वार्ड से रोगियों के कराहने और धरधराकर सांस लेने की अवाज़ें आ रही थीं।

मात्र्योना ने अनुभव किया कि अपने पति की नज़रों में उसका महत्व अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है और इसके लिए अपनी भरपूर शक्ति से वह हर प्रयत्न करती। व्यस्त और स्फूर्तिशील जीवन ने, जो कि वह बिता रही थी, खुद अपनी नज़रों में भी उसे ऊंचा उठा दिया था। विचारों में डूबने और चीज़ों को तौलने की उसे आदत नहीं थी, लेकिन खोली के जीवन की जब कभी वह याद करती—जहां अपने पति और छोटे-से घर की देख-भाल में ही उसका समूचा जीवन सिमटकर रह गया था—तो उसकी वर्तमान से तुलना किए बिना न रहती। इस प्रकार, धीरे-धीरे, उस खोह में उनके जीवन की दुखद स्मृति उसके मस्तिष्क से मिटती जा

रही थी। बैरक के अधिकारी उसकी उद्यमशीलता और दक्षता के लिए उसे चाहते थे, सभी उसपर मेहरबान थे और इन्सान की भांति उसके साथ व्यवहार करते थे। यह एक ऐसी चीज़ थी जो उसने पहले कभी नहीं जानी थी और उसे अधिकाधिक बड़े प्रयास करने के लिए उकसाती थी।

एक दिन रात की पाली में मोटी डाक्टर ने उससे उसके पहले जीवन के बारे में पूछा और वह बड़ी तत्परता से तथा खुलकर उसे हर चीज़ बताने लगी। अचानक वह बीच में ही रुक गई और उसके मुंह से एक लघु हंसी फूट पड़ी।

"अरे, तुम हंसने क्यों लगी?" डाक्टर ने पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं। लेकिन भयानक जीवन था वह, और–क्या तुम विश्वास करोगी?–मैं यह जानती तक नहीं थी! सच, ठीक इस क्षण तक मुझे यह मालूम नहीं था!"

अतीत के इस अवलोकन के बाद अपने पति के प्रति उसके रवैये में एक विचित्र परिवर्तन हो गया। प्यार तो वह अब भी उसे उतना ही अधिक करती थी जितना कि पहले, उतने ही अंधे अनियंत्रित आवेग के साथ, जितने आवेग के साथ कि एक मादा प्रेम कर सकती है, लेकिन अब उसे ऐसा अनुभव होता था कि ग्रिगोरी का उसके प्रति कुछ देय है। कभी-कभी जब वह उससे बातें करती तो उसके स्वर में संरक्षण का भाव झलकता, ग्रिगोरी के बेचैन उद्‌गार उसके हृद्रय में बहुधा तरस की भावना का संचार करते। लेकिन कभी-कभी ऐसे क्षण भी आते जब वह सन्देह करने लगती कि वह और उसका पति कभी एक थिर और शांतिमय जीवन बिता सकेंगे, हालांकि वह विश्वास करती थी कि ग्रिगोरी में थिरता आएगी और उसकी यह वेदना, जो उसे बेचैन बनाए है, शांत हो जाएगी।

भाग्य का विधान था कि वे एक दूसरे से मिले और वे दोनों के दोनों–जो समान रूप से युवा, मज़बूत और उद्यमशील थे–दो जून रोटी के

दैनिक संघर्ष में पूर्णतया फंसे अपना भयानक अधभूखा जीवन बिताते रहते अगर उन्हें, ग्रिगोरी के शब्दों में, 'उसके हृदय की उथल-पुथल' ने उबार न लिया होता जो दैनिक घिसघिस के ख़िलाफ़ उसके हृदय को विक्षुब्ध किए रहती थी।

* * *

सितम्बर की एक उदास सुबह बैरक के अहाते में एक गाड़ी आई। उस गाड़ी में से प्रोनिन ने रंग-रोग़न के धब्बे लगे एक छोटे लड़के को निकाला – बेजान, क्षीण, सांस तक लेने में असमर्थ।

"मोत्राया स्ट्रीट, पेतुन्निकोव के बाड़े का एक और रोगी," यह पूछे जाने पर कि उसे कहां से लाया गया है, गाड़ीवान ने जवाब दिया।

"सेन्का!" ग्रिगोरी दुख से कराह उठा – "मेरे चुनमुन! सेन्का, क्या तुम मुझे पहचानते हो?"

"हां-आं-आं!" सेन्का बड़ी कठिनाई से फुसफुसाया और ओरलोव को देखने के लिए, जो स्ट्रैचर का ऊपरी सिरा थामे आगे की ओर झुका था, अपनी आंखों को घुमाया।

"ओह, इतना चपल कि टिड्डे की भांति यहां से वहां फुदकता-फिरता था! तुम इसके चंगुल में कैसे फंस गए, सेन्का?" ग्रिगोरी ने पूछा।

रोग में बुरी तरह जकड़े इस बच्चे को देखकर ग्रिगोरी के हृदय पर एक अजीव प्रभाव पड़ा। एक दूसरे से टकरानेवाले भावों का उसके हृदय में उदय हुआ और अन्त में एक प्रश्न बनकर वे रह गए। वह वहां उसी प्रकार खड़ा व्यथा से सिर हिला रहा था। उसके मुंह से निकला –

"क्यों, एक बच्चे को इस रोग ने क्यों पकड़ा?.. इसने किसीका क्या बिगाड़ा था?"

सेन्का कांप उठा। उसने कुछ कहा नहीं।

उन्होंने उसे बिस्तरे पर लेटा दिया और उसके चिथड़े उतारने लगे जिनमें इन्द्रधनुष के सभी रंग पुते थे।

"मुझे शीत चढ़ा है," सेन्का ने कहा।

"हम अभी तुम्हें गर्म स्नान कराएंगे। सब ठीक हो जाएगा," ग्रिगोरी ने कहा।

"तुम मुझे अच्छा नहीं कर सकते हो," सेन्का फुसफुसाया – "चचा ग्रिगोरी... ज़रा नीचे झुको... अपना कान... मैंने अकार्डियन चुरा लिया... लकड़ियों के बाड़े में है... तीन दिन हुए जब पहली बार मैंने उसे हाथ से छुआ... इसके बाद कि चुरा लिया... अद्भुत है वह... मैंने उसे छिपा दिया... और तभी... देखो न, तभी पेट में ऐंठन हुई... मैंने पाप किया इसलिए... सीढ़ियों के नीचे दीवार पर लटका है... उसके आगे मैंने कुछ लकड़ियां चुन दीं... उसे वापिस कर देना, चचा ग्रिगोरी! अकार्डियन-वादक की एक बहन थी... उसने उसे मांगा था... उसे लौटा देना।" उसके मुंह से एक कराह निकली और वह बेसुध हो गया। उसका बदन ऐंठ रहा था।

उसे बचाने के लिए जो कुछ भी हो सकता था किया गया, लेकिन सेन्का के अधभूखे शरीर में जीवन अपने पांव जमाए रखने में समर्थ नहीं हो सका और सांझ को ग्रिगोरी उसे उठाकर मुर्दाघर ले गया। उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे किसीने ख़ुद उसे यह चोट पहुंचाई हो।

मुर्दाघर में ग्रिगोरी ने बच्चे के अंगों को सीधा करने की कोशिश की, लेकिन कर नहीं सका। वह वहां से लौट आया – कुचला हुआ, हताश और इस छोटे बच्चे के ऐंठे हुए बदन का चित्र अपने दिमाग़ में लिए, जो एक क्षण निचला नहीं बैठता था।

मृत्यु के सामने अपनी नाचारी की अनुभूति ने उसे निःसत्व कर दिया। कितनी सावधानी से उसने उसकी देख-भाल की, कितनी

जान खपाकर डाक्टरों ने उसके लिए कोशिश की, – फिर भी वह मर गया। इसपर वह विक्षुब्ध हो उठा, उसका हृदय उमड़ने-घुमड़ने लगा। ऐसे ही किसी दिन रोग उसे भी जकड़ लेगा, गांठों में उसे बांध डालेगा, और इसके बाद अन्त! वह भय से कांप उठा। अकेलेपन ने उसे जकड़ लिया। अगर वह केवल किसी समझदार आदमी के सामने इस सबके बारे में अपना हृदय खोलकर रख सकता! कई बार छात्रों में से किसी एक से उसने बातें करने की कोशिश की, लेकिन उनमें से किसीके भी पास दार्शनिक चर्चा करने के लिए समय नहीं था। सो इसके सिवा अब और कोई चारा नहीं था कि अपनी पत्नी के पास जाकर वह उससे ही बातें करे।

वह कमरे के एक कोने में मुंह-हाथ धो रही थी और मेज़ पर रखे समोवर में पानी उबल रहा था। कमरे में उसके भनभनाने और भाप छोड़ने की आवाज़ गूंज रही थी।

ग्रिगोरी बिना कुछ बोले बैठ गया और अपनी पत्नी के चिकने कंधों पर उसने अपनी आंखें जमा कीं। समोवर खलबला रहा था, पानी छलक रहा था, मात्र्योना नथुनें फड़फड़ा रही थी, गलियारे में डग आ-जा रहे थे और ग्रिगोरी उनकी आवाज़ पर कान लगाए उन्हें पहचानने की कोशिश कर रहा था।

सहसा उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे मात्र्योना के कंधे वैसे ही ठंडे और चिपचिपे हो गए हों जैसे कि सेन्का के उस समय थे जब कि उसका बदन ऐंठनों में जकड़ा था। वह कांप उठा।

"सेन्का मर गया," उसने धीमी आवाज़ में सूचना दी।

"सेन्का? भगवान् उसकी आत्मा को शांति दे," मात्र्योना ने श्रद्धा से गुनगुनाते हुए कहा और इसके बाद थूकने-खखारने लगी – साबुन उसके मुंह में चला गया था।

"बड़ा दुख होता है," ग्रिगोरी ने उसांस छोड़ी।

"ओह, शैतान ने खुद अपने हाथों से गढ़ा था उसे!"

"हां, तो वह अब मर गया और यह कहना तुम्हारा काम नहीं कि वह क्या था और क्या नहीं। वह मर गया, यह भारी दुख की बात है। वह बहुत ही तेज़ था और वह अकार्डियन, अब... अर-र... हुम्म! बहुत चपल था वह! जब कभी मैं उसकी ओर देखता तो सोचा करता कि उसे एक तरह से अपना 'अप्रेन्टिस' बना लूं। अनाथ। हम उसके आदी हो जाते और वह सन्तान की भांति हमारे साथ रहता। यों तुम हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ स्त्री हो, लेकिन तुम्हारे बच्चे नहीं हैं। एक हुआ था और बस। है न बुरी बात? अगर घर में नन्हे मुन्ने खेलते-दौड़ते होते तो जीवन इतना सूना न रहता। तुम्हीं सोचो, किसलिए हम अपने हाड़-गोड़ घिस रहे हैं? अपना दोज़ख भरने के लिए। इससे क्या होगा? हम अधिक दिनों तक अपने हाड़-गोड़ घिस सकेंगे। और यह अंधा चक्का चलता रहेगा, ऐसे ही घूमता रहेगा। अगर बच्चे होते तो यह जीवन कुछ और ही होता।"

वह सिर झुकाए बोल रहा था। उसका स्वर उदास और शिकायत-भरा था। मात्र्योना, जो उसके सामने खड़ी थी, उसकी बातें सुन रही थी और उत्तरोत्तर अधिक पीली पड़ती जा रही थी।

"मैं स्वस्थ हूं, तुम स्वस्थ हो, फिर भी हमारे कोई बच्चा नहीं," ग्रिगोरी कहता गया—"ऐसा क्यों? मैं इस बारे में दिन-रात सोचता रहता हूं और इस सोच को डुबाने के लिए ही मैं पीता हूं।"

"यह झूठ है!" मात्र्योना ने ज़ोरों से कहा—"यह झूठ है! ऐसी गंदी बात फिर कभी मुंह से न निकालना,—सुन रहे हो न? हां, फिर कभी ऐसा साहस न करना। तुम पीते हो इसलिए कि तुम्हें पीने में मज़ा आता है, इसलिए कि तुम अपने को क़ाबू में नहीं रख सकते। झूठ बोलते जुबान भी नहीं गिर पड़ती!"

ग्रिगोरी सन्न रह गया। वह अपनी कुर्सी पर पीछे की ओर झुक गया, जिससे अपनी पत्नी को और अच्छी तरह देख सके, और उसे विश्वास नहीं हुआ कि यह वही है। इतने गुस्से में उसने पहले कभी उसे नहीं देखा था और न ही उसने – उसकी पत्नी ने – इतनी झुलसा देनेवाली घृणा या अंगारों की भांति धधकते शब्दों की पहले कभी अपने पति पर बौछार की थी।

"हां, तो?" अपनी आवाज़ को लम्बा करते और दोनों हाथों से कुर्सी का छोर दबोचते हुए ग्रिगोरी ने ताना कसा – "हां, तो? तुम अपना ज़हर उगल चुकी या अभी कुछ और बाक़ी है?"

"बहुत कुछ बाक़ी है! मैं अपना मुंह न खोलती अगर तुमने इस तरह मेरे मुंह पर न थूका होता! मैं तुम्हारे लिए बच्चे नहीं जनती? नहीं, और मैं कभी पैदा नहीं करूंगी। मैं कर नहीं सकती। तुम कभी बच्चे का मुंह नहीं देख सकोगे!" और उसकी यह चीख़ सुबकियों में डूब गई।

"चिल्लाओ नहीं," ग्रिगोरी ने कहा।

"चिल्लाऊं क्यों नहीं? याद करो, कितनी बार जब जी चाहता तुम मुझे पीटते थे? कितनी बार तुमने मेरे पेट में ठोकरें मारीं? जाओ और पहले उनका हिसाब लगाओ! याद करो, किस तरह तुम मुझे कूटते और घुनते थे। क्या तुम्हें याद है कि तुम्हारे कोड़ों ने मेरा कितना ख़ून बहाया है? मेरे कपड़े ख़ून में तर हो जाते थे, – नीचे से ऊपर तक। यही वजह है जो मैं बच्चे नहीं जनती। यह तुम्हारे उस प्यार का ही नतीजा है और अब तुम उलटकर मेरे ही मुंह पर थूकने का साहस करते हो? तुम्हें शर्म नहीं आती और अपनी इस थूथनी को लेकर मेरे सामने आ खड़े होते हो। तुम हत्यारे हो, यही तुम्हारी असलियत है। ख़ुद तुमने अपने बच्चों की हत्या की है और दोष मेरे कंधों पर थोपते हो कि मैं बच्चे नहीं जनती। मैंने बहुत कुछ सहा है, बहुत कुछ दरगुज़र किया है,

लेकिन इन शब्दों के लिए जीते जी मैं तुम्हें माफ़ नहीं कर सकती। मरने की आखिरी घड़ी तक मैं उन्हें नहीं भूलूंगी। क्या तुम सचमुच नहीं जानते कि इसके लिए खुद तुम ज़िम्मेदार हो, यह कि तुम्हारे मारने-पीटने की वजह से ही ऐसा हुआ है? क्या मैं अन्य स्त्रियों से कुछ भिन्न हूं जो मैं बच्चों की मां बनना न चाहती? रात-रात भर जागकर मैंने भगवान् से बिनती की है कि मेरे पेट के बच्चे की तुम्हारे आघातों से रक्षा करे। न जाने कितनी रातें इस तरह जागते और प्रार्थना करते मैंने बिताई हैं। सुन रहे हो न, हत्यारे?! दूसरे लोगों के बच्चे को देखकर ईर्ष्या से मेरा जी घुटने लगता था और मुझे अपने पर तरस आता था। मां मरियम, मेरी कितनी चाहना थी कि मैं मां बनूं। लुक-छिपकर मैं उस सेन्का को दुलराती थी... मैं... बंध्या... ओ, दयामय भगवान्!"

वह हांफ रही थी। असम्बद्ध शब्द उसके मुंह से निकल रहे थे। उसके चेहरे पर चित्तियां-सी उभर आई थीं, उसका समूचा बदन कांप रहा था, अपनी गरदन को वह नोच रही थी और सुबकियां उसके गले तक उमड़ आई थीं। ग्रिगोरी, पीला और सकपकाया-सा, फटी आंखों से इस स्त्री की ओर ताक रहा था जिसे कि उसने पहले कभी नहीं देखा था। और वह उससे भयभीत था—भयभीत था कि वह अभी उछलकर उसकी गरदन पर झपटेगी और उसका गला घोट डालेगी। प्रतिशोध की लपटों से लपलपाती उन बनैली आंखों में यह खतरा मौजूद था। वह उससे—जैसा कि वह अब था—दूनी मज़बूत थी। यह वह समझ रहा था और डर रहा था। वह उठकर अब उसपर प्रहार नहीं कर सकता था जो कि वह निश्चय ही करता अगर किसी शक्तिशाली ताक़त ने उसे इतना प्रचंड रूप न प्रदान कर दिया होता।

"तुमने मेरी आत्मा को घायल किया है। भारी गुनाहों का बोझ तुमपर लदा है। लेकिन मैंने वह सब सहा और मुंह से एक शब्द न निकाला—

इसलिए कि मैं तुम्हें प्यार करती थी। लेकिन मैं तुम्हें इस तरह अपने मुंह पर नहीं थूकने दूंगी। मैं सब कुछ सह सकती हूं, लेकिन यह नहीं। जो शब्द तुमने अपने मुंह से निकाले हैं, उनके लिए तुम्हें नरक भी भोगना पड़े तो कम है!"

"बस, जुबान बन्द करो!" अपनी बत्तीसी चमकाते हुए ग्रिगोरी बड़बड़ाया।

"अरे, यह क्या शोर मचा रखा है? क्या तुम्हें इतना भी ध्यान नहीं कि तुम कहां हो?"

ग्रिगोरी की आंखों पर एक धुंध-सी चढ़ी थी। वह कुछ देख नहीं सका कि दरवाज़े में कौन खड़ा है। उसने एक भयानक गाली दी और उस आदमी को धकियाते हुए तेज़ी से बाहर खेतों की ओर निकल गया। मात्र्योना एक क्षण वहीं कमरे के बीचोंबीच खड़ी रही और फिर, अंधे की भांति हाथों को फैलाए, लड़खड़ाती हुई बिस्तरे की ओर बढ़ी और एक कराह के साथ उसपर ढह गई।

अंधेरा घिर आया था। छितरे हुए बादलों की ओट में छिपा सुनहरी चांद, कौतुक में भरा, कमरे के भीतर झांक रहा था। लेकिन शीघ्र ही बारिश की महीन बौछारें—जो कि शरद् की अन्तहीन झड़ियों की पेशवा थीं—बैरक की दीवारों और खिड़कियों पर पटापट गिरने लगीं।

दीवार-घड़ी का पेंडुलम टिकटिक की आवाज़ कर क्षणों के बीतने की सूचना दे रहा था, बारिश की बूंदें अभी भी खिड़कियों के शीशों से टकरा रही थीं। एक के बाद एक घंटे बीत रहे थे, बारिश गिर रही थी और स्त्री बिस्तरे पर निश्चल पड़ी थी,—उसकी सूजी हुई आंखें छत पर टिकी थीं, उसके दांत भिंचे थे और उसके गालों की हड्डियां उभर आई थीं। लेकिन बारिश थी कि अभी तक दीवारों और खिड़कियों पर पटापट गिर रही थी। ऐसा मालूम होता था जैसे वह अलसाहट-भरे किसी एक

ही सुर को बार-बार बुदबुदा रही हो, जैसे वह किसीका किसी चीज़ का विश्वास दिलाने के लिए चिन्तित हो, लेकिन अपने आलसी स्वभाव के कारण इस काम को फुर्ती और सुन्दरता से सम्पन्न करने के बजाय किसी बेरस मंत्र को बार-बार दोहराकर – जिसमें सच्चे विश्वास की लगन का कोई चिन्ह नहीं था – इस काम को पूरा करने की आशा बांधे हो।

बारिश उस समय भी गिर रही थी जब आकाश में सुबह का क्षीण उजाला दिन की सूचना देने लगा था। मात्र्योना की आंखें रात भर नहीं झपकी थीं। बारिश की एकरस टपाटप एक भयप्रद प्रश्न ध्वनित कर रही थी –

"आगे क्या होनेवाला है?"

और इसका उत्तर नशे में धुत्त उसके पति के रूप में उसकी आंखों के सामने कौंध गया। प्रेम में पगे शान्तिपूर्ण जीवन के सपने को तिलांजलि देना उसके लिए कठिन था। इस सपने को उसने अपने हृदय में संजोकर रखा और पाला-पोसा था और उन तमाम आशंकाओं को अपने मस्तिष्क से निकाल बाहर किया था जो कहती थीं कि वह सच्चा नहीं हो सकता। फिर भी वह ख़ूब अच्छी तरह से जानती थी कि अगर ग्रिगोरी ने फिर पीना शुरू कर दिया तो वह उसके साथ जीवन नहीं बिता सकेगी। वह उसे भिन्न रूप में देख चुकी थी, वह ख़ुद भी भिन्न थी और पहले जीवन का ख़याल उसे भयानक और घिनौना मालूम होता था। यह एक नयी बात थी। लेकिन वह स्त्री थी और पति के साथ अपने इस विच्छेद के लिए ख़ुद अपने को दोष देती थी।

"ओ भगवान्, यह सब कैसे हो गया? मैं कैसे इतनी बेलगाम हो गई?"

उजाला फैल चला था। खेतों के ऊपर घनी धुंध छाई थी जिसने आकाश को छिपा लिया था।

"मात्र्योना ओरलोवा! ड्यूटी पर हाज़िर होने का समय हो गया!"

आवाज़ सुनकर वह उठी, उतावली में हाथ-मुंह धोए और बैरक

में चली गई। उसका जी ठीक नहीं था और वह कमज़ोरी अनुभव कर रही थी। उसकी गिरी पड़ी हालत, पथराई-सी आंखों और प्रसन्नताविहीन चेहरे ने वार्ड में सभी को अचरज में डाल दिया।

"क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है?" डाक्टरों में से एक ने उससे पूछा।

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है।"

"हमें बताने में संकोच न करो। तुम्हारी जगह किसी और की ड्यूटी लगा देंगे।"

मात्र्योना लजा गई। वह अपनी आशंकाओं और वेदना को इस स्त्री के सामने प्रकट नहीं करना चाहती थी जो सहृदय होते हुए भी आख़िर ग़ैर थी। क्षत-विक्षत आत्मा में साहस के नाम पर जो कुछ भी बच रहा था, उसे उसने बटोरा और एक हल्की हंसी हंसते हुए बोली—

"कोई ख़ास बात नहीं। मुझमें और मेरे आदमी में ऐसे ही कुछ तनातनी हो गई। सब ठीक हो जाएगा। यह कोई पहली बार ही ऐसा नहीं हुआ है।"

"सच, तरस आता है तुम्हें देखकर," डाक्टर ने, जो जानती थी कि कैसा जीवन वह बिता चुकी है, उसांस भरते हुए कहा।

मात्र्योना के जी में आया कि इस स्त्री के वक्ष में मुंह छिपाकर अपने हृदय का भार हल्का कर ले। लेकिन वह केवल अपने होंटों को मज़बूती से भींचकर रह गई और हाथ से उसने अपना गला दबा लिया जिससे अपनी सुबकियों को नीचे धकेलकर फिर वहीं पहुंचा दे जहां से कि वे उमड़ आई थीं।

जब उसका काम ख़त्म हो गया तो वह अपने कमरे में लौट आई और खिड़की में से बाहर की ओर देखने लगी। खेतों को पार कर एक गाड़ी आ रही थी—बैरक की ओर—सम्भवतः किसी अन्य रोगी को लिए

हुए। महीन बौछारें पड़ रही थीं। और कुछ नज़र नहीं आ रहा था। एक आह भरकर मात्र्योना खिड़की से हट आई और मेज़ पर बैठ गई।

"आगे क्या होनेवाला है?" उसके रोम-रोम में यह सवाल सरसरा रहा था।

सकते की हालत में वह देर तक वहीं बैठी रही। लेकिन हर बार जब भी गलियारे में कोई पदचाप सुनाई देती वह चौंक उठती, अपनी कुर्सी में उचकती और दरवाज़े की ओर मुड़कर देखती।

लेकिन अन्त में जब दरवाज़ा खुला और ग्रिगोरी ने भीतर पांव रखा तब न तो वह चौंकी और न ही वह उठकर खड़ी हुई। ऐसा मालूम होता था जैसे शरद् के बादल आकाश से नीचे उतर आए हों और अपनी समूची शक्ति से उसे नीचे दबा रहे हों।

ग्रिगोरी दरवाज़े पर एक क्षण के लिए ठिटका, अपनी गीली टोपी को उतारकर उसने फ़र्श पर पटक दिया और डगों से आवाज़ करता अपनी पत्नी की ओर बढ़ गया। उसके कपड़ों से पानी चू रहा था। उसका चेहरा लाल था, आंखें पनीली, होंठ एक प्रशस्त और बौड़म हंसी में चिकड़े हुए। उसके जूतों में पानी के पिचरने की आवाज़ सुनाई दे रही थी। वह बहुत ही अस्तव्यस्त और त्रस्त नज़र आ रहा था। मात्र्योना को ऐसी आशा नहीं थी।

"यह अच्छा हुलिया बना रखा है," उसने कहा।

उसने मूर्खों की भांति सिर हिलाया।

"बोलो, क्या तुम मुझे अपने सामने घुटनों के बल गिराना चाहती हो?" उसने पूछा।

उसने कोई जवाब नहीं दिया।

"नहीं चाहती?.. क्यों, नहीं चाहती, न? जैसा तुम कहो। तब से मैं यह निश्चय करने का प्रयत्न कर रहा हूं कि मैंने तुम्हें चोट पहुंचाई

है या नहीं। लगता है जैसे मैंने तुम्हें चोट पहुंचाई है। सो मैं तुमसे कहता हूं – क्या तुम मुझे अपने सामने घुटनों के बल गिराना चाहती हो ?"

उसने अभी भी कोई जवाब नहीं दिया। उसके मुंह से वोडका के भभकारे आ रहे थे और मात्र्योना के हृदय में कड़ुवाहट का संचार कर रहे थे।

"इधर देखो, ज़्यादा बनो नहीं। अच्छा यही है कि जब तक मैं शांतिमय हूं, तुम कुछ कह-सुन लो," ग्रिगोरी ने कहा और उसकी आवाज़ उत्तरोत्तर ऊंची होती गई – "बोलो, तुम मुझे माफ़ कर रही हो या नहीं ?"

"तुम नशे में हो," मात्र्योना ने सांस खींचते हुए कहा – "जाओ और इस समय सो जाओ।"

"यह झूठ है। मैं नशे में नहीं हूं, – मैं केवल – थक गया हूं। तब से मैं बराबर टहलता और सोचता रहा हूं। ओह, क्या कुछ मैंने नहीं सोचा ! कहे देता हूं, ज़रा संभलकर रहना !"

उसने अपनी उंगली हिलाकर उसे ताड़ना की और एक ऐंठी हुई-सी मुसकराहट उसके होंठों पर दौड़ गई।

"तुम कुछ कहती क्यों नहीं ?" उसने पूछा।

"मैं तुमसे बात नहीं कर सकती।"

"बात नहीं कर सकती ? .. क्यों ?"

सहसा वह भड़क उठा और उसकी आवाज़ दृढ़तर हो गई।

"गत रात तुम इसी कमरे में मुझपर चिल्लाई थीं – दुनिया भर की बातें तुमने मुझे सुनाई थीं, और – मैं यहां खड़ा तुमसे माफ़ी मांग रहा हूं। ख़ैर इसीमें है कि तुम इस बारे में सोच लो !"

उसकी आवाज़ भयानक थी, उसके होंठ बल खा रहे थे और उसके नथुने फूले थे। मात्र्योना जानती थी कि इसका क्या मतलब है। उसकी कल्पना में बीते जीवन के दृश्य मूर्त हो उठे – वह खोली, शनिवार की रात मार-पीट, वह समूची हिंसा और वेदना, जिसमें उनकी सत्ता डूबी थी।

"मैंने सोच लिया है," उसने करारी आवाज़ में कहा—"मैं देखती हूं कि जंगली जन्तु फिर तुम्हारे भीतर सिर उठा रहा है।"

"जंगली जन्तु? उसका इससे क्या वास्ता? मैं तुमसे माफ़ करने के लिए कह रहा हूं। क्या तुम समझती हो, तुम्हारी माफ़ी के बिना मेरी जान निकल जाएगी? उसके बिना भी मैं मज़े में गुज़र कर सकता हूं, लेकिन मैंने निश्चय किया है कि तुम मुझे माफ़ करोगी,—समझी?"

"जाओ, ग्रिगोरी, इस वक़्त चले जाओ," कातर आवाज़ में उसने कहा और बल खाकर उससे अलग दूर हो गई।

"चला जाऊं?" उसने कुत्सित हंसी के साथ कहा—"क्या इसलिए कि फिर तुम आज़ादी से मनमानी कर सको? ओह, नहीं। मैं भी तो जानूं, यह पाठ तुम्हें किसने पढ़ाया है?"

उसने उसके कंधों को पकड़ा, झटककर अपनी ओर खींचा और उसके चेहरे पर एक चाकू तान लिया—उसका फल छोटा, मोटा और ज़ंग-लगा था।

"ओह, अगर तुम मेरा काम तमाम ही कर देते!" उसने एक गहरी उसांस छोड़ते हुए कहा और उसे धकेलकर फिर अलग जा खड़ी हुई। वह सकपकाकर पीछे की ओर लड़खड़ाया—शब्दों से आहत होकर इतना नहीं जितना कि उस लहजे से, जिसमें वे शब्द कहे गये थे। उसने पहले भी उसे यह कहते सुना था, लेकिन इस तरह से कभी नहीं। एक क्षण पहले वह आसानी से उसपर प्रहार कर सकता था, लेकिन अब यह उसके वश की बात नहीं था और न ही वह ऐसा करना चाहता था। उसने चाकू मेज़ पर फेंक दिया और उसकी इस उदासीनता से कांप उठा!

"भुतनी! आख़िर तुम चाहती क्या हो?" वह कुत्सा में भर बुदबुदाया।

"मैं तुमसे कुछ नहीं चाहती," मात्र्योना हांफ उठी—"क्या तुम मेरी जान लेने आए थे? अच्छा तो यह लो, अपना काम पूरा करो!"

ग्रिगोरी ने बिना कुछ कहे उसकी ओर देखा। वह पूर्णतया हतबुद्धि हो गया था। वह यह निश्चय करके यहां आया था कि अपनी पत्नी को अपने आगे झुकाकर छोड़ेगा। गत रात की टक्कर में वह ज़बर सिद्ध हुई थी। यह बात उसे खटक रही थी और इसे वह अपने लिए अपमानजनक समझता था। वह निश्चित रूप से जानता था कि चाहे जो हो उसे फिर अपने अंगूठे के नीचे लाना ही होगा। तेज़ उमंगों का आदमी, – पिछले चौबीस घंटों में क्या कुछ था जो उसने नहीं सोचा, और क्या कुछ था जो उसने नहीं सहा? लेकिन अपने मस्तिष्क के धुंधलेपन के कारण भावों की उस उथल-पुथल को वह नहीं समझ सका जिसे उसकी पत्नी के सही अभियोग ने उसके हृदय में पैदा कर दिया था। इतना ही वह भांप सका था कि वह विद्रोह पर उतरी है, और इसीलिए एक चाकू वह अपने साथ ले आया था कि उसे देखकर उसका विद्रोह ठंडा पड़ जाएगा और अगर वह अधिक ज़ोर दिखाती तो वह उसे मार भी डालता। लेकिन वह थी कि वहां, सामने ही, खड़ी थी – अरक्षित, वेदना से चूर और फिर भी उससे ज़्यादा मज़बूत। यही वह डंक था जिसने उसे डस लिया था, और उसकी चुभन ने उसे बहुत कुछ ठंडा कर दिया था।

"सुनो," उसने कहा – "अपने इस हवाई घोड़े से अब नीचे उतर आओ। तुम मुझे जानती हो – मैं सचमुच इसे तुम्हारी पसलियों के आर-पार कर सकता हूं, – और बस, खेल ख़त्म। न बांस रहे, न बांसुरी। एकदम सीधा नुसख़ा!"

वह ख़ूब अच्छी तरह जानता था कि उसे जो कुछ कहना चाहिए, वह यह नहीं है। सो वह रुक गया। मात्र्योना की एक बोटी तक नहीं फड़की, उसकी ओर पीठ किए जहां वह खड़ी थी, वहीं खड़ी रही। उसके मस्तिष्क में इस समय भी एक वही प्रश्न धड़क रहा था –

"आगे क्या होनेवाला है?"

"माश्योना," मेज़ के ऊपर से उसकी ओर झुकते हुए ग्रिगोरी ने मुलायम आवाज़ में कहा– "आखिर इसमें मेरा क्या दोष है अगर ... अगर चीज़ें ठीक वैसा ही रूप नहीं धारण करतीं जैसा कि उन्हें करना चाहिए?"

उसने अपना सिर झुका लिया और एक गहरी सांस खींची।

"जीवन में धुन लगा है। क्या तुम इसे जीना कहोगी? हैज़े के मरीज़ हैं, इसमें शक नहीं, लेकिन इससे क्या? क्या वे मेरे जीवन को सहज बनाते हैं? उनमें से कुछ मर जाते हैं, अन्य अच्छे हो जाते हैं, लेकिन मैं... मुझे तो जीना और जीवित रहना है। लेकिन किस तरह? यह कोई जीवन नहीं है, यह तो केवल एक गहरी ऐंठन है। क्या यह न्याय है? मैं हर चीज़ देखता हूं कि वह क्या और कैसी है, लेकिन यह बताना मेरे लिए कठिन है कि जीवन के इस ढंग को क्यों अब मैं और अधिक नहीं चला सकता। तुम्हीं देखो, कितनी अधिक देख-भाल उनकी होती है, कितना अधिक ध्यान उनपर दिया जाता है। और मैं? मैं अच्छा हूं, लेकिन मेरी आत्मा रोगी है, तब क्यों नहीं मेरी भी उतनी ही क़द्र होती जितनी कि उनकी? ज़रा सोचो, मेरी हालत हैज़े के मरीज़ों से कहीं बदतर है। मेरी आत्मा ऐंठनों की शिकार है। और तुम मुझपर चिल्लाती हो। मुझे जंगली जन्तु कहती हो। पियक्कड़ बताती हो। ओह, स्त्रियों की बुद्धि भी अजीब होती है!"

वह धीरे-धीरे, तर्क के साथ, बोल रहा था, लेकिन वह कुछ सुन नहीं रही थी। वह पूरी बेरहमी से अपने मस्तिष्क में अतीत की छानबीन करने में जुटी थी।

"सो तुम्हें कुछ नहीं कहना है," अपने हृदय में किसी नये सशक्त भाव को उमड़ता हुआ अनुभव कर ग्रिगोरी ने कहा– "तुम कुछ कहती क्यों नहीं? तुम मुझसे क्या चाहती हो?"

"मैं तुमसे कुछ नहीं चाहती," माश्योना चीख उठी– "क्या तुम मुझे अपने हाल पर नहीं छोड़ सकते? आखिर तुम चाहते क्या हो?"

"मैं क्या चाहता हूं? मैं चाहता... मैं..."

ग्रिगोरी ने अनुभव किया कि जो वह चाहता है, उसे वह कह नहीं पाता—उस ढंग से नहीं कह पाता जिससे कि वह खुद उसकी और उसकी पत्नी की समझ में तुरत आ जाए। वह जानता था कि उन दोनों के बीच एक खाई खुदी है और यह कि उसे शब्दों से नहीं पाटा जा सकता।

और इसने उसमें अंधे गुस्से की आग भड़का दी। उसने अपनी बांह ज़ोरों से तानी और अपनी पत्नी की गुद्दी पर घूंसा मारा,—पागल की भांति चिंघाड़ते हुए।

"तेरा मन्शा क्या है, छिनाल? कौन-सी चाल तू अब चलना चाहती है? मैं तुझे जान से मार डालूंगा।"

आघात से उसका सिर मेज़ से जा टकराया, लेकिन वह उछलकर खड़ी हो गई और उसने अपने पति की ओर देखा। उसकी आंखों में घृणा की आग धधक रही थी।

"रुक क्यों गए? यह लो,—फिर प्रहार करो!" उसने ज़ोरों से थिर आवाज़ में कहा।

"अपना तोबड़ा बन्द रख!"

"आओ, फिर प्रहार करो!"

"ओ-ऊ-ऊ-ऊ, पिशाचिनी!"

"बस, हमारे सम्बन्धों का यह अन्त है, ग्रिगोरी। सहनशीलता की हद हो चुकी।"

"अपनी यह थूथनी बन्द नहीं करेगी?"

"नहीं, मेरे साथ तुम अब और अधिक मनमानी नहीं कर सकोगे।"

उसने अपने दांत पीसे और एक डग पीछे हट गया, शायद उसपर फिर प्रहार करने के लिए।

लेकिन तभी दरवाज़ा खुला और डाक्टर वारुचेन्को ने भीतर पांव रखा।

"यह क्या तमाशा है? तुम अपने आपको आखिर कहां समझते हो? तुम्हारी मन्शा क्या है?"

उसके चेहरे पर कठोरता थी, साथ ही स्तब्धता का भी भाव था। गिग्रोरी ज़रा भी नहीं अचकचाया, उसने थोड़ा झुककर अभिवादन तक किया।

"कोई ख़ास बात नहीं। मियां-बीवी के बीच यों ही कुछ झड़प हो गई," — और वह, डाक्टर के मुंह पर, उन्मादियों की भांति हंस पड़ा।

"तुम अपने काम पर हाज़िर क्यों नहीं हुए?" उसके इस छिछलेपन से झुंझलाकर डाक्टर ने तेज़ आवाज़ में पूछा।

ग्रिगोरी ने अपने कंधे बिचकाए।

"मैं नहीं आ सका। अपने एक निजी काम में फंस गया था," उसने सूचित किया।

"और कल रात यहां कौन हुल्लड़ मचा रहा था?"

"हम..."

"तुम? बहुत ख़ूब! तुम इस तरह व्यवहार करते हो जैसे यह तुम्हारी नानी का घर हो — बिना किसी से पूछे-गछे चल देते हो, और..."

"हम तुम्हारे बन्धक गुलाम नहीं हैं, केवल इसलिए ..."

"चुप रहो! तुमने इस कमरे को क़हवाख़ाना बना डाला है, — जंगली जानवर! अभी मालूम हो जाएगा कि तुम कहां हो।"

अवज्ञा की अंधी भावना की बाढ़ से, इस बनैली इच्छा से कि एकदम टाट उलटकर उस जंजाल से वह पीछा छुड़ाए, जिसमें कि उसकी आत्मा उलझी थी, ग्रिगोरी पागल हो उठा। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि वह क्षण आ गया है जब कि वह कोई असाधारण काम करेगा जिससे वे बन्धन टूटकर अलग जा गिरेंगे जो टोह लेती उसकी आत्मा को जकड़े थे। उसके समूचे बदन में एक कंपकंपी-सी दौड़ गई और पेट के गढ़े में एक झुरझुरी का उसने अनुभव किया। चेशायर बिल्ली की भांति अपनी बत्तीसी झलकाता वह डाक्टर की ओर मुड़ा और बोला —

"इतना न चिल्लाओ, बेकार दिमाग़ की कोई नस न फट जाए। मुझे ख़ूब मालूम है कि मैं कहां हूं, – बूचड़ख़ाने में!"

"क्या-आ-आ? क्या कहा तुमने?" उसकी ओर झूलते हुए डाक्टर ने पूछा। उसे जैसे काठ मारा गया था।

ग्रिगोरी जानता था कि कोई अत्यन्त कुत्सित – भोंड़ी – बात उसके मुंह से निकल गई है, लेकिन इससे उसका आवेग ठंडा पड़ने के बजाए और भी तेज़ हो गया।

"ठीक है। सब गुज़र जाएगा। चलो, मात्र्योना, अपनी सब चीज़ें बटोर लो!"

"ओह नहीं, यह नहीं होगा, अजीब आदमी! सीधी तरह पहले मेरे सवाल का जवाब देने की इनायत करो," डाक्टर ने शान्त किन्तु अशुभ अन्दाज़ से कहा – "और जहां तक उसका सम्बन्ध है, मैं ..."

"चिल्लाओ नहीं और बेकार बतंगड़ न खड़ा करो," उद्धत्त भाव से डाक्टर की आंखों में ताकते हुए ग्रिगोरी ने कहा। जब वह बोल रहा था तो उसे ऐसा अनुभव हो रहा था जैसे वह छलांगें भरता बढ़ रहा हो और प्रत्येक छलांग के साथ उसका जी हल्का होता जा रहा हो – "शायद तुम इस भरम में हो कि हैज़े ने तुम्हें मुझे मनचाहा नाच नचाने का अधिकार दे दिया है। नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। और जहां तक तुम्हारी इस दवादारू और इलाज-फ़िलाज का सम्बन्ध है, – इससे किसी का कुछ भला नहीं हो सकता। हो सकता है कि इसे बूचड़ख़ाना कहकर मैंने कुछ ज़्यादती की हो, लेकिन तुम्हारा यह चिल्लाना फिर भी बेकार है!"

"यह क्या है?" डाक्टर ने थिर भाव से कहा – "इसके लिए तुम्हें सज़ा मिलेगी। ऐ, उधर नहीं, रास्ता इधर है।"

गलियारे में अब तक लोगों की एक भीड़ जमा हो गई थी। ग्रिगोरी ने अपनी आंखें सिकोड़ीं और दांत भींच लिए।

"डरे वे, जो झूठ बोले। मैंने ऐसा कुछ नहीं किया। और अगर तुम मुझे सज़ा देने पर तुले हो तो फिर मेरी भी दो-चार बातें सुन लेना।"

"यह बात है! कहो, जो मन में आए।"

"मैं नगर में जाऊंगा और उनके अच्छी तरह कान भर दूंगा। कहूंगा – 'ऐ साथियो, क्या तुम्हें मालूम है कि वहां हैज़े का किस तरह इलाज किया जाता है?'"

"तो इससे क्या?" डाक्टर हांफ उठा।

"इससे यह कि तब हम यहां कुछ धूम-धड़ाका करेंगे, – आतिशबाज़ी होगी, मशालें जलेंगी..."

"भाड़ में जाओ तुम! यह सब क्या बकवास है!" डाक्टर के चेहरे पर खीज और झुंझलाहट का भाव अब इस आदमी के प्रति अचरज में बदल चला था। वह उसे एक मेहनती और समझदार कार्यकर्त्ता समझता था लेकिन अब – जाने किस औघड़ वजह से – वह खुद अपने हाथों गले में फंदा डाल रहा था।

"तुम यह क्या कह रहे हो, बेवक़ूफ़?!"

'बेवक़ूफ़!' – यह शब्द ग्रिगोरी के रोम-रोम में ध्वनित हो उठा। वह जानता था कि यह मूर्खता ही है जो वह कर रहा है, लेकिन इससे वह और भी अधिक घायल हो उठा।

"मैं क्या कह रहा हूं? जो कह रहा हूं, वह मैं जानता हूं और मेरे लिए इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता," अपनी आंखों को कौंधाते हुए उसने कहा – "मैं अब देख सकता हूं कि मेरे जैसे लोगों के लिए हर चीज़ हमेशा एक उसी रूप में सामने आती है – सांपनाथ और नागनाथ एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं – और यह कि अपने भावों को छिपाकर रखना बेकार है। चलो, मात्र्योना, अपनी चीज़ें बटोर लो।"

"नहीं, मैं यहां से कहीं नहीं जाऊंगी," मात्र्योना ने दृढ़ता से कहा।

डाक्टर ग्रांखें गोल किए उनकी ग्रोर ताक ग्रौर ग्रपने माथे को खुजला रहा था। वह पूर्णतया हत्बुद्धि हो गया था।

"या तो तुम नशे में हो, या तुम्हारी बुद्धि तुम्हें धोखा दे गई है। क्या तुम्हें इस बात का भी कुछ ख़याल है कि यह तुम क्या कर रहे हो?"

ग्रिगोरी पीछे नहीं हटा,—वह हट नहीं सकता था।

"तुम्हें इस बात का क्या कुछ ख़याल है?" वह मुंह चिढ़ाते हुए बोला—"क्या तुम समझते हो कि तुम यह क्या कर रहे हो? डिसीन्फ़ेक्शन,—हा-हा-हा! रोगियों का इलाज करना ग्रौर ग्रच्छे-बिच्छे लोगों को इस बेढब जीवन के चक्के में पड़कर ख़त्म होने देना। मात्र्योना, मैं तुम्हारा तोबड़ा तोड़ दूंगा ग्रगर तुम इसी क्षण मेरे साथ न चली!"

"नहीं, मैं तुम्हारे साथ नहीं जा रही हूं।"

उसका चेहरा पीला पड़ गया था, वह ग्रप्रकृत रूप से शांत थी ग्रौर उसकी ग्रांखों में एक ठंडी दृढता थी। ग्रौर ग्रिगोरी ने ग्रपने इस वीरतापूर्ण धूम-धड़ाके के बावजूद एक ग्रोर हटकर ख़ामोशी में सिर लटका लिया।

"यह क्या वबाल है!" डाक्टर ने कहा—"ख़ुद शैतान भी इसका सिर-पांव कुछ नहीं समझ सकता। जाग्रो, बाहर जाग्रो तुम यहां से! जाग्रो ग्रौर ग्रपना भाग्य सराहो कि मैं तुम्हें यों ही छोड़े देता हूं। मुझे तुम्हें पुलिस के हवाले कर देना चाहिए था, गोबर दिमाग़! जाग्रो, निकल जाग्रो यहां से!"

ग्रिगोरी ने ग्रांखें उठाकर डाक्टर की ग्रोर देखा ग्रौर फिर ग्रपना सिर झुका लिया। वह ग्रधिक हल्का ग्रनुभव करता ग्रगर वे उसकी मरम्मत कर देते या पुलिस-थाने के लिए उसका बिस्तरा गोल कर देते।

"मैं तुमसे ग्राख़िरी बार पूछ रहा हूं। बोलो, मेरे साथ चल रही हो या नहीं," मरमराई-सी ग्रावाज़ में ग्रिगोरी ने ग्रपनी पत्नी से कहा।

"नहीं, मैं नहीं चल रही हूं," उसने जवाब दिया, इस तरह सिकुड़ते हुए, जैसे उसपर प्रहार होनेवाला हो।

ग्रिगोरी ने हवा में अपनी बांह हिलाई।

"अच्छी बात है, जहन्नुम में जाओ तुम सबके सब! मुझे क्या तुम्हारा अचार डालना है?"

"बस करो अब। ज़्यादा पागल न बनो," उसे सुध में लाने के लिए डाक्टर ने कहना शुरू किया।

"चुप रहो!" ग्रिगोरी चिल्लाया—"हां तो, घर की न घात की कुतिया, मैं जा रहा हूं। हो सकता है कि हम फिर एक दूसरे से मिलें या न मिलें,—जैसा भी मुझे जंचे। लेकिन अगर हम मिले, तो यह निश्चय समझ लो कि तुम्हारा उत्तू बनाकर छोड़ूंगा!"

और वह दरवाज़े की ओर बढ़ गया।

"दुखान्त नाटक के अभिनेता, विदा!" ग्रिगोरी के पास से गुज़रने पर डाक्टर ने कहा।

ग्रिगोरी ठिठक गया और अपनी आंखें ऊपर उठाईं जो व्यथा से जल रही थीं।

"मुझे न छेड़ो," उसने शांत भाव से कहा—"मुझे फिर से कसने की कोशिश न करो। स्प्रिंग इस बार बिना किसीको चोट पहुंचाए छिटककर रह गया। सो इतने पर ही बस करो!"

उसने फ़र्श पर से अपनी टोपी उठाई, उसे अपने सिर टांक लिया, कंधों को बिचकाया और अपनी पत्नी की ओर उड़ती नज़र तक से न देखते हुए बाहर निकल गया।

डाक्टर व्यग्र भाव से उसकी—मात्र्योना की—ओर देख रहा था। उसका चेहरा एकदम सफ़ेद पड़ गया था।

"उसे यह हुआ क्या?" ग्रिगोरी की ओर गरदन से इशारा करते हुए डाक्टर ने पूछा।

"मुझे नहीं मालूम।"

"वह अब कहां जाएगा?"

"नशे में डूबने," मात्र्योना ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा।

डाक्टर ने अपनी भौंहें चढ़ाईं और कमरे से बाहर चला गया।

मात्र्योना ने खिड़की में से बाहर देखा। एक आदमी का आकार धुंध को चीरता, बारिश और हवा के बीच, तेज़ डगों से नगर वाली सड़क पर बढ़ा जा रहा था, – अकेला, बारिश से भीगे उन भूरे खेतों के बीच...

मात्र्योना का चेहरा और भी सफ़ेद हो गया। वह उस कोने में गई, जहां देव-प्रतिमा रखी थी, और पवित्र मूर्तियों के आगे घुटनों के बल गिर गई। वह बार-बार अपना माथा नवा रही थी, प्रार्थना के शब्द एक आवेगमयी धारा के रूप में प्रकट हो रहे थे और वह कांपती हुई उंगलियों से बार-बार अपने कंठ और वक्ष का स्पर्श कर रही थी।

* * *

एक दिन 'क' नगर में मैं एक ट्रेड-स्कूल देखने गया। पथ-प्रदर्शक मेरी जान-पहचान का आदमी था। उसने इस स्कूल की स्थापना करने में योग दिया था। जब वह मुझे मोडल कक्षाओं में घुमा रहा था तो उसने कहा –

"जैसा कि तुम देख रहे हो, यह एक ऐसी संस्था है जिसपर हम गर्व कर सकते हैं। हमारे युवक छात्र यहां शान के साथ काम सीखते हैं, और तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि कितने बढ़िया शिक्षकों का दल हमारे यहां मौजूद है। मिसाल के लिए जूता बनाने की शाप में हमने एक

मोची को ही यह काम सिखाने का भार सौंपा है। वह एक स्त्री है—बहुत ही लुभावनी—लेकिन बिल्कुल बेदाग़ चरित्र। लेकिन यह सब मैं तुम्हें किसलिए बता रहा हूं? जैसा कि मैंने कहा, वह एक मामूली मोची है, लेकिन ओह, कितना जमकर काम करती है! बहुत ही प्रतिभाशाली टीचर है वह, और अपने छात्रों को ख़ूब चाहती है। एकदम असाधारण। शहद की मक्खी की भांति इस तरह काम में जुटी रहती है कि तुम देखो तो दंग रह जाओ। और कुल बारह रूबल महीने तथा रहने के लिए स्कूल में एक कमरे पर। इस रक़म से वह दो अनाथों का अलग पालन करती है। बहुत ही अजीब और दिलचस्प जीव है वह!"

मेरा मित्र इस मोची महिला की इस हद तक खुलकर प्रशंसा कर रहा था कि मैं उससे मिलने के लिए उत्सुक हो उठा।

इसका आसानी से प्रबन्ध हो गया और एक दिन मात्र्योना ओरलोवा ने मुझे अपने जीवन की दुखद कहानी सुनाई। पति को छोड़ने के बाद कुछ दिनों तक वह उसकी नाक में दम किए रहा। नशे में धुत्त वह उससे मिलने आता, दृश्य खड़े करता, छिपकर उसके बाहर निकलने की इन्तज़ार करता और उसे बेरहमी से पीटता। यह सब उसने सहा।

जब बैरक बन्द हो गई तो डाक्टरों में से एक ने उसे इस स्कूल में रखने और उसे उसके पति से बचाने में मदद की। यह हो जाने पर मात्र्योना ने शांतिपूर्ण श्रम के जीवन में प्रवेश किया। उसकी जान-पहचान की एक नर्स ने उसे लिखना-पढ़ना सिखाया, एक आश्रम में से दो अनाथ बच्चों को—एक लड़का और एक लड़की को—उसने गोद लिया और जी-जान से अपने काम में जुट गई। वह अपने इस भाग्य से सन्तुष्ट थी, लेकिन अतीत की याद कर भय और दुख से भर जाती थी। उसके लिए कोई काम इतना भारी नहीं था जिसे वह अपने छात्रों के लिए न कर सके। अपने काम का महत्व वह व्यापक दृष्टि से आंकती थी,

बहुत ही सजग और सचेत रहकर वह काम करती थी, और स्कूल के अधिकारी उसे इज्जत की निगाह से देखते थे। लेकिन एक बहुत ही मनहूस रोग—सूखी खांसी—उसकी जान के पीछे पड़ गई थी, उसके गालों के गढ़ों में एक कुत्सित रमक दिखाई देती थी और उसकी भूरी आंखों में उदासी की छाया मंडराती रहती थी।

ग्रिगोरी से भी मेरी मुठभेड़ हुई। नगर की गंदी बस्तियों में वह मुझे दिखाई दिया और दो या तीन बार की मुलाक़ात के बाद ही वह मेरा मित्र बन गया। उसने भी उसी कहानी को दोहराया, जो उसकी पत्नी से मैं सुन चुका था, और फिर कुछ सोचकर बोला—

"सो यह है सारी कहानी, मक्सिम साव्वातियेविच—कुछ समय के लिए मैं ऊपर उठा और फिर नीचे धकेल दिया गया। इस प्रकार जिस बड़े काम करने का मैं सपना देखा करता था, वह कभी नहीं कर सका। बड़ा काम करने की भूख अब भी मुझमें मौजूद है—धरती को पीसकर चूर-चूर कर देना या चोरों का सरदार बनकर तहलका मचाना, या अन्य कोई ऐसा काम करना, जो मुझे अन्य सबसे ऊंचा उठा दे, इतना ऊंचा कि मैं नीची नज़र से उन्हें देख और उनके मुंह पर थूकते हुए कह सकूं—'ओह, धरती पर रेंगनेवाले कीड़ो, तुम किसलिए जी रहे हो? किस ढब का यह जीवन है तुम्हारा? दो चेहरे वाले धोखेबाज़ हो तुम,—यही तुम्हारा असली रूप है,—इसके सिवा तुम और कुछ नहीं हो!' और तब उस ऊंचाई से पत्थर की भांति लुढ़कता मैं नीचे आ गिरता, और—बैंग! सारा खेल खत्म हो जाता। ओह, कितना बोझिल और दमघोट है यह जीवन! जब मात्र्योना से मेरा पिंड छूटा तो मैंने अपने से कहा—'अब रास्ता साफ़ है, ग्रिगोरी! अपना लंगर उठाओ और नाव को तेज़ी से बढ़ने दो!' लेकिन ऐसा हुआ कहां? पानी छिछला था, नाव एक चट्टान से टकराई, और तब से खुश्की में ही मैं हाथ-पांव पटक

रहा हूं। लेकिन मैं देर तक सूखे में नहीं रहूंगा, मैं लोगों को दिखा दूंगा कि अब भी मैं क्या कर सकता हूं। किस तरह? शैतान के सिवा यह कोई नहीं जानता... मेरी पत्नी? जहन्नुम में जाए वह! मेरे जैसा आदमी पत्नी को लेकर क्या उसे चाटेगा? या वही मुझे लेकर क्या करेगी—मुझे जो एक साथ चारों दिशाओं को लांघना चाहता है? मां के पेट से ही यह बेचैन आत्मा लेकर मैं जन्मा हूं। मेरे भाग्य में आवारा बनना ही बदा है। दुनिया भर की जगहों की मैंने पैदल और सवारी पर धूल छानी है। लेकिन चैन कहीं नहीं... पीना? बेशक, मैं पीता हूं। आग बुझाने के लिए वोडका एक अच्छी चीज़ है—और मेरे भीतर पूरा बड़वनल धधक रहा है। मैं हर चीज़ से ऊब गया हूं—नगरों से, गांवों से, हर कांट-छांट और बनावट के लोगों से! निरा जहन्नुम,—क्या इससे अच्छी कोई अन्य चीज़ नहीं सोची जा सकती थी? हर आदमी अपने पड़ोसी की गरदन दबोचने की ताक में बैठा है। जी करता है कि इन सबकी बत्ती गुल कर दूं। मेरे लिए भला इससे अच्छा काम और क्या होगा? ओह, यह जीवन! शैतान के दिमाग़ की एक रचना!"

क़हवेख़ाने का भारी दरवाज़ा, जिसमें ग्रिगोरी और मैं बैठे थे, रह-रहकर खुल रहा था और हर बार चींचीं की आवाज़ करता था। और क़हवे का भीतरी भाग एक भीमाकार जबड़े की भांति मालूम होता था जो धीरे-धीरे, लेकिन निश्चित रूप से, एक के बाद एक निरपराध रूसियों को निगल रहा था—उन्हें, जिनकी आत्मा बेचैन थी, और उन्हें भी, जिनकी आत्मा बेचैन नहीं थी।

१८९७



ख़ाली पंछी क्या करे?

संवारी-गाड़ी, एक भीमाकार सांप की भांति फुंकारती और धुवें के घने भूरे बादल उगलती, गेहूं के पीले सागर के बीच, अन्तहीन स्तेपी के पेट में, गुम हो गई। जिस प्रकार उत्तप्त वायु में धुंवां विलीन हो

गया, वैसे ही आवाज़ों की वह विक्षुब्ध खड़खड़ाहट भी गुम हो गई जो कुछ क्षणों के लिए इन विस्तृत और सूने मैदानों की निश्चल निस्तब्धता को भंग करती मालूम होती थी जिनके बीच स्थित एक छोटे-से रेलवे-स्टेशन की एकाकी सत्ता हृदय में अत्यन्त उदास भावों का संचार कर रही थी।

और जब गाड़ी की खड़खड़ आवाज़—कर्कश होते हुए भी जो कम से कम जानदार तो मालूम होती थी—आकाश के निर्मल गुम्बज़ में विलीन हो गई तब वह स्टेशन एक बार फिर उसी बोझिल निस्तब्धता में डूब गया।

सुनहरी पीली स्तेपी, नीलमणि की भांति नीला आकाश—और दोनों के दोनों ऐसे, जिनकी सीमाओं का अन्त नहीं। इतनी विस्तृत व्यापकता के बीच स्टेशन की कत्थई रंग की छोटी इमारतें,—ऐसा मालूम होता था जैसे कल्पना से शून्य किसी कलाकार द्वारा बड़ी मेहनत से बनाए गए उदास चित्रपट पर तूलिका के आकस्मिक पुचारे—बदनुमा धब्बे—पड़ गए हों।

प्रतिदिन दोपहर के बारह और सांझ के चार बजे स्तेपी के गर्भ में से गाड़ियां प्रकट होतीं और ठीक दो मिनट के लिए स्टेशन पर आकर रुक जातीं। ये चार मिनट ही स्टेशन पर मुख्य, बल्कि सच पूछो तो एकमात्र, बहलाव का साधन थे। कारण कि केवल ये चार मिनट ही ऐसे थे जो स्टेशन पर काम करनेवाले लोगों के जीवन में नये अनुभवों-संस्मरणों का संचार करते थे।

प्रत्येक गाड़ी में सभी तरह के कपड़ों में सभी तरह के लोग होते थे। वे दिखाई देते, लेकिन कुछ ही क्षणों के लिए—गाड़ी की खिड़कियों पर टिके, अधीर और थके हुए उदासीन चेहरों की एक उड़ती हुई-सी झांकी—और इसके बाद घंटी की टनटन और सीटी की आवाज़। गाड़ी के पहिये खड़खड़ाते और दूर स्तेपी में—बहुत दूर किसी नगर में, जहां जीवन उमड़ता था और लोगों की हलचल व्याप्त थी,—वे विलीन हो जाते।

स्टेशन के कर्मचारी उत्सुकता से इन चेहरों की ओर ताकते, और जब गाड़ी चली जाती तो आपस में एक दूसरे को अपने संस्मरण बताते। उनके चारों ओर निस्तब्ध स्तेपी फैली होती, सिर के ऊपर निश्चल आकाश का गुम्बज़ तना रहता, और उनके हृदय इन लोगों के प्रति ईर्ष्या से कसमसाते जो प्रतिदिन आते और अज्ञात मंज़िलों के लिए तेज़ी से आगे बढ़ जाते और उन्हें यहीं—इस निर्जनता में—जैसे कि कहा जाता है, जीवन से निष्कासित इस क्षेत्र में—सज़ा काटने के लिए छोड़ जाते।

सामने ही स्टेशन है और इसके प्लैटफ़ार्म पर खड़े वे स्टेशन से बिदा हुई गाड़ी के काले फ़ीते को गेहूं के सुनहरी सागर में विलीन होते देख रहे हैं। जीवन की इस क्षणिक झांकी के संस्मरणों ने उन्हें इतना अभिभूत कर लिया है कि वे निस्तब्ध हो गए हैं।

क़रीब-क़रीब सभी यहां मौजूद हैं—स्टेशन-मास्टर—मज़बूत काठी, मिलनसार, सुनहरे बाल, कज़ाकों की भांति बिना छंटे गलमुच्छे, उसका सहायक—बकरेनुमा दाढ़ी और लाल बालों वाला युवक, स्टेशन का चौकीदार लुका—नाटा क़द, चपल और चालाक, और स्विचमैन गोमोज़ोव—चुप्पा और हट्टा-कट्टा आदमी, चेहरे पर घनी दाढ़ी।

स्टेशन-मास्टर की पत्नी स्टेशन के दरवाज़े की बग़ल में एक बेंच पर बैठी है। नाटा क़द, मोटी थलथल। गर्मी से अत्यधिक परेशान। उसकी गोदी में एक बच्चा सोया है और बच्चे का चेहरा भी उतना ही गोल-मटोल और लाल है जितना कि उसकी मां का।

गाड़ी एक ढलुवान पर से नीचे उतरती ऐसे ग़ायब हो गई जैसे उसे धरती ने निगल लिया हो।

स्टेशन-मास्टर अपनी पत्नी की ओर मुड़ा—

"सोन्या, क्या समोवर तैयार है?"

"बेशक," कोमल और अलसाई आवाज़ में उसने जवाब दिया।

"लुका, यह सब ज़रा संवार दो – प्लैटफ़ार्म और पटरियों पर झाड़ू दे डालो। देखो न, कितनी गंदगी वे फैला गए हैं।"

"मैं जानता हूं, मात्वेई येगोरोविच!"

"अच्छा तो, निकोलाई पेत्रोविच, अब चाय पी ली जाए!"

"क्यों नहीं? यह तो हमारा नित्य का नेम है!" सहायक ने जवाब दिया।

अगर यह दोपहार की गाड़ी होती जो विदा हो गई थी, तो मात्वेई येगोरोविच अपनी पत्नी से कहता –

"भोजन तैयार है, सोन्या?"

इसके बाद वह लुका को लगा-बंधा आदेश देता, जो हमेशा वही होता था, और अपने सहायक से, जो उसके साथ भोजन करता था, कहता –

"हां, तो अब भोजन कर लिया जाए!"

"क्यों नहीं? यह तो हमारा नित्य का नेम है!" काफ़ी समझदारी के साथ उसका सहायक जवाब देता।

और प्लैटफ़ार्म को छोड़ वे एक कमरे में चले जाते जिसमें फूलों-पौधों की ख़ूब भरमार थी और फ़र्नीचर की भारी कमी। कमरा खाना पकाने और पोतड़ों की गंध से गंधाता रहता था, और उनकी बातों का सिलसिला हमेशा वही होता था जो कि वे स्टेशन पर गाड़ी आने के समय देखते थे।

"निकोलाई पेत्रोविच, सेकंड क्लास के डिब्बे में पीले कपड़े पहने, काले बालों और काली आंखों वाली जो श्यामा बैठी थी, उसे भी तुमने देखा? सच, बहुत ही बढ़िया चीज़ थी वह!"

"बुरी नहीं थी। लेकिन वह कपड़े औघड़ पहने थी। रुचि से शून्य।"

उसकी टिप्पणियां हमेशा संक्षिप्त होती थीं, और निश्चयात्मक अन्दाज़ में वह उन्हें प्रकट करता था। उसे गर्व था कि वह पढ़ा-लिखा और अनुभवी

आदमी है। हाई स्कूल की पढ़ाई वह पूरी कर चुका था। काली जिल्द की एक नोटबुक वह अपने पास रखता था जिसमें उसने सुप्रसिद्ध लोगों के कथन लिख छोड़े थे। जब भी कोई पुस्तक या समाचारपत्र उसके हाथ लगता और उसमें कोई ऐसी बात नज़र आती तो वह उसे अपनी नोटबुक में टांक लेता। स्टेशन-मास्टर काम के क्षेत्र से बाहर अन्य तमाम मामलों में उसका पांडित्य स्वीकार करता था और जो कुछ भी वह कहता था बड़े ध्यान से सुनता था। निकोलाई पेत्रोविच की नोटबुक में अंकित बुद्धि-कणों का उसपर ख़ास प्रभाव पड़ता था और उन्हें सुनकर उसका सरल हृदय आनन्द से विभोर हो उठता था। काले बालों और काली आंखों वाली उस लड़की की पोशाक के बारे में उसकी टिप्पणी ने उसके मस्तिष्क को कुरेद दिया।

"क्यों," उसने पूछा—"श्यामा लड़कियों को क्या पीले कपड़े नहीं पहनने चाहिए?"

"मैं रंग की नहीं, बल्कि कपड़ों के कटाव की बात कर रहा था," कांच की तश्तरी से अपनी रकाबी में बड़ी सफ़ाई के साथ कुछ मुरब्बा पहुंचाते हुए निकोलाई पेत्रोविच ने अपनी बात को स्पष्ट किया।

"कटाव? .. ओह, यह एक अलग बात है," स्टेशन-मास्टर ने सहमति प्रकट की।

उसकी पत्नी भी बातचीत में शामिल हो गई। कारण कि यह एक ऐसा विषय था जो उसके हृदय के निकट और मस्तिष्क की पहुंच के भीतर था। लेकिन चूंकि इन लोगों की बुद्धियों पर नफ़ासत का झोल चढ़ा था, सो उनकी बातचीत ऊपर ही ऊपर घिसट रही थी और उनकी भावनाओं को बिरले ही छू पाती थी।

खिड़कियों में से स्तेपी दिखाई दे रही थी—एकदम निस्तब्ध, जैसे उसपर किसीने मंत्र फूंक दिया हो, और आकाश—अपनी निस्संग निश्चलता की गरिमा में डूबा हुआ।

मुश्किल से ही कोई घंटा ऐसा बीतता जिसमें एकाध माल-गाड़ी यहां से न गुज़रती। इन सब गाड़ियों के चालक कर्मचारी पुराने जाने-पहचाने थे। उनके उनींदे-से गार्ड, — ऐसा मालूम होता जैसे स्तेपी में अन्तहीन चक्कर लगाते-लगाते उनके प्राण शरीर से निचुड़ गए हों। इसमें शक नहीं कि कभी-कभी वे मार्ग में हुई दुर्घटनाओं की कहानियां सुनाते — यह कि अमुक जगह पर एक आदमी कटकर मर गया। या अपने धंधे को लेकर बतियाते — अमुक को जुरमाना देना पड़ा और अमुक का तबादला कर दिया गया। ये चुटकले बहस का विषय न बनते, उल्टे उन्हें वैसे ही निगल लिया जाता जैसे कोई पेटू आदमी पकवान के दुर्लभ और ज़ायक़ेदार थाल को हड़प जाता है।

धीरे-धीरे सूरज स्तेपी का छोर छूने के लिए नीचे उतरने लगता। जैसे-जैसे वह धरती के निकट पहुंचता, अधिकाधिक लाल होता जाता। उसकी गुलाबी आभा से हर चीज़ रंग जाती और हृदय में एक अस्पष्ट आकांक्षा का संचार करती, — इस निर्जनता को लांघने के लिए हृदय ललक उठता। अन्त में सूरज क्षितिज को छूता और खोया-सा उसके भीतर या उसकी ओट में समा जाता। इसके बाद देर तक सूर्यास्त के उजले स्वर आकाश में मृदु संगीत की रचना करते। लेकिन यह संगीत उत्तरोत्तर धीमा पड़ता जाता — सांझ की उष्णा तथा निःशब्द परछाइयों में खोता जाता। तारे निकल आते — एकदम कांपते-थरथराते, दृश्य की निर्जनता से भयभीत।

स्तेपी जैसे धुंधलके में सिमटती-सिकुड़ती मालूम होती। रात की परछाइयां दबे पांव स्टेशन को चारों ओर से घेर लेतीं। और इसके बाद खुद रात उतर आती — काली और उदास।

स्टेशन पर रोशनियां जल जातीं। अन्य सबसे ऊंची और उजली, अंधेरे और निस्तब्धता से घिरी सिगनल की हरी रोशनी चमकती।

जब-तब घंटी टनटनाती और आ रही गाड़ी की सूचना देती। टनटन की यह फ़ौरी ध्वनि तिरती हुई स्तेपी के गर्भ में विलीन हो जाती।

घंटी की टनटन के कुछ ही देर बाद अंधेरे शून्य में से एक लाल रोशनी प्रकट होती और स्तेपी की निस्तब्धता को अंधेरे में लिपटे एकाकी स्टेशन की ओर लपकती गाड़ी की गड़गड़ाहट छितरा देती।

* * *

स्टेशन के इस छोटे-से समाज में भी निम्न वर्गों का जीवन कुलीन वर्ग के जीवन से भिन्न था। स्टेशन का चौकीदार लुका अपनी इस आकांक्षा से निरन्तर संघर्ष करता कि उड़कर अपनी पत्नी और भाई के पास पहुंच जाए जो स्टेशन से चार-पांच मील दूर एक गांव में रहते थे। उसकी वहां 'घर-गृहस्थी' थी, जैसा कि वह शांत और चुप्पे स्विचमैन गोमोज़ोव से अक्सर कहा करता और अपने लिए 'ड्यूटी करने' की उससे चिरौरी करता।

'घर-गृहस्थी' का नाम सुन गोमोज़ोव हमेशा एक गहरी उसांस खींचता।

"अच्छी बात है, लपक जाओ," वह कहता–"घर-गृहस्थी की देख-भाल तो करनी ही होगी, इसमें शक नहीं।"

लेकिन दूसरा स्विचमैन–अफ़ानासी यागोदका, जो सफ़ेद बालों की लटों से घिरे गोल-मटोल लाल चेहरे वाला एक पुराना फ़ौजी और खिल्ली उड़ानेवाले स्वभाव का आदमी था,–लुका की बात का विश्वास न करता।

"घर-गृहस्थी," मज़ाक उड़ाते हुए वह उसे कोंचता–"सीधे पत्नी कहो तो कुछ बात समझ में आए। और तुम्हारी वह पत्नी,–क्या वह विधवा है? या उसका पति लाम पर गया है?"

"एइयू, चिड़ीमार-सेनापति!" लुका घृणा से फुंकार उठता।

वह यागोदका को चिड़ीमार-सेनापति इसलिए कहता था कि बूढ़े फ़ौजी को पंछियों का गहरा शौक़ था। उसके छोटे-से घर में, भीतर और बाहर, पिंजरे और टिकटिकियां लटकी थीं और दिन भर – घर के भीतर और उसके इर्द-गिर्द – पक्षियों का कल-रव गूंजता रहता था। बटेर, जिन्हें फ़ौजी ने बंदी बना रखा था, लगे-बंधे स्वर में बिना रुके 'चीप-चिरीप' का राग अलापते, स्टारलिंग (मैना जाति के पक्षी) लम्बे भाषण बुदबुदाते, सभी रंगों के छोटे पक्षी निरन्तर कूकते-चहकते, गाते और बूढ़े सैनिक के एकाकी जीवन में आह्लाद भरते रहते थे। वह अपना समूचा ख़ाली समय उन्हीं के साथ बिताता था। पंछियों की जहां वह इतने चाव और लगन से देख-भाल करता था, वहां स्टेशन के अपने संगी-साथियों में उसकी ज़रा भी दिलचस्पी नहीं थी। वह लुका को सपोलिया और गोमोज़ोव को कलसाप कहता था, उनके मुंह पर उन्हें स्त्रियों के घाघरे का पिस्सू करार देता था और इस कारण, उसकी समझ में, वे इस योग्य थे कि उनकी चमड़ी उधेड़कर रख दी जाए।

आमतौर से लुका उसकी बातों पर बहुत कम ध्यान देता था, लेकिन अगर वह सीमा पार कर जाता तो लुका प्रतिशोध के साथ देर तक उसकी खूब चिन्दियां बिखेरता –

"छावनी के चूहे, आधी कुतरी हुई शलजम! कर्नल की बकरियों के ढोलची, तुम अपने को समझते क्या हो? मेंढकों का शिकार करने और कम्पनी की गोभियों की रखवाली करने के सिवा तुमने और किया क्या है? तुम कौन होते हो दूसरों का नाम धरनेवाले? जाकर अपने बटेरों से क्यों नहीं सिर मारते, चिड़ीमार-सेनापति?"

यागोदका दुम दबाए यह सब सुनता, इसके बाद स्टेशन-मास्टर के पास जाकर इसकी शिकायत करता और स्टेशन-मास्टर, यह कहकर कि उसके पास इससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण दूसरे काम मौजूद हैं, उसे बाहर निकाल

देता। यहां दाल न गलते देख यागोदका फिर लुका की खोज करता और खुद अपनी जुबान से उसपर कोड़े बरसाता – शांत भाव से, बिना अपने दिमाग़ का सन्तुलन खोए। वह इस हद तक वज़नदार फ़ोश शब्दों की बौछार करता कि लुका अपने कानों में उंगली डाल भाग खड़ा होता।

लेकिन जब फ़ौजी गोमोज़ोव के छिछलेपन – स्त्रियों के पीछे फिरने – को लक्ष्य कर उसे आड़े हाथों लेता तो वह लम्बी सांस भरता और अचकचाकर अपना बचाव करने का प्रयत्न करता।

"हम भी क्या करें? लगता है जैसे इससे कोई छुटकारा नहीं। माना कि यह एक शैतानी हरकत है, लेकिन जैसा कि कहते हैं, दूसरों पर उंगली न उठाओ, अन्यथा खुद तुमपर भी उंगली उठने लगेगी!"

एक दिन फ़ौजी ने इसके जवाब में हलकी हंसी हंसते हुए कहा –

"सब रोगों का वही एक घिसा-पिटा नुसख़ा! 'उंगली न उठाओ!' 'उंगली न उठाओ!' वाह, अगर लोग अपने साथियों पर उंगली न उठाएं तो उनके जीवन में फिर चर्चा करने के लिए रह ही क्या जाएगा?"

* * *

स्टेशन-मास्टर की पत्नी के अलावा स्टेशन पर एक स्त्री और थी। यह थी आरीना – खाना बनानेवाली महाराजिन। चालीस के क़रीब उसकी उम्र थी और शक्ल सूरत से अत्यन्त भोंड़ी – नाटी और मोटी, लौकी की भांति लटकती हुई छातियां और हमेशा गंदी तथा औघड़। जब चलती तो उसकी टांगें डगमगातीं और चेचकरू चेहरे में टिमटिमाती आंखों के छेदों में से इस तरह सहमी-सी देखती जैसे उसमें कोई डर समाया हो। उसके बेढब आकार-प्रकार से दासता और दब्बूपन का भाव झलकता था। उसके मोटे होंठ हमेशा इस तरह जुड़े रहते, जैसे वह हर किसीसे माफ़ी मांग रही हो, जैसे वह लोगों के सामने घुटनों के बल गिरना चाहती हो और

मुंह से चीख़ निकालते डरती हो। आठ महीने से उसकी ओर ज़रा भी ध्यान दिए बिना गोमोज़ोव स्टेशन पर रह रहा था। आते-जाते नज़र पड़ जाती तो उससे 'हैलो' कहता, वह अभिवादन का जवाब देती, कभी-कभी लापर्वाही से दो-चार शब्दों का आदान-प्रदान भी हो जाता और इसके बाद दोनों अपना-अपना रास्ता नापते। लेकिन एक दिन गोमोज़ोव स्टेशन-मास्टर के रसोईघर में पहुंचा और आरीना से कुछ कमीज़ें-सी देने का उसने अनुरोध किया। वह राज़ी हो गई और कमीज़ों के सिल जाने पर वह ख़ुद उन्हें लेकर उसके पास गई।

"धन्यवाद," गोमोज़ोव ने कहा—"तीन कमीज़ें, दस कोपेक प्रति कमीज़—अर्थात् तीस कोपेक का मैं देनदार हूं। क्यों, ठीक है न?"

"हां, ठीक ही होगा," आरीना ने कहा।

गोमोज़ोव कुछ सोचने लगा।

"तुम किस गुबेर्निया की रहनेवाली हो?" अन्त में उसने इस स्त्री से पूछा जिसकी आंखें इस समूचे दौरान में उसकी दाढ़ी पर जमी थीं।

"रियाज़ान्स्काया," उसने कहा।

"काफ़ी दूर जगह है। यहां इतनी दूर कैसे भटक आई?"

"मैं नहीं जानती। मैं एकदम अकेली हूं। मेरा अपना कोई नहीं है।"

"ओह, तब तो आदमी और भी दूर—कहीं भी—भटक सकता है!" गोमोज़ोव ने उसांस भरी।

और दोनों फिर चुप हो गए।

"मुझे ही देखो। मैं निज्नी नोवगोरोद का रहनेवाला हूं। सेरगाचस्की उयेज़्द में मेरा घर है," कुछ देर बाद गोमोज़ोव ने कहना शुरू किया—"मैं भी अकेला हूं। बिल्कुल अकेला। अन्य कोई नहीं। लेकिन किसी समय मेरा एक घर था, बीवी थी, बच्चे थे। दो बच्चे। बीवी हैज़े में मर गई,

बच्चे भी एक न एक रोग में चल बसे। और मैं... मैं उनके शोक में घुलने लगा। बाद में मैंने फिर नये सिरे से शुरू जमना चाहा, लेकिन कुछ बना नहीं। काम-धंधा सब चौपट हो गया था, वह फिर नहीं जमा, सो मैं चल पड़ा,—जहां भी मेरे पांव मुझे ले जाएं। दो साल से भी अधिक से मेरा यही दौर चल रहा है।

"अपना कहने लायक़ कोई ठिकाना न हो, यह बुरा है," आरीना ने धीमे-से कहा।

"बहुत बुरा। क्या तुम विधवा हो?"

"नहीं। मैं कुंवारी हूं।"

"सब झंझटों से मुक्त!" अपने अविश्वास को छिपाने का ज़रा भी प्रयत्न न करते हुए गोमोज़ोव ने कहा।

"सच, क्या मेरी बात पर यक़ीन नहीं?" आरीना ने फिर बल देते हुए कहा।

"तुमने अब तक शादी क्यों नहीं की?"

"मुझसे कौन शादी करता? मेरे पास कुछ नहीं है। फोकट में भला कौन शादी करता है? तिसपर मेरा चेहरा भी बहुत भोंड़ा है।"

"सच कहती हो," गोमोज़ोव ने स्वर को लम्बा खींचते हुए कहा और अपनी दाढ़ी को सहलाते हुए उत्सुकता से उसकी ओर ताकता रहा। फिर उसने पूछा कि उसका वेतन क्या है।

"ढाई रूबल।"

"अब समझा। अच्छा तो मुझे तुम्हें तीस कोपेक देने हैं,—क्यों? देखो, आकर आज रात को ले जाना। दस बजे के क़रीब,—आओगी न? अपने पैसे ले लेना और—ख़ाली पंछी क्या करे?—हम दोनों एक साथ चाय पिएंगे। हम एकाकी जीव हैं—दोनों के दोनों। ज़रूर आना।"

"आऊंगी," उसने सहज भाव से कहा और चली गई।

वह ठीक दस बजे आई और गजरदम लौट गई।

गोमोज़ोव ने उसे फिर आने का बुलावा नहीं दिया और उसके तीस कोपेक भी उसके हवाले नहीं किए। सो उसे अपने आप आना पड़ा। वह आई – दबी हुई, पशु की भांति गरदन झुकाए – और चुपचाप उसके सामने खड़ी हो गई। और उसने वहीं से – कौच पर जहां कि वह पड़ा था – आंखें उठाकर उसकी ओर ताका।

"बैठो," कुछ देर बाद दीवार की ओर बढ़ते हुए उसने कहा।

जब वह बैठ गई तो बोला –

"देखो, सब छिपाकर रखना। पंछी तक को इसकी ख़बर न लगे, – सुना? नहीं तो मैं मुसीबत में फंस जाऊंगा। मैं अब जवान नहीं हूं और तुम भी कोई बछेरी नहीं हो, – समझ गई न?"

उसने सिर हिलाकर हामी भरी।

और उस समय, जब कि वह उसे विदा कर रहा था, उसने मरम्मत के लिए कुछ कपड़े उसे और दे दिए।

"ख़बरदार, किसी भी पंछी को इसकी ख़बर न लगने पाए," उसने एक बार फिर उसे ताक़ीद की।

इस प्रकार, दूसरों से अपने सम्बन्धों को सावधानी से छिपाए, वे एक साथ घुलते-मिलते रहे।

रात को आरीना, क़रीब-क़रीब चौपाया बनी, चुपचाप उसके कमरे में रेंग आती। बड़ा अहसान-सा जताते हुए, मालिक और स्वामी के अन्दाज़ में, वह उससे व्यवहार करता।

"वाह, तुम्हारा यह तोबड़ा भी ख़ूब है!" कभी-कभी वह उसे कोंचता।

जवाब में एक क्षीण और याचना-सी करती मुसकराहट उसके चेहरे पर रेंगती, और चलते समय मरम्मत के लिए कपड़ों की एक पोटली वह अपने साथ ले आती।

वे एक दूसरे से बहुत कम मिलते। लेकिन स्टेशन के अहाते में जब कभी उनकी भेंट होती तो वह फुसफुसाकर कहता—

"आज रात आ जाना!"

और वह कच्चे धागे से बंधी चली आती,—अपने चेचकरू चेहरे को इस तरह गम्भीर बनाए, जैसे वह किसी बहुत ही महत्वपूर्ण कर्तव्य का पालन करने जा रही हो और उसका रोम-रोम उस कर्तव्य के महत्व और गम्भीरता से पूर्णतया परिचित हो।

लेकिन जब वह लौटकर घर आती तो अपराध और आशंका की पुरानी भावना पहले की भांति फिर उसके चेहरे पर चस्पां हो जाती।

कभी-कभी किसी अंधेरे कोने या दरवाज़े की ओट में ठिठककर वह स्तेपी के शून्य में ताकती। वहां रात घेरा डाले होती और उसकी घोर निस्तब्धता उसके हृदय में आतंक का संचार करती।

* * *

एक दिन सांझ की गाड़ी विदा करने के बाद स्टेशन के अधिकारी पाप्लर के कुछ पेड़ों की छाया में चाय पीने बैठे। ये पेड़ स्टेशन-मास्टर के कमरे की खिड़कियों के बाहर उगे थे।

गर्मी के दिनों में वे अक्सर यहीं बैठकर चाय पीते थे। इससे उनके एकरस जीवन में कुछ विविधता का समावेश हो जाता था।

उस दिन, गाड़ी के बारे में जो कुछ कहा जा सकता था वह सब कह चुकने के बाद, अब वे चुपचाप चाय पी रहे थे।

"आज कल से ज़्यादा गर्मी है," एक हाथ से अपना खाली गिलास अपनी पत्नी की ओर बढ़ाते और दूसरे हाथ से अपने माथे का पसीना पोंछते हुए स्टेशन-मास्टर ने कहा।

"जीवन से बुरी तरह ऊब गए हैं, ठीक इसीलिए गर्मी भी इतना सताती है," उसके हाथ से गिलास लेते हुए उसकी पत्नी ने कहा।

"हम्म! शायद तुम्हारी बात ठीक हो। ताश से कुछ जी बहल सकता है। लेकिन हम लोग केवल तीन ही हैं।"

उसके सहायक ने अपने कंधे बिचकाए और आंखों को सिकोड़ लिया—

"ताश खेलना, शोपनहार के अनुसार, दिमाग़ी दिवालियेपन का सूचक है," उसने रोब के साथ ऐलान किया।

"बहुत ख़ूब!" स्टेशन-मास्टर गरगला उठा— "क्या कहा तुमने? दिमाग़ी दिवालियेपन,—हम्म! यह किसने कहा था?"

"शोपनहार। जर्मनी का एक दार्शनिक।"

"एक दार्शनिक? .. हम्म!"

"हां, तो तुम्हारे ये दार्शनिक,—क्या काम करते है वे? क्या विश्वविद्यालयों में पढ़ाते हैं?" सोन्या ने पूछा।

"अब मैं कैसे समझाऊं? दार्शनिक होना एक स्थिति विशेष का नाम नहीं है, बल्कि—जैसा कि कहा जाता है—यह एक ईश्वरीय देन है। हर कोई दार्शनिक हो सकता है,—हर वह व्यक्ति, जिसमें सोचने और सभी चीज़ों में कार्य-कारण खोजने की जन्मजात प्रवृत्ति होती। इसमें शक नहीं कि कभी-कभी विश्वविद्यालयों में भी दार्शनिक मिल जाते हैं, लेकिन वे कहीं भी हो सकते हैं,—रेलवे के कर्मचारियों तक में वे हो सकते हैं।"

"और क्या वे ख़ूब धन पैदा करते हैं,—वे, जो विश्वविद्यालयों में पढ़ाते हैं?"

"यह सब तो उनकी योग्यता पर निर्भर करता है।"

"अगर एक चौथा साझी और होता, तो ताश के सहारे एक-दो घंटे मज़े में बीत जाते," स्टेशन-मास्टर ने उसांस भरी।

और बातचीत का सिलसिला फिर निस्तब्धता में डूब गया।

नीले आकाश में खूब ऊंचे लार्क पक्षी गा रहे थे, पाप्लर के पेड़ों पर सीटी की कोमल आवाज़ करते रोबिन पक्षी एक टहनी से दूसरी टहनी पर फुदक रहे थे, घर के भीतर से बच्चे के रोने की आवाज़ आ रही थी।

"क्या आरीना घर में है?" स्टेशन-मास्टर ने पूछा।

"बेशक," उसकी पत्नी ने जवाब दिया।

"क्यों, निकोलाई पेत्रोविच, उस स्त्री में क्या तुम्हें किसी अत्यन्त मौलिक वस्तु का आभास नहीं होता?"

"मौलिकता साधारणता की जननी है," निकोलाई पेत्रोविच गुनगुना उठा—किसी बहुत ही पहुंचे हुए और भारी-भरकम आदमी के अन्दाज़ में।

"यह क्या कहा तुमने?" स्टेशन-मास्टर ने उचककर चेतन होते हुए कहा।

जब वह कथन मसीहाई अन्दाज में दोहराया गया तो स्टेशन-मास्टर ने आनन्द-विभोर हो अपनी आंखें आधी मूंद लीं और उसकी स्त्री ने सपनों में खोए स्वरों में कहा—

"सच, देखकर अचरज होता है कि जो कुछ भी तुम पढ़ते हो, वह तुम्हें इस तरह याद रहता है। एक मैं हूं कि आज कुछ पढ़ती हूं और कल ही उसे भूल जाती हूं। अभी उस दिन की तो बात है। 'नीवा' पत्रिका में मैंने एक ऐसी चीज़ पढ़ी थी जो भयानक रूप में दिलचस्प और रोचक थी। लेकिन अब अगर मैं चाहूं तो लाख सिर पटकने पर भी नहीं याद कर सकती कि क्या चीज़ मैंने पढ़ी थी।"

"सब आदत की बात है," निकोलाई पेत्रोविच ने सूत्र-रूप में समझाया।

"वह उससे भी बढ़कर है... भला क्या नाम था उसका? शोपनहार,"

मुसकराहट के साथ स्टेशन-मास्टर ने कहा–"दूसरे शब्दों में, हर नयी चीज़ पुरानी पड़ जाती है।"

"या ठीक उससे उलटा, कारण–जैसा कि एक कवि ने कहा है–जीवन अपनी बुद्धिशीलता में कृपण है, क्योंकि वह हमेशा पुरातन में से नवीन की रचना करता है।"

"ओह, शैतान उठा ले जाए तुम्हें। जाने कहां से यह सब खोज लाते हो? एक के बाद एक ये अनमोल वचन तुम्हारे मुंह से ऐसे प्रकट होते हैं जैसे छलनी में से आटा छनता है।"

स्टेशन-मास्टर प्रसन्न हो मन ही मन हंसा, उसकी पत्नी मधुर भाव से मुसकराई और निकोलाई पेत्रोविच ने अपने सन्तोष को छिपाने का प्रयत्न किया, लेकिन व्यर्थ।

"वह 'साधारणता' वाला कथन किसका था?"

"बारियातिन्स्की का। वह एक कवि है।"

"और वह दूसरा?"

"वह भी कवि है। फ़ोफ़ानोव।"

"बड़े चतुर लोग हैं ये," स्टेशन-मास्टर ने कवियों की सराहना में कहा और उद्धरण को गीत की भांति गुनगुनाकर दोहराने लगा–मुग्ध भाव से मुसकराते हुए।

जीवन की ऊब उनके साथ एक तरह का खेल-सा खेलती थी। एक क्षण के लिए वह उन्हें अपने चंगुल से मुक्त कर देती और फिर–अदबदाकर– उन्हें और भी कसकर दबोच लेती। कसकर दबोचने के लिए ही जैसे वह उन्हें मुक्त करती थी। और तब, फिर से दबोच लिए जाने पर, वे फिर चुप हो जाते, गर्मी के मारे हांफने लगते, जिसमें उनका चाय-पान केवल आहुति का काम करता।

स्तेपी में सूरज का एक छत्र-राज्य छा गया था।

"जैसा कि मैं आरीना के बारे में कह रहा था," स्टेशन-मास्टर ने फिर कहना शुरू किया—"वह कुछ अजीब जीव है। उसे देखकर अचरज हुए बिना नहीं रहता। ऐसा मालूम होता है जैसे उसे किसी आघात ने पस्त कर दिया है—कभी हंसती नहीं, कभी गाती नहीं, बोल भी उसके मुंह से मुश्किल से ही सुनाई देता है। धरती में गड़े ठूंठ की भांति। लेकिन काम करने में वह एक नम्बर है। और जिस तरह वह लेलिया की देख-भाल रखती है,—बच्ची के लिए अगर जान तक न्योछावर करनी हो तो मुंह नहीं मोड़ेगी।"

वह धीमे स्वरों में बोल रहा था, इस डर से कि कहीं आरीना सुन न ले। वह अच्छी तरह जानता था कि नौकरों की कभी तारीफ़ नहीं करनी चाहिए। इससे वे बिगड़ जाते हैं। सोन्या ने उसे बीच में ही टोका और भौंहें चढ़ाकर भेद-भरी आंखों से उसकी ओर देखा—

"बस रहने दो अपनी इस तारीफ़ को। तुम्हें क्या मालूम कि उसमें कैसे-कैसे 'गुण' भरे हैं?" उसने कहा।

निकोलाई पेत्रोविच ने अपनी चम्मच से मेज़ पर तबला बजाते हुए धीमी आवाज़ में गाना शुरू किया—

मैं हूं प्रेम दीवाना,
नहीं शक्ति मुझमें
उड़ने की तेरे संग,
मेरे भोले शैतान!

"क्या? क्या कहा यह?" स्टेशन-मास्टर बोल उठा—"वह? निश्चय ही तुम मज़ाक़ कर रहे हो—दोनों के दोनों!"

और वह ज़ोरों से हंसने लगा। उसके गाल हिल उठे और पसीने की बूंदें उसकी भौंहों से झड़ने लगीं।

"इसमें हंसने की बात तो ज़रा भी नहीं है," सोन्या ने कहा—

"एक तो यह कि बच्चे की देख-भाल उसके ज़िम्मे है और दूसरे – ज़रा इस रोटी की ओर देखो – जली हुई और खट्टी। ऐसा क्यों?"

"इसमें कोई शक नहीं, रोटी जैसी होनी चाहिए, वैसी नहीं है। इसके लिए तुम्हें उसे डांटना होगा। लेकिन, हे मेरे भगवान्, इसकी मैं क़तई आशा नहीं करता था। शैतान की मार, – देखने में कम्बख़्त ऐसे मालूम होती है जैसे ख़मीर थोपकर रख दिया गया हो! और वह? कौन है वह?.. लुका? कसकर ख़बर लूंगा उस बदमाश की! या यागोदका – वह बूढ़ा बछेरा?"

"गोमोज़ोव," निकोलाई पेत्रोविच ने दो टूक अन्दाज़ में कहा।

"वह?.. वह चुप्पा आदमी? सच, कहीं ऐसा तो नहीं कि यह तुम्हारी अपनी मनगढ़न्त हो!"

स्टेशन-मास्टर को यह परिस्थिति अत्यन्त रोचक मालूम हुई। वह इतना हंसा कि आंखों में आंसू आ गए, फिर अगले ही क्षण वह एकदम गम्भीर हो गया और उसने ऐलान किया कि लैला-मजनू की इस जोड़ी को सख़्त चेतावनी देनी होगी, और इसके बाद – उन दोनों के बीच कोमल शब्दों के आदान-प्रदान की कल्पना कर – वह फिर हंसी की बाढ़ में डूबने-उतरने लगा।

अन्त में उसने कुरेद-कुरेदकर पूरा ब्योरा जानना चाहा। इसपर निकोलाई पेत्रोविच ने अपना चेहरा कठोर बना लिया और सोन्या ने उसे बीच में ही टोका।

"लंगूर कहीं के! ज़रा देखते जाओ, मैं क्या मज़ा चखाता हूं उन्हें! ओह, बहुत ही मज़ेदार!" अपने आपको रोकने में असमर्थ स्टेशन-मास्टर छलक पड़ा।

उसी समय लुका का चेहरा प्रकट हुआ।

"तार की डिब्बी किटकिट कर रही है," उसने सूचना दी।

"अभी आता हूं। सिगनल नम्बर बयालीस।"

स्टेशन-मास्टर और उसका सहायक फ़िलहाल स्टेशन की ओर चल दिए जहां लुका गाड़ी को सिगनल देने के लिए घंटी बजा रहा था। निकोलाई पेत्रोविच ने अगले स्टेशन के लिए तार खटखटाया कि गाड़ी नम्बर बयालीस को रवाना करने की इजाज़त दी जाए। स्टेशन-मास्टर अपने दफ़्तर के फ़र्श पर इधर से उधर डग नाप रहा था और मन ही मन मुसकराता कह रहा था—

"तुम और मैं, हम दोनों उनके साथ एक मज़ाक़ करेंगे। क्यों, ठीक है न? ख़ाली पंछी क्या करे? कम से कम कुछ हंसी का सामान ही हो जाएगा।"

"यह किया जा सकता है," तार की डिब्बी को किटकिटाते हुए निकोलाई पेत्रोविच ने कहा। वह जानता था कि दार्शनिकों को सूत्र-रूप में ही बातें करनी चाहिएं।

* * *

इसके शीघ्र बाद ही उन्हें हंसने और जी बहलाने का मन-चीता मौक़ा मिल गया।

एक रात गोमोज़ोव आरीना से उस बाड़े में मिला जहां उसके अनुरोध और मालकिन की राजीरज़ा से दुनिया भर के काठ-कबाड़ के बीच आरीना ने अपनी सेज सजाई थी। वहां ठंड और सीलन थी और टूटी हुई कुर्सियां, रद्द की हुई बेकार नांदें, तख़्ते और अन्य काठ-कबाड़ अंधेरे में भयानक शक्लें धारण किए पड़ा था। जब तक आरीना वहां रही, उसके हृदय में इतना डर समा गया कि पुवाल पर पड़े और आंखों को फाड़े वह मन ही मन भगवान् का नाम बुदबुदाती रही।

आखिर गोमोज़ोव आया, बिना मुंह से कुछ कहे देर तक उसे गूंधता रहा, फिर थककर सो गया। लेकिन आरीना ने उसकी आंख लगने के क़रीब-क़रीब तुरत बाद ही उसे जगा दिया।

"तिमोफ़ेई पेत्रोविच! तिमोफ़ेई पेत्रोविच!" वह भय से फुसफुसा उठी।

"क्या-आ-आ?" केवल अधजगी-सी हालत में गोमोज़ोव ने जवाब दिया।

"उन्होंने बाहर ताला मार दिया!"

"क्या?" उछलकर उठते हुए उसने पूछा।

"वे दरवाज़े पर आए और खटका चढ़ा दिया।"

"तुम्हारा तो दिमाग़ बजता मालूम होता है!" उसे दूर धकेलते हुए भय और झुंझलाहट से गोमोज़ोव ने फुंकार छोड़ी।

"खुद जाकर देख लो न," उसने रिरियाते हुए कहा।

वह उठा, काठ-कबाड़ के बीच लड़खड़ाता हुआ दरवाज़े की ओर बढ़ा और उसे धकियाकर देखा।

"यह सब उस फ़ौजी की करतूत है," कुछ रुककर उसने उदास भाव से कहा।

दरवाज़े के दूसरी ओर खिलखिलाने की आवाज सुनाई दी।

"दरवाज़ा खोलो!" गोमोज़ोव चिल्लाया।

"क्या-आ-आ?" फ़ौजी की आवाज आई।

"मैं कहता हूं, दरवाज़ा खोलो!"

"सबेरा हो जाने दो। तब खुलेगा," फ़ौजी ने मुड़कर खिसकते हुए कहा।

"जहन्नुम में जाओ तुम, मुझे ड्यूटी देनी है!" गोमोज़ोव ने झुंझलाते हुए अनुरोध किया।

"तुम्हारी ड्यूटी मैं कर दूंगा। जहां हो, बस वहीं पड़े रहो।"

और फ़ौजी चल दिया।

"कुत्ते की जात!" स्विचमैन कातर हो बुदबुदा उठा—"सुनो, तुम मुझे इस तरह बंद नहीं कर सकते। सिर पर स्टेशन-मास्टर मौजूद है। उसे तुम क्या जवाब दोगे? वह ज़रूर पूछेगा कि गोमोज़ोव का क्या हुआ। बोलो, तब तुम क्या कहोगे?"

"मुझे डर है कि कहीं स्टेशन-मास्टर ने ही हमें बंद करने के लिए उससे न कहा हो," आरीना ने परेशान हो कहा।

"स्टेशन-मास्टर ने?" गोमोज़ोव ने भय से दोहराया—"वह ऐसा क्यों करेगा?" एक क्षण के लिए वह सोच में पड़ा, फिर उसपर चिल्ला उठा— "तुम झूठ बोल रही हो!"

जवाब में वह केवल एक गहरी सांस भरकर रह गई।

"हे भगवान्, अब क्या होगा?" दरवाज़े के पास एक नांद पर ढहते हुए स्विचमैन ने कहा—"मेरे मुख पर कालिख पुत गई। और यह तुम्हारी वजह से हुआ, सुअर-मुंह-भुतनी!"

और उसने उस दिशा में घूंसा हिलाया जिधर से कि उसके सांस लेने की आवाज़ आ रही थी। वह कुछ नहीं बोली।

उनके आस-पास भूरी परछाइयां और सड़ी-गली गोभी और नथुनों को चुनचुनानेवाली अन्य तीखी गंधें आ रही थीं। दरवाज़े की दरारों में से चांदनी की पतली डोरियां भीतर तिर आई थीं। बाहर स्टेशन से दूर होती हुई माल-गाड़ी की गड़गड़ाहट सुनाई दे रही थी।

"तुम कुछ कहती क्यों नहीं?.. क्या मुंह में बोल भी नहीं रहा, काठ की हंडिया?" गुस्से और घृणा से गोमोज़ोव ने कहा—"मैं अब क्या करूं? तुम्हारी वजह से मैं इस दबसट में फंसा और अब तुम्हीं चुप्पी साधे बैठी हो? कोई रास्ता निकालो, कम्बख़्त! यह

कारिख अब कैसे धुलेगी? हे भगवान्, मैं इस भुतनी के चक्कर में कैसे फंस गया?"

"मैं उनके पांव पड़ूंगी कि हमें माफ़ कर दें," आरीना ने धीमी आवाज़ में कहा।

"तो?.."

"शायद वे माफ़ कर दें।"

"लेकिन इससे मेरी क्या बात बनेगी? ठीक है, वे तुम्हें माफ़ कर देंगे। लेकिन इससे क्या? मेरे मुंह पर तो कारिख पुत गई न? सब मेरी खिल्ली उड़ाएंगे,– तुम्हें माफ़ी मिले चाहे न मिले!"

कुछ मिनट रुककर वह फिर उसे कोसने और लथाड़ने लगा। समय ऐसे घिसट रहा था जैसे उसके पांवों में मनों बोझ बंधा हो। आख़िर स्त्री ने कांपती आवाज़ में उससे कहा–

"मुझे माफ़ करो, तिमोफ़ेई पेत्रोविच।"

"मेरी कुल्हाड़ी अब तुम्हें माफ़ करेगी। तुमने काम ही ऐसा किया है, कम्बख़्त!" वह गुर्राया।

इसके बाद फिर निस्तब्धता छा गई– बोझिल और दमघोट, अंधेरे में बन्द इन दो प्राणियों के लिए कष्टकर वेदना में डूबी।

"हे भगवान्, किसी तरह यह अंधेरा ही कट जाता!" आरीना कराह उठी।

"अपना मुंह बन्द रख! नहीं तो अभी सारा अंधेरा काट दूंगा!" गोमोज़ोव ने घुड़का और गालियों की एक और बौछार की। इसके बाद निस्तब्धता की यंत्रणा ने उन्हें फिर दबोच लिया। समय अब और भी क्रूरता से घिसट रहा था, जैसे-जैसे तड़का निकट आता जाता था वह अधिकाधिक बोझिल होता जाता था, मानो हर

क्षण जान-बूझकर देर कर रहा हो, इन दोनों की हास्यास्पद स्थिति से वह भी रस ले रहा हो।

कुछ देर बाद गोमोज़ोव की आंखें झपक गईं और बाड़े से बाहर मुर्ग़े की बांग ने उसे जगाया।

"ऐ, सुअर-मुंह-भुतनी, क्या सो गई?" वह फुसफुसा उठा।

"नहीं," आरीना ने लम्बी सांस छोड़ते हुए जवाब दिया।

"क्यों, क्या किसीने मना कर दिया था?" उसने बाण छोड़ा – "शैतान की दुम!"

"तिमोफ़ेई पेत्रोविच!" रुआंसी आवाज़ में आरीना ने कहा– "ग़ुस्सा न करो। मुझपर तरस खाओ। भगवान् के नाम पर मुझे इस तरह न कोंचो। मैं एकमात्र अकेली हूं। इस दुनिया में मेरा कोई नहीं है। तुम – केवल तुम – मेरे हो। आख़िर, हम..."

"बन्द करो यह झींकना! मेरे पेट में हंसी के बल न डालो!" उसके बेसुध कलपने को रोकते हुए गोमोज़ोव ने कड़ी आवाज़ में कहा – "बन्द रखो अपना यह तोबड़ा! जब गुनाह किया है तो उसका दंड क्या कोई और भोगेगा?"

और फिर बिना बोले वे एक के बाद एक हर क्षण के बीतने की बाट देखने लगे। लेकिन क्षणों के बीतने से उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ा। आख़िर दरवाज़े की दरारों में से सूरज की किरनों ने भीतर झांककर देखा, अंधेरे को अपने चमकदार डोरों से बींध डाला। बाहर डगों की आवाज़ सुनाई दी। कोई दरवाज़े तक आया, एक क्षण के लिए वहां ठिठका और फिर दूर चला गया।

"राक्षस!" घृणा से थूक की पिचकारी छोड़ते हुए गोमोज़ोव गरजा। और एक बार फिर वे निस्तब्धता में डूबी घड़ियां गिनने लगे।

"हे भगवान्, दया करना!.." आरीना बुदबुदाई।

दबे पांवों की आहट का एक आभास-सा मालूम हुआ। सहसा ताले का खटका खुलने की आवाज़ आई और स्टेशन-मास्टर का कड़ा स्वर सुनाई दिया।

"गोमोज़ोव!" वह चिल्लाकर कह रहा था—"आरीना की बांह थामकर बाहर निकल आओ! ज़रा फुर्ती करो!"

"ऐ, इधर आओ," गोमोज़ोव बुदबुदाया।

आरीना उसके पास आकर बग़ल में खड़ी हो गई। उसका सिर लटका हुआ था।

दरवाज़ा खुला। स्टेशन-मास्टर सामने ही खड़ा था।

"सुहाग-रात के लिए नव दम्पति को बधाई," आरीना की ओर अभिवादन में सिर झुकाते हुए उसने कहा—"हां तो—एक, दो, तीन! बैंड बजना शुरू हो।"

गोमोज़ोव ने बाहर की ओर डग बढ़ाया, लेकिन कान फोड़ देनेवाली आवाज़ से सकपकाकर ठिठक गया। लुका, यागोदका और निकोलाई पेत्रोविच दरवाज़े पर खड़े थे। लुका एक कनस्तर की तली पर घूंसा मारते हुए उसे बजा रहा था और गला फाड़कर ऊंचे परुष स्वर में चिंघाड़ रहा था, फ़ौजी टीन का एक भोंपू बजा रहा था और निकोलाई पेत्रोविच अपने गालों को फैलाए, हाथ से ताल देता हुआ, होंठों से तुरही ऐसी आवाज़ निकाल रहा था—

"पौम! पौम! पौम-पौम-पौम!"

कनस्तर धमाधम की आवाज़ कर रहा था, भोंपू चीख और कराह रहा था। स्टेशन-मास्टर हंसी के मारे दोहरा हो गया था। उसका सहायक भी गोमोज़ोव की अजीब मुद्रा देख हंसी की बाढ़ में बह चला। गोमोज़ोव ऐसे खड़ा था जैसे उसे काठ मार गया हो—उसके चेहरे का रंग फक पड़ गया था, उसके होंठ एक

सकपकाई-सी मुसकराहट में बल खा रहे थे। उसके पीछे आरीना खड़ी थी। उसका सिर उसकी छाती पर लटक आया था – एकदम निश्चल, जैसे पत्थर का बुत बन गई हो।

और लुका गोमोज़ोव को चिढ़ाने के लिए भयानक मुंह बनाता गा रहा था –

आरीना ने उसके कानों में फूंका जादू
और फूटने लगे उसके मन में लड्डू!

फ़ौजी गोमोज़ोव के पास पहुंचा और ठीक उसके कानों से अपना भोंपू अड़ाकर 'तू-तू' करने लगा।

"अरे, खड़ा क्या देखता है? उसकी बांह पकड़ आरीना की बांह में हाथ डाल!" हंसी से बेदम होते हुए स्टेशन-मास्टर ने चिल्लाकर कहा।

"ओह, ओह! बन्द करो अब! मेरी तो जान ही निकल जाएगी," सोन्या ने चीखकर कहा। वह पोर्च पर बैठी थी और हंसी के मारे गठरी बन गई थी।

"आनन्द का वह क्षण, – कर दूं सौ जीवन न्योछावर!" निकोलाई पेत्रोविच गा रहा था।

"हुरा, इस नयी जुगल-जोड़ी के लिए!" गोमोज़ोव के पांवों को ठुमकते देख स्टेशन-मास्टर चिल्ला उठा। अन्य सबने भी 'हुरा' की आवाज़ की। फ़ौजी भी गरजती-गूंजती आवाज़ में चिल्लाया – "हुरा!"

गोमोज़ोव के अनुसरण में आरिना ने भी डग बढाया। अब उसका सिर ऊंचा तना था, होंठ खुले थे और उसकी बांहें दोनों बाज़ू लिजबिज-सी झूल रही थीं। उसकी धुंधली आंखें सामने की ओर

ताक रही थीं, लेकिन यह संदिग्ध था कि वे कुछ देख भी रही थीं या नहीं।

"इनसे चुम्बन कराश्रो! नयी जुगल-जोड़ी! हा-हा-हा!" सोन्या चिल्ला उठी।

"चुम्बन, नव दम्पति!" निकोलाई पेत्रोविच चिल्लाया। स्टेशन-मास्टर इतना विह्वल हो उठा कि टांगों ने उसका बोझ संभालने से इंकार कर दिया और वह श्राहत-सा एक पेड़ के सहारे टिक गया। कनस्तर खड़खड़ा रहा था, भोंपू चीख़-चिल्ला रहा था और लुका मटक-मटककर गा रहा था—

गोभी का रसा श्रारीना ने बनाया—
जो डूबा उसमें फिर तैरकर न आया!

निकोलाई पेत्रोविच ने श्रपने गाल फुलाकर फिर तुरही की श्रावाज़ की—

"पौम-पौम-पौम! तू-तू-तू-तू! पौम-पौम! तू-तू-तू!"

बैरक के दरवाज़े के निकट पहुंचने पर गोमोज़ोव खिसक गया। श्रारीना श्रहाते में श्रकेली खड़ी रह गई,—लोगों के एक उन्मत्त दल से घिरी। वे चिल्ला रहे थे, हंस रहे थे, उसके कानों में सीटी की श्रावाज़ कर रहे थे और खुशी से बेसुध उसके चारों श्रोर उछल-कूद रहे थे। और वह उनके बीच खड़ी थी, निश्चल चेहरा लिए—गंदी, बिना संवरी, दयनीय और बेहूदा।

"दुल्हा चम्पत हो गया,—इसे यहां श्रकेला छोड़कर!" श्रारीना की श्रोर उंगली से इशारा करते और हंसी में दोहरा होते हुए स्टेशन-मास्टर ने श्रपनी पत्नी से पुकारकर कहा।

श्रारीना ने सिर घुमाकर उसकी श्रोर देखा और फिर बैरक

को पार करती स्तेपी की ओर निकल गई। चीख़-चिल्लाकर, हंसकर और आवाज़ें कसते हुए उन्होंने उसे विदा किया।

"बस करो। जाने दो उसे!" सोन्या ने चिल्लाकर कहा – "उसे ज़रा दम तो लेने दो। आख़िर उसे खाना भी पकाना है!"

आरीना स्तेपी में निकल गई, – सीमा-रेखा से परे, गेहूं के एक ऊबड़-खाबड़-से खेत में। वह बहुत ही धीरे-धीरे, जैसे विचारों में खोई, चल रही थी।

"अरे, यह क्या? क्या कहा तुमने?" इस छोटे-से मज़ाक़ में हिस्सा लेनेवालों से स्टेशन-मास्टर ने पूछा जो अब नव दम्पति के व्यवहार की चुनी हुई बातों को याद कर एक दूसरे को सुना रहे थे। हंसी के मारे सब बेहाल थे। लेकिन इस मौक़े पर भी निकोलाई पेत्रोविच नहीं चूका और अपने भंडार में से बुद्धि-कण खोज लाया –

हंसना नहीं गुनाह –
उसपर जो हो हंसने के योग्य!

यह उसने सोन्या से कहा, इस चेतना के साथ कि –

ज्यादा हांसी गले की फांसी!

* * *

उस दिन स्टेशन पर हंसी की बाढ़ तो ख़ूब आई, लेकिन खाना कुछ मज़ेदार नहीं मिला, क्योंकि आरीना खाना पकाने के लिए लौटकर नहीं आई और स्टेशन-मास्टर की पत्नी को ही चूल्हा फूंकना पड़ा। लेकिन फिर भी बुरा खाना लोगों के उछाह पर पानी नहीं फेर सकता। गोमोज़ोव ड्यूटी का समय होने तक बैरक से बाहर नहीं निकला। और अन्त में जब वह बाहर आया तो स्टेशन-मास्टर ने

उसे अपने दफ़्तर में तलब किया जहां निकोलाई पेत्रोविच ने खोद-खोदकर उससे पूछा कि उसने अपनी सुन्दरी पर किस प्रकार 'विजय' प्राप्त की। मात्वेई येगोरोविच और लुका को इसमें बेहद मजा आया।

"मानव के मोह और पतन की एक अत्यन्त असाधारण कहानी, – ऐसी कि पहले कभी नहीं सुनी!" निकोलाई पेत्रोविच ने स्टेशन-मास्टर से कहा।

"और बहुत ही बुरा पतन था वह," वक्र मुसकान के साथ थिर-गम्भीर गोमोज़ोव ने कहा। वह अनुभव कर रहा था कि अगर वह ऐसा विवरण दे सका जिसमें आरीना ही अधिक हास्यास्पद नज़र आए, तो उसका अधिक मज़ाक़ नहीं उड़ाया जा सकेगा।

"शुरू-शुरू में तो वह केवल कनखियों से डोरे डालती रही," उसने कहा।

"कनखियों से? हो-हो-हो! ज़रा कल्पना तो करो, निकोलाई पेत्रोविच, उसकी कनखियों की! सच, एकदम तर हो जाओगे!"

"बस, कनखियों से देखती और डोरे डालती रही, सो मैंने मन ही मन कहा – 'तेरे भीतर शैतान फुदफुदा रहा है, छोकरी!' इसके बाद एक दिन बोली – 'अगर तुम कहो तो तुम्हारे लिए कुछ कमीज़ें सी दूं।'"

"लेकिन महत्व की चीज़ वह सुई नहीं थी," निकोलाई पेत्रोविच ने टिप्पणी जड़ी और फिर, उसे समझाते हुए, स्टेशन-मास्टर से कहा – "क्या तुम जानते हो, यह नेक्रासोव की एक कविता की पंक्ति है। हां तो, गोमोज़ोव, आगे क्या हुआ?"

और गोमोज़ोव कहता गया, पहले कुछ प्रयास के साथ, लेकिन धीरे-धीरे अपनी मनगढ़न्त बातों से अनुप्राणित होकर, – उसने देखा कि उसका रंग जम रहा है।

इस बीच आरीना – जिसके बारे में वह यहां बतिया रहा था – स्तेपी में पड़ी थी। वह काफ़ी दूर गेहूं के सागर में निकल गई थी और वहां धम्म से धरती पर ढह गई थी। वह बिना हिले-डुले, एकदम निश्चल, पड़ी थी। जब उसकी पीठ पर सूरज की धूप असह्य हो उठी तो वह पलटकर सीधी हो गई और हाथों से अपना चेहरा ढक लिया। इससे आसमान, जो इतना साफ़ था, और सूरज, जो इतना चौंधिया रहा था, उसकी आंखों से ओझल हो गये।

लाज से टूटी इस स्त्री के इर्द-गिर्द गेहूं के खेत धीमे सुरों म सरसरा रहे थे, अनगिनत झिल्लियां निरन्तर मृदु झंकार कर रही थीं। दिन तप रहा था। उसने प्रार्थना करने की कोशिश की, लेकिन प्रार्थना के बोल उसे याद नहीं आए। खिल्ली उड़ाते चेहरे उसकी आंखों के आगे नाच रहे थे। उसके कानों में हंसी, भोंपू की 'तू-तू' और लुका की करख़्त आवाज़ें गूंज रही थीं। आवाज़ों की इस गूंज से या तपन से उसका दम घुट रहा था। उसने अपने ब्लाउज़ के बटन खोल डाले और सूरज के सामने अपना बदन उधार लिया, – इस आशा से कि इस तरह सांस लेने में कुछ आसानी होगी। सूरज उसकी खाल झुलस रहा था, जैसे कोई गर्म चीज़ उसकी छाती को बींध भीतर धंसती जा रही हो। वह हांफती हुई-सी सांस ले रही थी।

"भगवान्, दया करना..." रह-रहकर वह बुदबुदा रही थी।

लेकिन जवाब में गेहूं के खेतों की सरसराहट और झिल्लियों की झंकार के सिवा और कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। सिर उठाकर उसने गेहूं की हिलोरों के ऊपर से देखा, – उसकी आंखों में उनकी सुनहरी आभा दौड़ गई, स्टेशन के उस पार पानी की काली टंकी उसकी आंखों के सामने झलकी। स्टेशन की इमारतों की छत पर उसकी

नज़र गई। आकाश के नीले गुम्बज़ से आच्छादित इस अनन्त पीले बिस्तार में इनके सिवा और कुछ दिखाई नहीं दिया और आरीना को ऐसा मालूम हुआ जैसे वह समूची दुनिया में एकमात्र अकेली हो, जैसे वह इस दुनिया के ठीक बीचोंबीच पड़ी हो, जैसे उसके एकाकीपन का बोझ हल्का करने के लिए उसे किसीके भी पदों की चाप सुनाई नहीं देगी... नहीं... कभी नहीं...

सांझ होने पर उसे चिल्लाने की कुछ आवाज़ें सुनाई दीं—

"आरीना! आरीना! ओ आरीना बछेरी!"

इनमें एक आवाज़ लुका की थी और दूसरी फ़ौजी की। वह एक तीसरी आवाज़ और सुनना चाहती थी, लेकिन वह नहीं आई, और इस कारण उसकी आंखों से बुरी तरह आंसू फूट पड़े जो उसके चेचकरू चेहरे पर से लुढ़कते द्रुत गति से उसकी छाती पर गिर रहे थे। वह रो रही थी और अपनी उघरी हुई छाती को सूखी तप्त धरती से रगड़ रही थी,—उस जलन को शांत करने के लिए, जिसकी यंत्रणा हर क्षण तीव्रतर होती जा रही थी। वह रोई और इसके बाद चुप भी हो गई,—अपनी सुबकियों को उसने दबा दिया, जैसे उसे डर हो कि कहीं कोई उसे रोता न सुन ले और डांटकर उसका मुंह न बन्द कर दे।

जब रात घिर आई तो वह उठी और धीमे डगों से स्टेशन की ओर चल दी।

इमारतों के निकट पहुंच वह बाड़े की दीवार से टिककर खड़ी हो गई और देर तक स्तेपी की ओर शून्य में ताकती रही। माल-गाड़ियां आईं और चली गईं और उसके कानों में फ़ौजी के बोलने की आवाज़ आई जो कंडक्टरों को उसके पतन की कहानी सुना रहा था, और वे बुरी तरह हंस रहे थे। उनके हंसने की आवाज़ हवा में तैरती हुई दूर स्तेपी में—जहां झिल्लियां मृदु झंकार कर रही थीं—विलीन हो रही थी।

"भगवान् दया करना," दीवार के सहारे अपने बदन को टिकाते समय उसके मुंह से एक उसांस निकली। लेकिन इन उसांसों से उसके हृदयं का भार हल्का नहीं हुआ। और उस समय, जब सुबह की सफ़ेदी फैलना शुरू हुई थी, वह स्टेशन की अटारी पर चढ़ी और कपड़े सुखाने की रस्सी गले में डाल झूल गई।

दो दिन बाद लाश की गंध से उन्हें आरीना का पता लगा। पहले तो वे आतंकित हो उठे, इसके बाद बहस करने लगे कि जो कुछ हुआ है, उसके लिए कौन अपराधी है। निकोलाई पेत्रोविच ने अकाट्य रूप में सिद्ध किया कि अपराधी गोमोज़ोव है। स्टेशन-मास्टर ने स्विचमैन के जबड़े पर एक थप्पड़ रसीद किया और उसे चेताया कि अपना मुंह बन्द रखे।

अधिकारी आए और उन्होंने जांच-पड़ताल की। मालूम हुआ कि आरीना मैलन्कोलिया की—उदासी के दौरों की—शिकार थी। रेल्वे के कुछ मज़दूरों को आदेश दिया गया कि लाश को स्तेपी में ले जाकर दफ़ना आएं। इसके बाद पहले की भांति स्टेशन पर फिर शांति और व्यवस्था छा गयी।

और स्टेशन के निवासी पहले की भांति प्रतिदिन फिर चार मिनट का जीवन बिताने लगे—एकाकीपन और ऊब में घुलते हुए, तपन और काहिली में डूबे, ईर्ष्या-भरी आंखों से उन गाड़ियों को ताकते, जो उन्हें पीछे छोड़ तेज़ी से गुज़र जाती थीं।

...और जाड़ों में—बर्फ़ीली आंधियां जब स्तेपी के ऊपर चीख़ती और सनसनाती छोटे-से स्टेशन को बर्फ़ और भयानक आवाज़ों में डुबा देतीं—जीवन तब और भी सूना, और भी एकाकी हो उठता।

१८९७



तूफ़ानी पितरेल पक्षी का गीत

समुद्र की रुपहली सतह के ऊपर हवा के झोंके तूफ़ान के बादलों की सेना जमा कर रहे हैं और बादलों तथा समुद्र के बीच तूफ़ानी पितरेल चक्कर लगा रहा है—गौरव और गरिमा के साथ, अंधकार को चीरकर कौंध जानेवाली बिजली की रेखा की भांति!

कभी वह नीचे उतर आता है–इतना कि लहरें उसके पंखों को दुलराती हैं, फिर तेज़ी के साथ ऊंचे उठ जाता है – तीर की भांति बादलों को चीरता और अपनी भयानक चीख़ से आकाश को गुंजाता, और बादल–उसकी इस साहसपूर्ण चीख़ में चरम आनन्दातिरेक का अनुभव कर–थरथरा उठते!

उसकी इस चीख़ में तूफ़ान से टकराने की एक हूक ध्वनित होती! उसके आवेश और आवेगों की, उसके ग़ुस्से और जीत में उसके विश्वास की लपक ध्वनित होती!

समुद्री गल पक्षी भय से चिचिया उठते, – चिचियाते-कराहते पानी की सतह पर छितर जाते और डर के मारे समुद्र की स्याह गहराइयों में समा जाने के लिए उतावले हो उठते!

और ग्रेब पक्षी भी विलाप करने लगते। संघर्ष के चरम आह्लाद को–जो सभी संज्ञाओं से परे है–वे क्या जानें? बिजली की गरज और बादलों की गड़गड़ाहट उनकी जान सोख लेती!

और बुद्धू पेंगुइन चट्टानों की दरारों में गरदनें डाल समझते हैं कि मुक्ति मिल गई! एक अकेला तूफ़ानी पितरेल पक्षी ही है जो समुद्र के ऊपर, रुपहले झाग उगलती फनफनाती लहरों के ऊपर, मंडरा रहा है!

और तूफ़ान के बादल समुद्र की सतह पर घिरते आ रहे हैं–अधिकाधिक नीचे, अधिकाधिक काले, – और गीत गाती तथा छलछलाती लहरें–गरज और गड़गड़ाहट से गले मिलने की उमंगों से भरी –ऊंची उठ रही हैं–ऊंची उठती जा रही हैं!

बिजली कड़कती और दमामा बजता है। समुद्र की लहरें हवा के झोंकों के विरुद्ध भयानक युद्ध में कूद पड़ती हैं और हवा के झोंके–उन्हें अपने लौह आलिंगन में जकड़–उनके इस समूचे हरे कंच-भार को चट्टानों पर दे मारते हैं,–और उनका एक-एक कण छितरा जाता है!

तूफ़ानी पितरेल पक्षी – अंधकार को चीरकर कौंध जानेवाली बिजली की रेखा की भांति – तीर की तरह तूफ़ान के बादलों को बींधता, तेज़ धार की भांति पानी को भीतर से काटता चक्कर लगा रहा है और अपनी चीख़ से आकाश को गुंजा रहा है!

दानव की भांति – सदा अट्टहास करते और सुबकते तूफ़ान के काले दानव की भांति – वह निर्बाध मंडरा रहा है, – तूफ़ान के बादलों पर अट्टहास करता, आनन्दातिरेक से सुबकता।

बिजली की गरज में थकान की भनभनाहट वह सुनता है। इस दानव की बुद्धि से वह छिपी नहीं रहती। उसका विश्वास है कि बादल सूरज की सत्ता को मिटा नहीं सकते, – यह कि तूफ़ान के बादल सूरज की सत्ता को कभी नहीं मिटा सकेंगे, – नहीं, कभी नहीं मिटा सकेंगे।

समुद्र गरजता... बिजली कड़कती है...

समुद्र के व्यापक विस्तार के ऊपर तूफ़ान के बादलों में नीली बिजली कौंधती है, लहरें उछलकर विद्युत् अग्नि-वाणों को लपकती और उन्हें ठंडा कर देती हैं और उनके सर्पिल प्रतिबिम्ब, बल खाते और बुझते, समुद्र की गहराइयों में समा जाते हैं।

तूफ़ान! शीघ्र ही तूफ़ान टूट पड़ेगा!

लेकिन तूफ़ानी पितरेल पक्षी है कि अभी भी – गौरव और गरिमा से भरा – बिजली की कड़क और बादलों की गरज के बीच और गरजते-चिंघाड़ते समुद्र के ऊपर मंडरा रहा है और उसकी चीख़ में चरम आह्लाद की ध्वनि है – विजय की भविष्यवाणी की भांति...

आए तूफ़ान, अपने पूरे ग़ुस्से के साथ आए!

१९०१

पाठकों से

विदेशी भाषा प्रकाशन गृह इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है:

२१, ज़ूबोव्स्की बुलवार,

मास्को, सोवियत संघ।